॥ श्री ॥

सुभाषितरत्नाकर

भाषाटीका.





CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitized by eGangotri

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

4-6-39

LAXMI NARAYAN

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri





CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

॥ श्रीः ॥

॥ सुभाषितरत्नाकरः ॥



अयोध्यामण्डलान्तर्वर्तिलखीमपुरखीरीनिवासिनाज्योतिर्वित्पण्डितनारायणप्रसादमिश्रेन काव्यनाटकेतिहासाद्यनेकग्रन्थेभ्यः समाहृत्य देशभाषायामनुवादितः ।



'घगवे' इत्युपाभिध अनन्तशास्त्रिणा

॥ संशोधितः ॥

स च

श्री० व्रजवल्लभहरिप्रसाद

इत्येतैः

मुंबय्यां "जगदीश्वराख्य" मुद्रणालये मुद्रयित्वा

प्रकाशितः

संवत् १९७०, शके १८३६.

अस्य ग्रन्थस्य पुनर्मुद्रणादयः सर्वेऽप्यधिकाराः प्रकाशकेन स्वायत्तीकृताः सन्ति।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भूमिका.



कोटिशः धन्यवाद उस परमात्माको हैं कि जिसकी—अनुपम कृपासे यह ग्रन्थ समाप्त हुआ है ।

यह सुभाषितरत्नाकर ग्रन्थ पण्डितोंके लिये रत्नकी खानि है. इसीसे इस ग्रन्थका नाम सुभाषितरत्नाकर रक्खा है. अनेक काव्य-नाटक—इतिहास—स्मृति—नीतिग्रन्थोंमेंसे उत्तम उत्तम विषय लेकर यह ग्रन्थ लिखा है. इस ग्रन्थके आश्रयसे सामान्य पंडितभी सभामें बोल सकता है, तथा सभाओंमें व्याख्यान देनेकी सामर्थ्य इस ग्रन्थके पढनेसे हो जाती है. इस ग्रन्थकी भाषाटीकाभी सरल भाषामें की गई है. कोई कोई विषय इस ग्रन्थमें ऐसेभी हैं, जिनको संस्कृतके न जाननेवाले अथवा थोडा संस्कृत जाननेवाले नहीं समझ सकते हैं. अतः उन विषयोंमें केवल संस्कृत टिप्पणी मात्र लिख देना उचित समझा है. इस ग्रन्थसे यदि पंडितोंका उपकार होगा, तो इस ग्रन्थका द्वितीय भाग हम लिखेंगे जिसमें विशेष रीतिसे षड्ऋतुवर्णन, नवरसनिरूपण, तथा नायकनायिका—भेद आदि विषयोंका विस्तार होगा. इस परमोत्तम ग्रन्थकी एक एक प्रति प्रत्येक पण्डितको अपने पास रखना उचित है. किमधिकमित्यलम् ।

श्रावणशुक्ल ५
संवत् १९७०

सत्कृपाभाजन—
पंडित नारायणप्रसादमिश्र.
लखीमपुरखीरी.

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

॥ अथ सुभाषितरत्नाकरस्य विषयानुक्रमणिकाप्रारंभः ॥

विषय.	पृष्ठ.	विषय	पृष्ठ.
मङ्गलाचरण	१	धनिप्रशंसा	७८
सुभाषितप्रशंसा	१०	दरिद्रनिन्दा	७९
विद्याप्रशंसा	१२	दानप्रशंसा	८१
काव्यप्रशंसा	१६	लोभनिन्दा	९०
कुकाव्यनिंदा	१८	उदारप्रशंसा	९२
कविप्रशंसा	१९	कृपणनिन्दा	९४
कुकविनिन्दा	२२	याचकनिन्दा	९६
पण्डितप्रशंसा	२४	परोपकारप्रशंसा	१०१
कुपण्डित (मूर्ख) निन्दा	३९	कृतघ्ननिन्दा	१०५
वैयाकरणप्रशंसा	४२	सन्तोषप्रशंसा	१०५
नैयायिकप्रशंसा	४३	तृष्णानिन्दा	१०७
मीमांसकप्रशंसा	४४	धीरप्रशंसा	१११
वैद्यप्रशंसा	४४	वीरप्रशंसा	११२
कुवैद्यनिन्दा	४५	तेजस्विप्रशंसा	११३
गणकप्रशंसा	४६	मनस्विप्रशंसा	११३
कुगणकनिन्दा	४७	अपौरुषत्वनिन्दा	११५
पुरोहितनिन्दा	४७	गुणप्रशंसा	११५
कायस्थनिन्दा	४८	गुरुमहिमा	१२०
सज्जनप्रशंसा	४८	उद्योग (उद्यम) प्रशंसा	१२२
दुर्जननिन्दा	६३	संहति (ऐक्य) प्रशंसा	१३४
लक्ष्मीस्वभाव	७०	क्षमाप्रशंसा	१३८
धनप्रशंसा	७२	विनयप्रशंसा	१३८
धननिन्दा	७६	सत्यप्रशंसा	१३९

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विषय.	पृष्ठ.
असत्यनिन्दा	१३९
आत्मश्लाघानिन्दा	१४०
स्वभाववर्णन	१४०
वाणीवर्णन	१४३
वाग्मि (वक्ता) प्रशंसा	१४४
मौनगुणवर्णन	१४५
स्थानमाहात्म्य	१४६
सत्संगप्रशंसा	१४७
असत्संगनिन्दा	१५३
स्नेहवर्णन	१५७
सुमित्रप्रशंसा	१५७
कुमित्रनिंदा	१६१
वाङ्माधुर्यप्रशंसा	१६२
संसारवर्णन	१६४
गृहस्थाश्रमप्रशंसा	१६५
गृहस्थाश्रमनिन्दा	१६६
पुत्रप्रशंसा	१६८
कन्यानिन्दा	१६८
सत्पुत्रप्रशंसा	१६९
कुपुत्रनिन्दा	१७०
दैववर्णन	१७३
जरावर्णन	१७५
भिक्षुकवर्णन	१७७
परगृहवासनिन्दा	१७८
ऋणनिन्दा	१७९
व्यापारवर्णन	१८०
प्रवासवर्णन	१८०
सेवकनिन्दा	१८१
जीवितसाफल्य	१८२
कलिमहिमा	१८६
मद्यपानगर्हण	१८८
तमाखुवर्णन	१९०

इति प्रथमप्रकाश समाप्त ॥ १ ॥

अथ द्वितीयप्रकाश ॥ २ ॥

विषय.	पृष्ठ.
राजसभावर्णन	१
राजप्रशंसा	२
रणप्रशंसा	५
कीर्तिवर्णन	६

राजनीतिवर्णन ।

विषय.	पृष्ठ.
तत्रादौराजावर्णन	१३
मंत्री	१४
न्यायाधीश	१५
सभासद	१५
पुरोहित	१६
वैद्य	१६
सेनापति	१७
गज	१७

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विषय.	पृष्ठ.
तुरगवर्णन	१९
खड्ग	२०
सैन्य	२१
दुर्ग	२१
दूत	२२
भांडागारी	२२
लेखक	२३
प्रतीहारी	२३
सूपकार	२३
चार	२३
अन्तःपुरवर्ग	२४
स्त्रीवर्ग	२४
महिषी	२४
भृत्य (सेवक)	२५
स्नान	२७
ताम्बूल	२८
चामरसिंहासन	२८
चंदनलेपन-मालाधारण	२८
तरु	२९
नीतिवर्णन	२९

इति द्वितीयप्रकाश समाप्त ॥२॥

अथ तृतीयप्रकाश ॥ ३ ॥

विषय.	पृष्ठ.
सामान्यनीतिवर्णन	१–१९२

इति तृतीयप्रकाश समाप्त ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थप्रकाश ॥ ४ ॥

विषय.	पृष्ठ.
समस्याख्यान	१
प्रहेलिका (पहेली)	८
अपन्हुति (कहमुकरनी)	१५
कूटश्लोक	१९
क्रियागुप्तश्लोक	२९
कर्तृगुप्तश्लोक	३२
कर्मगुप्तश्लोक	३२
करणगुप्तश्लोक	३३
संप्रदानगुप्तश्लोक	३३
अपादानगुप्तश्लोक	३३
संबन्धगुप्तश्लोक	३४
अधिकरणगुप्तश्लोक	३४
आमंत्रितगुप्तश्लोक	३४
कर्तृक्रियागुप्तश्लोक	३४
कर्तृकर्मक्रियागुप्तश्लोक	३५
संधिगुप्तश्लोक	३५
समासगुप्तश्लोक	३५
लिङ्गगुप्तश्लोक	३६
सुब्वचनगुप्तश्लोक	३६
तिङ्वचनगुप्तश्लोक	३६
अन्तरालापश्लोक	३६
बहिरालापश्लोक	४४

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विषय. पृष्ठ.

प्रश्नोत्तरश्लोक ५१
भाषाचित्रश्लोक ५२
संस्कृतचित्रश्लोक ५३
नवरसवर्णने नवरसाः ५३
शृंगाररसनिर्देशे—
कामदेवप्रशंसा ५४
स्त्रीप्रशंसा ५४
स्त्रीस्वभावनिन्दा ६०
सतीवर्णन ६५
असतीचरित ६८
वेश्यागर्हण ७१
पान्थसंकेत ७२
वीररसनिर्देश ७६
करुणरसनिर्देश ७९
अद्भुतरसनिर्देश ८०
हास्यरसनिर्देश ८३
भयानकरसनिर्देश ९१
बीभत्सरसनिर्देश ९२
रौद्ररसनिर्देश ९३
शान्तरसनिर्देश ९३
विषयोपहास १०५
अनित्यतानिरूपण १०६
कालचरित १०९
पश्चात्ताप ११२
विचार ११४

इति चतुर्थप्रकाश समाप्त ॥ ४ ॥

अथ पंचमप्रकाश ॥ ५ ॥

धर्माधर्मनिरूपण १
ब्राह्मणादिवर्णधर्म २२
ब्रह्मचर्यप्रशंसा २४
गृहस्थाश्रमप्रशंसा २७
वानप्रस्थाश्रमनिरूपण २९
संन्यासआश्रम ३२
स्त्रीधर्म तथा स्त्रीशिक्षा ... ४१
तप तथा तीर्थनिरूपण ... ४९
पुनर्जन्मनिरूपण ५४
मोक्षस्वरूप ६०
ब्रह्मनिरूपण ६१
ग्रन्थसमाप्तिसमय ६२
ग्रन्थकारप्रार्थना ६३

इति पंचमप्रकाश समाप्त ॥ ५ ॥

॥ इति सुभाषितरत्नाकरस्य विषयानुक्रमणिका समाप्ता ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अथ

सुभाषितरत्नाकर ।

भाषार्थसहित ।

मङ्गलाचरण ।

अचिन्त्याऽव्यक्तरूपाय निर्गुणाय गुणात्मने ॥
समस्तजगदाधारमूर्तये ब्रह्मणे नमः ॥ १ ॥

अन्वयः— अचिन्त्याव्यक्तरूपाय (चिन्तितुं 'ध्यानं कर्तुं' योग्यं नेति तथा व्यज्यत इति व्यक्तं नव्यक्तमव्यक्तम् एवं भूतं रूपं यस्य तस्मै) निर्गुणाय (सत्वरजस्तमोगुणातीताय) गुणात्मने (गुण आत्मस्वरूपं यस्य तस्मै) समस्तजगदाधारमूर्तये (समस्तस्य स्थावरजङ्गमात्मकस्य जगत उत्पत्तिस्थितिविनाशवत आधारा 'आश्रयभूता ब्रह्मविष्णुशिवरूपा' मूर्तयः 'स्वरूपाणि' यस्य तस्मै) ब्रह्मणे (जगद्व्यापकायेश्वराय) नमः (नमस्कारं करोमि) इत्यन्वयः ॥ १ ॥

भाषार्थ-अचिन्त्य अर्थात् ध्यानमें न आने योग्य अव्यक्त अर्थात् अप्रकट (अलख) रूपवाले, निर्गुण (सत्व, रज, तम इन तीनों गुणोंसे रहित) अर्थात् गुणातीत, गुणस्वरूपी, एवं समस्त जगत्के

---

१ मनोऽविषयम् २ वाचाप्यप्रतिपाद्यम् 'यतो वाचो निवर्तन्तेऽप्राप्य मनसा सहेति' श्रुतेः । ३ प्रकृतिरूपाय 'गुणानां साम्यावस्था प्रकृतिरिति' श्रुतेः । ४ ब्रह्मविष्णुशिवात्मकाय ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

आधार 'ब्रह्मविष्णुशिवरूपी' मूर्तिवाले ब्रह्म (जगत्व्यापक ईश्वर) को नमस्कार है ॥ १ ॥

दिक्कालाद्यनवच्छिन्नाऽनन्तचिन्मात्रमूर्तये ॥
स्वानुभूत्यैकमानाय नमः शान्ताय तेजसे ॥ २ ॥

भावार्थ—पूर्वआदि दशोदिशा और भूतभविष्यत् वर्तमान इन तीनों काल आदि सबमें व्याप्त होनेके कारण नाशरहित, ज्ञानरूप चैतन्य मूर्तिमान्, तथा स्वयं प्रमाण वाले, शान्त और तेजःस्वरूप, परमात्माको नमस्कार है ॥ २ ॥

अगजाननपद्मार्कं गजाननमहर्निशम् ॥
अनेकदं तं भक्तानामेकदन्तमुपास्महे ॥ ३ ॥

भावार्थ—पार्वतीके मुखकमलके लिये सूर्य्यके सदृश और अहर्निश भक्तजनोंको मोक्षआदि अनेक वस्तु देनेवाले एक दन्तधारी गजानन (श्रीगणेशजी) की उपासना करताहूं ॥ ३ ॥ इस श्लोकका दूसरा अर्थ भी है किन्तु उसको यहाँ नहीं लिखा ॥

शारदा शारदाम्भोजवदना वदनाम्बुजे ॥
सर्वदा सर्वदास्माकं संनिधिं संनिधिं क्रियात् ॥ ४ ॥

भावार्थ—शारदा (सरस्वती) शरद् ऋतुके चन्द्रमा (शरद् पूनोंकी चाँदनी) के समान मुखारविन्दवाली (चंद्रमुखी) तथा कमलके समान मुखवाली, सब पदार्थोंकी देनेवाली सर्वदा (सदैव) हमको उत्तम निधियोंकी संनिधि (समीपवर्ती) करें, अर्थात् सरस्वती देवी हमको सब प्रकारकी सम्पत्तियां वाला करें ॥ ४ ॥

१ पार्वती. २ मोक्षाद्यनेकवस्तुदातारम् । ३ गणेशम् । १ सर्वदात्री. २ उत्तमनिधिम् ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

चन्द्राननार्धदेहाय चंद्रांशुसितमूर्तये ॥
चन्द्रार्कानलनेत्राय चन्द्रार्धशिरसे नमः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–चन्द्रमाके समान आनन (मुख) और अर्धांगीरूप, तथा चन्द्रसमान गौरवर्ण अथवा सूर्यसमान तेजस्वी, और चन्द्र सूर्य अग्नि इन तीन नेत्रोंवाले, तथा शिरपर आधा चन्द्रमा धारण कियेहुए अर्थात् द्वितीयाका चन्द्रमा मस्तकपर विराजमान ऐसे श्रीसदाशिवजीको नमस्कार है। यहाँ शुक्लपक्षकी द्वितीयाका चन्द्रमा कहा गया है ॥५॥

नमः शिवाय निःशेषक्लेशप्रशमशालिने ॥
त्रिगुणग्रन्थिदुर्भेदभवबन्धविभेदिने ॥ ६ ॥

भाषार्थ–सब क्लेशोंको दूर करनेवाले, त्रिगुण (सत्व, रज, तम) जनित ग्रन्थिको काटनेवाले और भवबन्ध अर्थात् संसाररूप बन्धनसे छुड़ानेवाले श्रीशिवजीको नमस्कार है ॥ ६ ॥

फुंफुंफुल्लारशब्दं वसति फणिपतिर्जायते यस्य कंठे डिंडिंडिन्नातिडिन्नं कलयति डमरु यस्य पाणावक-म्पम् ॥ तक्‌ तक्‌ तन्दातिकिन्दा धिगितिधिगिति गीर्गीयते व्योमवाग्भिः कल्पान्ते ताण्डवीयस्सक-लभयहरो भैरवो वः स पायात् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–फुंफुंफुं शब्दवाला फणिपति (भुजंगाधिप अर्थात् नाग-राज) जिसके कंठमें लिपट रहेहैं, डिन् डिन् डिन् ऐसे शब्दवाला डमरू जिसके दोनों हाथोंमें शोभा दे रहा है, तक्‌ तक्‌ तन्दाति किन्दा धिग् धिग् ऐसा शब्द आकाशवाणीद्वारा जहाँ गाया जा रहा है,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

इसप्रकार कल्पके अन्तमें ताण्डवनृत्य करनेवाला और सकल भयहारी भैरव तुह्मारी रक्षा करे ॥ ७ ॥

कस्त्वं ब्रह्मन् हि पूर्वं क्व च तव वसतिर्याऽखिला-
ब्रह्मसृष्टिः कस्ते नाथो ह्यनाथः क्व च तव जनको
नैव तातं स्मरामि ॥ किन्तेऽभीष्टं ददामि त्रिपदपरि-
मिता भूमिरल्पा मनीषिंस्त्रैलोक्यं भावयामो बलि-
मिति निगदन् वामनो वः स पायात् ॥ ८ ॥

भावार्थ–राजा बलिने वामनजीको देखते ही पूँछा 'कस्त्वं' (तुम कौन हो) तब वामनजीने उत्तर दिया कि 'ब्रह्मन्' (हम ब्रह्म हैं) राजा बलिने फिर पूँछा 'पूर्वं क्व च तव वसतिः' (यहाँ आनेसे पहले तुम्हारा कहाँ वास रहा) यह सुन वामनजीने उत्तर दिया कि 'याऽखिला ब्रह्मसृष्टिः' (जो सम्पूर्ण ब्रह्मसृष्टि है वही हमारा निवासस्थान है) यह सुनकर राजा बलिने समझा कि जैसे सब लोग सृष्टिमें रहते हैं वैसे ही यह ब्राह्मण भी रहता है, अनन्तर राजा बलिने पूँछा, 'कस्ते नाथः' (तुम्हारा नाथ कौन है) तब वामनजीने उत्तर दिया कि 'अनाथः' (हम सबके नाथ हैं हमारा कोई नाथ नहीं) राजा बलिने समझा कि इस ब्राह्मणके माता पिताआदि रक्षक सब इसके छोटेपनमें ही नष्ट होगये हैं इसीसे यह कहता है कि, हम अनाथ हैं, फिर राजा बलिने प्रश्न किया कि 'क्व च तव जनको' (तुम्हारा पिता कौन है) वामनजीने उत्तर दिया कि 'नैव तातं स्मरामि' (अपने पिताका स्मरण नहीं करता हूं अर्थात् हमारा पिता कोई नहीं है हम सबके पिता हैं) राजा बलिने समझा कि यह कहता है कि हमको पिताका स्मरण नहीं, छोटेपनेसे पिताके न रहनेसे स्मरण नहीं रहा। पुनः

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

राजा बलिने कहा 'किन्तेऽभीष्टं ददामि' (तुम क्या चाहते हो सो हम तुमको देवें) वामनजीने कहा 'त्रिपदपरिमिता भूमिः' (तीन पग पृथिवी) तब बलिने कहा इतनी भूमि 'अल्पा मनीषिन्' हे ब्रह्मन् थोड़ी है। वामनजीने उत्तर दिया कि 'त्रैलोक्यं भावयामः (इतने-हीसे तीनों लोककी हम भावना करते हैं अर्थात् तीन पगमें तीनों लोक नापलेंगे। वामनजीके इस उत्तरको सुनकर राजा बलिने समझा कि यह ब्राह्मण कहता है कि तीन पग भूमि हमको तीनलोक हैं, यह बड़ा सन्तोषी ब्राह्मण है। इस प्रकार राजा बलिके प्रश्नका उत्तर देते हुए वामन भगवान् तुम्हारी रक्षा करें॥ ८॥

अङ्गुल्या कः कपाटं प्रहरति कुटिलो माधवः किं
वसन्तो नो चक्री किं कुलालः न हि धरणिधरः किं
द्विजिह्वः फणीन्द्रः॥ नाहं घोराऽहिमर्दी किमसि
खगपति नों हरिः किं कपीशः इत्थं राधावचोभिः
प्रहसितवदनः पातु वश्चक्रपाणिः॥ ९॥

भाषार्थ–एकवार श्रीराधाजीके स्थानमें श्रीकृष्णजी गये। वहाँ कपाट बन्द देखकर अँगुलीसे कपाटको ठोंका इसपर श्रीराधाजीने पूँछा 'किं अङ्गुल्याकः कपाटं प्रहरति' (अंगुलीसे कौन कुटिल किवाड़को ठोंकता है) यह सुनकर श्रीकृष्णजीने उत्तर दिया कि माधव अर्थात् श्रीकृष्ण, यह सुन राधाजीने कहा 'किं वसन्तः' (क्या वसंत है) माधव वैशाख मासको भी कहते हैं वैशाखमें वसन्तऋतु होती है; इसीसे श्रीराधाजीने कृष्णचन्द्रजीके मुखसे माधव नाम सुनते ही कहा कि क्या वसन्त है। तब श्रीकृष्णजीने कहा वसंत नहीं, हम चक्री हैं अर्थात् सुदर्शन चक्रधारी हैं, यह सुनकर राधाजीने कहा, क्या

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कुम्हार हो क्योंकि 'चक्री' (कुलाल) कुम्हारको भी कहते हैं, तब श्रीकृष्णजीने उत्तर दिया कि, हम कुलाल नहीं हैं, हम धरणीधर हैं अर्थात् सम्पूर्ण भूमंडलके रक्षक हैं, यह सुनकर राधाजीने कहा क्या पृथ्वीको धारण करनेवाले फणीन्द्र हो, तब श्रीकृष्णचन्द्रजी बोले कि नहीं हम घोर सर्पको मर्दन करनेवाले हैं, तो राधाजीने कहा कि घोर सर्पको मर्दन करनेवाले हो तो क्या गरुड़ हो, तब श्रीकृष्णजी बोले कि हम गरुड़ नहीं हैं, हम हरि (विष्णु भगवान्) हैं। हरि वानरको भी कहते हैं, इस कारण राधाजीने कहा कि क्या कपीश (हनुमान अथवा सुग्रीव) हो, इस प्रकार श्रीराधाजीके वचनोंसे प्रसन्नमुख श्रीकृष्णचन्द्रजी तुम्हारी रक्षा करें ॥ ९ ॥

सिंहादुत्थाय कोपाद्धडधडधडद्धावमाना भवानी
शत्रूणां शस्त्रपातैस्ततडतडतडत्त्रोटयन्ती शिरांसि ॥
तेषां रक्तं पिबन्ती घुघुटघुटघुट्ट वोटयन्ती पिशा-
चांस्तृप्तास्तृप्ता हसन्ती खखलखलखल च्छाम्भवी
वः पुनातु ॥ १० ॥

भाषार्थ–सिंहकी पीठपर आरूढ होकर मारे क्रोधसे उछलती हुई, घड़ घड़ शब्दपूर्वक दौड़ती हुई, अपने शस्त्रप्रहारद्वारा तड़ तड़ शब्दसे शत्रुओंके शिर तोड़ती हुई और उनके रुधिर को घुट घुट घुट पीती हुई तथा उन्हीं राक्षसोंको मर्दन करती हुई रुधिर पान करनेसे तृप्त होकर खल खल शब्दसे हंसती हुई भवानी शाम्भवी देवी तुम्हारी रक्षा करें ॥ १० ॥

द्वौ तौ शंखकपालभूषितकरौ मालास्थिमालाधरौ
देवौ द्वारवतीश्मशाननिलयौ नागारिगोवाहनौ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

द्वित्र्यक्षौ बलिदक्षयज्ञमथनौ श्रीशैलजावल्लभौ
पापं वो हरतां सदा हरिहरौ श्रीवत्सगंगाधरौ ॥ ११॥

भाषार्थ– हरिभगवान्के हाथमें शंख है, हर (महादेव) के हाथमें कपाल है, हरिभगवान् वनमाला धारण किये हुए हैं और महादेवजी अस्थिमालाधारी हैं, हरिभगवान् द्वारकावासी हैं, महादेवजी श्मशानवासी हैं, हरिभगवान् नागारि (गरुड) वाहनसे युक्त हैं, महादेवजी गो (नंदी) वाहनवाले हैं, अर्थात् हरिगरुडध्वज हैं, और हर वृषभध्वज हैं, हरिभगवान् दो नेत्रवाले हैं, महादेवजी तीन नेत्रवाले हैं, हरिभगवान् बलिके यज्ञको मथन करनेवाले हैं और महादेवजी दक्षके यज्ञको विध्वंस करनेवाले हैं, हरिभगवान् श्री (लक्ष्मी) जीके प्यारे हैं, महादेवजी शैलजा (पार्वतीजी) के प्यारे हैं, हरिभगवान् श्रीवत्स (लक्ष्मीचिह्न) अर्थात् भृगुलताको हृदयमें धारण किये हुए हैं, और महादेवजी गंगाजीको शिरपर धारण करनेसे गंगाधर कहाते हैं । ऐसे हरिहर भगवान् दोनों देव सदैव तुम्हारे पापोंको दूर करें ॥ ११ ॥

वेदानुद्धरते जगन्निवहते भूगोलमुद्बिभ्रते
दैत्यं दारयते बलिं छलयते क्षत्रक्षयं कुर्वते ॥
पौलस्त्यं जयते हलं कलयते कारुण्यमातन्वते
म्लेच्छान्मूर्छयते दशाकृतिकृते कृष्णाय तुभ्यं नमः १२

भाषार्थ–मत्स्यावतार धारणकर वेदोंका उद्धार करनेवाले, कूर्मावतार लेकर जगत्की रक्षा करनेवाले, वाराहरूप धरकर भूगोलको अपनी दाढपर धरलेनेवाले, नृसिंहरूपसे हिरण्यकशिपु दैत्यवध करके अपने भक्त प्रह्लादकी रक्षा करनेवाले, वामन होकर राजा बलिको छलने वाले, परशुरामावतार लेकर क्षत्रियोंको विध्वंस करनेवाले, रामावतार

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लेकर रावणको जीतनेवाले, श्रीबलराम रूपसे लांगलको धारण करनेवाले, बौद्धरूपसे करुणा (दया) को विस्तार करनेवाले और कल्कि अवतार लेकर म्लेच्छोंको मूर्च्छित करनेवाले, इसप्रकार दश अवतार धारण करनेवाले कृष्ण भगवान् तुमको नमस्कार है ॥ १२ ॥

रामो नाम बभूव हुं तदबला सीतेति हुं तौ पितुर्वाचा पञ्चवटीवने निवसतस्तमामाहरद्रावणः॥कृष्णेनेति पुरातनीं निजकथामाकर्ण्य मात्रेरितां सौमित्रे क्व धनुर्धनुर्धनुरिति प्रोक्ता गिरः पान्तु वः ॥१३॥

भावार्थ–जैसे माता अपने पुत्रको शयन करानेके निमित्त पुरानी कहानियां कहती है उसी प्रकार श्रीयशोदा भी पुरातन कथा श्रीकृष्णजीसे कहने लगी और श्रीकृष्णजी हुंकारी देने लगे, यशोदा बोली, राम नाम एक राजा थे यह सुन श्रीकृष्णजी बोले 'हुं' फिर यशोदाने कहा कि राम राजाकी स्त्री श्रीसीताजी थीं श्रीकृष्णजीने हुं शब्द कहा, अनन्तर यशोदाने कहा वे दोनों पिता दशरथराजाकी आज्ञासे पंचवटी वनमें जाकर रहने लगे। वहाँ सीताजीको रावणने आकर हरण किया; इस प्रकार यशोदा माताकी कही हुई अपनी पुरातन कथाको सुनकर श्रीकृष्णजी चौंककर बोले हे लक्ष्मण! कहाँ धनुष है! कहाँ धनुष है!! कहाँ धनुष है!!! इसप्रकारकी श्रीकृष्णचन्द्रके मुखसे निकली हुई वाणी तुम्हारी रक्षा करें ॥ १३ ॥

वन्दामहे महेशानचंडकोदंडखंडनम् ॥
जानकीहृदयानन्दचन्दनं रघुनन्दनम् ॥ १४ ॥

---

१ यथा माता स्वपुत्रप्रस्वापनाय प्राचीनाः कथाः कथयति, तथा यशोदापि राम इति कश्चिद्राजासीदिति वदतिस्म । तच्छ्रुत्वा कृष्णोऽपि हुंकारं दत्तवान् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—श्रीमहादेवजीके कठोर धनुषको तोड़नेवाले और जानकीजीके हृदयको आनन्द देनेवाले तथा भक्तजनोंके चित्तको शीतल करनेवाले रघुनन्दन (श्रीरामचन्द्र) जीकी हम वन्दना करते हैं॥१४॥

इन्दीवरदलश्याममिन्दिरानन्दकन्दलम् ॥
वन्दारुजनमन्दारं वन्देऽहं यदुनन्दनम् ॥ १५ ॥

भाषार्थ—नीलकमलके समान श्यामवर्ण और श्रीलक्ष्मीजीको आनन्द देनेवाले तथा भक्तजनोंको कल्पवृक्षके समान ऐश्वर्य-प्रदान करनेवाले यदुनन्दन (श्रीकृष्ण भगवान्) की मैं वन्दना करता हूं ॥ १५ ॥

यः सृष्टिस्थितिसंहृतीर्वितनुते ब्रह्मादिमूर्तित्रिकैर्य-
स्याधीनतया स्थितानि सदसत्कर्माण्यपि प्राणिनाम् ॥
नित्येच्छाकृतिबुद्धिमानथ परो जीवात्परात्मा स्वयं
सोऽयं वो विदधातु पूर्णमचिराच्चेतोगतं यद्भवेत् ॥१६॥

भाषार्थ—जो ब्रह्माआदि तीन मूर्त्ति (ब्रह्मा विष्णु महेश) धारण करके सृष्टि, स्थिति और संहार करता है, जिसके आधीन प्राणियोंके शुभअशुभ कर्म भी हैं, जो नित्य इच्छा, कृति और बुद्धिसे युक्त है तथा जो जीवोंसे श्रेष्ठ स्वयं परमात्मस्वरूप है. ऐसा परमात्मा तुम्हारे चित्तमें आयेहुए मनोरथको पूर्णरीतिसे सिद्ध करें ॥ १६ ॥

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ॥
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देवदेव! ॥१७॥

भाषार्थ—हे देवदेव ! तुम्ही माता हो, तुम्ही हमारे पिता हो, तुम्ही बंधु हो और तुम्हीं हमारे सखा हो, तुम्ही विद्या हो, तुम्हीं हमारे धन हो और हे देव-देव! तुम्ही हमारे सर्वस्व हो ॥ १७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सुभाषित-प्रशंसा ।

सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया ॥
मनो न भिद्यते यस्य स योगी ह्यथवा पशुः ॥ १ ॥

भावार्थ-सुभाषित गीत तथा स्त्रियोंके हावभावसे जिसका मन विचलित नहीं हुआ, वह योगी अथवा पशु है ॥ १ ॥

भाषासु मुख्या मधुरा दिव्या गीर्वाणभारती ॥
तस्माद्धि काव्यं मधुरं तस्मादपि सुभाषितम् ॥ २ ॥

भावार्थ-भाषाओंमें सबसे मधुर तथा दिव्य संस्कृत वाणी है, उससे काव्य मधुर होता है और उस काव्यसे सुभाषित तो मधुरतम समझना चाहिये ॥ २ ॥

सुभाषितमयैर्द्रव्यैः संग्रहं न करोति यः ॥
सोऽपि प्रस्तावयज्ञेषु कां प्रदास्यति दक्षिणाम् ॥ ३ ॥

भावार्थ-सुभाषितमय द्रव्योंसे जो संग्रह नहीं करता, वह प्रस्तावयज्ञमें अर्थात् प्रसंग समय कौनसी दक्षिणा देगा ॥ ३ ॥

संसारकटुवृक्षस्य द्वे फले ह्यमृतोपमे ॥
सुभाषितरसास्वादः संगतिः सुजने जने ॥ ४ ॥

भावार्थ-संसाररूपी कटुवृक्षके अमृतसमान दो ही फल हैं। एक तो सुभाषितरसका आस्वाद दूसरा सज्जनोंकी संगति ॥ ४ ॥

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि जलमन्नं सुभाषितम् ॥
मूढैः पाषाणखण्डेषु रत्नसंज्ञा विधीयते ॥ ५ ॥

भावार्थ-पृथ्वीपर तीन रत्न हैं-जल, अन्न और सुभाषित (मधुर भाषण) परन्तु मूढोंने पत्थरमें रत्नसंज्ञा मान रक्खी है ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यस्य वक्त्रकुहरे सुभाषितं
नास्ति नाप्यवसरे प्रजल्पति ॥
आगतः सदसि धीमतामसौ
लेप्यनिर्मित इवावभासते ॥ ६ ॥

भावार्थ–जिसके मुखविवरमें सुभाषित नहीं है अर्थात् जिसके मुखसे वचन नहीं निकलता और जो बोलनेके समय बोल नहीं सकता है वह बुद्धिमान् जनोंकी सभामें आनेपर बनेहुए चित्रके समान मालूम पड़ता है ॥ ६ ॥

नायं प्रयाति विकृतिं[1] विरसो न यः स्या-
न्न क्षीयते बहुजनैर्नितरां निपीतः ॥
जाड्यं निहन्ति रुचिमेति करोति तृप्तिं
नूनं सुभाषितरसोऽन्यरसातिशायी[2] ॥ ७ ॥

भावार्थ–यह सुभाषितरस कभी विकृतिको प्राप्त नहीं होता, और न विरस होता है, बहुत जनोंसे निपीत अर्थात् पान किया हुआ भी सुभाषित नष्ट नहीं होता, जड़ताको दूर करता है, रुचिको बढ़ाता है और संतृप्त करता है इसलिये यह निश्चय है कि सुभाषितरस अन्य रसोंकी अपेक्षा अवश्य श्रेष्ठ है ॥ ७ ॥

खिन्नं चापि सुभाषितेन रमते स्वीयं मनः सर्वदा
श्रुत्वाऽन्यस्य सुभाषितं खलु मनः श्रोतुं पुनर्वाञ्छति ॥
अज्ञान् ज्ञानवतोऽप्यनेन हि वशीकर्तुं समर्थो भवेत्
कर्तव्यो हि सुभाषितस्य मनुजैरावश्यकः संग्रहः ॥ ८ ॥

१ विकारम्। २ अन्यरसानतिक्रम्य वर्तत इत्यर्थः।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–अपना मन खिन्न (दुःखी) होनेसे भी सुभाषितसे सदा प्रसन्न रहता है, दूसरोंके सुभाषित (मधुर भाषण) सुनकर मन फिर सुननेकी इच्छा करता है, अज्ञानी और ज्ञानवान्को भी वश करनेकी सामर्थ्य इसी सुभाषितमें है । इस कारण मनुष्योंको अवश्य सुभाषित संग्रह करना उचित है ॥ ८ ॥

विद्याप्रशंसा ।

अपूर्वः कोपि कोशोऽयं विद्यते तव भारति ॥
व्ययतो वृद्धिमाप्नोति क्षयमायाति संचयात् ॥ १॥

भाषार्थ–हे भारति ! तुह्मारा यह कोष (विद्याधन) कुछ अपूर्व ही है कि, जो व्यय (पाठन) करनेसे तो अर्थ बढ़ता है और संचय करनेसे क्षय (नष्ट) हो जाता है ॥ १ ॥

अनेकसंशयोच्छेदि परोक्षार्थस्य दर्शकम् ॥
सर्वस्य लोचनं शास्त्रं यस्य नास्त्यन्ध एव सः॥२॥

भाषार्थ–सब सन्देहोंको दूर करनेवाला और परोक्ष (अदृश्य) पदार्थ को दिखानेवाला शास्त्र ही सबका नेत्र है. जिसको यह नेत्र नहीं है वही अन्धा है ॥ २ ॥

सर्वद्रव्येषु विद्यैव द्रव्यमाहुरनुत्तमम्[1] ॥
अहार्यत्वादनर्घत्वादक्षयत्वाच्च सर्वदा ॥ ३ ॥

भाषार्थ–सब द्रव्योंमें विद्या ही उत्तम द्रव्य है क्योंकि विद्याधनको कोई हरण नहीं करसकता, मोल नहीं ले सकता और नष्ट नहीं कर सकता क्योंकि यह अक्षय धन है ॥ ३ ॥

---

१ नास्त्युत्तम यस्मात् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हर्तुर्न गोचरं याति दत्ता भवति विस्तृता ॥
कल्पान्तेऽपि न या नश्येत्किमन्यद्विद्यया समम् ॥४॥

भावार्थ—चोरोंसे हरण नहीं कीजा सकती है, दान करनेसे बढ़ती है और कल्पान्तमें भी जो नाश नहीं होती, ऐसी विद्याके समान दूसरा क्या पदार्थ है? अर्थात् विद्यासे बढ़कर दूसरा पदार्थ है ही नहीं ॥ ४ ॥

ज्ञातिभिर्वण्ट्यते[1] नैव चौरेणापि न नीयते ॥
दाने नैव क्षयं याति विद्यारत्नं महाधनम् ॥ ५ ॥

भावार्थ—ज्ञातिके लोग बाँट नहीं सकते; चोर भी नहीं चुरा सकता और दान करने पर क्षय नहीं होता। इसलिये विद्यारत्न सर्वोत्तम धन है ॥ ५ ॥

विद्या शस्त्रं च शास्त्रं च द्वे विद्ये प्रतिपत्तये[2] ॥
आद्या हास्याय वृद्धत्वे द्वितीयाऽऽद्रियते सदा ॥ ६ ॥

भावार्थ—शस्त्र और शास्त्र ये दो विद्यायें ज्ञाननिमित्त कही गयी हैं, पहली विद्या तो बुढापेमें हास्य (हंसी) के लिये होती है, किन्तु दूसरी (शास्त्र) विद्या सदैव आदर बढानेवाली होती है ॥ ६ ॥

शुनः पुच्छमिव व्यर्थं जीवितं विद्यया विना ॥
न गुह्यगोपने शक्तं न च दंशनिवारणे ॥ ७ ॥

भावार्थ—विद्याके बिना मनुष्यका जीवन कुत्तेकी पूंछके समान व्यर्थ है, क्योंकि वह पूंछ न गोपनीय अंगको छिपा सकती है और न मच्छरोंको ही उड़ा सकती है ॥ ७ ॥

सद्विद्या यदि का चिन्ता वराकोदरपूरणे ॥
शुकोऽप्यशनमाप्नोति रामरामेति च ब्रुवन् ॥ ८ ॥

१ विभज्यते। २ ज्ञानाय।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जिन्हें उत्तम विद्या प्राप्त है उन्हें क्षुद्र उदरको पूर्णकरनेमें क्या चिन्ता है ? क्योंकि शुक (सुवा) भी केवल रामराम कहनेसे ही भोजन पाजाता है ॥ ८ ॥

वसुमतीपतिना नु सरस्वती
बलवती रिपुणापि न नीयते ॥
समविभागहरैर्न विभज्यते
विबुधबोधबुधैरपि सेव्यते ॥ ९ ॥

भाषार्थ-राजासे विद्या बलवती होती है, जो (विद्या) शत्रुसे भी छीनी नहीं जाती अर्थात् विद्याको शत्रु भी नहीं छीन सकता है. बराबरके हिस्सेदार विद्याको नहीं बटासकते हैं तथा अच्छे २ पंडित-जन भी विद्यावान पुरुषकी सेवा करते हैं ॥ ९ ॥

मातेव रक्षति पितेव हिते नियुङ्क्ते
कान्तेव चापि रमयत्यपनीय खेदम् ॥
लक्ष्मीं तनोति वितनोति च दिक्षु कीर्तिं
किं किं न साधयति कल्पलतेव विद्या ॥१०॥

भाषार्थ-जैसे माता पुत्रकी रक्षा करती है उसीप्रकार विद्या भी रक्षा करती है और जिसप्रकार पिता अपने पुत्रको हितमें लगाता है ठीक उसीप्रकार विद्या भी हितमें नियुक्त करती है. पत्नीकी भाँति आनन्दित करती हुई खेदको दूर करती है, लक्ष्मीको बढाती है. और सब दिशा-ओंमें कीर्तिको फैलाती है । विद्या कल्पलताकी भाँति क्या क्या साधन नहीं करती ? ॥ १० ॥

न चोरहार्यं न च राजहार्यं
न भ्रातृभाज्यं न च भारकारि ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

व्यये कृते वर्धत एव नित्यं
विद्याधनं सर्वधनप्रधानम् ॥ ११ ॥

भाषार्थ–न चोर चुरासकता है, न राजा छीन सकता है, न भाई बाँट सकते हैं, न कुछ बोझ मालूम पड़ता है और व्यय करनेपर वृद्धिको प्राप्त होता है। इसलिये विद्याधन सब धनोंमें प्रधान (श्रेष्ठ) है ॥ ११ ॥

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्नगुप्तं धनं
विद्या भोगकरी यशःसुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः ॥
विद्या बन्धुजनो विदेशगमने विद्या परं दैवतं
विद्या राजसु पूज्यते न हि धनं विद्याविहीनः पशुः१२

भाषार्थ–यह विद्या ही मनुष्यका सुन्दररूप है, " विद्यारूपं कुरूपाणां " कुरूप मनुष्यका रूप विद्या है, विद्या ही अन्तर्हित[1] गुप्तधन है, विद्या ही सब भोग कराती है, तथा यश सुखका सम्पादन करनेवाली विद्या ही है, विद्या गुरुओंकी गुरु है, विद्या बिदेशमें बन्धुजनोंके तुल्य काम देती है, विद्या ही एक मुख्य देवता है, राजाओंमे भी विद्या ही पूजी जाती है, धन नहीं। इसलिये विद्याहीन पुरुष पशुके समान है ॥१२॥

विद्या नाम नरस्य कीर्तिरतुला भाग्यक्षये चाश्रयो
धेनुः कामदुघा रतिश्च विरहे नेत्रं तृतीयं च सा ॥
सत्कारायतनं कुलस्य महिमा रत्नैर्विना भूषणं
तस्मादन्यमुपेक्ष्य सर्वविषयं विद्याधिकारं कुरु ॥१३॥

भाषार्थ–विद्या ही मनुष्यके यशको फैलाती है, भाग्यके क्षय होनेपर अर्थात् ऐश्वर्य नष्ट होजानेपर विद्या ही आश्रय देती है, विद्या कामधेनु

१ अनाहित।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

है अर्थात् कामनाओंको पूर्ण करनेवाली धेनु है, बन्धुस्त्रीआदिके वियोगमें चित्तको प्रसन्न करनेवाली है, विद्या ही तीसरी आँख है, विद्या ही सन्मानका घर है, विद्याहीसे कुलकी महिमा बढती है और विद्या ही बिना रत्नोंके आभूषण है, 'नरस्य भूषणं विद्या' मनुष्यका भूषण विद्या है । अतएव सब विषयोंकी अपेक्षा विद्यामें अधिकार सम्पादन करो अर्थात् सबको छोड़कर विद्या बढ़ाओ ॥ १३ ॥

काव्य-प्रशंसा ।

सरसाऽपि कवेर्वाणी हरिनामाङ्किता यदि ॥
सादरं गृह्यते तज्ज्ञैः शुक्तिर्मुक्तान्विता यथा ॥ १ ॥

भावार्थ-यदि कविकी वाणी सरस और हरिनामाङ्कित हो, अर्थात् कविकी कविता रसीली और हरिभगवान्के नामसे मिली हुई हो, तो उसको बुद्धिमान् जन आदरपूर्वक पढते हैं जैसे मोतीके सहित सितुही भी ग्रहण कीजाती है ॥ १ ॥

न ब्रह्मविद्या न च राज्यलक्ष्मी-
स्तथा यथेयं कविता कवीनाम् ॥
लोकोत्तरे पुंसि निवेश्यमाना
पुत्रीव हर्षं हृदये करोति ॥ २ ॥

भावार्थ-ब्रह्मविद्या और राजलक्ष्मी उतना आनन्द नहीं देती जितना आनन्द कवियोंकी कविता देती है । लोकोत्तर पुरुषके हृदयमें कविता पुत्रीके समान हर्ष (आनन्द) प्रदान करनेवाली होती है ॥ २ ॥

रे रे खलाः ! शृणुत मद्वचनं समस्ताः
स्वर्गे सुधाऽस्ति सुलभा न तु सा भवद्भिः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कुर्मस्तदत्र भवतामुपकारकारि
काव्यामृतं पिबत तत्परमादरेण ॥ ३ ॥

भावार्थ-रे रे दुष्टो ! तुम सब हमारी बात सुनो; स्वर्गमें अमृत है परन्तु वह अमृत तुम लोगोंको सुलभ नहीं, यहाँ यदि अमृतपानकी इच्छा हो तो तुम लोगोंका उपकार करनेवाला काव्यरूपी अमृत है। उसका तुम लोग आदरपूर्वक पान करो ॥ ३ ॥

प्रयच्छति चमत्कृतिं विरचनाविधौ चेतसः
सभासु परितो भवत्यसमसाधुवादाप्तये ॥
प्रथामुपगतं स्तनोत्यतितरामुदारं यशो
न पुष्यति मनोरथं कमिव काव्यचिन्तामणिः ॥४॥

भावार्थ-रचना करनेमें जो मनको चमत्कारयुक्त करती है, अर्थात् मनको परमानन्द देती है, सभामें पढ़नेसे बड़ाई देती है और प्रसिद्ध होनेपर उदार कीर्तिको बढ़ाती है, ऐसी काव्यरूपी चिन्तामणि कौनसा मनोरथ नहीं पूर्ण करती ? ॥ ४ ॥

धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च ॥
करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधुकाव्यनिषेवणम् ॥ ५ ॥

भावार्थ-उत्तमकाव्यका सेवन धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष और कलाओंमें निपुणता तथा कीर्तिको उत्पन्न करता है॥ ५ ॥

किं कवेस्तस्य काव्येन किं काण्डेन धनुष्मतः ॥
परस्य हृदये लग्नं यन्न घूर्णयते शिरः ॥ ६ ॥

भावार्थ-उस कविकी कवितासे क्या और धनुषधारीके धनुषसे क्या ? जो दूसरेके हृदयमें लगने पर वह शिरको नहीं घुमाने लगे अ-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

र्थात् सुकविकी कविता सुनते ही दूसरा जन शिर हिलाकर प्रशंसा करने लगता है और उत्तम धनुषधारीका बाण लगते ही शत्रु पीड़ित होकर शिर हिलाने लगता है ॥ ६ ॥

सा कविता सा वनिता यस्याः श्रवणेन दर्शनेनापि ॥
कविहृदयं विटहृदयं सरलं तरलं च सत्वरं भवति ॥७॥

भाषार्थ–वही कविता और वही स्त्री है जिसके सुनने और दर्शन सेही कवि और कामीका हृदय शीघ्र सरल तरल और चंचल होजाता है ॥ ७ ॥

कुकाव्यनिन्दा ।

यदा प्रकृत्यैव जनस्य रागिणो
भृशं प्रदीप्तो हृदि मन्मथानलः ॥
तदात्र भूयः कविभिः किमर्थं
कुकाव्यहव्याहुतयो निवेशिता ॥ १ ॥

भाषार्थ–जब कि कामी जनोंके हृदयमें प्रकृति (स्वभाव) हीसे तीव्र कामाग्नि जला करती है; तब फिर उसमें कवियोंने कुकाव्यरूपी हव्य (हवने करनेका द्रव्य) की आहुति कामियोंके हृदयमें क्यों डाली है ॥ १ ॥

किं तेन किल काव्येन मृद्यमानस्य यस्य ताः ॥
उदधेरिव नायान्ति रसामृतपरम्पराः ॥ २ ॥

भाषार्थ–उसकाव्यसे क्या कि जिसके मथनेसे समुद्रके समान रसरूपी अमृतकी तरंगें न उठें. अर्थात् वह कविता किस कामकी कि जिसमें कुछ रस नहीं ॥ २ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कविप्रशंसा।

सुकवेः शब्दसौभाग्यं सुकविर्वेत्ति नापरः॥
कलादवन्न जानाति परः कङ्कणचित्रताम्॥ १॥

भाषार्थ—सुकविके शब्दसौभाग्यको सुकवि ही जानसकता है, दूसरा नहीं, जैसे सोनार ही कंकणकी बनावटको जानसकता है दूसरा नहीं जान सकता॥ १॥

जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः॥
नास्ति तेषां यशःकाये जरामरणजं भयम्॥ २॥

भाषार्थ—वे सुकृती और काव्यके रसके जाननेवाले कवीश्वर धन्य हैं जिनके यशरूपी शरीरमें जरामरणजनित भय होता ही नहीं॥ २॥

कविः करोति काव्यानि स्वादं जानन्ति पण्डिताः॥
सुन्दर्या अपि लावण्यं पतिर्जानाति नो पिता॥ ३॥

भाषार्थ—कविके बनायेहुए काव्यके स्वाद (आनन्द) को पण्डितजन जानते हैं, जैसे अपनी सुन्दरीका लावण्य (सुन्दरता) को पति ही जानता है पिता नहीं॥ ३॥

कविः करोति पद्यानि लालयत्युत्तमो जनः॥
तरुः प्रसूते पुष्पाणि मरुद्वहति सौरभम्॥ ४॥

भाषार्थ—कविकी रची हुई कविताका उत्तमजन ही आदर करता है, जैसे वृक्ष पुष्पको उत्पन्न करता है परंतु वायु उस पुष्पकी सुगन्धको लेकर वहती है॥ ४॥

विद्वत्कवयः कवयः केवलकवयस्तु केवलं कपयः॥
कुलजाया सा जाया केवलजाया तु केवलं माया॥ ५॥

---

१ स्वर्णकारः। २ सौगन्ध्यम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जो कवि विद्वान् हैं वे ही कवि हैं और जो केवल कवि ही है वह कपि (वानर) है; जो स्त्री अच्छे शीलस्वभाववाली है वही जाया है और जो केवल नामकी जाया (स्त्री) है वह केवल माया है ॥ ५ ॥

लङ्कापतेः संकुचितं यशो यत्
यत्कीर्तिपात्रं रघुराजपुत्रः ॥
स सर्व एवादिकवेः प्रभावो
न कोपनीया कवयः क्षितीन्द्रैः ॥ ६ ॥

भाषार्थ-लंकापति (रावण) का जो यश संकुचित होगया और रघुराजपुत्र (श्री रामचन्द्रजी) कीर्तिपात्र बनगये सो यह सब आदिकवि (श्रीवाल्मीकिजी) का प्रभाव है, अतएव राजाओंको उचित है कि कविजनोंको अप्रसन्न न करें ॥ ६ ॥

महीपतेः सन्ति न यस्य पार्श्वे
कवीश्वरास्तस्य कुतो यशांसि ॥
भूपाः कियन्तो न बभूवुरुर्व्यां
नामापि जानाति न कोऽपि तेषाम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ-जिस राजाके समीप कवीश्वर नहीं हैं उसका यश कैसे फैल सकता है, कितने ही राजालोग इस पृथ्वीपर उत्पन्न हुए पर उनका कोई नामतक भी नहीं जानता ॥ ७ ॥

उपमा कालिदासस्य भारवेरर्थगौरवम् ।
दण्डिनः पदलालित्यं माघे सन्ति त्रयो गुणाः ॥ ८ ॥

भाषार्थ-कालिदासकविकी कविता उपमाप्रधान है, भारवि कविकी कवितामें अर्थगौरवता और दण्डीकी कवितामें पदलालित्य

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

प्रधान है किन्तु माघकविकी कवितामें तो तीनों गुण हैं अर्थात् उपमा अर्थ-गौरवता और पदलालित्य ये तीनों हैं ॥ ८ ॥

श्रीमन्महाराजा विक्रमादित्यकी सभामें एकदिन कालिदास, दंडी और भारवि ये तीनों कवि बैठे थे और वहाँ एक अप्सरा नाच कर रही थी, साथ ही गेंद भी उछालती और पटकती जाती थी। उस समय महाराजा विक्रमादित्यने कहा कि आप तीनों इस गेंदके विषयमें कुछ कहें, तो प्रथम कालिदासजी बोले.

पयोधराकारधरो हि कंदुकः
करेण रोषादिव ताड्यते मुहुः ॥
इतीव नेत्राकृतिभीतमुत्पलं
तस्याः प्रसादाय पपात पादयोः ॥ ९ ॥

भावार्थ–पयोधर (कुच) के आकारवाला कंदुक (गेंद) जैसे क्रोधसे कोई वस्तुको फेंक देता है वैसे गायिकाने हाथसे गेंदको उछाल दिया तो कमलनेत्रके समान होनेके भयसे वह गेंद अप्सराके प्रसन्नतार्थ चरणोंपर जा गिरता है ॥ ९ ॥

भारविकविने कहा,

विदितं ननु कन्दुक ! ते हृदयं
प्रमदाधरपल्लवलुब्ध इव ॥
वनिताकरतामरसाभिहतः
पतितः पतितः पुनरुत्पतसि ॥ १० ॥

भावार्थ–हे कंदुक ! तेरे हृदयकी बात हमने जानली, तू इस प्रमदाके अधरका लोभी है, इसीसे इस प्रकार उछल रहा है, क्योंकि

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

इस स्त्रीके हाथसे उछाला गया तू गिर गिर कर फिर ऊपर अधर पानके लिये उछलता है ॥ १० ॥

दंडीकविजी बोले,

एकोऽपि त्रयमतिभाति कन्दुकोऽयं
कान्तायाः करतलरागरक्तरक्तः ॥
खस्थः सन्नयनमरीचिनीलनीलः
भूमौ तत्पदनखरश्मिगौरगौरः ॥ ११ ॥

भावार्थ–यह गेंद एक होनेपर भी तीन गेंदके समान सुशोभित हो रहा है, इस अप्सराके हाथमें इसकी हथेलीके लाल रंगसे लाल रंगका देख पड़ता है, ऊपर आकाशमें जाकर नेत्रोंकी नीलमरीचीसे नील-वर्णका दिखाई देताहै और जब भूमिपर आकर गिरता है तब इस अप्सराके चरणनखकी स्वच्छ किरणसे गौरवर्णका दिखता है ॥ ११ ॥

धन्वन्तरिः क्षपणकामरसिंहशंकु-
वेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः ॥
ख्यातो वराहमिहरो नृपतेः सभायां
रत्नानि वै वररुचिर्नव विक्रमस्य ॥ १२ ॥

भावार्थ–धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, वेतालभट्ट, घटखर्पर कालिदास, वराहमिहर और वररुचि ये नव कविरत्न महाराजाविक्रमा-दित्य जीकी सभामें थे; इसलिये सभामें ये नवरत्न समझे जाते थे ॥ १२ ॥

कुकविनिन्दा ।

गृह्णन्तु सर्वे यदि वा यथेच्छं
नास्ति क्षतिः क्वापि कवीश्वराणाम् ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

रत्नेषु लुप्तेषु बहुष्वमर्त्यै-
रद्यापि रत्नाकर एव सिन्धुः ॥ १ ॥

भाषार्थ–कवीश्वरोंके काव्यका सब इच्छानुसार ग्रहण करैं इसमें कवीश्वरोंकी हानि कुछ भी नहीं है, बहु तेरे देवताओंने रत्नोंको चुरा-लिया तो भी समुद्र रत्नकी खानि है, भावार्थ यह कि कुकवि लोग कवियोंके काव्यमेंसे शब्दोंको चुनकर कविताई करते और अपना नाम कवियोंमें प्रसिद्ध करते हैं ॥ १ ॥

द्राघीयसा धाष्टर्यगुणेन युक्ताः
कैः कैरपूर्वैः परकाव्यखण्डैः ॥
आडम्बरं ये वचसां वहन्ति
ते केऽपि कन्थाकवयो जयन्ति ॥ २ ॥

भाषार्थ–जो अतिधृष्टताके साथ कुछ कुछ अन्य कवियोंके काव्य खंडको लेकर अपनी कविताका आडम्बर दिखाते हैं, ऐसे अधूरे (कन्था) कवियोंकी जय हो ॥ २ ॥

कर्णामृतं सूक्तिरसं विमुच्य
दोषेषु यत्नः सुमहान् खलस्य ॥
अवेक्षते केलिवनं प्रविष्टः
क्रमेलकः कण्टकजालमेव ॥ ३ ॥

भाषार्थ–कानोंको अमृतसमान सूक्तिरस (उत्तम भाषणरूपी आ-नन्द) को छोड़कर दुष्टजनका यत्न दोषोंमें होता है, अर्थात् दुष्ट

---

१ अतिदीर्घेण। २ प्रागल्भ्यं।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कविजन दूसरेकी कवितामें दोषोंको ढूँढने लगते हैं । जैसे केलिवनमें प्रविष्ट हुआ ऊँट कंटकसमूहको ही देखता है ॥ ३ ॥

अतिरमणीये काव्ये पिशुनोऽन्वेषयति दूषणान्येव ॥
अतिरमणीये वपुषि व्रणमेव हि मक्षिकानिकरः ॥ ४ ॥

भावार्थ–दुष्टजन अतिरमणीय काव्यमें भी दूषणोंको ही ढूँढता है, जैसे परम सुन्दर शरीरमें मक्षिकाएं व्रणका अन्वेषण करती हैं अर्थात् मक्खियाँ शरीरमें घावको ही ढूँढ़ती हैं ॥ ४ ॥

पण्डित–प्रशंसा ।

निषेवते प्रशस्तानि निन्दितानि न सेवते ॥
अनास्तिकः श्रद्दधानः एतत्पण्डितलक्षणम् ॥ १ ॥

भावार्थ–जो शुभकर्मोंका आचरण करता है और निन्दित कर्मोंको नहीं करता. तथा जो नास्तिक नहीं है और श्रद्धालु है वही पण्डित कहाता है क्योंकि ये लक्षण पंडितके हैं ॥ १ ॥

न हृष्यत्यात्मसम्माने नावमानेन तप्यते ॥
गाङ्गो ह्रद इवाक्षोभ्यो यः स पण्डित उच्यते ॥ २ ॥

भावार्थ–अपना सन्मान होनेपर जो हर्ष नहीं प्रकट करता अर्थात् घमण्ड नहीं करता और अपमान होनेपर दुःखी नहीं होता तथा गंगाजीके दहके नीरके समान गंभीर होता है वही पंडित कहाता है ॥ २ ॥

निश्चित्य यः प्रक्रमते नान्तर्वसति कर्मणः ॥
अवन्ध्यकालो वश्यात्मा स वै पंडित उच्यते ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जो प्रथम निश्चय करके कार्यका आरंभ करता है और जो कर्मके आधीन नहीं होता तथा जिसका समय व्यर्थ नहीं जाता और जिसकी आत्मा अपने वशमें है वही पंडित कहाता है ॥ ३ ॥

यस्य कृत्यं न निघ्नंति शीतमुष्णं भयं रतिः ॥
समृद्धिमसमृद्धिं च स वै पण्डित उच्यते ॥ ४ ॥

भाषार्थ–जिसके कृत्यको शीत (जाड़ा) उष्ण (गरमी) भय, रति, (प्रीति) सम्पत्ति और निर्धनता आदि बिगाड़ नहीं सकती हैं वही पंडित कहाता है ॥ ४ ॥

यस्य कृत्यं न जानन्ति मंत्रं वा मंत्रितं परे ॥
कृतमेवास्य जानन्ति स वै पण्डित उच्यते ॥ ५ ॥

भाषार्थ–जिसके कृत्यको मंत्र वा मंत्रित अर्थात् जिसकी सम्मति तथा गुरुदीक्षित मन्त्रको जो दूसरे नहीं जानते किन्तु कियेहुए कार्यको ही जानते हैं वही पंडित कहाता है ॥ ५ ॥

क्रोधो हर्षश्च दर्पश्च ह्रीस्तम्भो मान्यमानिता ॥
यमर्थान्नापकर्षन्ति स वै पण्डित उच्यते ॥ ६ ॥

भाषार्थ–क्रोध, हर्ष, अहंकार, लज्जा, स्तब्धता अर्थात् धीमापन और उत्तमताका अभिमान ये विकार जिसको अर्थसे अर्थात् कर्तव्यसे नहीं विचलित कर सकते वही पंडित कहाता है ॥ ६ ॥

शोकस्थानं सहस्राणि भयस्थानं शतानि च ॥
दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पण्डितम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–शोकके स्थान हजारों हैं और भयस्थान सैकडों हैं उनमें प्रतिदिन मूढजन ही प्रविष्ट होते हैं किन्तु पंडित लोग नहीं ॥ ७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

नाप्राप्यमभिवाञ्छन्ति नष्टं नेच्छन्ति शोचितुम् ॥
आपत्स्वपि न मुह्यन्ति नराः पण्डितबुद्धयः ॥ ८ ॥

भाषार्थ–नहीं प्राप्त होनेवाली वस्तुकी जो इच्छा नहीं करते हैं और नष्ट वस्तुका शोच नहीं करते हैं तथा आपत्ति आनेपर मोहको प्राप्त नहीं होते ऐसे मनुष्य पंडित बुद्धिवाले कहाते हैं ॥ ८ ॥

प्रवृत्तवाक् चित्रकथ ऊहवान्प्रतिभानवान् ॥
आशु ग्रन्थस्य वक्ता च यः स पण्डित उच्यते ॥ ९ ॥

भाषार्थ–सबमें जिसकी वाणी प्रवृत्त होजावे, जिसका कथन विचित्र है तथा जो तर्कवाला है, जिसकी बुद्धि नयेनये विचारवाली है और जो ग्रन्थको देखते ही उसकी व्याख्या कर डालता है वही पंडित कहाता है ॥ ९ ॥

आत्मज्ञानं समारम्भास्तितिक्षा धर्मनित्यता ॥
यमर्थान्नापकर्षन्ति स वै पण्डित उच्यते ॥ १० ॥

भाषार्थ–आत्मज्ञान, कार्योंका आरम्भ, सहनशीलता, और धर्ममें निश्चय, ये जिसको अर्थसे नहीं हटासकते वही पंडित कहाता है ॥१०॥

अर्थं महान्तमासाद्य विद्यामैश्वर्यमेव वा ॥
विचरत्यसमुन्नद्धो यः स पण्डित उच्यते ॥ ११ ॥

भाषार्थ–जो महान् अर्थ (बहुतधन) को प्राप्त कर अथवा विद्या और ऐश्वर्यको पाकर भी उद्धत न होकर विचरता है वही पंडित कहाता है ॥ ११ ॥

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसङ्कल्पवर्जिताः ॥
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥ १२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जिसके आरंभ कियेहुए सब कर्म कामनारूपी संकल्पसे रहित हैं, अर्थात् जो निष्काम कर्म करता है और ज्ञानाग्निसे जिसके कर्म (वासना) दग्ध होगये हैं उसको बुधजन पंडित कहते हैं ॥ १२ ॥

पण्डिते हि गुणाः सर्वे मूर्खे दोषाश्च केवलाः ।
तस्मान्मूर्खसहस्रेभ्यः प्राज्ञ एको विशिष्यते ॥ १३ ॥

भाषार्थ–पंडितमें सब गुण ही विद्यमान रहते हैं और मूर्खमें केवल दोष ही दोष होते हैं, इसी कारण हजारों मूर्खोंसे एक विद्वान् श्रेष्ठ होता है ॥ १३ ॥

प्राज्ञो हि जल्पतां पुंसां श्रुत्वा वाचः शुभाशुभाः ॥
गुणवद्वाक्यमादत्ते हंसः क्षीरमिवाम्भसः ॥ १४ ॥

भाषार्थ–बुद्धिमान् पुरुष बकनेवाले मनुष्योंके शुभअशुभ (अच्छे बुरे) वचन सुनकर गुणयुक्त वाक्यका ही स्वीकार करते हैं जैसे हंस जलसे दूधको ग्रहण करलेता है ॥ १४ ॥

किं कुलेन विशालेन[1] विद्याहीनस्य देहिनः ॥
अकुलीनोऽपि यो विद्वान् दैवैरपि स पूज्यते ॥ १५ ॥

भाषार्थ–विद्याहीन पुरुषका कुल बहुत बड़ा हो तो उससे क्या? कुलहीन भी जो विद्वान् हो तो वह देवताओंसें सम्मान पाता है ॥ १५ ॥

यत्र विद्वज्जनो नास्ति श्लाघ्यस्तत्राऽल्पधीरपि ॥
निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपिद्रुमायते[2] ॥ १६ ॥

---

१ विस्तीर्णेन । २ वृक्षवदाचरति ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जहां विद्वान् पुरुष नहीं है वहां अल्पबुद्धिवाला ही प्रशंसापूर्वक मानाजाता है, जैसे वृक्षहीन देशमें अरण्ड ही वृक्ष माना जाता है ॥ १६ ॥

विद्वानेव हि जानाति विद्वज्जन-परिश्रमम् ॥
न हि वन्ध्या विजानाति गुर्वींप्रसववेदनाम्[1] ॥ १७ ॥

भाषार्थ–विद्वान् ही विद्वान्के परिश्रमको जानता है, अविद्वान् नहीं जान सकता, जैसे पुत्र उत्पन्न करनेवाली गर्भिणीकी वेदना (अतिपीड़ा) को वन्ध्या स्त्री नहीं जानती है ॥ १७ ॥

स्वगृहे पूज्यते मूर्खः स्वग्रामे पूज्यते प्रभुः ।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान्सर्वत्र पूज्यते ॥ १८ ॥

भाषार्थ–मूर्ख मनुष्य अपने घरमें ही सन्मान पाताहै, ग्रामका स्वामी अपने ही ग्राममें सत्कार पाता है, राजा अपने देश (राज्य) में सन्मान पाता है, परन्तु विद्वान्का सत्कार सर्वत्र होता है ॥ १८ ॥

सविद्यः पुरुषः श्रेष्ठो यत्र कुत्रापि तिष्ठति ॥
तत्रैव भवति श्रीमान् पूजापात्रं च भूभुजाम् ॥ १९ ॥

भाषार्थ–विद्यायुक्त पुरुष श्रेष्ठ होता है। वह कहीं भी रहे वहीं श्रीमान् और राजाओंके पूजायोग्य होता है ॥ १९ ॥

पंडितो हि वरं शत्रुर्न मूर्खो हितकारकः ॥
वानरेण हतो राजा विप्रचौरेण रक्षितः ॥ २० ॥

भाषार्थ–पंडित यदि शत्रु भी हो तौभी अच्छा है और मूर्ख मित्र नहीं अच्छा, वानरने राजाको मारा, चार पण्डित ब्राह्मणने राजाकी रक्षा की २०

१ प्रसवकालव्यथाम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मातृवत्परदारांश्च परद्रव्याणि लोष्टवत् ॥
आत्मवत्सर्वभूतानि यः पश्यति स पण्डितः ॥ २१ ॥

भाषार्थ–पराई स्त्रियोंको माताके समान, दूसरोंके धनको ढेलेके समान और सब प्राणियोंको अपनी आत्माके समान अर्थात् आत्मभावसे जो देखता है, वही पंडित कहाता है ॥ २१ ॥

इभतुरगशतैः प्रयान्तु मूढाः
धनरहिता विबुधाः प्रयान्तु पद्भ्याम् ॥
गिरिशिखरगताऽपि काकपंक्तिः
पुलिनगतैर्न समा हि राजहंसैः ॥ २२ ॥

भाषार्थ–मूढ (मूर्ख) जन हाथी घोड़े और रथोंपर चढ़कर भले ही गमन करें और धनहीन पंडित लोग पैदल ही चलें तौभी पंडितकी बराबरी मूर्ख नहीं करसकता, जैसे पर्वतके बडे बडे शिखरों पर बैठे हुए कौए किनारेपर बैठे हुए राजहंसोंकी कभी बराबरी नहीं कर सकते हैं ॥ २२ ॥

सत्यं तपो ज्ञानमहिंसता च
विद्वत्प्रणामश्च सुशीलता च ॥
एतानि यो धारयते स विद्वान्
न केवलं यः पठते स विद्वान् ॥ २३ ॥

भाषार्थ–सत्य, तप, ज्ञान, अहिंसा, विद्वानों के प्रति प्रणाम और सुशीलता इनगुणोंको जो धारण करता है वही विद्वान् है, केवल जो पढ़लेता है वही विद्वान् नहीं है ॥ २३ ॥

---

१ सैकतागतैः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शास्त्रोपस्कृतशब्दसुन्दरगिरः[1] शिष्यप्रदेयागमाः
विख्याताः कवयो[2] वसन्ति विषये[3] यस्य प्रभोर्निर्धनाः॥
तज्जाड्यं[4] वसुधाधिपस्य कवयो ह्यर्थं विनापीश्वराः
कुत्स्याःस्युः कुपरीक्षका हि मणयो यैरर्घतः[5] पातिताः॥२४॥

भावार्थ–शास्त्रोंसे जिनकी वाणी परिष्कृत है, शिष्योंको देने योग्य शास्त्र जिनके पास हैं अर्थात् भलीभांति पढेहुए शास्त्रोंको पढ़ानेमें जो समर्थ हैं और जो संसारमें विख्यात हैं ऐसे कविजन जिस राजाके राज्यमें निर्धन होकर निवास करते हैं, सो जड़ता उस राजाकी ही है, क्योंकि कविजन तो धनहीन होनेपर भी समर्थ हैं। क्या वे कुपरिक्षक निन्दनीय नहीं हैं कि जिन्होंने बहुमूल्य मणियोंको मूल्यसे गिरा दीया है अर्थात् जितनीकिमत होनी चाहिये उतनी नहीं लगाई है॥ २४॥

गुणवदगुणवद्वा कुर्वता कार्यमादौ
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन॥
अतिरभसकृतानां कर्मणामाविपत्ते-
र्भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः॥२५॥

भावार्थ–गुणयुक्त अथवा गुणरहित कोई भी कार्य हो उस कार्यको आदिमें पंडितजनको पहले परिणाम अवश्य सोच लेना उचित है, क्योंकि विना शोच विचारके बहुत जल्दीके साथ कार्य करनेपर कोई बात बिगड़जाय तो वह मरणपर्यन्त शल्यकी नाई हृदय जलाया करती है॥ २५॥

१ शास्त्रसंस्कारेण शुद्धा ये शब्दास्तैः सुन्दरा गिरो येषां ते। २ पंडिताः। ३ देशे। ४ मौर्ख्यम्। ५ मूल्यतः।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न पण्डिताः साहसिका भवन्ति
श्रुत्वापि ते संतुलयन्ति तत्वम् ॥
तत्वं समादाय समाचरन्ति
स्वार्थं प्रकुर्वन्ति परस्य चार्थम् ॥ २६ ॥

भाषार्थ–पंडितजन बिना बिचारे काम करनेवाले नहीं होते हैं, बल्कि सुनकरके तत्वकी तुलना करते हैं. फिर उस तत्वको लेकर अपने और दूसरेके कार्यका साधन करते हैं ॥ २६ ॥

वैद्यं पानरतं नटं कुपठितं स्वाध्यायहीनं द्विजं
योधं कापुरुषं हयं गतरयं मूर्खं परिव्राजकम् ॥
राजानं च कुमंत्रिभिः परिवृतं देशं च सोपद्रवं
भार्यां यौवनगर्वितां पररतां मुञ्चन्ति ते पण्डिताः २७॥

भाषार्थ–मद्य आदि पीनेवाले वैद्यको, कुपढ अथवा कुत्सित वचन बोलनेवाले नटको, वेदपाठसे रहित ब्राह्मणको, कापुरुष (डरपोक) योधाको, वेगहीन अर्थात् धीमी चालवाले घोड़ेको, मूर्ख सन्यासीको, दुष्ट मंत्रियोंसे युक्त राजाको, रोग आदि उपद्रवोंसे युक्त देशको और यौवनसे गर्वित तथा दूसरे पुरुषमें आसक्त स्त्रीको जो छोड़ देते हैं वे ही पंडित कहाते हैं ॥ २७ ॥

क्षिप्रं विजानाति चिरं शृणोति
विज्ञाय चार्थं भजते न कामात् ॥
नासंपृष्टो व्युपयुङ्क्ते परार्थे
तत्त्व ज्ञानं प्रथमं पंडितस्य ॥ २८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जो शीघ्र समझ लेता है और देरमें सुनता है. अर्थको जानकर काम करता है। और जो बिना पूँछे किसीके काममें नहीं प्रवृत्त होता है, वही पंडितोंकी मुख्य बुद्धिमानी है ॥ २८ ॥

विद्याविनयोपेतो हरति न चेतांसि कस्य मनुजस्य ॥
काञ्चनमणिसंयोगो नो जनयति कस्य लोचनानन्दम्॥२९

भाषार्थ–विद्या और विनयसम्पन्न पुरुष किस मनुष्यके चित्तको हरण नहीं करता ? जैसे सुवर्ण और रत्नका संयोग किसके नेत्रोंको आनन्द नहीं देता है; अर्थात् सबको आनन्दित करता है ॥ २९ ॥

यद्यपि भवति कुरूपो वस्त्रालंकारवेषपरिहीनः ॥
सज्जनसभां प्रविष्टो राजति विद्याऽधिकः पुरुषः॥३०॥

भाषार्थ–यद्यपि कुरूप हो और वस्त्र आभूषण तथा वेषसे रहित हो, तथापि सज्जनोंकी सभामें जाकर अधिक विद्यावाला पुरुष ही शोभाको प्राप्त होता है ॥ ३० ॥

सम्पूर्णकुम्भो न करोति शब्द-
मर्धो घटो घोषमुपैति नूनम् ॥
विद्वान् कुलीनो न करोति गर्वं
गुणैर्विहीना बहु जल्पयन्ति ॥ ३१ ॥

भाषार्थ–जलसे पूर्ण घड़ा शब्द नहीं करता है, आधा घड़ा अवश्य ही शब्द करता है अर्थात् छलछलाता है, उसी प्रकार विद्वान् और कुलीन पुरुष गर्व (अभिमान) नहीं करते, गुणहीन पुरुष ही बहुत बकवाद करते हैं ॥ ३१ ॥

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा-
सत्यव्रताविहितमानमलापहाराः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये
धन्या नरा विहितकर्मपरोपकाराः ॥ ३२ ॥

भावार्थ—विद्याके विलाससे आनन्द चित्तवाले, शील और शिक्षाको धारण करनेवाले, सत्यका आचरण करनेवाले, जिन्होंने अभिमान रूप मलको दूर किया है और जो संसारके दुःखको दूर करके सुशोभित हो रहे हैं तथा उचित कर्म करके परोपकार करते हैं, ऐसे पुरुष जगत्में धन्य हैं ॥ ३२ ॥

अधिगतपरमार्थान्पण्डितान्मावमंस्था-
स्तृणमिव लघुलक्ष्मीर्नैव तान्संरुणद्धि ॥
मदमिलितमिलिन्दश्यामगण्डस्थलानां
न भवति विसतन्तुर्वारणं वारणानाम् ॥३३॥

भावार्थ—वेदशास्त्रका सब तत्व जिन्होंने जान लिया है, ऐसे पंडितोंका अपमान मत करो, उनके आगे तृणसमान लक्ष्मी उनको रोक नहीं सकती, जैसे मद स्रावसे इकट्ठे हुए भ्रमरोंके कारण जिनके कपोल श्याम होरहे हैं ऐसे हाथियोंके निवारण करनेमें कमलका तन्तु समर्थ नहीं होता है ॥ ३३ ॥

विप्रोऽपि योऽनधीयानः स तिष्ठतु पुराद्बहिः ॥
कुम्भकारोऽपि विद्वान् स तिष्ठतु पुरे मम ॥ ३४ ॥

भावार्थ—महाराजा भोजने अपने नगरमें यह आज्ञा देदी थी कि ब्राह्मण भी जो पढा लिखा न हो वह नगरसे बाहर जाकर निवास करे और कुम्हार भी जो विद्वान् हो वह हमारे नगरमें निवास करे ॥ ३४ ॥

---

१ अवमानं मा कुरु। २ रोधं न कुरुते। ३ गजानाम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

महाराजा भोजने नवीन श्लोक रचकर लानेवाले विद्वान्को एकलक्ष मुद्रा देनेका नियम बाँधदिया कि जिससे विद्याका अधिक प्रचार हो, कुछ दिनोंके उपरान्त राजकोष खाली होने लगा; तब महाराजके मंत्रियोंने ब्राह्मीआदि औषधियोंका प्रयोग किया और अपनी स्मरण-शक्तिको बढ़ाया । चार मंत्री थे उन मंत्रियोंमेंसे एकको एकवार सुननेसे, दूसरेको दोबार सुननेसे, तीसरेको तीनवार सुननेसे और चौथेको चार बार सुननेसे नवीन श्लोक कण्ठस्थ हो जाताथा, तब जो कोई पंडित नवीन श्लोक बनाकर लाता था उसका श्लोक वे पुराना बतला देतेथे । एक पंडित धनहीन होनेसे अपनी कन्या नहीं विवाह सका । किसी से सुना कि महाराज भोजके यहाँ नवीन श्लोक रचकर ले जानेपर एक लक्ष मुद्रा मिलता है । सुनते ही प्रसन्न होकर पंडितजीने नवीन श्लोक रचकर भोजराजाके सभामें जाकर सुनाया । मंत्रियोंने उस श्लोकको पढकर पुराना बतला दिया। पंडितजीका मनोरथ भंग होगया तब बहुत क्रोधातुर और शोकातुर होकर अपने घर लौट चले। कालिदासजीको दया आई; पंडितजीको एकान्तमें लेजाकर वृत्तान्त पूँछा । पंडितजीने बहुत उदास होकर हाल कह सुनाया तब कालिदास-जीने एक श्लोक रचकर पंडितजीको दिया । उसको कंठस्थ कर पंडि-तजीने राजसभामें जाकर सुनाया । वह श्लोक यह है:—

श्रीमांस्त्वं भोजराजः क्षितिपतितिलकः धार्मिकः सत्यवादी पित्रा ते मे गृहीतं नवनवतितरं रत्नकोट्यं मदीयम् ॥ जानन्त्येते सभास्थाः सकलबुध-जनाः सत्यमेतन्मृषा वा पितॄणां देहि मह्यं नवनव तितरं लक्षमेकं मदीयम् ॥ ३५ ॥

भावार्थ—हे भोजराज ! आप श्रीमान् हैं, राजाओंके शिरोमणि हैं, धार्मिक और सत्यवादी हैं । आपके पिताने मेरे पितासे निन्यानवे

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

करोड रुपये उधार लियेथे, यह बात सत्य है अथवा झूँठ, इसको आपके सभास्थ मंत्रिजन जानते हैं क्योंकि यह वृत्त प्राचीन है । अब या तो आप मेरे पिताका निन्यानवे करोड रुपया जो आपके पिताके जिम्मे था सो दीजिये, नहीं तो एकलाख मुद्रा मेरा है ही वही दीजिये ॥३९॥ तत्पश्चात् विचारकर राजसभासे एक लक्ष मुद्रा पंडितको मिला। वह पंडित कालिदासजीको आशीर्वाद देता हुआ अपने घर गया और आनन्दपूर्वक कन्याका विवाह उस धनसे किया । तात्पर्य यह कि विद्यासे धन प्राप्त होता है ॥

कुपंडित (मूर्ख) निन्दा ।

मूर्खचिन्हानि षडिति गर्वो दुर्वचनं मुखे ॥
विरोधी विषवादी च कृत्याकृत्यं न मन्यते ॥ १ ॥

भावार्थ–मूर्खजनके छः चिह्न हैं, गर्व (अभिमान) मुखमें दुर्वचन, विरोधी, विषवादी (विषके समान बात कहने वाला) कृत्य अकृत्यको नहीं मानने वाला, ये छः लक्षण जिसमें हों वह मूर्ख है ॥१॥

वरं पर्वतदुर्गेषु भ्रान्तं वनचरैः सह ॥
न मूर्खजनसम्पर्कः सुरेन्द्रभवनेष्वपि ॥ २ ॥

भावार्थ–पर्वतकी कन्दराओंमें वनचारी जीवोंके साथ भ्रमण करना अच्छा है, परन्तु मूर्ख मनुष्योंके साथ इन्द्रभवनमें भी रहना नहीं अच्छा है ॥ २ ॥

मूर्खो हि जल्पतां पुंसां श्रुत्वा वाचः शुभाशुभाः ॥
अशुभं वाक्यमादत्ते पुरीषमिव शूकरः ॥ ३ ॥

भावार्थ–बातें करते हुए पुरुषोंके शुभ अशुभ वचन सुनकर अशुभ वचनको मूर्खजन ग्रहण करता है, जैसे शूकर विष्ठाको ग्रहण करता है ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

उपदेशो हि मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये ॥
पयःपानं भुजंगानां केवलं विषवर्द्धनम् ॥ ४ ॥

भाषार्थ–मूर्खोंको उपदेश कोपके अर्थ होता है न कि शान्तिके निमित्त। जैसे साँपोंको दूध पिलाना केवल विषको ही बढ़ाना है ॥४॥

मूर्खो हि मूर्खं दृष्ट्वा च चन्दनादपि शीतलः ॥
यदि पश्यति विद्वांसं मन्यते पितृघातकम् ॥ ५ ॥

भाषार्थ–मूर्ख मूर्खको देखकर चन्दनसे भी अधिक शीतल होजाता है, यदि वह विद्वान्को देख लेता है तो ऐसा मानता है मानो यह मेरे बापको मारनेवाला है ॥ ५ ॥

यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किं ॥
लोचनाभ्यां विहीनस्य दर्पणः किं करिष्यति ॥ ६ ॥

भाषार्थ–जिसको स्वयं बुद्धि नहीं है उसको शास्त्र ही क्या कर सकता है? जैसे दोनों नेत्रोंसे हीन पुरुषको दर्पण क्या कर सकता है॥६॥

शोभते विदुषां मध्ये नैव दुर्गुणमानसः ॥
अन्तरे तमसां दीपः शोभते नार्कतेजसाम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–विद्वज्जनोंमें गुणहीन मनुष्य शोभा नहीं पाता जैसे दीपक अन्धकारमें शोभा पाता है और सूर्यके तेजमें शोभा नहीं पाता ॥ ७ ॥

मदोपशमनं शास्त्रं खलानां कुरुते मदम् ॥
चक्षुःप्रकाशकं तेज उलूकानामिवान्धताम् ॥ ८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-मदको दूर करनेवाला शास्त्र दुष्टोंका मद बढ़ानेवाला होता है, अर्थात् शास्त्र पढकर सज्जन अभिमान रहित हो जाते हैं और दुर्जन यदि शास्त्रमें अभ्यास करलेते हैं तो अभिमानी हो जाते हैं, जैसे नेत्रोंको प्रकाश करनेवाला तेज घुग्घू पक्षीको अन्धा कर देता है ॥ ८ ॥

काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ॥
व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ॥ ९ ॥

भाषार्थ-काव्य शास्त्रोंके विनोदसे बुद्धिमान् जनोंका समय व्यतीत होता है और मूर्खोंका समय व्यसन, निद्रा और कलहसे व्यतीत होता है ॥ ९ ॥

अनाहूतः प्रविशति ह्यपृष्टो बहु भाषते ॥
अविश्वस्ते विश्वसिति मूढचेता नराधमः ॥ १० ॥

भाषार्थ-जो बिना बुलाये जाता है, बिना पूंछे ही बहुत बोलने लगता है और नहीं विश्वास वालोंमें विश्वास करता है वही मूढ चित्त-वाला मनुष्योंमें अधम कहा गया है ॥ १० ॥

अश्रुतश्चसमुन्नद्धो दरिद्रश्च महामनाः ॥
अर्थांश्चाकर्मणा प्रेप्सु मूढ इत्युच्यते बुधैः ॥ ११ ॥

भाषार्थ-बिना पढ़े बड़ा होनेकी इच्छा करे. दरिद्री होकर बड़े बड़े मनोरथ करे तथा बिना उद्योग किये धनकी इच्छा करे तो बुध-जन उसको मूढ कहते हैं ॥ ११ ॥

अमित्रं कुरुते मित्रं मित्रं द्वेष्टि हिनस्ति च ॥
कर्म चारभते दुष्टं तमाहुर्मूढचेतसम् ॥ १२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जो शत्रुको मित्र बनाता है, मित्रसे द्वेष रखता तथा मारता है और दुष्ट कर्मको करता है वह मूढचित्त वाला कहा गया है ॥ १२ ॥

परं क्षिपति दोषेण वर्तमानः स्वयं तथा ॥
यश्च क्रुद्ध्यत्यनीशानः स च मूढतमो नरः ॥ १३ ॥

भाषार्थ-स्वयं दोषी होकर जो दूसरोंको दोषी बनाता है और असमर्थ होकर जो क्रोध करता है वह मनुष्य महामूढ है ॥ १३ ॥

गुणिगणगणनारम्भे
न पतति कठिनी सुसम्भ्रमाद्यस्य ॥
तेनाम्बा यदि सुतिनी
वद वन्ध्या कीदृशी भवति ॥ १४ ॥

भाषार्थ-गुणवान् मनुष्योंकी गणनाके समय जिसके निमित्त संभ्रमसे अर्थात् शीघ्रतासे पहली बार खड़ी नहीं गिरती है तो ऐसे पुत्रसे यदि उसकी माता पुत्रवती कहलावे तो कहो वन्ध्या कैसी होती है, अर्थात् गुणहीन पुत्रवाली स्त्री वन्ध्या ही है ॥ १४ ॥

येषां न विद्या न तपो न दानं
ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः ॥
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूताः
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥ १५ ॥

भाषार्थ-जिनको न विद्या है, न तप है, न दान है, न शील है, न गुण है और न धर्म है. वे मनुष्य पृथिवीपर भारभूत होकर मनुष्य रूपसे मृगवत् विचर रहे हैं ॥ १५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अज्ञः सुखमाराध्यः सुखतरमाराध्यते विशेषज्ञः ॥
ज्ञानलवदुर्विदग्धं ब्रह्माऽपि नरं तं न रंजयति ॥ १६ ॥

भाषार्थ–अज्ञानी मनुष्य सुखसे प्रसन्न किया जाता है और ज्ञानी पुरुष अत्यन्त सुखपूर्वक प्रसन्न किया जाता है परंतु जो नाम-का ज्ञानी मूढ मनुष्य है उसको ब्रह्माजी भी प्रसन्न नहीं कर सकते हैं ॥ १६ ॥

वरं दरिद्रः श्रुतिशास्त्रपारगो
न चापि मूर्खो बहुरत्नसंयुतः ॥
सुलोचना जीर्णपटाऽपि शोभते
न नेत्रहीना कनकैरलंकृता ॥ १७ ॥

भाषार्थ–वेद शास्त्रोंका पारगामी पुरुष यदि निर्धन होवे तौ भी अच्छा है, परन्तु मूर्ख मनुष्य बहु रत्नोंवाला होनेपर भी नहीं अच्छा। जैसे सुन्दर नेत्रवाली स्त्री फटे वस्त्र पहने हो तौभी शोभा देती है परन्तु नेत्रहीन स्त्री सुवर्णके आभूषणोंसे और उत्तम २ वस्त्रोंसे युक्त हो तौभी शोभा नहीं देती ॥ १७ ॥

मूर्खत्वं सुलभं भजस्व कुमते ! मूर्खस्य चाष्टौ गुणाः निश्चिन्तो बहुभोजनोऽतिमुखरो रात्रिंदिवा स्वप्नभाक् ॥ कार्याकार्यविचारणान्धबधिरो माना-पमाने समः प्रायेणामयवर्जितो दृढवपुर्मूर्खः सुखं जीवति ॥ १८ ॥

भाषार्थ–हे मूढ मतिवाले ! मूर्खता सुलभ है तुम उसीको स्वीकार करो । मूर्खके आठ गुण हैं, १ चिन्ता नहीं करना, २ बहुत भोजन

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

करना, ३ अधिक बकवाद करना, ४ रातदिन सोना, ५ कार्य अकार्यके विचारमें अन्धे और बहरेकी नाईं वर्ताव करना, ६ मान अपमानमें समानभाव रहना, ७ प्रायः रोगरहित, ८ पुष्ट शरीर । इसीसे मूर्ख मनुष्य सुखसे जीवन व्यतीत करता है ॥ १८ ॥

रूपयौवनसम्पन्ना विशालकुलसंभवाः ॥
विद्याहीना न शोभन्ते निर्गन्धा इव किंशुकाः ॥१९ ॥

भावार्थ–रूप और यौवन सम्पन्न तथा विशाल कुलमें जन्म होनेपर भी विद्याहीन पुरुष शोभाको प्राप्त नहीं होते जैसे गन्धहीन पलाशका फूल शोभा नहीं देता ॥ १९ ॥

मीमांसा पठिता न यैरुपनिषन्नैव श्रुता तत्त्वतः श्रीमच्छाङ्करभाष्यतो भगवती गीताऽप्यधीता न यैः ॥ सिद्धान्तापगतं शिरोमणिमतं ज्ञात्वाऽपि किंचित्ततो भट्टाचार्यपदं गताः कथमहो लज्जां लभन्ते न ते ॥ २० ॥

भावार्थ–जिन्होंने न मीमांसा पढी, न कोई उपनिषद् ही तत्वपूर्वक श्रवण की और न श्रीशंकराचार्य भगवान्के भाष्यसे युक्त गीता पढी है । सिद्धान्तोंको छोडकर बड़े बड़े ग्रंथोंका कुछ कुछ अभिप्राय जानकर भट्टाचार्य पद धारण करनेवालोंको लज्जा नहीं प्राप्त होती है, यह बडे खेदकी बात है ॥ २० ॥

शक्यो वारयितुं जलेन हुतभुक् छत्रेण सूर्यातपो-
नागेन्द्रो निशिताङ्कुशेन समदो दंडेन गोगर्दभौ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

व्याधिर्भेषजसंग्रहैश्च विविधैर्मंत्रप्रयोगैर्विषं सर्वस्यौ-
षधमस्ति शास्त्रविहितं मूर्खस्य नास्त्यौषधम् ॥ २१ ॥

भावार्थ–जलसे अग्नि, छातासे सूर्यकी धूप, तीक्ष्ण अंकुशसे मतवाला तथा दण्डसे बैल और गदहा, औषधियोंके संग्रहसे रोग और नाना प्रकारके मंत्र प्रयोगसे विष निवारण हो सकता है, तात्पर्य यह कि सबका औषध है परन्तु शास्त्रहीन मूर्खके लिए कोई औषधी नहीं है। अर्थात् मूर्खको कोई नहीं सुधार सकता है ॥ २१ ॥

पुस्तकेषु च नाधीतं नाधीतं गुरुसन्निधौ ॥
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये वको यथा ॥ २२ ॥

भावार्थ–पुस्तकसे जिसने नहीं पढा है और न गुरुहीके पास बैठकर पढा है तो वह सभाके बीच नहीं शोभता है, जैसे हंसोंमें वगुला शोभा नहीं पासकता है ॥ २२ ॥

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः ॥
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये वको यथा ॥ २३ ॥

भावार्थ–वह माता शत्रु और पिता वैरी है जिसने अपने बालकको नहीं पढाया सभामें वह बालक शोभा नहीं पासकता जैसे हंसोंके बीच बगुला शोभा नहीं पाता ॥ २३ ॥

किं गर्जितेन वृषभेन पराजितेन
किं कोकिलस्वरकृतेन विना वसन्तम् ॥
किं कातरेण बहुशास्त्रपरिग्रहेण
किं जीवितेन पुरुषेण निरक्षरेण ॥ २४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—पराजित वृषभके गर्जन से क्या, वसन्त ऋतुके बिना कोयलकी कूकसे क्या, डरपोंकके बहुत शास्त्राध्ययनसे क्या, बिना पढ़े पुरुषके जीवनसे क्या, भावार्थ यह कि जो बैल दूसरे बैलसे हार गया फिर उसका डौंकना वृथा है, वसन्त ऋतुमें कोयलकी बोली अच्छी लगती है. बिना वसन्त ऋतुके कोयलका बोलना वृथा है, शास्त्र पढ-कर बात पड़नेपर दूसरेसे डर जाना वृथा है उस शास्त्र पढनेहीसे क्या लाभ हुआ, इसीप्रकार जिस मनुष्यने पढा नहीं है उसका जीवन वृथा है ॥ २४ ॥

वरं गर्भस्रावो वरमृतुषु नैवाभिगमनं
वरं जातः प्रेतो वरमपि च कन्यैव जनिता ॥
वरं वन्ध्या भार्या वरमपि च गर्भेषु वसति-
र्नचाविद्वान्रूपद्रविणगुणयुक्तोऽपि तनयः २५

भाषार्थ—गर्भ गिरजाना अच्छा, ऋतुकालमें स्त्रीप्रसंग न करना अच्छा, जन्मलेते ही मरजाना अच्छा, अथवा कन्याहीका जन्म होना अच्छा, अथवा स्त्रीका वाँझ रहना अच्छा, किंवा गर्भमें ही रहना अच्छा, परन्तु सुन्दररूप धन आदि गुणोंसे युक्त होनेपर भी विद्याहीन पुत्र अच्छा नहीं ॥ २५ ॥

वैयाकरणप्रशंसा ।

वैयाकरणकिरातादपहृतशब्दाः
मृगाः क्व यान्ति संत्रस्ताः ॥
ज्योतिर्नटविटगायक-
भिषगाननगह्वराणि यदि न स्युः ॥ १ ॥

१ भिल्लाः । २ भीताः । ३ ज्योतिर्विदः । ४ नाट्यकाराः । ५ जाराः । ६ वैद्याः । ७ कन्दराः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-वैयाकरण रूपी व्याघ्राके भयसे भगेहुए अपशब्दरूप मृग कहाँ जायँ यदि ज्योतिषी, नट, (नाटककर्ता) जार, गायक, वैद्य, इनके मुखरूप गुफाएँ न होयँ ॥ १ ॥

शब्दशास्त्रमनधीत्य यः पुमान्
वक्तुमिच्छति वचः सभान्तरे ॥
बद्धुमिच्छति वने मदोत्कटं
हस्तिनं कमलनालतन्तुना ॥ २ ॥

भाषार्थ-व्याकरणको न पढ़कर जो पुरुष सभाके बीचमें बोलनेकी इच्छा करता है, वह ऐसा है जैसे कोई बनमें मतवाले हाथीको कमलनालके तन्तु (विसतन्तु) से बाँधनेकी इच्छा करता हो ॥ २ ॥

नैयायिकप्रशंसा ।

मोहं रुणद्धि विमलीकुरुते च बुद्धिं
सूते च संस्कृतपदव्यवहारशक्तिम् ॥
शास्त्रान्तराभ्यसनयोग्यतया युनक्ति
तर्कश्रमो न तनुते किमिहोपकारम् ॥ १ ॥

भाषार्थ-न्यायशास्त्र मोहको दूर करता है, बुद्धिको निर्मल करता है, संस्कृतपदोंके व्यवहारमें शक्ति उत्पन्न करता है, अन्य अन्य शास्त्रोंके बीच अभ्यास करनेकी भी योग्यता उत्पन्न करता है इस लिये न्यायशास्त्रका परिश्रम क्या क्या उपकार नहीं कर सकता ॥ १ ॥

---

१ व्याकरणम् । २ विसतन्तुना । ३ अज्ञानम् । ४ रोधयति । ५ उत्पादयति । ६ योजयति ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मीमांसकप्रशंसा ।

शबरकुमारिलगुरवो मंडनभवदेवपार्थसारथयः ॥
अन्ये च विश्वमान्या जयन्ति संत्रायमाणतंत्रास्ते ॥१॥

भाषार्थ–शबराचार्य्य, कुमारिलभट्ट, गुरु शङ्कराचार्य्य, मंडनमिश्र, भवदेव, पारथ और सारथि तथा अन्य भी जो जगन्मान्य पंडित, जिन्होंने अपने कर्मकांडसे जगत्की रक्षा की, उनकी जय हो । अर्थात् ये पंडित जयको प्राप्त हों और कर्मका प्रचार जगत्में सर्वदा रहे ॥ १ ॥

वैद्यप्रशंसा ।

गुरोरधीताऽखिलवैद्यविद्यः
पीयूषपाणिः[1] कुशलः क्रियासु ॥
गतस्पृहो धैर्यधरः कृपालुः
शुद्धोऽधिकारी भिषगीदृशः स्यात् ॥ १ ॥

भाषार्थ–जिसने गुरुके समीप बैठकर सब वैद्यविद्या पढ़ी हो, हाथमें यश हो, रसआदि क्रिया (बनाने) में कुशल हो, निर्लोभ, धैर्यधारी हो, दयालु हो और अन्तःकरणसे शुद्ध हो तो ऐसे लक्षणोंसे युक्त मनुष्य वैद्य कहलाता है ॥ १ ॥

अन्यानि शास्त्राणि विनोदमात्रं
प्राप्तेषु वा तेषु न तैश्च किंचित् ॥
चिकित्सितज्योतिषमंत्रवादाः
पदे पदे प्रत्ययमावहन्ति ॥ २ ॥

---

१ अमृतं पाणौ यस्य सः, अमृतवदवश्यमारोग्यद इत्यर्थः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–अन्य शास्त्र तो विनोद मात्रके हैं, उनके जाननेवालोंको उनसे कुछ भी प्राप्त नहीं होता है, परन्तु वैद्यक शास्त्रके जाननेवाले वैद्य और ज्योतिश शास्त्रके ज्ञाता ज्योतिषी, मंत्रशास्त्रके जाननेवाले तांत्रिक लोग पदपदमें विश्वासपात्र अथवा सुयशके भागी होते हैं ॥२॥

मस्ते[1] (?) दुःसहवेदना कवलिते मग्ने स्वरेऽन्तर्गलं
तप्तायां ज्वरपावकेन च तनौ तान्ते[2] हृषीकव्रजे[3] ॥
दूने[4] बन्धुजने कृतप्रलपने धैर्यं विधातुं पुनः
कः शक्तः कलितामयप्रशमनो वैद्यात्परो विद्यते॥३

भाषार्थ–मस्तकमें नहीं सहन करने योग्य पीड़ा हो रही है, बारं बार मूर्च्छा आरही है, कंठमें कफ रुक रहा है जिससे बोला नहीं जाता, ज्वरकी अग्निसे शरीरमें जलन पड रही है, इन्द्रियाँ विकल होरही हैं, बन्धुजन उदास होकर विलाप कर रहे हैं तो ऐसे समयमें धीरज देनेके योग्य, रोगको दूर करनेवाले वैद्यके बिना और कौन समर्थ हो सकता है अर्थात् ऐसे समयमें वैद्य ही प्राणदान कर सकता है ॥ ३ ॥

कुवैद्य–निन्दा ।

वैद्यराज ! नमस्तुभ्यं यमराजसहोदर ! ॥
यमस्तु हरते प्राणान् वैद्यः प्राणान्धनानि च ॥१॥

भाषार्थ–हे वैद्यराज ! हे यमराजके सहोदर (भाई) ! तुमको नमस्कार है, यमराज तो प्राणोंको ही हरता है, परन्तु वैद्य प्राण और धन दोनोंको हरलेता है ॥ १ ॥

---

१ मस्तके । २ म्लाने । ३ इन्द्रियसमूहे । ४ खिन्ने ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

चितां प्रज्वलितां दृष्ट्वा वैद्यो विस्मयमागतः ॥
नाहं गतो न मे भ्राता कस्येदं हस्तलाघवम् ॥ २ ॥

भाषार्थ–चिताको प्रज्वलित (जलती हुई) देखकर कुवैद्य विस्मयको प्राप्त होता भया, कि न तो मैं गया न मेरा भाई गया तो यह किसके हाथकी सफाई है ॥ २ ॥

मिथ्यौषधैर्हन्त ! मृषाकषायै-
रसह्यलेह्यैरयथार्थतैलैः ॥
वैद्या इमे वञ्चितरुग्णवर्गाः[1]
पिचण्डभाण्डं[2] परिपूरयन्ति ॥ ३ ॥

भाषार्थ–शोक है कि मिथ्या औषधियोंसे, झूंठे काढोंसे, असह्य चटनियोंसे एवं झूँठे तेलोंसे कुवैद्य जन रोगियोंको ठगते हुए अपने उदरभांडको भरते हैं ॥ ३ ॥

गणकप्रशंसा।

चतुरङ्गबलो राजा जगतीं वशमानयेत् ॥
अहं पञ्चाङ्गबलवानाकाशं वशमानये ॥ १ ॥

भाषार्थ–चतुरंगिणी सेनासे समर्थ होकर राजा जगत्को अपने वशमें करलेता है, मैंने पंचांगके बलसे आकाशको वशमें करलिया है ॥ १ ॥

दूतो न संचरति खे न चलेच्च वार्ता
पूर्वं न जल्पितमिदं न च संगमोऽस्ति ॥
व्योम्नि स्थितं रविशशिग्रहणं प्रशस्तं
जानाति यो द्विजवरः स कथं न विद्वान् ॥२॥

१ रोगिसमूहः। २ उदरभांडम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–आकाशमें दूत नहीं पहुँच सकता, न कोई बात चलती है, न पहले किसीने बताया, और न संगम है, तो आकाशमें स्थित सूर्यचन्द्रके ग्रहणको जो ब्राह्मण जान लेता है वह कैसे नहीं विद्वान् माना जाय ॥ २ ॥

कुगणकनिन्दा ।

गणयति गगने गणकश्चन्द्रेण समागमं विशाखायाः ॥
विविधभुजंगक्रीडासक्तां गृहिणीं न जानाति ॥ ३ ॥

भावार्थ–ज्योतिषी पंडित आकाशमें चन्द्रमासे विशाखाके समागमकी गणना करते हैं, परंतु वे विविध प्रकारसे भुजंग क्रीडामें आसक्त गृहिणी (घरवाली) को नहीं जानते ॥ १ ॥

गणिकागणकौ समानधर्मौ निजपञ्चाङ्गनिदर्शकावुभौ ॥
जनमानसमोहकारिणौ विधिना वित्तहरौ विनिर्मितौ ॥२

भावार्थ–गणिका (वेश्या) गणक (ज्योतिषी पंडित) दोनोंका धर्म समान है, अपने पंचांगको देखनेवाले दोनों हैं । वेश्या अपने पाँचों अंग देखाती है, और गणक अपने तिथ्यादि पंचांगको देखाकरता है तथा मनुष्योंके मनको मोह उत्पन्न करने वाले दोनों हैं वेश्या अपना रूप दिखाकर मोहित करती है, गणक शुभाशुभ फल बताकर मोहको उत्पन्न करता है, इसलिये विधाताने मनुष्योंका धन ठगनेहीके लिये इन दोनोंकी रचना की है ॥ २ ॥

पुरोहितनिन्दा ।

पुरीषस्य च रोषस्य हिंसायास्तस्करस्य च ॥
आद्याक्षराणि संगृह्य वेधाश्चक्रे पुरोहितम् ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–पुरीष, रोष, हिंसा और तस्कर इन चारोंके पहले अक्षरको लेकर ब्रह्माने यह "पुरोहित" शब्द रचा है ॥ १ ॥

कायस्थनिन्दा ।

कायस्थेनोदरस्थेन मातृमांसं न भक्षितम् ॥
न तत्र करुणाहेतुः तत्रहेतुरदन्तता ॥ १ ॥

भाषार्थ–माताके उदरमें कायस्थने माताका मांस दांत नहीं रहनेकी बजहसे नहीं खाया न कि करुणाकी वजहसे ॥ १ ॥

विना मद्यं विना मांसं परस्वहरणं विना ॥
विना परापवादेन दि[१]विरो दि[२]वि रोदति ॥ २ ॥

भाषार्थ–बिना मद्य, बिना मांस, बिना परधन हरण किये और दूसरोंकी निन्दाके बिना अर्थात् दूसरोंको गाली दिये बिना कायस्थ स्वर्गमें भी रोता है ॥ २ ॥

सज्जनप्रशंसा ।

सज्जना एव साधूनां प्रथयन्ति गुणोत्करम् ॥
पुष्पाणां सौरभं प्रायस्तनुते दिक्षु मारुतः ॥ १ ॥

भाषार्थ–सज्जन ही साधुओंके गुणगन्धको फैलाते हैं, जिस प्रकार फूलोंकी गन्धको पवन सब दिशाओंमें फैलाता है ॥ १ ॥

विपदि धैर्यमथा[३]भ्युदये क्षमा
सदसि वाक्[४]पटुता युधि विक्रमः ॥
यशसि चाभिरुचिर्व्यसनं श्रु[५]तौ
प्र[६]कृतिसिद्धमिदं हि महात्मनाम् ॥ २ ॥

---

१ कायस्थः । २ स्वर्गः । ३ अभ्युदयकाले । ४ वक्तृत्वशक्तिः । ५ शास्त्रे । ६ स्वभावसिद्धम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-विपत्कालमें धीरज रखना, अभ्युदयकाल (ऐश्वर्य) में क्षमा, सभामें बात करनेकी चतुराई, युद्धमें पराक्रम, यशमें प्रीति और शास्त्रमें अभ्यास करना, सज्जन महात्माओंके ये स्वाभाविक लक्षण हैं ॥ २ ॥

अहो कान्यपि चित्राणि चरित्राणि महात्मनाम् ॥
लक्ष्मीं तृणाय मन्यन्ते तद्भारेण नमन्त्यपि ॥ ३ ॥

भाषार्थ-अहो! महात्माओंके कैसे आश्चर्यमय चरित्र हैं कि लक्ष्मीको तृणके समान मानते हैं और लक्ष्मीहीके भारसे नम्र भी होजाते हैं ॥ ३ ॥

सम्पत्सु महतां चित्तं भवत्युत्पलकोमलम् ॥
आपत्सु च महाशैलशिलासंघातकर्कशम् ॥ ४ ॥

भाषार्थ-संपदामें महत्पुरुषोंका चित्त कमलके समान कोमल होता है और आपत्तिकालमें बड़े बड़े पर्वतोंकी शिलाओंके समान कठोर हो जाता है ॥ ४ ॥

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि ॥
लोकोत्तराणां चेतांसि को हि विज्ञातुमर्हति ॥ ५ ॥

भाषार्थ-वज्रसे भी कठोर और फूलसे भी कोमल ऐसे महात्माओंके अन्तःकरणको भला कौन जान सकता है ॥ ५ ॥

सम्पदो महतामेव महतामेव चापदः ॥
वर्द्धते क्षीयते चन्द्रो न तु तारागणः क्वचित् ॥ ६ ॥

भाषार्थ-सम्पत्ति महात्माओंको ही होती है और विपत्ति भी महात्माओंको प्राप्त होती है; जैसे चन्द्रमा कलाओंसे बढ़ता और

५

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

घटता है तारागण कभी नहीं घटते बढ़ते उसी प्रकार सज्जनोंकी सम्पत्ति विपत्तिकी भी हालत है ॥ ६ ॥

नागुणी गुणिनं वेत्ति गुणी गुणिषु मत्सरी ॥
गुणी च गुणरागी च विरलः सरलो जनः ॥ ७ ॥

भाषार्थ–गुणहीन मनुष्य गुणीको नहीं जानता और गुणी गुणवानोंसे द्वेष करता है, गुणी होकर दूसरे गुणवान्का प्रेमसहित आदर करनेवाला सरल जन विरला ही होता है ॥ ७ ॥

विकृतिं नैव गच्छन्ति सङ्गदोषेण साधवः ॥
आवेष्टितं महासर्पैश्चन्दनं न विषायते ॥ ८ ॥

भाषार्थ–साधुजन अर्थात् सज्जन पुरुष संगके दोषसे कभी विकारको नहीं प्राप्त होते, जैसे बड़े २ विषधारी सर्पोंसे वेष्टित चन्दनवृक्ष विषसे युक्त नहीं होते हैं ॥ ८ ॥

सद्भिस्तु लीलया प्रोक्तं शिलालिखितमक्षरम् ॥
असद्भिः शपथेनापि जले लिखितमक्षरम् ॥ ९ ॥

भाषार्थ–सज्जन पुरुषोंसे सहजमें यानि वाग्विलासमें कहा हुआ वचन शिलापर लिखे हुएके समान अमिट यानि अक्षय होता है और दुर्जनोंसे शपथ पूर्वक भी कहा हुआ वचन जलकी रेखाके समान तत्क्षण नाशवान् होता है ॥ ९ ॥

सुजनं व्यजनं मन्ये चारुवंशसमुद्भवम् ॥
आत्मानं च परिभ्राम्य परतापनिवारणम् ॥ १० ॥

भाषार्थ–उत्तम वंशमें उत्पन्न सुजन और उत्तम वंश (बाँस) से बना हुआ व्यजन (पंखा) दोनों एकसे हैं । सुजन स्वयं कष्ट उठाता हुआ दूसरोंके ताप (दुःख) को निवारण करता है और व्यजन स्वयं परिचालित होकर दूसरोंके ताप (गरमी) को दूर करता है ॥ १० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

परोपदेशे पाण्डित्यं सर्वेषां सुकरं नृणाम् ॥
धर्मे स्वीयमनुष्ठानं कस्यचित्तु महात्मनः ॥ ११ ॥

भाषार्थ–दूसरोंको उपदेश करनेमें सब मनुष्योंको पांडित्य सुलभ है, परन्तु स्वयं धर्ममें अनुष्ठान करना (आचरण) किसी अच्छे महात्मा-का ही दिखाई देता है ॥ ११ ॥

नारिकेलसमाकारा दृश्यन्तेऽपि हि सज्जनाः ॥
अन्ये वदरिकाकारा बहिरेव मनोहराः ॥ १२ ॥

भाषार्थ–नारियलके समान सज्जन पुरुष देख पडते हैं, जैसे बाहरी दिखावटसे नारियल कठोर देख पडता है परन्तु भीतर सरस होता है, अन्य (दुर्जन) पुरुष वैरके समान होते हैं जैसे वेर बाहरसे मनो-हर देख पडता है परन्तु भीतरसे कड़ी गुठली निकलती है ॥ १२ ॥

यथा चित्तं तथा वाचो यथा वाचस्तथा क्रियाः ॥
चित्ते वाचि क्रियायां च साधूनामेकरूपता ॥ १३ ॥

भाषार्थ–जैसा चित्त, वैसी ही वाणी और जैसी वाणी वैसी ही क्रिया, तात्पर्य यह कि सत्पुरुषोंके मनमें वाणीमें कर्ममें एकरूपता रहती है, अर्थात् सज्जन मनुष्य मन, वाणी और कर्मसे एक हीसा वर्ताव करते हैं, यहाँ एक श्रुति स्मरण आगई, 'यन्मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति यद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति यत्कर्मणा करोति तद-भिसम्पद्यते' जो मनसे ध्यान करता है वही वाणीसे कहता है, जो वाणीसे निकलता है उसीके अनुसार कर्म करता है जो कर्म करता है उसी कर्मानुसार फल पाता है ॥ १३ ॥

साधुरेव प्रवीणः स्यात् सद्गुणामृतचर्वणे ॥
नवचूताङ्कुरास्वादकुशलः कोकिलः किल ॥ १४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–उत्तम गुणरूप अमृतके चर्वण (चवाने) यानि ग्रहण करनेमें साधु (सत्पुरुष) ही प्रवीण होता है, जैसे आमके नये अंकुरोंके स्वाद लेनेमें कोयल ही कुशल होती है यह निश्चय है ॥ १४ ॥

उपकर्तुं प्रियं वक्तुं कर्तुं स्नेहमकृत्रिमम् ॥
सुजनानां स्वभावोऽयं केनेन्दुः शिशिरीकृतः ॥ १५ ॥

भाषार्थ–उपकार करना, प्रियवचन बोलना और निष्कपट स्नेह करना यह सज्जनोंका स्वभाव है। चन्द्रमाको किसने शीतल किया है? अर्थात् जैसे स्वभावसे चंद्रमा शीतल है वैसे ही सज्जन भी स्वभाव हीसे शीतल यानि शान्त होते हैं ॥ १५ ॥

स्वभावं नैव मुञ्चन्ति सन्तः संसर्गतोऽसताम् ॥
न त्यजन्ति रुतं मञ्जु काकसम्पर्कतः पिकाः ॥१६॥

भाषार्थ–दुर्जनोंके संसर्गसे सत्पुरुष अपने उत्तम स्वभावको नहीं छोडते हैं, जैसे कोकिल (कोयल) कौवाके संसर्गसे अपने मधुर शब्दको नहीं त्यागती है ॥ १६ ॥

वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः ॥
करणं परोपकरणं येषां केषां न ते वन्द्याः[1] ॥ १७ ॥

भाषार्थ–जिनका वदन (मुख) प्रसाद (कृपा) का सदन (घर) है, हृदय दयासहित है, वाणी अमृत वर्षाने वाली है और परोपकार ही एकमात्र साधन है, ऐसे सज्जन किनके वन्दना योग्य नहीं हैं॥१७॥

संपदि यस्य न हर्षो विपदि विषादो रणे च धीरत्वम्॥
तं भुवनत्रयतिलकं जनयति जननी सुतं विरलम्॥१८॥

---

१ पूज्याः।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जिसको सम्पत्तिमें हर्ष न हो, आपत्तिकालमें विषाद न हो और रणमें धीरता न हो ऐसे त्रिभुवन तिलक अर्थात् तीनों लोकमें शिरोमणि पुत्रको कोई विरली ही जननी उत्पन्न करती है ॥ १८ ॥

श्लाघ्यः स एको भुवि मानवानां
स उत्तमः सत्पुरुषः स धन्यः ॥
यस्यार्थिनो वा शरणागता वा
नाशाभिभङ्गाद्विमुखाः प्रयान्ति ॥ १९ ॥

भाषार्थ–पृथ्वीपर मनुष्योंमें वही प्रशंसनीय हैं, वही श्रेष्ठ है, वही सज्जन है और वही धन्य है, जिसकी शरणमें आयेहुए याचक लोग निराश होकर विमुख नहीं जाते हैं ॥ १९ ॥

उपकारिषु यः साधुः साधुत्वे तस्य को गुणः ॥
अपकारिषु यः साधुः स साधुः सद्भिरुच्यते ॥ २० ॥

भाषार्थ–उपकार करनेवालोंमें जो साधु है उसकी साधुतामें क्या गुण, अर्थात् उपकार करनेवालोंके साथ तो सब ही साधुता करते हैं, परन्तु अनिष्ट करनेवालोंमें जो साधु है वही सत्पुरुषोंसे साधु कहा जाता है ॥ २० ॥

निर्गुणेष्वपि सत्वेषु दयां कुर्वन्ति साधवः ॥
नहि संहरते ज्योत्स्नां चन्द्रश्चाण्डालवेश्मनि ॥ २१ ॥

भाषार्थ–गुणहीन प्राणियोंमें भी सज्जन पुरुष दया करते हैं, जैसे चन्द्रमा अपनी चाँदनीको चांडालके घरमें जानेसे नहीं रोकता है॥२१॥

उदयति यदि भानुः पश्चिमे दिग्विभागे
प्रचलति यदि मेरुः शीततां याति वह्निः ॥

१ प्राणिषु। २ चन्द्रकान्तिम्। ३ चांडालगृहे।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रे शिलायां
न भवति पुनरुक्तं भाषितं सज्जनानाम् ॥२२॥

भाषार्थ–यदि सूर्य पश्चिम दिशामें उदय होने लगे, सुमेरु पर्वत चलायमान होवै, अग्नि कदाचित् शीतल होजाय और कमल पहाड़के चट्टानोंपर खिलने लगे. ये असम्भव बातें चाहे सम्भव हो जायँ परन्तु सत्पुरुषोंका कहा हुआ वचन अन्यथा नहीं होसकता ॥ २२ ॥

हृदयानि सतामेव कठिनानीति मे मतिः ॥
खलवाग्विशिखैस्तीक्ष्णैर्भिद्यन्ते न मनाग्यतः ॥ २३ ॥

भाषार्थ–मेरी समझमें तो सज्जनोंके ही हृदय कठोर प्रतीत होते हैं क्योंकि दुर्जनोंके दुर्वचनरूपी तीक्ष्ण बाणोंसे छिन्न भिन्न नहीं होते ॥ २३ ॥

स्वगुणान्परदोषांश्च वक्तुं प्रार्थयितुं परान् ॥
याचितारं निराकर्तुं सतां जिह्वा जडायते ॥ २४ ॥

भाषार्थ–अपने गुणोंको और दूसरोंके दोषोंको प्रगट करनेमें, दूसरोंके समीप याचना करनेमें तथा अपने समीप आये हुए याचकको अनादर करनेमें सज्जनोंकी जिह्वा जड़ हो जाती है, अर्थात् सज्जन अपने गुण नहीं बखानते, दूसरोंके दोष नहीं कहते, किसीसे याचना नहीं करते और जो अपने समीप आकर याचना करता है उससे 'नहीं' नहीं करते हैं ॥ २४ ॥

पातितोपि कराघातैरुत्पतत्येव कन्दुकः ॥
प्रायेण साधुवृत्तीनामस्थायिन्यो विपत्तयः ॥ २५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–बार बार हाथसे उछाला हुआ गेंद जैसे गिरता उठता है, अर्थात् उछलता ही रहता है, इसी प्रकार सज्जनोंपर विपत्तिपर विपत्ति आनेपर भी प्रायः विपत्तियाँ ठहरती नहीं हैं ॥ २५ ॥

अधमा धनमिच्छन्ति धनमानौ हि मध्यमाः ॥
उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम् ॥२६॥

भाषार्थ–अधम लोग धनकी चाह करते हैं, मध्यम लोग धन और मान दोनोंको चाहते हैं और उत्तम जन मानहीकी इच्छा करते हैं, क्योंकि महात्माओंका मान ही धन है ॥ २६ ॥

तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सूनृता ॥
एतान्यपि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदा च न ॥ २७ ॥

भाषार्थ–तृणका बना हुआ आसन (कुशासन) ठहरनेको भूमि (निवासस्थान) जल, और चौथी वस्तु सच्ची मधुरवाणी, ये चार वस्तुएँ सत्पुरुषोंके घरसे कभी नहीं नष्ट होती हैं, अर्थात् दूसरोंके सत्कार-निमित्त सज्जनोंके घरमें ये चार वस्तुएँ सर्वदा उपस्थित रहती हैं ॥२७॥

धनिनोऽपि निरुन्मादा युवानोऽपि न चञ्चलाः ॥
प्रभवोऽप्यप्रमत्तास्ते महामहिमशालिनः ॥ २८ ॥

भाषार्थ–धनवान् होनेपर भी जो उन्माद युक्त नहीं होते, तरुण होनेपर चंचल नहीं होते, समर्थ होनेपर भी उन्मत्त नहीं होते इसलिये वे ही पुरुष बड़ी प्रतिष्ठावाले होकर शोभाको प्राप्त होते हैं ॥ २८ ॥

किमत्र चित्रं यत्सन्तः पराऽनुग्रहतत्पराः ॥
न हि स्वदेहशैत्याय जायन्ते चन्दनद्रुमाः ॥ २९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–यदि सज्जन दूसरोंके ऊपर अनुग्रह करते हैं इसमें आश्चर्य ही क्या है क्योंकि चन्दन वृक्ष अपनी देह शीतल करनेके अर्थ नहीं उपजते हैं किन्तु परोपकारहीके लिये होते हैं ॥ २९ ॥

स्थिरा शैली गुणवतां खलबुद्ध्या न बाध्यते ॥
रत्नदीपस्य हि शिखा वात्ययाऽपि न नश्यते ॥ ३० ॥

भाषार्थ–गुणवानोंकी शैली (नेकचाल) स्थिर रहती है अर्थात् सदा एकसी ही रहती है वह दुष्टजनोंकी कुबुद्धिसे कभी बाध्य नहीं होती, जैसे रत्नदीपक वायुसे कभी बुझता नहीं है ॥ ३० ॥

विवेकः सह सम्पत्त्या विनयो विद्यया सह ॥
प्रभुत्वं प्रश्रयेणैव चिह्नमेतन्महात्मनाम् ॥ ३१ ॥

भाषार्थ–सम्पत्तिसे युक्त होनेपर विचारशक्ति होना, विद्यासे युक्त होनेपर विनय भावसे रहना, प्रभुता (ऐश्वर्य अथवा अधिकार) पाकर नम्र होजाना ये चिह्न (लक्षण) महात्माओंके हैं ॥ ३१ ॥

उदये सविता रक्तो रक्तश्चास्तमये तथा ॥
सम्पत्तौ च विपत्तौ च महतामेकरूपता ॥ ३२ ॥

भाषार्थ–सूर्य उदयकालमें रक्त (लाल) वर्णका होता है तथा अस्तके समय भी लाल रंगका होता है इसी प्रकार सम्पत्ति और विपत्तिमें महात्माओंका एकही भाव रहता है ॥ ३२ ॥

स्वभावं न जहात्येव साधुरापद्गतोऽपि सन् ॥
कर्पूरः पावकस्पृष्टः सौरभं लभतेतराम् ॥ ३३ ॥

भाषार्थ–साधुजन आपत्कालमें भी अपने स्वभावको नहीं छोड़ते हैं, जैसे कपूर अग्निसे जलनेपर भी सुगन्ध देता है ॥ ३३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

इयमुन्नतसत्वशालिनां महतां काऽपि कठोरचित्तता ॥
उपकृत्य भवन्ति दूरतः परतः प्रत्युपकारशङ्कया॥३४॥

भाषार्थ–अपनी उदारतासे शोभा पानेवाले महात्माओंकी यह कैसी चित्तकी कठोरता है कि, दूसरोंका उपकार करके उनसे प्रत्युपकार होनेकी शंकासे दूर भाग जाते हैं अर्थात् वे दूसरोंके साथ किये हुए उपकारका बदला नहीं लेना चाहते ॥ ३४ ॥

यस्य जना न वदन्ति महत्वं
नो समरे मरणं विजयं वा ॥
न श्रुतदानमहाधनतां वा
तस्य भवः कृमिकीटसमानः ॥ ३५ ॥

भाषार्थ–जिसके महत्त्वका बखान लोग नहीं करते, समरमें जिसका मरण वा विजय नहीं हुई, जिसने विद्या नहीं पढी, दान नहीं दिया और महाधनी नहीं कहलाया तो उसका जन्म संसारमें मलके कीड़ेके समान है ॥ ३५ ॥

आक्रोशितोऽपि सुजनो न वदत्यवाच्यं
निष्पीडितो मधुरमुद्वमतीक्षुदण्डः ॥
नीचो जनो गुणशतैरपि सेव्यमानो
हास्येन तद्वदति यत्कलहेऽप्यवाच्यम् ॥ ३६॥

भाषार्थ–दुर्वचन कहनेपर भी सुजन कुवाक्य नहीं कहते, जैसे इक्षुदंड (गन्ना) निचोड़े जानेपर मधुर रस देता है। नीचजन सैकड़ों गुणोंसे युक्त होनेपर भी हँसीके समय वही वचन बोलता है जो कलह (लडाई) में भी शायदही बोला जाता हो। सारांश यह कि सज्जन

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पुरुष गाली देनेवालेसे भी दुर्वचन नहीं कहते और दुर्जन हँसीमें भी गाली ही बकता है ॥ ३६ ॥

वनेऽपि सिंहाः मृगमांसभक्षिणो-
बुभुक्षिता नैव तृणं चरन्ति ॥
एवं कुलीना व्यसनाभिभूता[1]
न नीचकर्माणि समाचरन्ति ॥ ३७ ॥

भाषार्थ–जो सिंह वनमें हिरणका मांस भक्षण करते हैं क्षुधित होनेपर वे तृण (घास) नहीं चरते हैं । इसी प्रकार कुलीन जन संकटसे युक्त होनेपर भी नीच काम नहीं करते ॥ ३७ ॥

आदिमध्यनिधनेषु सौहृदं सज्जने भवति नेतरे जने ॥
छेदतापननिघर्षताडनैर्नान्यभावमुपयाति काञ्चनम् ३८

भाषार्थ–आदि, मध्य और अन्त तीनों समय सज्जनमें एकसा प्रेमभाव बना रहता है, औरोंमें यानि दुर्ज्जनमें नहीं, जैसे छेदने, तपाने, घिसने और पीटनेपर भी सुवर्ण दूसरे भावको नहीं प्राप्त होता अर्थात् अपनी चमक नहीं छोड़ता है ॥ ३८ ॥

दुर्जनवदनविनिर्गतवचनभुजंगेन सज्जनो दृष्टः ॥
तद्विषनाशनिमित्तं साधुः सन्तोषमौषधं पिवति॥३९॥

भाषार्थ–दुर्जनके मुखसे निकले हुए वचनरूपी सर्पसे सज्जन जब डंस जाता है, तब उस विषको दूर करनेके लिये साधुजन सन्तोष रूप औषध पान करता है । यहाँ एक दोहा है कि ‘ मूरखको मुख बंब है निकसत वचन भुवंग । ताकी औषध मौन है विष नाहिं व्यापत अंग ॥ ३९ ॥

१ संकटव्याप्ताः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मूकः परापवादे परदारनिरीक्षणेऽप्यन्धः ॥
पङ्गुः परधनहरणे स जयति लोकत्रये पुरुषः ॥ ४० ॥

भाषार्थ–दूसरोंके दोष कहनेमें मूक, दूसरेकी स्त्रीको देखनेमें अन्धा और जो दूसरोंके धन हरण करनेमें पंगु (लुंज) है वही पुरुष त्रिभुवनमें जयशाली होवे अर्थात् ऐसा सज्जन धन्यवादके योग्य होता है ॥ ४० ॥

व्रते विवादं विमतिं विवेके
सत्येऽतिशंकां विनये विकारम् ॥
गुणेऽवमानं कुशले निषेधं
धर्मे विरोधं न करोति साधुः ॥ ४१ ॥

भाषार्थ–व्रतमें विवाद, विवेक (विचार अथवा ज्ञान) में कुबुद्धि, सत्यमें विशेष सन्देह, विनयमें विकार, गुणमें अपमान, कुशलमें निषेध और धर्ममें विरोध साधुजन नहीं करते हैं ॥ ४१ ॥

अद्यापि नोज्झति[1] हरः किल कालकूटं
कूर्मो बिभर्ति धरणीं खलु पृष्ठकेन ॥
अम्भोनिधिर्वहति दुस्सहवाडवाग्नि-
मङ्गीकृतं सुकृतिनः परिपालयन्ति ॥ ४२ ॥

भाषार्थ–हर (महादेवजी) ने समुद्र मथनोपरांत जो कालकूट विष पान कर लिया था उस कालकूटको अबतक त्याग नहीं किया है, कूर्म भगवान् अपनी पीठपर धरतीको अबतक धारण किये हुए हैं और समुद्र दुस्सहः वडवा नामक अग्निको अपनेमें अबतक धारण किये

1 न त्यजति ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हुआ है, सारांश यह कि सुकृती लोग जो अंगीकार कर लेते हैं, उसका परिपालन अवश्य करते हैं ॥ ४२ ॥

घृष्टं घृष्टं पुनरपि पुनश्चन्दनं चारुगन्धं
छिन्नश्छिन्नः पुनरपि पुनः स्वादु रेवेक्षुदंडः ॥
दग्धं दग्धं पुनरपि पुनः काञ्चनं कान्तवर्णं
न प्राणान्ते प्रकृतिविकृतिर्जायते सज्जनानाम् ॥४३

भाषार्थ-वार बार घिसनेपर चन्दन सुगन्ध देता है, वारवार काटनेपर इक्षुदंड मधुर हो जाता है और बारबार अग्निमें तपानेसे सुवर्ण चमकीला होजाता है, प्राणके संकट होनेमें भी सज्जनोंकी प्रकृतिमें विकार नहीं होता है सारांश यह कि सत्पुरुषोंका स्वभाव एकसा रहता है ॥ ४३ ॥

क्षुद्राः[1] सन्ति सहस्रशः स्वभरणव्यापारमात्रोद्यताः
स्वार्थो यस्य परार्थ एव स पुमानेकः सतामग्रणीः[2] ॥
दुष्पूरोदरपूरणाय पिवति स्रोतःपतिं[3] वाड़वो[4]
जीमूतस्तु[5] निदाघ[6]तापितजगत्सन्तापविच्छित्तये ॥४४॥

भाषार्थ-केवल अपने उदर पालनके व्यापारमें उद्यत (लगे हुए) ऐसे तुच्छ लोग हजारों इस जगत्में हैं, परन्तु जिसके परार्थही स्वार्थ है ऐसा सज्जन पुरुष कोई विरला ही होता है, वड़वानल समुद्रका जल केवल दुष्पूर उदरके पूर्णार्थ ही पीता है और मेघ घामसे तपे जगत्का संताप दूर करनेको पीता है ॥ ४४ ॥

---

१ नीचाः । २ अग्रेसरः । ३ समुद्रम् । ४ वाडवाग्निः । ५ मेघः । ६ ग्रीष्मः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

वक्त्रे वल्गाप्रकर्षः समरभुवि तव प्राणरक्षापि दैवा-
त्स्वेच्छाचारो न चास्ते नहि भवति तथा भारवाहो-
नितान्तम् ॥ इत्युक्तोऽश्वः खरेण प्रहसितवदनो मूक
एवावतस्थे तस्माज्ज्ञात्या महान्तोऽधमजनविषये
मौनमेवाश्रयन्ते ॥ ४५ ॥

भाषार्थ–घोड़ासे गर्दभने कहा, कि हे अश्व! तुम्हारे मुखमें लगा-मका झटका लगता है, समरभूमिमें तुम्हारे प्राणोंकी रक्षा भी दैवाधीन है और इच्छानुसार विचर भी नहीं सकते हो तथा नित्यप्रति तुमपर खूब बोझा लदा रहता है, इस प्रकार घोड़ासे जब गर्दभने कहा तब घोड़ा हँसकर चुप होगया, भावार्थ यह कि स्वभावसे जो महात्मा (बड़े) होते हैं वे अधम जनके विषयमें मौन ही रहते हैं ॥ ४५ ॥

अपां निधिं वारिभिरर्चयन्ति
दीपेन सूर्यं प्रतिबोधयंति ॥
ताभ्यां तयोः किं परिपूर्णता स्या-
द्भक्त्या हि तुष्यन्ति महाऽनुभावाः ॥ ४६ ॥

भाषार्थ–भक्तजन जलकी धाराओंसे समुद्रकी और दीपदान करके सूर्यनारायणको प्रसन्न करते हैं। तो क्या जलधारासे समुद्र और दीपदानसे सूर्य देवकी पूर्ति होती है अर्थात् नहीं होती। आशय यह है कि महात्मा पुरुष केवल भक्तिसे ही प्रसन्न होजाते हैं ॥ ४६ ॥

भक्तिर्भवे न विभवे व्यसनं शास्त्रे न युवतिकामास्त्रे ॥
चिन्ता यशसि न वपुषि प्रायः परिदृश्यते महताम् ॥ ४७

१ संग्रामांगणे।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–महापुरुषोंकी भक्ति शिवजीमें होती है न कि विभव (ऐश्वर्य) में, शास्त्रमें व्यसन (शौक) होता है नकि स्त्रियोंके कामशास्त्रमें तथा यशमें चिंता देख पड़ती है और शरीरमें नहीं ॥४७॥

दोषो गुणाय गुणिनां महदपि दोषाय दोषिणां सुकृतम्॥
तृणमिव दुग्धाय गवां दुग्धमिव विषाय सर्पाणाम्॥४८॥

भाषार्थ–गुणीजनोंमें दोष भी गुणरूप होजाते हैं और दोषियोंका बड़ा भारी पुण्य भी दोष ही होजाता है। जैसे तृण (भुस्सा घास) गौवोंमें दुग्धरूप होजाता है और वही दुग्ध सर्पोंमें विषरूप हो जाता है ॥४८॥

अहो महत्त्वं महतामपूर्वं[1]
विपत्तिकालेऽपि परोपकारः ॥
यथास्यमध्ये[2] पतितोपि राहोः
कलानिधिः पुण्यचयं ददाति ॥ ४९ ॥

भाषार्थ–अहो ! बड़े हर्षकी बात है कि महात्माओंका महत्त्व अलौकिक होता है कि विपत्तिके समयमें भी परोपकार करते हैं, जैसे राहुके मुखमें ग्रसित भी चन्द्रमा महा पुण्यदायक होता है अर्थात् जब चन्द्रग्रहण होता है तब पुण्य करनेसे पुण्यकी वृद्धि होती है ॥ ४९ ॥

गुणायन्ते दोषाः सुजनवदने दुर्जनमुखे
गुणा दोषायन्ते तदिदमपि नो विस्मयपदम्[3] ॥
महामेघः क्षारं पिबति कुरुते वारि मधुरं
फणी[4] क्षीरं पीत्वा वमति गरलं दुस्सहतरम् ॥५०॥

१ अलौकिकम् । २ मुखमध्ये । ३ आश्चर्यस्थानम् । ४ सर्पः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—सुजनके मुखमें जाकर दोष भी गुण होजाते हैं और दुर्जनके मुखमें जाकर गुण भी दोष बन जाते हैं, तो यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं है। क्योंकि ये सघन मेघ समुद्रका खारी जल पीकर मधुर जल देता है और सर्प दुग्ध पीकर प्राणघातक महाविष उगिलता है॥ ९० ॥

दुर्जननिन्दा।

न विना परिवादेन रमते दुर्जनो जनः ॥
काकः सर्वरसान्भुक्त्वा विनाऽमेध्यं न तृप्यति ॥ १ ॥

भाषार्थ—दुष्ट मनुष्य दूसरेकी निन्दा किये बिना प्रसन्न नहीं रहता, जैसे कौवा सब रसोंको खाकर बिना विष्ठाके तृप्त नहीं होता है ॥ १ ॥

खलः सर्षपमात्राणि परछिद्राणि पश्यति ॥
आत्मनो बिल्वमात्राणि पश्यन्नपि न पश्यति ॥ २ ॥

भाषार्थ—दुष्ट मनुष्य सरसोंकेसेभी दूसरोंके छिद्रों (दोषों) को देखता है और अपने दोष बिल्वसमान देखता हुआ भी नहीं देखता है ॥ २ ॥

सर्पदुर्जनयोर्मध्ये वरं सर्पो न दुर्जनः ॥
सर्पो दशति कालेन दुर्जनस्तु पदे पदे ॥ ३ ॥

भाषार्थ—साँप और दुर्जन इन दोनोंमेंसे साँप अच्छा, क्योंकि साँप तो काल पाकर काटता है परन्तु दुर्जन पद पदपर हानि पहुँचाता है ॥ ३ ॥

खलानां कण्टकानां च द्विविधैव प्रतिक्रिया ॥
उपानन्मुखभङ्गो वा दूरतो वा विसर्जनम् ॥ ४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–दुष्ट मनुष्य और कंटकके दोही उपाय हैं। उपानह (जूता) से मुख तोड़ना, अथवा दूरसे परित्याग कर देना ॥ ४ ॥

दुर्जनः परिहर्तव्यो विद्ययाऽलङ्कृतोऽपि सन् ॥
मणिना भूषितः सर्पः किमसौ न भयङ्करः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–चाहे वह विद्यालंकारसे युक्त भी हो, तो दुष्ट जनको परित्याग कर देना उचित है, क्योंकि मणिसे सुशोभित सर्प क्या भयकारक नहीं होता? यानि होता ही है ॥ ५ ॥

परवादे दशवदनः पररन्ध्रनिरीक्षणे सहस्राक्षः ॥
सद्वृत्तवित्तहरणे बाहुसहस्रार्जुनः पिशुनः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–दूसरेकी निन्दा करनेमें दुष्ट लोग दशवदन (रावण) अर्थात् दशमुहवाले और पराया दोष देखनेमें सहस्राक्ष (इन्द्र) अर्थात् हजार नेत्रवाले तथा सदाचारीके धन हरण करनेमें बाहुसहस्रार्जुन (सहस्रबाहु) अर्थात् हजार भुजावाले 'कार्तवीर्य' के समान हो जाते हैं ॥ ६ ॥

मनस्यन्यद्वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यद्दुरात्मनाम् ॥
मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–दुष्टात्माजनोंके मनमें और वाणीमें कुछ और कर्ममें और, अर्थात् दुष्ट मनुष्य मनमें कुछ और कहते करते कुछ और हैं और महात्मा (सज्जन) पुरुषोंके मन वाणी और कर्ममें एक समान व्यवहार होता है ॥ ७ ॥

वन्द्यान्निन्दति दुःखितानुपहसत्याबाधते बान्धवा-
न्क्रूरान्द्वेष्टि धनच्युतान्परिभवत्याज्ञापयत्याश्रितान् ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गुह्यानि प्रकटी करोति घटयन् यत्नेन वैराशयं
ब्रूते शीघ्रमवाच्यमुज्झति गुणान्गृह्णाति दोषान्खलः॥८

भावार्थ–वन्दनीय पुरुषोंकी निन्दा करना, दुःखीको देखकर हँसना, बन्धुजनोंको क्लेशित करना, वीरजनोंसे वैर करना, धनहीन लोगोंका अनादर करना, आश्रित (अधीन) जनोंपर आज्ञा करना, गुप्त बातको प्रगट कर देना, यत्नपूर्वक वैर रखना और गुणोंको छोड़ देना तथा दोषोंको ग्रहण करलेना, ये दुर्जन मनुष्यके स्वभाव हैं॥ ८ ॥

कतिपयदिवसस्थायिनि मदकारिणि यौवने दुरात्मानः॥
विदधति तथापराधं जन्मैव यथा वृथा भवति ॥ ९ ॥

भावार्थ–क्षणिक और मतवाला करनेवाली युवावस्था (जवानी) में दुष्टात्मा लोग ऐसे अपराध कर बैठते हैं कि जिससे उनका जन्म ही वृथा हो जाता है ॥ ९ ॥

विद्यया विमलयाप्यलंकृतो
दुर्जनः सदसि मास्तु कश्चन ॥
साक्षरा हि विपरीततां गताः
केवलं जगति तेऽपि राक्षसाः॥ १० ॥

भावार्थ–निर्मल विद्यासे अलंकृत दुर्जन सभामें कभी नहो, साक्षर अर्थात् पढ़े लिखे होनेपर भी विपरीत (उलटे) मार्गमें चलनेवाले जो मनुष्य हैं वे भी जगत्में राक्षस ही हैं ॥ १० ॥

बोधितोऽपि बहुसूक्तिविस्तरैः
किं खलो जगति सज्जनो भवेत् ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्नापितोऽपि बहुशो नदीजलै-
र्गर्दभः किमु हयो भवेत्क्वचित् ॥ ११ ॥

भावार्थ—संसारमें मनोहर वचनोंसे समझाये जानेपर भी दुर्जन क्या कभी सज्जन हो सकता है ? नदीके जलसे वार वार भली भाँति स्नान कराया गया गर्दभ क्या कभी घोड़ा बन सकता है अर्थात् नहीं ॥११॥

प्राक् पादयोः पतति खादति पृष्ठमांसं
कर्णे कलं किमपि रौति शनैर्विचित्रम् ॥
छिद्रं निरूप्य सहसा प्रविशत्यशङ्कः
सर्वं खलस्य चरितं मशकः करोति ॥ १२ ॥

भावार्थ—पहले चरणोंपर गिरता है, फिर पीठका मांस खाता है और कानमें धीरे धीरे कुछ विचित्र शब्द करता है, तदनन्तर छिद्र देखकर उसमें सहसा निःशंक होकर घुस जाता है, इस प्रकार दुर्जनके सब चरित्र मशक (मच्छर) किया करता है ॥ १२ ॥

अकरुणत्वमकारणविग्रहः
परधने परयोषिति च स्पृहा ॥
सुजनबन्धुजनेष्वसहिष्णुता
प्रकृतिसिद्धमिदं हि दुरात्मनाम् ॥ १३ ॥

भावार्थ—दया न करना, बिना कारण झगड़ा कर बैठना, दूसरोंके धन और स्त्रीकी इच्छा रखना और अपने कुटुंबी जन तथा मित्र-जनोंकी बात न सहना; दुर्जनोंकी ये बातें स्वभाव सिद्ध हैं ॥ १३ ॥

ते वै सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं परित्यज्य ये
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति ये
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे ॥१४॥

भाषार्थ–उत्तम पुरुष वेही हैं जो अपना अर्थ छोड़कर दूसरेका अर्थ साधन करते हैं, सामान्य पुरुष वे हैं जो स्वार्थसाधनमें किसी प्रकारकी क्षति नहीं पहुंचाते हुए दूसरोंका हित साधन करते हैं और मनुष्योंमें राक्षस वे हैं जो अपने लिये दूसरोंकी बुराई करते हैं। और जो व्यर्थ दूसरोंकी बुराई करते हैं वे कौन हैं? उन्हें हम नहीं जानते ॥ १४ ॥

भिक्षो ! मांसनिषेवणं किमुचितं किं तेन मद्यं विना
मद्यं चापि तव प्रियं प्रियमहो ! वाराङ्गनाभिस्सह ॥
वेश्या द्रव्यरुचिः कुतस्तव धनं द्यूतेन चौर्येण वा
चौर्यद्यूतपरिग्रहोऽपि भवतो भ्रष्टस्य काऽन्या गतिः१५

भाषार्थ–किसी कविने एक भिक्षुकके समीप मांस देखकर पूँछा कि हे भिक्षो ! क्या मांस खाते हो मांस खाना क्या उचित है, भिक्षुकने उत्तर दिया कि हाँ मांस खाता हूं परन्तु बिना मद्यके अकेले मांसके खानेसे क्या हो सकता है, तब कविने पूँछा क्या मद्य भी तुमको प्रिय है, भिक्षुकने उत्तर दिया कि हाँ वाराङ्गनाओंके साथ मद्य हमको बहुत प्रिय है, कविने कहा कि वेश्याओंकी रुचि तो धनमें है सो धन तुम्हारे पास कहाँ, भिक्षुकने उत्तर दिया कि जुवा खेलने और चोरी करनेसे धन प्राप्त होजाता है. कविने पूछा कि क्या आपको जुवा और चोरी भी अङ्गीकार है, तब भिक्षुकने उत्तर दिया कि भ्रष्टकी और क्या गति है, सारांश यह कि अपने धर्मसे भ्रष्ट दुर्जन क्या क्या कुकर्म नहीं करते हैं ॥ १५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शशी दिवसधूसरो गलितयौवना कामिनी
सरो विगतवारिजं मुखमनक्षरं स्वाकृतेः ॥
प्रभुर्धनपरायणः सततदुर्गतः सज्जनो
नृपाङ्गणगतः खलो मनसि सप्त शल्यानि मे॥१६॥

भावार्थ–दिनके समय मलिन चन्द्रमा, यौवनरहित स्त्री, विना कमलका सरोवर, सुन्दर रूप वाला मूर्ख (वेपढ़ा), सदा धनसंचयमें तत्पर स्वामी, दरिद्रतासे युक्त सज्जन और राजसभामें दुष्ट जनका प्रवेश, ये सातों हमारे मनमें कांटेके समान गड़ने लगते हैं ॥ १६ ॥

मृगमीनसज्जनानां तृणजलसन्तोषविहितवृत्तीनाम् ॥
लुब्धकधीवरपिशुना निष्कारणवैरिणो जगति ॥१६॥

भावार्थ–मृग, मीन और सज्जन, तृण जल और सन्तोषसे अर्थात् मृग (हरिण) तृणसे, मीन (मछली) जलसे, और सज्जन (सत्पुरुष) सन्तोषसे अपनी आजीविका करते हैं, परन्तु व्याध, केवट और कुटिल जन संसारमें इनके विना कारण वैरी बन बैठते हैं ॥१७॥

आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण
लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात् ॥
दिनस्य पूर्वार्धपरार्धभिन्ना
छायेव मैत्री खलसज्जनानाम् ॥ १७ ॥

भावार्थ–पहले बढती है, फिर थोड़ी थोड़ी घटती जाती है इस क्रमसे दुष्ट जनोंकी मैत्री होती है, और पहले थोड़ी फिर क्रमसे बढ़ती जाती है ऐसी मैत्री सज्जनोंकी होती है दिनके पूर्व भाग (दो पहर)

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

की छायाके तुल्य दुर्जनकी मैत्री और दिनके परार्ध (दोपहर उपरान्त) की छायाके तुल्य सज्जनकी मैत्री होती है ॥ १७ ॥

दाता न दापयति दापयिता न दत्ते
यो दानदापनपरो मधुरं न वक्ति ॥
दानं च दापनमथो मधुरा च वाणी
त्रीण्यप्यमूनि खलु सत्पुरुषे वसन्ति ॥ १८ ॥

भावार्थ–दाता दिलाता नहीं है, दिलानेवाला देता नहीं है और दाता तथा दिलानेवाला मधुरभाषणपूर्वक नहीं दान करते, अर्थात् झिड़की बताते हैं, परन्तु दान करना, दिलाना अथवा देनेको कहना और मधुरवाणीसे दान देना, ये तीनों गुण सत्पुरुषोंमें रहते हैं 'दुर्जनोंमें नहीं' ॥ १८ ॥

दुर्जनं प्रथमं वन्दे सज्जनं तदनन्तरम् ॥
मुखप्रक्षालनात्पूर्वं गुदप्रक्षालनं यथा ॥ १९ ॥

भावार्थ–पहले दुर्जनको नमस्कार है तदनन्तर सज्जनको, क्योंकि मुखप्रक्षालनसे पहले जैसे पायुप्रक्षालन ही किया जाता है। पहले आबदस्त लेकर ही हाथ मलकर कुल्ला किया जाता है ॥ १९ ॥

तक्षकस्य विषं दन्ते मक्षिकायाः विषं शिरः ॥
वृश्चिकस्य विषं पुच्छं सर्वांगे दुर्जनो विषम् ॥ २० ॥

भावार्थ–साँपके दाँतमें विष रहता है, मक्खीके शिरमें विष है, बिच्छूके डंकमें विष है किन्तु दुर्जनके सब अंगोंमें विष ही विष बना रहता है ॥ २० ॥

दुर्जनेन समं सख्यं प्रीतिं चापि न कारयेत् ॥
उष्णो दहति चाङ्गारः शीतः कृष्णायते करम् ॥ २१ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–दुर्जनके साथ मिताई तथा प्रीति करनी ही नहीं चाहिये, क्योंकि अंगार गरम हो तो हाथको जलाता है और शीतल हो तो हाथको काला करता है ॥ २१ ॥

खलः करोति दुर्वृत्तं नूनं फलति साधुषु ॥
दशाननोऽहरत्सीतां बन्धनं च महोदधेः ॥ २२ ॥

भावार्थ–दुष्टजन अनुचित कर्म करता है तो उसका फल साधुजनोंको मिलता है, क्योंकि रावणने सीताका हरण किया और समुद्रके ऊपर पुल बँधगया ॥ २२ ॥

न देवाय न धर्माय न बन्धुभ्यो न चार्थिने ॥
दुर्जनस्यार्जितं वित्तं भुज्यते राजतस्करैः ॥ २३ ॥

भावार्थ–न देवतानिमित्त, न धर्मार्थ न, बन्धुजनोंके लिये और न किसी दूसरेके कार्यहीमें दुर्जनका धन व्यय होता है । दुर्जनका उपार्जन किया हुआ धन राजा और चोरोंसे उपभोग किया जाता है ॥ २३ ॥

दुर्जनः सुजनी कर्तुं यत्नेनापि न शक्यते ॥
संस्कारेणापि लशुनं कः सुगन्धी करिष्यति ॥ २४ ॥

भावार्थ–दुर्जन को सुजन बनानेके लिये कोई समर्थ नहीं हो सकता, अर्थात् दुर्जनको किसी प्रकारसे कोई सुजन नहीं बना सकता है । जैसे संस्कार करनेपर भी लहशुनको कोई सुगन्धित नहीं कर सकता ॥ २४ ॥

लक्ष्मीस्वभाव ।

गुणिनं जनमालोक्य निजबन्धनशङ्कया ॥
राजँल्लक्ष्मीः कुरङ्गीव[1] दूरं दूरं पलायते ॥ १ ॥

---

१ मृगीवत् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–हे राजन्! गुणिजनको देखकर अपने बन्धनकी शंकासे लक्ष्मी हरिणीके समान दूर भागती हैं ॥ १ ॥

हालाहलो[1] नैव विषं विषं रमा[2]
जनाः परं व्यत्ययमत्र[3] मन्वते ॥
निपीय जागर्ति सुखेन तं शिवः
स्पृशन्निमां मुह्यति निद्रया हरिः ॥ २ ॥

भाषार्थ–हालाहल (विष) विष नहीं है। लक्ष्मी विष है। किन्तु यह मनुष्योंका विपरीत भाव है कि जो विषको विष मानते हैं लक्ष्मीको विष नहीं मानते। वास्तवमें लक्ष्मी ही विष है। देखो विष पान करके शिवजी सुखसे जागते हैं और लक्ष्मीका स्पर्श होने हीसे हरिभगवान् निद्रासे मोहित हो जाते हैं ॥ २ ॥

वाक्चक्षुःश्रोत्रलयं लक्ष्मीः कुरुते नरस्य को दोषः ॥
गरलसहोदरजाता तच्चित्रं यन्न मारयति ॥ ३ ॥

भाषार्थ–मनुष्यकी वाणी, नेत्र, कान इनका लक्ष्मी लय करदती हैं तो इसमें क्या दोष है अर्थात् लक्ष्मीवान् पुरुष प्रायः बोलता नहीं- देखता नहीं और सुनता नहीं। विष लक्ष्मीका भाई हैं, समुद्रसे लक्ष्मी और विष दोनोंकी उत्पत्ति है तो यही आश्चर्य है कि लक्ष्मी मनुष्यको मार नहीं डालती है ॥ ३ ॥

अव्यवसायिनमलसं दैवपरं साहसाच्च परिहीनम् ॥
प्रमदा पतिमिव वृद्धं नेच्छति लक्ष्मीरुपस्थातुम् ॥४॥

---

१ विषभेदः। २ लक्ष्मीः। ३ विपरीतभावम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ—उद्योगहीन, आलसी, दैवपरायण और साहसहीन, इनके समीप लक्ष्मी ठहरनेकी इच्छा नहीं करती, जैसे तरुण स्त्री वृद्ध पतिको नहीं चाहती है ॥ ४ ॥

धनप्रशंसा ।

अहो कनकमाहात्म्यं वक्तुं केनापि शक्यते ॥
नामसाम्यमहो चित्रं धत्तूरोऽपि मदप्रदः ॥ १ ॥

भावार्थ—अहो ! कनकका माहात्म्य कौन कहसकता है, यह आश्चर्य है कि नामकी समता वाला कनक (धत्तूर का वृक्ष) भी मद करता है ॥ १ ॥

जैसे किसी कविने एक दोहा लिखा है कि:—

कनक कनकते सौगुनी मादकता अधिकात ।
ये पाये बौरात हैं वे खाये बौरात ॥

वित्तं न दर्शयेत्प्राज्ञः कस्यचित्स्वल्पमप्यहो ॥
मुनेरपि यतस्तस्य दर्शनाच्चलते मनः ॥ २ ॥

भावार्थ—बुद्धिमान् जनको उचित है कि यदि अपने पास थोड़ा भी धन हो तो उसे किसीको नहीं दिखावें । क्योंकि धनके दर्शनसे मुनिका भी मन चंचल हो जाता है ॥ २ ॥

धनमर्जय काकुत्स्थ ! धनमूलमिदं जगत् ॥
अन्तरं नैव पश्यामि निर्धनस्य मृतस्य च ॥ ३ ॥

भावार्थ—हे काकुत्स्थ ! धन संग्रहकरो । यह जगत् धनमूल है अर्थात् इस संसारमें धन ही प्रधान है, मैं निर्धन मनुष्य और मरे मनुष्यके बीचमें अन्तर नहीं देखता हूं यानि निर्धन और मृतक दोनों बराबर हैं ॥ ३० ॥

१ 'धत्तूरः कनकाह्वयः' इति कोशः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ब्रह्मघ्नोऽपि नरः पूज्यो यस्यास्ति विपुलं धनम् ॥
शशिना तुल्यवंशोऽपि निर्धनः परिभूयते[1] ॥ ४ ॥

भाषार्थ–जिस मनुष्यके पास बहुत धन है वह ब्रह्महत्या करनेपर भी पूज्य होता है और निर्धन मनुष्य चन्द्रतुल्य वंशवाला भी हो तौ भी उसका अनादर ही होता है ॥ ४ ॥

न नरस्य नरो दासो दासश्चार्थस्य भूपते ! ॥
गौरवं लाघवं वापि धनाधननिबन्धनम् ॥ ५ ॥

भाषार्थ–हे राजन् ! मनुष्यका मनुष्य दास नहीं होता, धनका दास मनुष्य होता है और बड़ाई छोटाई भी धन और निर्धन होनेसे ही होती है ॥ ५ ॥

यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः
स पंडितः स श्रुतवान्[2]गुणज्ञः ॥
स एव वक्ता स च दर्शनीयः[3]
सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयंति ॥ ६ ॥

भाषार्थ–जिसको धन है वही मनुष्य कुलीन है, वही पण्डित है, वही शास्त्रज्ञ और गुणी है, वही वक्ता, वही दर्शनीय है । क्योंकि सब गुण कांचन (धन) के आश्रयक रहते हैं ॥ ६ ॥

त्यक्त्वा युवा स्वयुवतिं सुविलासयोग्यां
दूरं विदेशवसतौ निवसन्धनार्थी ॥
रात्र्यागमे स्मरति तां सममेति तस्मा-
त्कान्ताभ्रमादपि वरः कनकभ्रमोऽयम् ॥ ७ ॥

१ परिभवं प्राप्नोति । २ शास्त्रज्ञः । ३ प्रेक्षणयीः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—युवा पुरुष अपनी विलासयोग्य सुन्दरी स्त्रीको छोड़कर धनके निमित्त दूर विदेशमें जाकर निवास करता है, रात्रि होनेपर अपनी स्त्रीका स्मरण करता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि यह कनक (धन) का श्रम कांता (स्त्री) के श्रमसे भी बढ़कर है। तात्पर्य यह कि अपनी स्त्रीका बार बार स्मरण होनेपर भी धन उपार्जन निमित्त युवा पुरुष दूर विदेशहीमें रहता है ॥ ७ ॥

जातिर्यातु रसातलं गुणगणस्तस्याप्यधो गच्छतां
शीलं शैलतटात्पतत्वभिजनः सन्दह्यतां वह्निना ॥
शौर्ये वैरिणि वज्रमाशु निपतत्वर्थोऽस्तु नः केवलं
येनैकेन विना गुणास्तृणलवप्रायाः समस्ता इमे ॥८॥

भाषार्थ—जाति रसातलमें जावे, सब गुण उससे नीचे (पातालमें) जावें, शील जो है सो पर्वतपरसे गिरकर नष्ट होजाय, कुटुंबी जन अग्निसे भस्म हो जावें और शूरता रूप शत्रुपर शीघ्र वज्र गिरे सही। किन्तु हमको तो केवल धन चाहिये। क्योंकि इसके बिना ये सब गुण तृणके तुल्य हैं ॥ ८ ॥

त्यजन्ति मित्राणि धनैर्विहीनं
पुत्राश्च दाराश्च सुहृज्जनाश्च ॥
तमर्थवन्तं पुनराश्रयन्ति
ह्यर्थो हि लोके पुरुषस्य बन्धुः ॥ ९ ॥

भाषार्थ—धनहीन मनुष्यको मित्र, पुत्र और स्त्री सभी परित्याग कर देते हैं किन्तु उसको धनवान् जानकर फिर आश्रय लेते हैं। संसारमें धन ही आदमीका बन्धु है ॥ ९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

वभुक्षितैर्व्याकरणं न भुज्यते
पिपासितैः काव्यरसो न पीयते ॥
न छन्दसा केनचिदुद्धृतं कुलं
हिरण्यमेवार्जय निष्फला गुणाः ॥ १० ॥

भाषार्थ–भूँखा मनुष्य व्याकरणको खाकर नहीं रहसकता, प्यासा मनुष्य काव्य रसको पीकर अपनी प्यासको नहीं बुझा सकता और न छन्दसे ही किसीके कुलका उद्धार हो सकता है, इस कारण धनसंचय करो। क्योंकि धनके विना सब गुण निष्फल हैं ॥ १० ॥

धनैर्निष्कुलीनाः कुलीना भवंति
धनैरापदं मानवा निस्तरन्ति ॥
धनेभ्यः परो बान्धवो नास्ति लोके
धनान्यर्जयध्वं धनान्यर्जयध्वम् ॥ ११ ॥

भाषार्थ–धनसे अकुलीन जन कुलीन होजाते हैं और धनसे ही मनुष्य आपदाओंको पारकर जाते हैं इसलिये धनसे बढ़कर बान्धव दूसरा संसारमें नहीं है, अतः धनका संचय करो धनका संचय करो ॥ ११ ॥

माता निन्दति नाभिनन्दति पिता भ्राता न संभाषते भृत्यः कुप्यति नानुगच्छति सुतः कान्ता च नालिङ्गते॥ अर्थप्रार्थनशंकया न कुरुते सम्भाषणं वै सुहृत्तस्माद्द्रव्यमुपार्जयस्व सुमते! द्रव्येण सर्वे वशाः ॥ १२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–माता निन्दा करती है, पिता प्रसन्न नहीं रहते, भाई बात नहीं करता, सेवक क्रोध करता है, पुत्र आज्ञा नहीं मानता, स्त्री प्यार नहीं करती और धन माँगेगा इस शंकासे मित्र भी नहीं बोलता, इस कारण हे सुमते ! धन संचय करो, धनहीसे सब वशमें होजाते हैं॥१२॥

धननिन्दा ।

अर्थार्थी जीवलोकोऽयं श्मशानमपि सेवते ॥
जनितारमपि त्यक्त्वा निःस्वं गच्छति दूरतः ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस संसारमें धनार्थी पुरुष श्मशानमें भी निवास करता है और अपने पिताको भी त्याग कर दूर चला जाता है ॥ १ ॥

लक्ष्मीवन्तो न जानन्ति प्रायेण परवेदनाम् ॥
शेषे धराभरक्लान्ते[1] शेते नारायणः[2] सुखम् ॥ २ ॥

भाषार्थ–लक्ष्मीवान् पुरुष प्रायः दूसरेकी वेदना (व्यथा) को नहीं जानते हैं, देखो शेषजी पृथ्वीके भारसे श्रमित हैं और नारायण सुखपूर्वक शेषशय्यापर शयन करते हैं ॥ २ ॥

वरं हालाहलं पीतं सद्यः प्राणहरं विषम् ॥
न तु दृष्टं धनान्धस्य भ्रूभंगकुटिलं मुखम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–हालाहल विष पान करना अच्छा जो तुरन्त प्राण हर लेता है, परन्तु भ्रुकुटी चढ़ाये हुए टेढ़े मुखवाले धनान्धको देखना नहीं अच्छा ॥ ३ ॥

बधिरयति कर्णविवरं वाचं मूकयति नयनमन्धयति ॥
विकृतयति गात्रयष्टिं सम्पद्रोगोऽयमद्भुतो राजन् ॥ ४ ॥

१ लक्ष्मीपातिः । २ विलक्षणः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–कानोंको बहिरा कर देता है, वाणीको मूक (बौरा) कर देता है, नेत्रोंको अन्धा कर देता है और शरीरको विकृत (अंगभंग) कर देता है। इसलिये हे राजन्! यह संपत्तिरूप रोग अद्भुत (विलक्षण) है॥ ४॥

आपद्गतं हससि किं द्रविणांधमूढ!
लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीति किमत्र चित्रम्॥
एतान् प्रपश्यसि घटान् जलयन्त्रचक्रे
रिक्ता भवन्ति भरिता भरिताश्च रिक्ताः॥ ५॥

भाषार्थ–हे धनान्ध! हे मूढ! विपत्तिसे ग्रस्त पुरुषको देखकर तू क्यों हँसता है? लक्ष्मी सदा स्थिर नहीं रहती। यह क्या आश्चर्यकी बात है कि जलयंत्रचक्र (रँहट) में इन घटों (करवारों) को देखो कि, खाली भरते जाते हैं और भरेहुए खाली होते जाते हैं॥ ५॥

जनयन्त्यर्जने दुःखं तापयन्ति विपत्तिषु॥
मोहयन्ति च सम्पत्तौ कथमर्थाः सुखावहाः॥ ६॥

भाषार्थ–धन संग्रह करनेमें दुःख उत्पन्न होता है, नष्ट होनेमें सन्ताप होता है और धन इकट्ठा होनेपर मोह होता है, सारांश यह कि धन सुख देनेवाला कैसे हो सकता है?॥ ६॥

धनं तावदसुलभं लब्धं कृच्छ्रेण रक्ष्यते॥
लब्धनाशो यथा मृत्युस्तस्मादेतन्न चिन्तयेत्॥ ७॥

भाषार्थ–पहले तो धनका संग्रह करना ही कठिन है, फिर प्राप्त होनेपर कठिनतासे रक्षित रहता है, प्राप्त धनके नाश होनेमें जैसे मृत्यु होनेपर कष्ट होता है ऐसा ही कष्ट होता है इस कारण धनकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये।

---

१ विपद्ग्रस्तम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

राजतः सलिलादग्नेश्चोरतः स्वजनादपि ॥
भयमर्थवतां नित्यं मृत्योः प्राणभृतामिव ॥ ८ ॥

भावार्थ-धनवान् पुरुषोंको राजासे, जलसे अग्निसे, चोरसे और स्वजनोंसे भय बना रहता है। जैसे प्राणियोंको मृत्युका भय लगा रहताहै॥८॥

धनिप्रशंसा ।

यस्यार्थास्तस्य मित्राणि यस्यार्थास्तस्य बान्धवाः ॥
यस्यार्थाः स पुमाँल्लोके यस्यार्थाः स च पण्डितः॥१ ॥

भावार्थ-जिसको धन है, उसीके मित्र हैं, जिसको धन है, उसीके बन्धुजन हैं, जिसको धन है, वही संसारमें योग्य मनुष्य समझा जाता है और जिसको धन है वही पंडित है ॥ १ ॥

वयोवृद्धास्तपोवृद्धा ज्ञानवृद्धाश्च ये परे ॥
ते सर्वे धनवृद्धस्य द्वारि तिष्ठन्ति किङ्कराः ॥ २ ॥

भावार्थ-अवस्थामें वृद्ध, तप करके वृद्ध, और जो ज्ञान करके वृद्ध हैं, ये सब वृद्ध धनवृद्ध अर्थात् धनीके द्वारपर किंकर (सेवक) के समान पड़े रहते हैं ॥ २ ॥

धिगस्त्वेतां विद्यां धिगपि कवितां धिक् सुजनतां
वयोरूपं धिग्धिग्धिगपि च यशो निर्धनवतः ॥
असौ जीयादेकः सकलगुणहीनोऽपि धनवान्
वहिर्यस्य द्वारे तृणलवनिभाः सन्ति गुणिनः ॥३॥

भावार्थ-विद्याको धिक्कार है, आयु और रूपको धिक्कार है, धनहीन पुरुपको भी धिक्कार है, क्योंकि, सब गुणोंसे हीन होनेपर भी

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यह धनवान् ही जयको प्राप्त होता है अथवा सुखपूर्वक जीता है जिसके द्वारपर गुणिजन तृणके सदृश पड़े रहते हैं ॥ ३ ॥

दरिद्र निन्दा।

हे दारिद्र्य ! नमस्तुभ्यं सिद्धोऽहं त्वत्प्रसादतः ॥
पश्याम्यहं जगत्सर्वं न मां पश्यति कश्चन ॥ १ ॥

भाषार्थ–हे दारिद्र्य ! तुमको नमस्कार है। तुम्हारे प्रसादसे मैं सिद्ध हो गया, क्योंकि मैं सब जगत्को देखताहूँ मुझको कोई नहीं देखता है ॥ १ ॥

तानीन्द्रियाणि सकलानि तदेव कर्म
सा बुद्धिरप्रतिहता वचनं तदेव ॥
अर्थोष्मणा विरहितः पुरुषः स एव
त्वन्यः क्षणेन भवतीति विचित्रमेतत् ॥ २ ॥

भाषार्थ–वेही सब इन्द्रियाँ हैं, वेही सब कर्म हैं, वही तीव्र बुद्धि भी है और वचन भी वैसे ही हैं, परन्तु इसमें यही अद्भुत है कि धनकी उष्णता (गर्मी) के बिना वही पुरुष औरका और हो जाता है ॥२॥

वरं वनं व्याघ्रगजेन्द्रसेवितं
द्रुमालयः पत्रफलाम्बुभक्षणम् ॥
तृणानि शय्या वसनं च वल्कलं
न बन्धुमध्ये धनहीनजीवनम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–व्याघ्र और गजेंद्रोसे सेवित वनमें रहना अच्छा है, वृक्षके नीचे रहना अच्छा है पत्र फल जल खाकर रहना अच्छा है,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तृणोंकी शय्या करना और वल्कल वस्त्र पहनना अच्छा है,परन्तु बन्धु-जनोंके बीच धनहीन होकर जीना अच्छा नहीं है ॥ ३ ॥

अहो[1] ! नु कष्टं सततं प्रवास-
स्ततोऽतिकष्टः परगेहवासः ॥
कष्टाऽधिका नीचजनस्य सेवा
ततोऽतिकष्टा धनहीनता च ॥ ४ ॥

भावार्थ–अहो ? निरन्तर विदेशमें रहना कष्टकर है, उससे विशेष कष्ट दूसरोंके घरमें रहनेसे होता है, नीचजनकी सेवा भी अधिक कष्ट-दायक होती है और सबसे बढ़कर क्लेश धनहीन होनेसे होता है ॥ ४ ॥

सङ्गं नैव हि कश्चिदस्य कुरुते संभाष्यते नादरात्-
संप्राप्तो गृहमुत्सवेषु धनिनां सावज्ञमालोक्यते ॥
दूरादेव महाजनस्य विहरत्यल्पच्छदो लज्जया
मन्ये निर्धनता प्रकाममपरं षष्ठं महापातकम् ॥५॥

भावार्थ–धनहीन मनुष्यका संग नहीं कोई करता और न कोई उससे आदरसे बोलता है, उत्सवोंमें धनवानोंके घरपर गया हुआ निर्धन पुरुष अनादरपूर्वक देखा जाता है। धनहीन बड़े मनुष्य लोगोंसे दूर ही लज्जाके मारे खड़ा रहता है । अतः मैं तो निर्धनता को छठा महापा-तक समझता हूं ॥ ५ ॥ पांच महापातक धर्मशास्त्रमें लिखे हुए हैं, ' ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः । महान्ति पातकान्याहुः संसर्ग-श्चापि तैस्सह ' ॥

१ अहो इति खेदे ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

घृतलवणतैलतण्डुलशाकेन्धनचिन्तयाऽनुदिनम् ॥
विपुलमतेरपि पुंसो नश्यति धीर्मन्दविभवत्वात् ॥ ६ ॥

भाषार्थ-घी, नमक, तेल, चावल, शाक और लकडी इन वस्तुओंकी रोज रोज चिन्तासे निर्धन महाबुद्धिमान्‌की भी बुद्धि नष्ट हो जाती है ॥ ६ ॥

दानप्रशंसा ।

गौरवं प्राप्यते दानान्नतु वित्तस्य संचयात् ॥
स्थितिरुच्चैः पयोदानां पयोधीनामधः स्थितिः ॥ १ ॥

भाषार्थ-दान करनेसे उच्च पद मिलता है; धनके संचयसे नहीं मिलता. देखो जल देनेवाले मेघोंकी स्थिति उच्च स्थान (आकाश) में है और पयोधि (जल संचय करनेवाले समुद्र) की स्थिति नीचे (भूमिपर) है ॥ १ ॥

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ॥
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्विकं स्मृतम् ॥ २ ॥

भाषार्थ-जो दान पुण्य समय पवित्र स्थानमें और अनुपकारी सुपात्रको दिया जाता है वह दान सात्विक कहा जाता है ॥ २ ॥

उपार्जितानां वित्तानां त्याग एव हि रक्षणम् ॥
तडागोदरसंस्थानां परीवाह इवाम्भसाम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ-संचित धनके दान करनेसे ही धनकी रक्षा होती है। तालावमें भरे हुए जलको नाली द्वारा निकालनेसे ही जल सुरक्षित रहता है। सारांश यह कि दान भोगमें न लगानेसे किसी समय धन व्यर्थ

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

चला जाता है और नालीसे न निकाला हुआ जल तालावको गदला कर देता है अथवा उसका बाँध तोड़कर निकल जाता है ॥ ३ ॥

यद्ददासि विशिष्टेभ्यो यच्चाश्नासि दिने दिने ॥
तत्ते वित्तमहं मन्ये शेषमन्यस्य रक्षसि ॥ ४ ॥

भाषार्थ–तुम जो धन प्रतिदिन सत्पुरुषोंको देते हो और स्वयं खाते हो वही मैं तुम्हारा धन समझता हूँ । शेष (दानभोगसे रहित) जो धन है वह दूसरोंके लिये रक्षा करते हो ॥ ४ ॥

यद्ददाति यदश्नाति तदेव धनिनो धनम् ॥
अन्ये मृतस्य क्रीडन्ति दारैरपि धनैरपि ॥ ५ ॥

भाषार्थ–जो दान करता है और जो स्वयं उपभोग करता है, वही धनीका धन है. दान दिये और भोगे बिना मरजानेसे उसकी स्त्री और धनके साथ दूसरे लोग आनन्द करते हैं ॥ ५ ॥

भवन्ति नरकाः पापात्पापं दारिद्र्यसम्भवम् ॥
दारिद्र्यमप्रदानेन तस्माद्दानपरो भवेत् ॥ ६ ॥

भाषार्थ–पापसे नरक प्राप्त होते हैं और पाप दरिद्रताके कारण होता है तथा दान न करनेसे आदमी दरिद्री होता है । इस कारण दान देनेमें तत्पर रहना चाहिये ॥ ६ ॥

अनुकूले विधौ देयं यतः पूरयिता हरिः ॥
प्रतिकूले विधौ देयं यतः सर्वं हरिष्यति ॥ ७ ॥

भाषार्थ–दैवकी अनुकूलता हो अर्थात् दैव योगसे धन प्राप्त हुवा हो तो दान देता रहे. क्योंकि देनेवाले हरि भगवान् हैं वे धनसे पूर्ण करेंगे, और यदि दैव प्रतिकूल (उलटा) हो अर्थात् सम्पत्ति नाश

---

१ दैवे । २ पूर्णकर्ता ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हुई जाती हो तो भी दान देवै. क्योंकि परमेश्वरने दिया है वही हरलेगा यह विचार कर सब कोई दान देता रहे ॥ ७ ॥

ग्रासादर्धमपि ग्रासमर्थिभ्यो किं न यच्छति ॥
इच्छानुरूपो विभवः कदा कस्य भविष्यति ॥ ८ ॥

भाषार्थ–अपने ग्राससे आधा ग्रास भी अर्थियोंको अर्थात् मँगतोंको क्यों न दिया जाय? क्योंकि अपनी इच्छाके अनुसार विभव (ऐश्वर्य) कब किसीको होगा? सारांश यह कि जब बडा ऐश्वर्य होगा तब दान करेंगे ऐसा विचार न करके प्रतिदिन कुछ २ देते रहना चाहिये ॥८॥

यो न ददाति न भुङ्क्ते सति विभवे नैव तस्य तद्द्रव्यम् ॥
तृणमयकृत्रिमपुरुषो रक्षति सस्यं परस्यार्थे ॥ ९ ॥

भाषार्थ–ऐश्वर्य होनेपर जो न किसीको देता है और न स्वयं खाता है वह धन उसका नहीं है । जैसे कि खेतमें तृणसे बनाया हुवा बनावटी पुरुष जैसे दूसरेके अर्थ अन्नकी रक्षा करता है वैसेही यह भी दूसरेके निमित्त धनकी रक्षा करता है ॥ ९ ॥

दानोपभोगवन्ध्या या सुहृद्भिर्या न भुज्यते ॥
पुंसां यदि हि सा लक्ष्मीरलक्ष्मीः कतमा भवेत् ॥१०॥

भाषार्थ–जिस सम्पत्तिका दान और उपभोगमें व्यय नहीं होता, जिसको इष्ट मित्रभी नहीं भोगते, ऐसी सम्पत्ति यदि लक्ष्मी कही जाय तो अलक्ष्मी (दरिद्रता) कौनसी है? अर्थात् दान भोगसे रहित लक्ष्मी दरिद्रता है ॥ १० ॥

दानं भोगो नाशस्तिस्रो गतयो भवन्ति वित्तस्य ॥
यो न ददाति न भुङ्क्ते तस्य तृतीया गतिर्भवति ॥११॥

---

१ तृणकृतकपटपुरुषः सस्यरक्षणार्थमुच्चप्रदेशे श्वापदभयहेतुस्तृणादिभिः पुरुषः क्रियत इति प्रसिद्धम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—दान, भोग और नाश ये तीन गतियाँ धनकी होती हैं. जो, धन न दान किया जाता है, न भोगा जाता है तो उस धनकी तीसरी गति होती है अर्थात् उसका नाश हो जाता है ॥ ११ ॥

दरिद्रान्भर कौन्तेय मा प्रयच्छेश्वरे धनम् ॥
व्याधितस्यौषधं पथ्यं नीरुजस्य किमौषधैः ॥ १२ ॥

भाषार्थ—हे कुन्तीपुत्र ! निर्धन जनोंकी पालना करो; समर्थ जनोंको धन मत दो. रोगीकोही औषध पथ्य है; नीरोग पुरुषको औषध देनेका क्या प्रयोजन ? ॥ १२ ॥

दातव्यं भोक्तव्यं सति विभवे[1] संग्रहो न कर्तव्यः ॥
पश्यामि मधुकरीणां[2] संचितमर्थं हरन्त्यन्ये ॥ १३ ॥

भाषार्थ—ऐश्वर्य होनेपर दूसरोंको देना और स्वयं उपभोग करना अच्छा है । संचय नहीं करना चाहिये. क्योंकि मैं देखताहूँ कि शहदकी मक्खियोंका संचय किया हुवा पदार्थ (शहद) दूसरे लोग लेजाते हैं ॥१३

त्यागो गुणो गुणशतादधिको मतो मे
विद्या विभूषयति तं यदि किं ब्रवीमि ॥
शौर्यं हि नाम यदि तत्र नमोऽस्तु तस्मै
तच्च त्रयं न च मदोऽस्ति विचित्रमेतत् ॥ १४॥

भाषार्थ—त्याग (दान करना) यह एकही गुण सौ गुणोंसे भी अधिक है, ऐसा मेरा मत है और यदि वह दानी विद्यासे अलंकृत (सुशोभित) हो तो फिर क्या कहना है ? तिसपर यदि तीसरा गुण शौर्य (शूरता) हो तो उसको नमस्कार है और जो तीनों गुण हैं और अहंकार नहीं हैं तो यह बड़े आश्चर्यकी बात है ॥ १४ ॥

---

१ ऐश्वर्ये । २ भ्रमरीणाम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

द्वाविमौ पुरुषौ राजन् ! स्वर्गस्योपरि तिष्ठतः ॥
प्रभुश्च क्षमया युक्तो दरिद्रश्च प्रदानवान् ॥ १५ ॥

भाषार्थ–हे राजन् ! ये ही दो पुरुष स्वर्गके ऊपर रहते हैं. एक प्रभु (समर्थ) होनेपर क्षमा करने वाला और दूसरा दरिद्र होनेपर दान करनेवाला ॥ १५ ॥

अगाधेनापि किं तेन तोयेन लवणाम्बुधेः ॥
जानुमात्रं वरं वारि तृष्णाछेदकरं नृणाम् ॥ १६ ॥

भाषार्थ–खारे जलवाले अथाह समुद्रसे क्या ? कि जो तृषाको शान्त नहीं कर सकता. मीठा जल घुंटनेही तक भरा हो तो अच्छा है. कि जिससे मनुष्योंकी प्यास दूर हो जाती है. सारांश यह कि थोडा भी दान करना अच्छा है ॥ १६ ॥

न्यायागतस्य द्रव्यस्य बोद्धव्यौ द्वावतिक्रमौ ॥
अपात्रप्रतिपत्तिश्च पात्रे चाप्रतिपादनम् ॥ १७ ॥

भाषार्थ–न्याय पूर्वक उपार्जन किये हुए धनके दोही अंतिक्रम[1] हैं. एक अपात्र (मूर्ख) को देना और दूसरा सुपात्र (विद्वान्) ब्राह्मणको न देना ॥ १७ ॥

द्वावम्भसि निवेष्टव्यौ गले बद्ध्वा दृढां शिलाम् ॥
धनवन्तमदातारं दरिद्रं चातपस्विनम् ॥ १८ ॥

भाषार्थ–इन दोनौंके कंठमें शिलाको दृढ बाँधकर अथाह जलमें डुबो देना उचित है कि जो धनवान् होकर दान न करै और दरिद्री होकर तप न करै. सारांश यह कि धनी होनेसे अवश्य दया पूर्वक

१ मर्यादाभंगः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दान देना उचित है और निर्धन होनेसे अवश्य व्रत, जप और ईश्वराराधना करना चाहिये ॥ १८ ॥

अष्टौ गुणाः पुरुषं दीपयन्ति
प्रज्ञा च कौल्यं च दमः श्रुतं च ॥
पराक्रमश्चाबहुभाषिता च
दानं यथाशक्ति कृतज्ञता च ॥ १९ ॥

भावार्थ–आठ गुण पुरुषको प्रकाशित करते हैं. १ प्रज्ञा (प्रतिभाबुद्धि), २ उत्तम कुल, ३ इन्द्रियनिग्रह, ४ वेदशास्त्राध्ययन, ५ पराक्रम, ६ बहुत न बोलना, ७ यथाशक्ति दान देना, ८ कृतज्ञता (दूसरोंके उपकारको जानना) ॥ १९ ॥

मितं भुङ्क्ते संविभज्याश्रितेभ्यो
मितं स्वपित्यमितं कर्म कृत्वा ॥
ददात्यमित्रेष्वपि याचितः सं-
स्तमात्मवन्तं प्रजहन्त्यनर्थाः ॥ २० ॥

भावार्थ–जो मनुष्य अपने आश्रित जनोंको यथाविभाग देकर पश्चात् आप परिमित भोजन करता है और जो अति परिश्रम करके समयपर सोता और समयपर शयनसे निवृत्त होता है तथा जो याचना करनेपर शत्रुको भी देता है, उस आत्मवान् अर्थात् इन्द्रियनिग्रहीको सब अनर्थ त्याग कर देते हैं. सारांश यह कि उस जितात्मा पुरुषके समीप अनर्थ नहीं आते हैं ॥ २० ॥

अन्नाद्बलं च तेजश्च प्राणिनां वर्द्धते सदा ॥
अन्नदानमतो हेतोः श्रेष्ठमाह प्रजापतिः ॥ २१ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ—अन्नसे प्राणियोंका बल और तेज सदा बढ़ता है. अतः प्रजापतियोंने अन्नदानको श्रेष्ठ कहा है ॥ २१ ॥

गोदुग्धं वाटिकापुष्पं विद्या कूपोदकं धनम् ॥
दानाद्विवर्धते नित्यमदानाच्च विनश्यति ॥ २२ ॥

भावार्थ—गौका दूध, बगीचाका फूल, विद्या, कुवाँका जल और धन ये सब वस्तु दान करनेसे बढ़ती हैं और नहीं दान करनेसे विनाश हो जाती हैं ॥ २२ ॥

पानीयं परमं दानं दानानां मनुरब्रवीत् ॥
तस्मात्कूपाँश्च वापीश्च तड़ागानि च खानयेत् ॥ २३ ॥

भावार्थ—सब दानोंमें जलदान श्रेष्ठ ऐसा मनुजीने कहा है- इस कारण कुवाँ, वावली, तालाव बनवाने चाहिये ॥ २३ ॥

जलाशयाश्च वृक्षाश्च विश्रामगृहमध्वनि ॥
सेतुः प्रतिष्ठितो येन तेन सर्वं वशीकृतम् ॥ २४ ॥

भावार्थ—जिस सत्पुरुषने लोकोपकारार्थ जलाशय (बावली, कुवाँ, तालाव आदि) बनवाये अथवा जिसने मार्गमें वृक्ष लगाये किंवा पथिकजनोंके श्रम निवारणार्थ विश्राम मन्दिर बनवाये अथवा पुल बनवाये उसने सब (इस लोक और परलोकका सुख) अपने वशमें किया ॥ २४ ॥

न गोप्रदानं न महीप्रदानं
न चान्नदानं हि तथा प्रधानम् ॥
यथा वदन्तीह बुधाः प्रधानं
सर्वप्रदानेष्वभयप्रदानम् ॥ २५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–न गोदान और न भूमिदान तथा न अन्नदान ही इतना श्रेष्ठ है कि जितना सब दानोंमें अभयदान श्रेष्ठ है ऐसा बुधजन कहते हैं ॥ २५ ॥

देयं भेषजमार्तस्य परिश्रान्तस्य चासनम् ॥
तृषितस्य च पानीयं क्षुधितस्य च भोजनम् ॥ २६ ॥

भाषार्थ–रोगीको औषध देवै, थके हुयेको आसन देवै, प्यासेको जल पिलावै और भूंखेको भोजन करावै ॥ २६ ॥

अन्नदानं परं दानं विद्यादानमतः परम् ॥
अन्नेन क्षणिका तृप्तिर्यावज्जीवं च विद्यया ॥ २७ ॥

भाषार्थ–अन्नदान श्रेष्ठ कहा गया है और अन्नदानसे उत्तम दान विद्या दान है. क्योंकि अन्नसे क्षणमात्रको ही तृप्ति होती है, परन्तु विद्यासे जन्मपर्यन्त तृप्ति होती है ॥ २७ ॥

स्थितो मृत्युमुखे चाहं क्षणमायुर्ममास्ति न ॥
इति मत्वा दानधर्मौ यथेष्टौ तु समाचरेत् ॥ २८ ॥

भाषार्थ–मैं मृत्युके मुखमें स्थित हूँ. इस कारण मेरी आयु क्षणभर की भी नहीं है यह विचार कर दान और धर्म अपनी इच्छाके अनुसार करता रहे ॥ २८ ॥

पात्रे दानं स्वल्पमपि काले दत्तं युधिष्ठिर ॥
मनसा हि विशुद्धेन प्रेत्यानन्तफलं स्मृतम् ॥ २९ ॥

भाषार्थ–हे राजा युधिष्ठिर ! पुण्यकालमें सत्पात्र ब्राह्मणको अत्यन्त शुद्धान्तःकरणसे थोडा भी दान दिया जाय तो वह परलोकमें अक्षय फल देनेवाला होता है ॥ २९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दानं प्रियवाक्सहितं ज्ञानमगर्वं क्षमान्वितं शौर्यम् ॥
वित्तं दानसमेतं दुर्लभमेतच्चतुर्विधं भद्रम् ॥ ३० ॥

भाषार्थ-मधुर वचनोंसहित दान देना, गर्वरहित ज्ञान, क्षमा युक्त शूरता और दानयुक्त धन ये चार प्रकारके मंगल हैं; इनका प्राप्त होना दुर्लभ है ॥ ३० ॥

येन केन प्रकारेण यस्य कस्यापि देहिनः ॥
सन्तोषं जनयेत्प्राज्ञस्तदेवेश्वरपूजनम् ॥ ३१ ॥

भाषार्थ-बुद्धिवान् पुरुषको उचित है कि जैसे बनै तैसे प्रत्येक प्राणीको प्रसन्न करता रहे. यही ईश्वरका पूजन है ॥ ३१ ॥

अर्थाः पादरजःसमा गिरिनदीवेगोपमं यौवनं
आयुष्यं जलबिन्दुलोलचपलं फेनोपमं जीवनम् ॥
दानं यो न करोति निश्चलमतिर्भोगं न भुङ्क्ते च यः
पश्चात्तापयुतो जरापरिगतः शोकाग्निना दह्यते ॥३२॥

भाषार्थ-सब सम्पत्तियाँ चरण रजके समान हैं और यह युवावस्था पर्वतसे निकलीहुई नदीके वेगके समान है और आयु जलके बूँदके समान चंचल है; अर्थात् पानीके बुलबुलाकी नाईं विलीयमान हो जानेवाली है और जीवन जलके फेनके समान है, ऐसा जानकर जो दान नहीं देता है और निश्चल मति होकर भोगभी नहीं भोगता है वह पश्चात्तापसहित बुढापेसे व्याकुल हो अन्तमें शोकाग्निसे भस्म हो जाता है ॥ ३२ ॥

विप्रेभ्यः साधु दानं रिपुजनसुहृदां चोपकारान्कुरु त्वं
सौजन्यं बन्धुवर्गे निजहितमुचितं स्वामिकार्यं यथार्थम्॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्रोत्रे ते तथ्यमेतत्कथयति सततं लेखनी भाग्यशालिन् !
नोचेन्नष्टेऽधिकारे ममसुखसदृशं तावकास्यं भवेद्धि॥ ३ ३॥

भावार्थ–ब्राह्मणोंको श्रेष्ठ दान दो, शत्रु और मित्रजनोंके साथ उपकार करो, बन्धुजनोंके साथ प्रेम बढाओ और जिससे अपना हित हो ऐसा उचित काम करो, तथा अपने स्वामीका कार्य यथायोग्य करो. हे भाग्य शालिन्! तुह्मारे कानपर रक्खी हुई कलम प्रतिदिन तुमसे कह रही है कि-यदि तुम उपरोक्त कथनानुसार वर्ताव नहीं करोगे तो अधिकार नष्ट होनेपर मेरे मुखकी नाईं तुह्माराभी मुख काला हो जावेगा ॥ ३३ ॥ यहाँ पर एक पद्य और स्मरण आया कि-

कृतान्तस्य दूती जरा कर्णमूले
समागत्य वक्तीति लोकाः श्रृणुध्वम् ॥
परस्त्रीपरद्रव्यहिंसास्त्यजध्वं
भजध्वं रमानाथपादारविन्दम् ॥ ३४ ॥

भावार्थ–यमराजकी दूती जरा कर्णके मूलमें आकर यह कहती है कि-लोगो! सुनो, पराई स्त्री, पराया धन और हिंसा इनका त्याग करो. और रमानाथ (हरि भगवान्) के चरणारविन्दका भजन करो. भावार्थ यह कि-सबसे पहले कानके पास जो कलम रखाई जाती है वही सपेद होती है यही धर्मराजका संदेशा है ॥ ३४ ॥

लोभनिन्दा ।

लोभात्क्रोधः प्रभवति क्रोधाद्द्रोहः प्रवर्तते ॥
द्रोहेण नरकं याति शास्त्रज्ञोऽपि विचक्षणः ॥ १ ॥

भावार्थ–लोभसे क्रोध प्रकट होता है, क्रोधसे द्रोह उत्पन्न हो जाता है, द्रोहसे शास्त्र जाननेवाला पण्डित भी नरकगामी होता है॥१॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लोभात्क्रोधः प्रभवति लोभात्कामः प्रजायते ॥
लोभान्मोहश्च नाशश्च लोभः पापस्य कारणम् ॥ २ ॥

भाषार्थ—लोभसे क्रोध उत्पन्न होता है, लोभसे काम प्रगट होता है, लोभसेही मोहकी उत्पत्ति है तथा लोभसेही नाश हो जाता है, इसलिये लोभही पापका कारण है ॥ २ ॥

मातरं पितरं पुत्रं भ्रातरं वा सुहृत्तमम् ॥
लोभाविष्टो नरो हन्ति स्वामिनं वा सहोदरम् ॥३॥

भाषार्थ—लोभी मनुष्य अपने माता, पिता, पुत्र, बन्धुजन, मित्र, स्वामी और सहोदर (भाई) को भी मार डालता है ॥ ३ ॥

लोभाविष्टो नरो वित्तं वीक्षते न स चापदम् ॥
दुग्धं पश्यति मार्जारो यथा न लगुडाहतिम् ॥ ४ ॥

भाषार्थ—लोभसे युक्त पुरुष धनको देखता है; आपदाको नहीं देखता है. जैसे बिल्ली दूधको देखती है परंतु लठ्ठकी फटकारको नहीं देखती है ॥ ४ ॥

लोभेन बुद्धिश्चलति लोभो जनयते तृषाम् ॥
तृषार्तो दुःखमाप्नोति परत्रेह च मानवः ॥ ५ ॥

भाषार्थ—लोभसे बुद्धि चलायमान हो जाती है अर्थात् मति ठिकाने नहीं रहती है और लोभहीसे तृष्णा बढ़जाती है तृष्णा बढजानेसे मनुष्य इस लोक और परलोकमें सदा दुःखी रहता है ॥ ५ ॥

लोभः सदा विचिन्त्यो लुब्धेभ्यः सर्वतो भयं दृष्टम् ॥
कार्याकार्यविचारो लोभविमूढस्य नास्त्येव ॥ ६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–लोभी मनुष्य सदैव लोभकी चिंतामें रहता है और चारो ओर भय दीखता है. लोभसे विमूढ पुरुषको कार्याकार्यका विचार नहीं है ॥ ६ ॥

उदारप्रशंसा ।

अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् ॥
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–यह अपना है अथवा यह पराया है ऐसा विचार मन्द-मति वालोंका रहता है. उदार चरितवालोंका तो सब संसारही कुटुम्ब है. 'अपने परायेका भेद उनमें नहीं होता' ॥ १ ॥

शतेषु जायते शूरः सहस्रेषु च पण्डितः ॥
वक्ता दशसहस्रेषु दाता भवति वा न वा ॥ २ ॥

भाषार्थ–सौमें एक मनुष्य शूर होता है और हजारमें एक पंडित होता है, दशहजार में एक वक्ता होता है और दाता होता है या नहीं, अर्थात् नहीं मालूम कि-पृथ्वीपर कोई दाता है वा नहीं ॥ २ ॥

दाता नीचोऽपि सेव्यः स्यान्निष्फलो न महानपि ॥
जलार्थी वारिधिं त्यक्त्वा पश्य कूपं निषेवते ॥ ३ ॥

भाषार्थ–दाता मनुष्य नीच होनेपर भी सेवनीय है और अदाता बड़ा होनेपर भी आश्रयके योग्य नहीं होता । देखो जलार्थी (प्यासा) मनुष्य समुद्रको छोड़कर कुवाँका आश्रय लेता है ॥ ३ ॥

दातारं कृपणं मन्ये मृतोऽप्यर्थं न मुञ्चति ॥
अदाता हि धनत्यागी धनं हित्वा हि गच्छति ॥ ४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-मैं दाताको कृपण मानता हूँ. क्योंकि वह मरनेपरभी धनको नहीं छोड़ता। सच पूछिये तो कृपणही धनका त्यागी है. कि जो सब धन छोड़कर चला जाता है ॥ ४ ॥

याचितो यः प्रहृष्येत दत्वा च प्रीतिमान्भवेत् ॥
तं दृष्ट्वाऽप्यथवा श्रुत्वा नरः पुण्यमवाप्नुयात् ॥ ५ ॥

भाषार्थ-जो पुरुष याचना करनेपर आनन्द मानता है और याचकको देकर प्रीति करता है उस सत्पुरुषको देखनेसे अथवा उसका सुयश सुननेसे मनुष्य पुण्यको प्राप्त होता है ॥ ५ ॥

रक्षन्ति कृपणाः पाणौ द्रव्यं प्राणमिवात्मनः ॥
तदेव सन्तः सततमुत्सृजन्ति यथा मलम् ॥ ६ ॥

भाषार्थ-कृपण मनुष्य अपने प्राणसमान धनको मुठ्ठीमें रखते हैं और उसी धनको सज्जन पुरुष निरन्तर मलकी नाईं त्याग देते हैं॥६॥

दैववशादुत्पन्ने सति विभवे यस्य नास्ति भोगेच्छा ॥
न च परलोकसमीहा स भवति धनपालको मूर्खः ॥७॥

भाषार्थ-दैवयोगसे ऐश्वर्य प्राप्त होनेपर जिसको न धनभोगकी इच्छा है और न परलोक सुधारनेकी इच्छा है, वह मूर्ख केवल धनकी रक्षा करनेवाला होता है ॥ ७ ॥

युद्धयन्ते पक्षिपशवः पठन्ति शुकसारिकाः ॥
दातुं शक्नोति यो वित्तं स शूरः स च पण्डितः ॥ ८ ॥

भाषार्थ-युद्ध तो पक्षी और पशुभी करते हैं और तोता मैना भी पढते हैं इसलिये युद्ध करने और पढनेमें कुछ बड़ी बात नहीं है,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

परन्तु जो धन देनेकी सामर्थ्य रखता है वही शूर और वहीं पंडित है ॥ ८ ॥

कर्णस्त्वचं शिबिर्मांसं जीवं जीमूतवाहनः ॥
ददौ दधीचिरस्थीनि नास्त्यदेयं महात्मनाम् ॥ ९ ॥

भाषार्थ–राजा कर्णने अपना वख्तर दिया, राजा शिबिने अपना मांस दिया, जीमूतवाहनने अपना जीवन दिया और दधीचिने अपनी हड्डी दिये कि-' जिससे इन्द्रका वज्र तैयार होकर वृत्रासुर मारा गया-' इसलिये महात्माओंको अदेय कुछ नहीं है अर्थात् महात्मा लोग सब कुछ दे सकते हैं ॥ ९ ॥

कियती पञ्चसहस्री कियती लक्षापि कोटिरपि कियती ॥
औदार्योन्नतमनसां रत्नवती वसुमती कियती ॥ १० ॥

भाषार्थ–पाँच हजारी मर्यादा कितनी और लाख करोडकीभी मर्यादा कितनी ? बढे हुए मनवाले उदार पुरुषोंको रत्नवती पृथ्वी कितनी है ? सारांश यह कि कितना धन क्यों नहो परन्तु उदार पुरुषोंके आगे कुछ नहीं; वे सब कुछ दे डालते हैं ॥ १० ॥

कृपण निन्दा ।

न दातुं नोपभोक्तुं च शक्नोति कृपणः श्रियम् ॥
किन्तु स्पृशति हस्तेन नपुंसक इव स्त्रियम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–कृपण मनुष्य न धनको देता है, न भोगता है; किन्तु हाथसे स्पर्श कर लेता है- जैसे नपुंसक पुरुष स्त्रीको हाथसे स्पर्श कर लेता है ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दानोपभोगरहिता दिवसा यस्य यान्ति वै ॥
स लोहकारभस्त्रेव श्वसन्नपि न जीवति ॥ २ ॥

भाषार्थ–जिस मनुष्यके दिन दान और उपभोगके विना व्यर्थ व्यतीत होते हैं वह मनुष्य लुहारकी धौंकनीके समान सांस लेता हुआ भी नहीं जीता है. अर्थात् मृतकके समान है ॥ २ ॥

त्यागभोगविहीनेन धनेन धनिनो यदि ॥
भवामः किं न तेनैव धनेन धनिनो वयम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–दानभोगसे रहित धनसे यदि धनी जन धनवान् हैं तो उसी धनसे क्या हम लोग धनाढ्य नहीं हो सकते ? ॥ ३ ॥

कृपणस्य समृद्धीनां भोक्तारः सन्ति केचिदतिनिपुणाः ॥
जलसम्पदोम्बुराशेर्यान्ति वशं शश्वदौर्वाग्नेः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–कृपण मनुष्यकी सम्पत्तिको भोगनेवाले भी कोई बड़ेही चतुर जीव होते हैं. जैसे समुद्रकी जलसम्पदाएँ निरन्तर वडवानलको वश हो जाती हैं ॥ ४ ॥

याचमानजनमानसवृत्तेः पूरणाय बत जन्म न यस्य ॥
तेन भूमिरतिभारवतीयं न द्रुमैर्न गिरिभिर्न समुद्रैः॥५॥

भाषार्थ–जिस मनुष्यका जन्म याचककी मनःकामना पूर्ण करनेके निमित्त नहीं है उस मनुष्यके भारसे यह पृथिवी इतनी भारवती है कि जितनी वृक्षोंसे, पर्वतोंसे और समुद्रसे नहीं होती ॥ ५ ॥

कृपणेन समो दाता न भूतो न भविष्यति ॥
अस्पृशन्नेव वित्तानि यः परेभ्यः प्रयच्छति ॥ ६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–आजतक कृपण मनुष्यके समान दाता न कोई हुआ है और न होगा, क्योंकि कृपण मनुष्य धनको विना स्पर्श किये ही दूसरोंको दे डालता है ॥ ६ ॥

कृपणः स्ववधूसङ्गं न करोति भयादिह ॥
भविता यदि मे पुत्रः स मे वित्तं हरेदिति ॥ ७ ॥

भाषार्थ–कृपण मनुष्य अपनी स्त्रीसे संग इस भयसे नहीं करता है कि-यदि मुझे पुत्र होगा तो मेरा धन हर लेगा ॥ ७ ॥

याचकनिन्दा।

वेपथुर्मलिनं वक्त्रं दीनवाग्गद्गदस्वरः ॥
मरणे यानि चिह्नानि तानि चिह्नानि याचके ॥ १ ॥

भाषार्थ–भयसे कम्पायमान, मलीनमुख, दीनवाणी और गद्गदस्वर ये जितने लक्षण मरणकालमें होते हैं वेही सब याचक (माँगनेवाले) में होते हैं ॥ १ ॥

देहीति वचनं श्रुत्वा देहस्थाः पञ्चदेवताः ॥
मुखान्निर्गत्य गच्छन्ति श्रीह्रीधीधृतिकीर्तयः ॥ २ ॥

भाषार्थ–देहि (मुझको कुछ दे) यह वचन सुनकर देहमें स्थित जो पाँच देवता श्री (लक्ष्मी या शोभा), ह्री (लज्जा), धी (बुद्धि), धृति (धीरज), कीर्ति (यश) मुखसे निकलकर चले जाते हैं ॥ २ ॥

तृणादपि लघुस्तूलस्तूलादपि च याचकः ॥
वायुना किं न नीतोऽसौ मामयं प्रार्थयेदिति ॥ ३ ॥

---

१ कम्पः। २ कार्पासः।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–तृणसे भी हलकी रुई होती है और रुईसे भी हलका याचक होता है. यदि कहा जाय कि इसको वायु क्यों नहीं उडा ले जाती? किन्तु इसमें कारण यह है कि 'यह मुझसे भी माँगेगा' ऐसा समझकर वायु याचकको नहीं उड़ाती ॥ ३ ॥

करान् प्रसार्य रविणा दक्षिणाशावलम्बिना ॥
न केवलमनेनात्मा दिवसोऽपि लघूकृतः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–सूर्यकी किरणें फैलकर जब दक्षिणदिशामें जाती हैं तब केवल अपनेही तक नहीं; किन्तु दिनभी छोटा हो जाता है. भावार्थ यह कि-याचकजन दक्षिणाकी आशासे अपने हाथोंको फैलाते हैं तब केवल आत्माही नहीं दिन भी माँगनेकी आशासे छोटा जान पडता है। सूर्यदेवके हाथ किरणें हैं. वे भी जब दक्षिण दिशामें जाती हैं अर्थात् दक्षिणायन सूर्य जाडेके दिनोंमें होते हैं तब दिन छोटा होता है ॥ ४ ॥

क्व गन्ताऽसि भ्रातः! कृतवसतयो यत्र धनिनः
किमर्थं? प्राणानां स्थितिमनुविधातुं कथमपि ॥
धनैर्याच्ञालब्धैर्ननु परिभवोऽभ्यर्थनफलं
निकारोऽग्रे पश्चाद्धनमहह! भो! तद्धि निधनम् ॥ ५ ॥

भाषार्थ–हे भ्रातः! कहाँ जाते हो? जहाँ धनवान् निवास करते हैं। किस निमित्त? किसी प्रकार प्राणरक्षा होनेकी इच्छासे। प्राणरक्षा कैसे होगी? याचनासे प्राप्त धन करके। याचना करनेका फल निरादर है और जिसके आगे 'नि' पश्चात् 'धन' है अहह! भो! वह

१ किरणान् (पक्षे) हस्तान्

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

निश्चय करके निधन (मरण) ही है। अर्थात् माँगना एक प्रकारका मरण ही है ॥ ५ ॥

तीक्ष्णधारेण खड्गेन वरं जिह्वा द्विधा कृता ॥
न तु मानं परित्यज्य देहि देहीति भाषितम् ॥ ६ ॥

भाषार्थ–तीक्ष्ण (पैनी) धारवाली खड्गसे जीभके दो खंड कर देना अच्छा; परन्तु मानको त्यागकर 'देहि देहि' यह भाषण करना अर्थात् माँगना नहीं अच्छा ॥ ६ ॥

दीना दीनमुखैः सदैव शिशुकैराकृष्टजीर्णाम्बरा
क्रोशद्भिः क्षुधितैर्नरैर्न विधुरा दृश्येत चेद्गेहिनी ॥
याच्ञाभङ्गभयेन गद्गदगलत्त्रुट्यद्विलीनाक्षरं
को देहीति वदेत्स्वदग्धजठरस्यार्थे मनस्वी पुनः ॥ ७ ॥

भाषार्थ–दीनमुख बालक भूँखसे रोते हुए जिसका जीर्ण वस्त्र खींच रहे ऐसी दीन स्त्री यदि देख न पड़े तो भला कौन लज्जावान् मनस्वी पुरुष अपने जले पेटके निमित्त याचनाभंग न हो जाय इस भयसे गिड़गिड़ाता हुआ 'कुछ दो' ऐसा वचन कहेगा ? ॥ ७ ॥

तावत्सर्वगुणालयः पटुमतिः साधुः सतां वल्लभः
शूरः सच्चरितः कलङ्करहितो मानी कृतज्ञः कविः ॥
दक्षो धर्मरतः सुशीलगुणवाँस्तावत्प्रतिष्ठान्वितो
यावन्निष्ठुरवज्रपातसदृशं देहीति नो भाषते ॥ ८ ॥

भाषार्थ–मनुष्य तभीतक सर्व गुणनिधान, महाबुद्धिमान्, साधु, सज्जनोंका प्यारा, शूर, उत्तम चरित्रवाला, कलंकरहित, मानी, कृतज्ञ,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कवि, दक्ष और धर्ममें प्रीति करनेवाला, सुशील, गुणवान् है और तभीतक प्रतिष्ठावाला है कि-जबतक कठोर वज्रपातके समान 'देहि' यह दीन वचन नहीं बोलता ॥ ८ ॥

सन्ति स्वादुफला वनेषु तरवः स्वच्छं पयो नैर्झरं
वासो वल्कलमाश्रयो गिरिगुहा शय्या लतावल्लरी ॥
आलोकाय निशासु चन्द्रकिरणाः सख्यं कुरङ्गैः सह
स्वाधीने विभवेऽप्यहो ! नरपतिं सेवन्त इत्यद्भुतम् ॥९॥

भाषार्थ-क्षुधा शान्त होनेके लिये स्वादिष्ट फलवाले वृक्ष वनोंमें बहुत हैं, तृषा शान्त होनेके लिये झरनोंका निर्मल जल है, वृक्षोंके वल्कल वस्त्रनिमित्त हैं, आश्रयनिमित्त पर्वतकी गुफा है, शय्यानिमित्त लता वल्लरी हैं, रात्रिके समय प्रकाशके निमित्त चन्द्रमाकी किरणें हैं और मित्रताके लिये हरिण हैं । जो सब विभव अपने स्वाधीन होनेपरभी आश्चर्य है कि-लोग राजाकी सेवा करते हैं ॥ ९ ॥

वासो वल्कलमास्तरः किसलयान्योकस्तरूणां तलं
मूलानि क्षतये क्षुधां गिरिनदीतोयं तृषाशान्तये ॥
क्रीडामुग्धमृगैर्वयांसि सुहृदो नक्तं प्रदीपः शशी
स्वाधीने विभवे तथापि कृपणा याचन्त इत्यद्भुतम् ॥१०॥

भाषार्थ-वृक्षोंकी छाल वस्त्र हैं, वृक्षोंके पत्ते बिछौना है, वृक्षोंके नीचेको भू घर है, कन्दमूल फल क्षुधाकी निवृत्तिके लिये हैं, पहाडी नदियोंका जल तृषा (प्यास) की शान्तिके निमित्त है, मुग्ध मृगोंकी

१ गृहम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

साथ क्रीडानिमित्त है, पक्षियोंका संग मित्रतानिमित्त है और चन्द्रमाका प्रकाश दीपक है. तो यह सब विभव अपने आधीन है तो भी कृपण लोग माँगते फिरते हैं यह बडे आश्चर्यकी बात है ॥ १० ॥

कामं जीर्णपलाशसंहतिकृतां कन्थां दधानो वने
कुर्यामम्बुभिरप्ययाचितसुखैः प्राणानुबन्धस्थितिम् ॥
साङ्गग्लानि सवेपितं सचकितं सान्तर्निदाघज्वरं
वक्तुं न त्वहमुत्सहे सकृपणं देहीति दीनं वचः ॥ ११ ॥

भावार्थ-पुराने ढाकके पत्तोंसे गाँठकर बनाई हुई कन्था (कथरी)-को धारण कर इच्छानुसार वनमें रह सकते हैं और विना माँगे हुए जल आदिको सुखपूर्वक पानकर प्राणोंकी रक्षा कर सकते हैं परन्तु अंगोंमें ग्लानि और कंपसहित चकित करानेवाले कृपणतासहित देहि 'कुछ दीजिये' यह दीन वचन कहनेको हम उद्यत नहीं हैं अर्थात् दीन वचन कहकर याचना हम कभी नहीं करेंगे ॥ ११ ॥

याचना हि पुरुषस्य महत्वं
नाशयत्यखिलमेव तथा हि ॥
सद्य एव भगवानपि विष्णु-
र्वामनो भवति याचितुमिच्छन् ॥ १२ ॥

भावार्थ-याचना ही पुरुषके महत्त्वको नाश कर देती है. याचनाकी इच्छा करते हुए विष्णुभगवान् भी शीघ्रही वामन हुए अर्थात् छोटे होकर विष्णुने बलिसे याचना की है ॥ १२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

परोपकारप्रशंसा ।

भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमै-
र्नवाम्बुभिर्भूरिविलम्बिनो घनाः ॥
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–जैसे फल होनेसे वृक्ष नम्र हो जाते हैं अर्थात् झुक जाते हैं और नवीन जल भरनेसे मेघभी भूमिपर लटक आते हैं इसी प्रकार सत्पुरुष सम्पत्ति पाकर उद्धत नहीं होते; किन्तु नम्रीभूत हो जाते हैं. परोपकारी जीवोंका यह स्वभावही है ॥ १ ॥

पद्माकरं दिनकरो विकचीकरोति
चन्द्रो विकासयति कैरवचक्रवालम् ॥
नाभ्यर्थितो जलधरोऽपि जलं ददाति
सन्तः स्वयं परहिते सुकृताभियोगाः ॥ २ ॥

भाषार्थ–सूर्यदेव कमलसमूहको विना याचेही विकसित करते हैं, चन्द्रमा कुमुदके समूहको विना याचेही प्रफुल्लित करते हैं, मेघभी विना याचे जल वरसाता है, इसी प्रकार सन्तजन पराये हितमें स्वयं उद्योग करते हैं ॥ २ ॥

श्रोत्रं श्रुतेनैव न कुण्डलेन दानेन पाणिर्न तु कङ्कणेन ॥
विभाति कायः करुणापराणां परोपकारैर्न तु चन्दनेन ॥ ३ ॥

भाषार्थ–कानोंकी शोभा शास्त्र सुननेसे है; कुंडल धारण करनेसे नहीं. हाथकी शोभा दान करनेसे है; कंकण पहननेसे नहीं. दयालु जनोंके देहकी शोभा परोपकार करनेसेही है; चन्दन लगानेसे नहीं ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः ॥
नादन्ति सस्यं खलु वारिवाहाः
परोपकाराय सतां विभूतयः ॥ ४ ॥

भावार्थ—नदियां अपने जलको आपही नहीं पीतीं । वृक्ष अपने फलोंको आप नहीं खाते । मेघ सस्य (खेतके धान्य) को आप नहीं खाते हैं, इसी प्रकार सज्जनोंकी विभूतियाँ परोपकारके ही निमित्त हुआ करती हैं ॥ ४ ॥

दानाय लक्ष्मीः सुकृताय विद्या
चिन्ता परब्रह्मविनिश्चयाय ॥
परोपकाराय वचांसि यस्य
वन्द्यस्त्रिलोकीतिलकः[1] स एव ॥ ५ ॥

भावार्थ—जिसकी लक्ष्मी दानके अर्थ, विद्या सुकृत (सुकर्म--पुण्य करने) के अर्थ, चिन्ता परब्रह्मका निश्चय करनेके अर्थ और वचन परोपकारके अर्थ हैं, वही पुरुष वन्दना करनेयोग्य और तीनौं लोकमें शिरोमणि है ॥ ५ ॥

परोपकारः कर्तव्यः प्राणैरपि धनैरपि ॥
परोपकारजं पुण्यं न स्यात्क्रतुशतैरपि ॥ ६ ॥

भावार्थ—प्राणसे और धनसे भी परोपकार करना उचित है. क्यों कि परोपकारसे जो पुण्य होता है सो सौ यज्ञोंके करनेसे भी नहीं होता है ॥ ६ ॥

---

१ त्रिलोक्यां तिलको भूषणभूतः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

परोपकरणं येषां जागर्ति हृदये सताम् ॥
नश्यन्ति विपदस्तेषां सम्पदः स्युः पदे पदे ॥ ७ ॥

भाषार्थ–जिन सज्जनोंके हृदयमें परोपकारकी जागृति बनी रहती है, उनकी विपत्तियाँ दूर हो जाती हैं और पदपदमें उनको सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥ ७ ॥

परोपकारशून्यस्य धिङ्मनुष्यस्य जीवितम् ॥
धन्यास्ते पशवो येषां चर्माप्युपकरिष्यति ॥ ८ ॥

भाषार्थ–जो परोपकारसे शून्य है उस मनुष्यके जीवनको धिक्कार है. उससे तो वे पशु अच्छे हैं. कि-जिनका चमड़ा भी उपकारके काममें आता है ॥ ८ ॥

आत्मार्थं जीवलोकेऽस्मिन् को न जीवति मानवः ॥
परं परोपकारार्थं यो जीवति स जीवति ॥ ९ ॥

भाषार्थ–इस जीवलोकमें कौन प्राणी अपने निमित्त नहीं जीता है? किन्तु सभी अपने निमित्त जीते हैं; परन्तु जो मनुष्य परोपकारके निमित्त जीता है वही जीता है ॥ ९ ॥

रविश्चन्द्रो घना वृक्षा नदी गावश्च सज्जनाः ॥
एते परोपकाराय युगे दैवेन निर्मिताः ॥ १० ॥

भाषार्थ–सूर्य, चन्द्र, मेघ, वृक्ष, नदियाँ, गौवें और सज्जन इनको परोपकार निमित्त प्रत्येक युगमें विधाताने निर्मित किया है ॥ १० ॥

---

१ जीवन्तु इति पाठांतरम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तृणं चाहं वरं मन्ये नरादनुपकारिणः ॥
घासो भूत्वा पशून् पाति भीरून्[1] पाति रणाङ्गणे॥ ११॥

भावार्थ–जो मनुष्य उपकार नहीं करता उससे मैं तृणको उत्तम मानता हूं. कारण जो घास होकर पशुओंकी रक्षा करता है और समर-भूमिमें भीरु (डरपोक) लोगोंकी रक्षा करता है अर्थात् डरपोक समरसे भागकर घासमें जाकर छिपते हैं ॥ ११ ॥

परोपकृति[2]कैवल्ये[3] तोलयित्वा[4] जनार्दनः ॥
गुर्वीमुपकृतिं[5] मत्वा ह्यवतारान्[6] दशाग्रहीत्[7] ॥ १२ ॥

भावार्थ–परोपकार व मोक्ष इन दोनोंको तराजूमें तोलकर जनार्दन भगवान्ने उपकारकोहि श्रेष्ठ मानकर मत्स्यादि दश अवतार लेकर परोपकार किया है ॥ १२ ॥

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः ॥
परोपकाराय दुहन्ति गावः परोपकारार्थमिदं शरीरम् ॥ १३

भावार्थ–वृक्ष परोपकारहीके लिये फलते हैं, नदियाँ परोपकारहीके अर्थ वहती हैं और गायें परोपकारहीके निमित्त दुही जाती हैं, यानि परोपकारहीके लिये यह शरीर है ॥ १३ ॥

रत्नाकरः किं कुरुते स्वरत्नै ?-
विन्ध्याचलः किं करिभिः करोति ? ॥
श्रीखंडखंडैर्मलयाचलः किं ?
परोपकाराय सतां विभूतयः ॥ १४ ॥

---

१ भीतान्। २ परोपकारः। ३ मोक्षः। ४ उभयोस्तुलनां कृत्वा। ५ श्रेष्ठाम्। ६ मत्स्यादीन्। ७ जग्राह।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—रत्नोंकी खानिवाला समुद्र अपने रत्नोंसे क्या करता है ? विन्ध्याचल हाथियोंसे क्या करता है ? चन्दनोंसे मलयाचल क्या करता है ? अर्थात् ये सब परोपकार करते हैं. इसीसे कहा है कि—'परोपकाराय सतां विभूतयः' सज्जनोंका ऐश्वर्य परोपकारके निमित्त ही होता है ॥ १४ ॥

कृतघ्ननिन्दा।

उपकारिणि विश्रब्धे शुद्धमतौ यः समाचरति पापम् ॥
तं जनमसत्यसन्धं[1] भगवति! वसुधे! कथं वहसि ? ॥ १ ॥

भाषार्थ—उपकार करनेवाले, विश्वासयुक्त और शुद्धबुद्धि पुरुषमें जो पापाचरण करता है अर्थात् विश्वासघात करता है, उस कृतघ्न जनको हे भगवति ! वसुधे ! तुम क्यों धारण करती हो? ॥ १ ॥

सन्तोषप्रशंसा।

सन्तोषामृततृप्तानां यत्सुखं शान्तचेतसाम् ॥
कुतस्तद्धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम् ॥ १ ॥

भाषार्थ—सन्तोषरूप अमृतसे तृप्त (प्रसन्न) शान्तचित्त पुरुषोंको जो सुख है, वह सुख इधर उधर दौडनेवाले धनके लोभी पुरुषोंको कभी नहीं मिल सकता ॥ १ ॥

सर्पाः पिबन्ति पवनं न च दुर्बलास्ते
शुष्कैस्तृणैर्वनगजा बलिनो भवन्ति ॥
कन्दैः फलैर्मुनिवराः क्षपयन्ति कालं
सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम् ॥ २ ॥

१ असत्यप्रतिज्ञम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—साँप वायुका पान करते हैं; पर वे दुर्बल नहीं होते. वनमें रहनेवाले हाथी सूखी घास खानेसेही बलवान् रहते हैं. एवं श्रेष्ठ मुनिजन कन्दमूलफलोंसे समयको व्यतीत करते हैं. इससे यह सिद्ध होता है कि-सन्तोषही पुरुषका परम निधान (सम्पत्ति) है ॥२॥

ते धन्याः पुण्यभाजस्ते तैस्तीर्णः क्लेशसागरः ॥
जगत्संमोहजननी यैराशाशीविषी जिता ॥ ३ ॥

भाषार्थ—वे लोग धन्य हैं, पुण्यात्मा हैं और वेही दुःखरूपी सागरसे पार हो गये हैं जिन्होंने जगत्को मोहित करनेवाली आशा-रूपी सर्पिणीको जीत लिया है ॥ ३ ॥

यो मे गर्भगतस्यापि वृत्तिं कल्पितवान् प्रभुः ॥
शेषवृत्तिविधानाय स किं सुप्तोऽथवा मृतः ॥ ४ ॥

भाषार्थ—जो प्रभु मुझ गर्भस्थकी वृत्तिको कल्पित करनेवाला है, अर्थात् जब मैं गर्भमें था तब जिस परमात्माने मेरे निमित्त मेरी माताकी छातीमें दूध उत्पन्न किया, वह परमात्मा मेरी शेषवृत्तिके विधानके निमित्त क्या सो गया अथवा मर गया है ? अर्थात् जिस परमेश्वरने जन्मतेही मेरी रक्षा की, क्या अब वह मेरी रक्षा नहीं करेगा? अवश्य करेगा ॥ ४ ॥

मन्निन्दया यदि परः परितोषमेति
नन्वप्रयत्नसुलभोऽयमनुग्रहो मे ॥
श्रेयोऽर्थिनोऽपि पुरुषाः परतुष्टिहेतो-
र्दुःखार्जितान्यपि धनानि परित्यजन्ति ॥ ५ ॥

१ सर्पिणी । २ संतोषम् । ३ प्रसादः । ४ कल्याणेच्छवः । ५ अन्यसंतोषः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–यदि कोई मेरी निन्दा करके संतुष्ट होवे, तो उसने बिना प्रयासही मुझपर अनुग्रह किया और सुलभ रीतिसे मुझपर कृपा की. भलाईकी इच्छावाले पुरुष दूसरोंकी प्रसन्नताके हेतु दुःखसे संग्रह किये हुए धनकाभी परित्याग करते हैं ॥ ५ ॥

सर्वत्र सम्पदस्तस्य सन्तुष्टं यस्य मानसम् ॥
उपानद्गूढपादस्य ननु चर्मावृतैव भूः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–उस पुरुषको सर्वत्र सम्पदा है जिसका मन सन्तुष्ट है. अर्थात् सन्तोष करनेवाले मनुष्यको सम्पत्ति चारों ओरसे प्राप्त हो जाती है. जैसे जिसके पैरमें जूते हैं उसको सारी पृथ्वी ही चमड़ेसे ढकी हुई मालूम पड़ती है ॥ ६ ॥

तृष्णानिन्दा।

तृष्णे! देवि! नमस्तुभ्यं धैर्यविप्लवकारिणि! ॥
विष्णुस्त्रैलोक्यनाथोऽपि यत्त्वया वामनीकृतः ॥ १ ॥

भाषार्थ–हे तृष्णे देवि! तुमको नमस्कार है. तुम धैर्यका नाश करनेवाली हो. क्योंकि तुमने त्रिलोकीनाथ विष्णुकोभी वामन (छोटा) बना दिया ॥ १ ॥

आशाया ये दासास्ते दासाः सर्वलोकस्य ॥
आशा येषां दासी तेषां दासायते लोकः ॥ २ ॥

भाषार्थ–जो आशाके दास हैं वे सारे संसारके दास हैं और आशा जिनकी दासी है उनके सबलोग दास हैं ॥ २ ॥

दन्ता विश्लथदन्ताः केशाः काशप्रसूनसंकाशाः ॥
नयनं तमसामयनं तथापि चित्तं धनाङ्गनायत्तम् ॥ ३ ॥

---

१ उपानद्भ्यां गूढौ पिहितौ पादौ यस्य। २ विलयम्। ३ हस्वीकृत।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—दाँत गिर गये, केश काशके फूलके सदृश श्वेत हो गये, नेत्र अन्धकारस्थान हो गये, तौभी मन इन धन और स्त्रीहीके वशीभूत बना रहता है ॥ ३ ॥

अङ्गं गलितं पलितं मुण्डं दशनविहीनं जातं तुंडम् ॥
वृद्धो याति गृहीत्वा दण्डं तदपि न मुञ्चत्याशा पिण्डम् ॥४॥

भाषार्थ—अंग ढीले हो गये, शिरके केश श्वेत हो गये, मुखमें दाँत नहीं रहे, शरीर वृद्ध हो गया और लाठी लेकर चलने लगे तौभी आशा पिण्ड नहीं छोड़ती ॥ ४ ॥

दिनमपि रजनी सायं प्रातः शिशिरवसन्तौ पुनरायातः ॥
कालः क्रीडति गच्छत्यायुस्तदपि न मुञ्चत्याशावायुः ॥५॥

भाषार्थ—दिन, रात, सायंकाल, प्रातःकाल और शिशिर, वसन्त ये समय बारबार आते हैं, काल क्रीडा कर रहा है, आयु व्यतीत होती चली जाती है, तौभी आशावायु नहीं छूटती है ॥ ५ ॥

अपि मेरुसमं प्राज्ञं अपिशूरमपि स्थिरम् ॥
तृणीकरोति तृष्णैका निमिषेण नरोत्तमम् ॥ ६ ॥

भाषार्थ—मेरु समान ऊँची बुद्धिवाले प्राज्ञ (पंडित) को, शूर और स्थिर चित्तवाले उत्तम मनुष्यको भी यह तृष्णा एक निमेषभर तृणके समान हलका कर देती है ॥ ६ ॥

त्वामुदर ! साधु मन्ये शाकैरपि यदसि लब्धपरितोषम् ॥
हतहृदयं ह्यधिकाधिकवाञ्छाशतदुर्भरं न पुनः ॥ ७ ॥

---

१ शिरः । २ दंताः । ३ मुखम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–हे उदर ! तुझीको मैं साधु मानता हूँ. क्योंकि तुम शाक पात जो कुछ भी मिल जाता है उसीसे संतुष्ट हो जाते हो परन्तु इस जले हृदयको क्या कहा जाय कि अधिकसे अधिक सैकड़ों इच्छाओंसे भी जिसको सन्तुष्ट होना कठिन है ॥ ७ ॥

भिक्षाशनं तदपि नीरसमेकवारं
शय्या च भूः परिजनो निजदेहमात्रम् ॥
वस्त्रं सुजीर्णशतखंडमयी च कंथा
हा ! हा ! तथापि विषयान्न जहाति चेतः ॥८॥

भावार्थ–भिक्षाभोजन–सोभी निरस, एकवार, शय्या पृथिवी, परिजन केवल अपनी देहमात्र, वस्त्र जीर्ण सैकडों टुकडोंकी गुदडी, हा हा ! ! तौभी मन विषयोंका त्याग नहीं करता ॥ ८ ॥

गतं तत्तारुण्यं तरुणिहृदयानन्दजनकं
विशीर्णा दन्तालिर्निजगतिरहो ! यष्टिशरणा ॥
जडीभूता दृष्टिः श्रवणरहितं कर्णयुगलं
मनो मे निर्लज्जं तदपि विषयेभ्यः स्पृहयति॥९

भावार्थ–स्त्रीके हृदयको आनन्द देनेवाला यौवन भी चला गया, दाँत उखड़ गये, अहो ! चलना फिरना भी लाठीके सहारे न है, दृष्टि जड़ होगई और कानोंसे सुनाई नहीं देता, तौभी मेरा निर्लज्ज मन विषयोंमेंही इच्छित हो रहा है ॥ ९ ॥

वपुः कुब्जीभूतं गतिरपि तथा यष्टिशरणा
विशीर्णा दन्तालिः श्रवणविकलं श्रोत्रयुगलम् ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शिरः शुक्लं चक्षुस्तिमिरपटलैरावृतमहो !
मनो मे निर्लज्जं तदपि विषयेभ्यः स्पृहयति ॥ १० ॥

भाषार्थ–शरीर कुबड़ा हो गया, तथा चलना फिरना लाठीके आधीन हो गया, दांतोंकी पंक्ति खंडित हो गई, दोनों कानोंसे सुन नहीं पड़ता, शिरके केश श्वेत हो गये, नेत्रोंमें अंधेरा छा गया, तो भी मेरा निर्लज्ज मन विषयोंमेंही इच्छा करता है ॥ १० ॥

भ्रान्तं देशमनेकदुर्गविषमं प्राप्तं न किंचित्फलं
त्यक्त्वा जातिकुलाभिमानमुचितं सेवा कृता निष्फला ॥
भुक्तं मानविवर्जितं परगृहेष्वाशङ्कया काकवत्
तृष्णे! जृम्भसि पापकर्मनिरते! नाद्यापि संतुष्यसि? ॥ ११

भाषार्थ–अनेक ऊँचे नीचे देशोंमें मैंने भ्रमण किया परन्तु कुछ फल प्राप्त न हुआ. जाति और कुलके उचित अभिमानको छोडकर पराई सेवा की वह भी निष्फल हुई. मानरहित पराये घरमें शंका सहित कौवेके सदृश भोजन करता रहा. हे पापकर्म करानेवाली तृष्णे ! तू अब भी जँभाई लेती है और अब भी सन्तुष्ट नहीं होती ? ॥ ११ ॥

उत्खातं निधिशङ्कया क्षितितलं ध्माता गिरेर्धातवो
निस्तीर्णः सरितां पतिर्नृपतयो यत्नेन सन्तोषिताः ॥
मंत्राराधनतत्परेण मनसा नीताः श्मशाने निशाः
प्राप्तो काणवराटकोऽपि न मया तृष्णे धुना मुञ्च माम् ॥

भाषार्थ–पृथ्वीमें धन गड़ा है इस आशासे भूमिको खोद डाला, रसायन सिद्ध होनेकी इच्छासे पर्वतके बहुतसे धातुएं फूंक डाले, समुद्रमें

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

रत्न हैं इस इच्छासे अथवा देशान्तरद्वारा धन प्राप्त होनेकी इच्छासे मैं समुद्रके पार चला गया और बडे यत्नसे राजाओंको भी प्रसन्न किया, मंत्र सिद्ध करनेके निमित्त श्मशानमें बैठकर मैंने कई रातें बिताईं परंतु कहीं कानी कौडी भी मैंने नहीं पाई. अतः हे तृष्णे ! अब मुझको छोड़ दे ॥ १२ ॥

धीरप्रशंसा ।

कदर्थितस्याऽपि हि धैर्यवृत्ते-
र्न शक्यते धैर्यगुणं प्रमाष्टुम् ॥
अधोमुखस्याऽपि कृतस्य वह्ने-
र्नाधः शिखा याति कदाचिदेव ॥ १ ॥

भाषार्थ-दरिद्री अथवा क्लेशित जन यदि धैर्यवृत्तिवाला हो तो उसके धैर्य गुणको कोई दूर नहीं कर सकता, जैसे प्रज्वलित अग्निके मुखको कोई नीचे उलट देवै तोभी अग्निकी शिखा (लपट) कभी नीचे नहीं जाती है; ऊपरहीको रहती है ॥ १ ॥

चलन्ति गिरयः कामं युगान्तपवनाहतः
कृच्छ्रेऽपि न चलत्येव धीराणां निश्चलं मनः ॥२॥

भाषार्थ-युगान्त (प्रलय) की वायु लगनेसे पर्वत भी चलायमान होते हैं, परन्तु दुःखावस्थामें भी धीर पुरुषोंका मन चलायमान नहीं होता; निश्चल रहता है ॥ २ ॥

कान्ता कटाक्षविशिखा न लुनन्ति यस्य
चित्तं न निर्दहति कोपकृशानुतापः ॥

---

१ दरिद्रस्य । २ दूरीकर्तुम् । ३ कटाक्षा एव विशिखा बाणाः । ४ न छिन्दति । ५ कोपः क्रोधः स एव कृशानुरग्निस्तत्तापः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कर्षन्ति भूरिविषयांश्च न लोभपाशा
लोकत्रयं जयति कृत्स्नमिदं स धीरः ॥ ३ ॥

भाषार्थ–स्त्रीके कटाक्षरूपी बाण जिसके हृदयका वेधन नहीं करते और क्रोधरूपी अग्निकी आंच जिसको नहीं जलाती तथा संसारके विषय तथा लोभपाश जिसको अपनी ओर नहीं खींचते, वही सबमें धीरपुरुष तीनों लोकोंको जीतता है ॥ ३ ॥

निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदि वा स्तुवन्तु
लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम् ॥
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा
न्याय्यात्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः ॥४॥

भाषार्थ–नीतिके जाननेवाले पुरुष चाहे निन्दा करें चाहे स्तुति करें, लक्ष्मी चली आओ अथवा यथेष्ट चली जाओ, आजही मरण हो जाय चाहे युगान्तरमें हो, परन्तु धीर पुरुष न्यायमार्गसे पदको विचलित नहीं करते हैं ॥ ४ ॥

वीरप्रशंसा ।

को वीरस्य मनस्विनः स्वविषयः? को वा विदेशस्तथा?
यं देशं श्रयते तमेव कुरुते बाहुप्रतापार्जितम् ॥
यद्दंष्ट्रानखलांगलप्रहरणः सिंहो वनं गाहते
तस्मिन्नेव हतद्विपेन्द्ररुधिरैस्तृष्णां छिनत्त्यात्मनः१

भाषार्थ–वीर और मनस्वी पुरुषको न कोई स्वदेश है न परदेश है. वह जिस देशको जाता है उसीको अपने बाहुबलसे जीत लेता है ।

---

१ संपूर्णम् । २. दंष्ट्रा नखलाङ्गलाश्च प्रहरणं यस्य, नखा एव लाङ्गलानि भिदारकत्वात् हलानि इति रूपकम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

देखो सिंहके केवल नख, दाढ और पुच्छही शस्त्र हैं परन्तु वह जिस वनमें जाता है उसी वनमें हाथीको मारकर अपनी तृष्णाको दूर करता है ॥१॥

तेजस्विप्रशंसा।

सिंहः शिशुरपि निपतति मदमलिनकपोलभित्तिषु गजेषु॥
प्रकृतिरियं सत्त्ववतां न खलु वयस्तेजसो हेतुः ॥ १ ॥

भाषार्थ–सिंहका बच्चाभी मदसे मलिन कपोलवाले हाथीके ऊपर जाकर टूटता है. यह बलवानोंका स्वभाव ही है. तेजका हेतु वय (अवस्था) नहीं है ॥ १ ॥

एकेनापि हि शूरेण पादाक्रान्तं महीतलम्॥
क्रियते भास्करेणैव स्फारस्फुरिततेजसा॥ २ ॥

भाषार्थ–एकही शूर सम्पूर्ण भूमण्डलको अपने पाँव तले दबाकर अपने वशमें करलेता है. जैसे अकेला तेजस्वी सूर्य अपने तेजसे समस्त ब्रह्माण्डको प्रकाशित करता है ॥ २ ॥

मनस्विप्रशंसा।

कुसुमस्तबकस्येव द्वे गती स्तो मनस्विनः॥
मूर्ध्नि वा सर्वलोकस्य विशीर्येत वनेऽथवा॥ १ ॥

भाषार्थ–फूलके गुच्छेके सदृश मनस्वी पुरुषकी दो प्रकारकी गति हैं. या तो सर्व लोकके शिरपर रहना अथवा वनमेंही रहकर नष्ट हो जाना ॥ १ ॥

---

१ बलवताम्। २ गुच्छस्य।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ब्रह्माण्डमण्डलीमात्रं किं लोभाय मनस्विनः ॥
शफरीस्फुरतेनाब्धेः क्षुब्धता जातु जायते ॥ २ ॥

भाषार्थ–समस्त ब्रह्माण्डके पदार्थ मिलकर भी क्या मनस्वी पुरुषको लुब्ध कर सकते हैं? यानी नहीं. क्योंकि मछलीके उछलनेसे क्या समुद्र कभी क्षुब्ध होता है? भावार्थ यह कि–मनस्वीका मन समुद्रवत् गम्भीर है; संसारकी तुच्छ सम्पदायें उनके आगे छोटी मछलीकीसी हैं ॥ २ ॥

न नटा न विटा न गायका न परद्रोहनिबद्धबुद्धयः ॥
नृपमीक्षितुमत्र के वयं स्तनभारा नमिता न योषितः ३

भाषार्थ–न हम नट हैं, न लंपट हैं, न गायक हैं और न मेरी परद्रोहमें निबद्ध बुद्धि ही है तथा बडे बडे स्तनवाली स्त्रीभी जब हम नहीं ठहरें तो फिर राजाका दर्शन हमे किस प्रकार हो सकता है ॥ ३ ॥

क्वचिद्भूमौ शय्या क्वचिदपि च पर्यंकशयनं
क्वचिच्छाकाहारी क्वचिदपि च शाल्योदनरुचिः ॥
क्वचित्कन्थाधारी क्वचिदपि च दिव्याम्बरधरो
मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम् ४

भाषार्थ–कभी भूमि शय्या है तो कभी पलंगपर शयन है, कभी शाकका आहार है तो कभी उत्तम चावल आदिके भोजनमें रुचि है, कभी गुदडीहीको ओढे हुए हैं तो कभी दिव्य वस्त्र धारण किये हुए हैं. इसी प्रकार मनस्वी और कार्यार्थी पुरुष दुःख और सुखको नहीं गिनते हैं ॥ ४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न क्वचिच्च बहिर्यान्ति मानिनां प्रार्थनागिरः ॥
यदि निर्यातुमिच्छन्ति तदा प्राणपुरःसराः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–मनस्वी जनोंके प्रार्थनावचन कभी बाहर नहीं निकलते और यदि निकलना चाहते हैं तो प्राणोंके साथही निकल जाते हैं॥५॥

अपौरुषत्वनिन्दा ।

असंपादयतः कंचिदर्थं जातिक्रियागुणैः ॥
यदृच्छाशब्दवत्पुंसः संज्ञायै जन्म केवलम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–जाति, क्रिया और गुणसे जिसने कुछभी अर्थ सम्पादन नहीं किया उस पुरुषका जन्म यदृच्छा शब्दके तुल्य संज्ञा मात्र है अर्थात् निरर्थक है. व्याकरणमें शब्द चार प्रकारके कहे हैं. १ जातिवाचक, २ क्रियावाचक, ३ गुणवाचक, ४ यदृच्छावाचक. वहाँ यदृच्छा शब्दमें जाति गुण और क्रिया न होनेसे रूढि माना जाता है. रूढि उस शब्दकी संज्ञा है, जो किसीसे बना न हो और उसका अर्थ उसी पदमें रहे ॥ १ ॥

गुणप्रशंसा ।

यदि सन्ति गुणाः पुंसां विकसन्त्येव ते स्वयम् ॥
नहि कस्तूरिकामोदः शपथेन निवार्यते ॥ १ ॥

भाषार्थ–पुरुषोंमें यदि गुण हैं तो वे स्वयं प्रकट हो जाते हैं. जैसे कस्तूरीकी सुगन्ध शपथ (सौगन्ध) से निवारण नहीं की जा सकती ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गुणाः कुर्वन्ति दूतत्वं दूरेऽपि वसतां सताम् ॥
केतकीगन्धमाघ्राय स्वयं गच्छति षट्पदाः॥ २ ॥

भावार्थ–दूर निवास करनेपर भी सज्जनोंके गुणही उनका दूतत्व करते हैं. जैसे केतकीकी गन्ध सूँघकर भौंरे स्वयं केतकीके पास चले जाते हैं ॥ २ ॥

गुणवन्तः क्लिश्यन्ते प्रायेण भवन्ति निर्गुणाः सुखिनः ॥
बन्धनमायान्ति शुका यथेष्टसंचारिणः काकाः ॥ ३ ॥

भावार्थ–गुणवान् पुरुष प्रायः क्लेश पाते हैं और गुणहीन पुरुष सुखी रहते हैं. देखो तोते (सौंदर्य, अच्छा बोलना इत्यादि गुणोंके होनेसे) बन्धनमें रहकर दुःख पाते हैं और कौवे इच्छानुसार विचरते हैं ॥ ३ ॥

शरीरस्य गुणानां च दूरमत्यन्तमन्तरम् ॥
शरीरं क्षणविध्वंसि कल्पान्तस्थायिनो गुणाः ॥ ४ ॥

भावार्थ–शरीरका और गुणोंका बहुत दूरका अन्तर है अर्थात् शरीर और गुणमें बडा अन्तर है. क्योंकि शरीर क्षणभरमें विध्वंस हो जानेवाला है और गुण कल्पपर्यन्त स्थिर रहनेवाले हैं ॥ ४ ॥

गुणवज्जनसम्पर्काद्याति स्वल्पोऽपि गौरवम् ॥
पुष्पमालाप्रसङ्गेन सूत्रं शिरसि धार्यते ॥ ५ ॥

भावार्थ–गुणवान्के संसर्गसे थोडी पढी हुई भी व्यक्ति श्रेष्ठ हो जाती है. जैसे फूलोंकी मालाके सम्बन्धसे थोड़े गुणवाला डोरा शिरपर धारण किया जाता है ॥ ५ ॥

१ भ्रमराः।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गुणेष्वेव हि कर्तव्यः प्रयत्नः पुरुषैः सदा ॥
गुणयुक्तो दरिद्रोऽपि नेश्वरैरगुणैः समः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–पुरुषोंको सदा (निरन्तर) गुणोंके लिये ही प्रयत्न करना उचित है. गुणवान् पुरुष चाहे दरिद्रभी हो तौभी गुणहीन धनी लोग उसके समान नहीं हो सकते ॥ ६ ॥

गुणैर्गौरवमायाति नोच्चैरासनमास्थितः ॥
प्रासाद[1]शिखरस्थोपि काकः किं गरुडायते? ॥ ७ ॥

भाषार्थ–मनुष्य गुणोंसे श्रेष्ठ होता है; ऊँचे आसन पर बैठनेसे नहीं. मन्दिरके कँगूरेपर बैठनेसे क्या कौवा गरुडकी बराबरी कर सकता है? ॥ ७ ॥

गुणेषु क्रियतां यत्नः किमाटो[2]पैः प्रयोजनम् ॥
विक्रीयन्ते न घण्टाभिर्गावः क्षीरविवर्जिताः ॥ ८ ॥

भाषार्थ–गुणकी वृद्धि करनेमें यत्न करना चाहिये. आडम्बर दिखानेसे क्या प्रयोजन? बहुतसे घंटा बाँधनेसे विना दूधवाली गौवें क्या विक सकती हैं? कभी नहीं ॥ ८ ॥

गुणैः सर्व[3]ज्ञकल्पोऽपि सीदत्येको निराश्रयः ॥
अन[4]र्घमपि माणिक्यं हेमाश्रयमपेक्षते ॥ ९ ॥

भाषार्थ–गुणोंसे यदि सर्वज्ञ (शिवजी) के तुल्य हो तौभी आश्रयरहित होनेसे उसे क्लेश होते हैं. जैसे बहुमूल्य माणिक्यभी सुवर्णके आश्रयकी इच्छा करता है ॥ ९ ॥

---

१ राजमन्दिरम् । २ आडंबरैः । ३ शिवतुल्यः । ४ अमूल्यम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गुणिनोऽपि हि सीदन्ति गुणग्राही न चेदिह ॥
सगुणः पूर्णकुम्भोऽपि कूप एव निमज्जति ॥ १० ॥

भावार्थ—गुणवान् होनेपर भी यदि गुणग्राहक न हो तो गुणवान् क्लेश पाता है. जैसे रस्सीसे बँधा हुआ पूर्ण घट रस्सीको पकड़कर खींचनेवालेके बिना कूंएमें गिरकर रस्सीसमेत डूब जाता है ॥ १० ॥

गुणेन स्पृहणीयः स्यान्न रूपेण यतो जनः ॥
सौगन्ध्यवर्ज्यं नादेयं पुष्पं कान्तमपि क्वचित् ॥ ११ ॥

भावार्थ—गुणसेही मनुष्य चाहने योग्य होता है; रूपसे नहीं. देखो, तगरका फूल बहुत सुन्दर होता है परन्तु सुगन्धहीन होनेसे कभी प्रिय हो सकता है ? यानी नहीं ॥ ११ ॥

सर्वत्र गुणवानेव चकास्ति प्रथितो नरः ॥
मणिर्मूर्ध्नि गले बाहौ पादपीठेऽपि शोभते ॥ १२ ॥

भावार्थ—प्रसिद्ध गुणवान् मनुष्यही सर्वत्र शोभा पाता है. जैसे मणि शिरमें, गलेमें, भुजाओंपर और पैर रखनेवाले पीढ़े पीठपर भी शोभा पाती है ॥ १२ ॥

नहि जन्मनि ज्येष्ठत्वं ज्येष्ठत्वं गुण उच्यते ॥
गुणाद्गुरुत्वमायाति दधि दुग्धं घृतं यथा ॥ १३ ॥

भावार्थ—जन्मसे बडप्पन नहीं होता; गुणही बडप्पन है ऐसा कहा जाता है. मनुष्य गुणसे बडाई पाता है. जैसे दही, दूध और घीमें अपेक्षाकृत श्रेष्ठता है ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न पुत्रत्वेन पूज्यन्ते गुणैराप्यते पदम् ॥
रवेर्वा पारमादत्ते प्रदीपो न पुनः शनिः ॥ १४ ॥

भाषार्थ–बड़े बापका बेटा होनेसे ही पूजा नहीं जाता; गुणोंके होनेसे पद (अधिकार) पाता है. जैसे सूर्यके प्रकाशको दीपक ग्रहण करता है; शनैश्चर नहीं ग्रहण करता ॥ १४ ॥

गुणा गुणज्ञेषु गुणीभवन्ति
ते निर्गुणं प्राप्य भवन्ति दोषाः ॥
सुस्वादुतोयाः प्रभवन्ति नद्यः
समुद्रमासाद्य भवन्त्यपेयाः ॥ १५ ॥

भाषार्थ–गुण गुणवान् लोगोंमें गुणयुक्त अर्थात् सफल होते हैं और वेही गुण गुणहीनके साथ दोष हो जाते हैं. जैसे नदियोंका जल मीठा होता है परन्तु समुद्रमें मिलनेपर वही जल पीने योग्य नहीं रहता ॥ १५ ॥

गुणिनि गुणज्ञो रमते नागुणशीलस्य गुणिनि परितोषः ॥
अलिरेति वनात्कमलं नहि भेकस्त्वेकवासोऽपि ॥ १६ ॥

भाषार्थ–गुणवान्‌के साथ गुण जाननेवालाही रमण करता है. गुणहीन पुरुष गुणीके साथ प्रसन्न नहीं रहता. जैसे सुगन्धगुणका जाननेवाला भौंरा वनसे कमलके समीप आकर विहार करता है और सुगन्धगुणको नहीं जाननेवाला मैंढ़क कमलके समीप रहनेपर-भी सुगन्धनिमित्त कमलके पास नहीं जाता है ॥ १६ ॥

---

१ भ्रमरः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गुणी गुणं वेत्ति न वेत्ति निर्गुणी
बली बलं वेत्ति न वेत्ति निर्बलः ॥
मधोर्गुणं वेत्ति पिको न वायसः
करी च सिंहस्य बलं न मूषकः ॥ १७ ॥

भावार्थ–गुणी पुरुष गुणको जानता है; गुणहीन मनुष्य गुणको नहीं जानता. बली पुरुष बलको जानता है; निर्बल मनुष्य बलको नहीं जानता. जैसे वसन्त ऋतुके गुणको कोयलही जानती है, कौवा नहीं जानता तथा हाथीही सिंहके बलको जानता है; मूसा नहीं जानता ॥ १७ ॥

वक्रोऽपि पङ्कजनितोऽपि दुरासदोऽपि
व्यालाश्रितोऽपि विफलोऽपि सकण्टकोऽपि ॥
गन्धेन बन्धुरसि केतकपुष्पजेन
ह्येको गुणः खलु निहन्ति समस्तदोषान् ॥ १८ ॥

भावार्थ–केतकीका वृक्ष टेढ़ा है, कीचड़से उत्पन्न है, दुर्लभ है, साँपके रहनेका स्थानभी है, फलहीन है और काँटेदार है. किन्तु केवल सुगन्धसे युक्त फूल होनेकी बजहसे यह सबको प्रिय है। यह एकही सौगन्ध गुण उसके सब दोषोंको दूर करता है ॥ १८ ॥

गुरुमहिमा ।

यः पृष्ट्वा कुरुते कार्यं प्रष्टव्यान्सहितान्गुरून् ॥
न तस्य जायते विघ्नः कस्मिंश्चिदपि कर्मणि ॥ १ ॥

१ दुष्प्रापः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–पूँछने योग्य बात अपने हितकारी गुरुओंसे पूछकर जो कोई काम करता है उसके किसीभी काममें कभी विघ्न नहीं होता है॥१॥

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ॥
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाश्यन्ते महात्मनः ॥२॥

भाषार्थ–जिसकी देवतामें परमभक्ति है और जैसी देवतामें वैसीही गुरुमें भी जिसकी भक्ति है, उसी महात्माको वे सब अर्थ अर्थात् चारों पुरुषार्थ प्राप्त होते हैं ॥ २ ॥

अज्ञानतिमिरान्धानां ज्ञानाञ्जनशलाकया ॥
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ३ ॥

भाषार्थ–अज्ञानरूपी अन्धकारसे अन्धे पुरुषोंके नेत्रको ज्ञानरूप अंजनकी शलाकासे जिसने खोल दिया है उस श्रीगुरुदेवको नमस्कार है ॥ ३ ॥

यावन्नाऽनुग्रहः साक्षाज्जायते परमेश्वरात् ॥
तावन्न सद्गुरुं कश्चित्सच्छास्त्रं वाऽपि नो लभेत् ॥४॥

भाषार्थ–जबतक साक्षात् परमेश्वरकी कृपा नहीं होती है तबतक कोई भी पुरुष सद्गुरु अथवा सत् शास्त्र प्राप्त नहीं कर सकता ॥ ४ ॥

योऽधीतविद्यः सकलः स सर्वेषां गुरुर्भवेत् ॥
न च जात्याऽनधीतो हि गुरुर्भवितुमर्हति ॥ ५ ॥

भाषार्थ–जिस पुरुषने सब विद्याओंको पढा है वही सबका गुरु होता है और जिसने पढा नहीं है वह जातिमात्रसेही गुरु होनेको योग्य नहीं होता ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

उद्योगप्रशंसा ।

न दैवमिति संचिन्त्य त्यजेदुद्योगमात्मनः ॥
अनुद्यमेन कस्तैलं तिलेभ्यः प्राप्तुमर्हति ॥ १ ॥

भाषार्थ–प्रारब्धके भरोसे अपने उद्योगका त्याग नहीं करना चाहिये । क्योंकि विना उद्यम (पुरुषार्थ) के भला कौन तिलमेंसे तेल निकाल सकता है ॥ १ ॥

उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः ॥
नहि सिंहस्य सुप्तस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः ॥ २ ॥

भाषार्थ–उद्यम करनेसे कार्य सिद्ध होते हैं; मनोरथोंसे सिद्ध नहीं होते. जैसे सोते हुए सिंहके मुखमें स्वयं हिरण प्रवेश नहीं करते. सारांश यह कि–विना उद्यम कोई कार्य सिद्ध नहीं होता है ॥ २ ॥

गच्छन्पिपीलिकापंक्तिः समुद्रमधिगच्छति ॥
अगच्छन् वैनतेयोऽपि पदमेकं न गच्छति ॥ ३ ॥

भाषार्थ–चलती हुई चीटियोंकी पंक्ति समुद्रतक पहुँच जाती है. विना चले गरुड एक पगभी नहीं चल सकते ॥ ३ ॥

आलस्यं हि मनुष्याणां शरीरस्थो महान् रिपुः ॥
नास्त्युद्यमसमो बन्धुः कृत्वा यन्नावसीदति ॥ ४ ॥

भाषार्थ–मनुष्योंके शरीरमें स्थित आलस्यही महान् शत्रु है. उद्यमके समान कोई बन्धु नहीं. कि–जिसके करनेसे कभी कोई दुःखी नहीं होता ॥ ४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यथा ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवेत् ॥
एवं पुरुषकारेण विना दैवं न सिद्ध्यति ॥ ५ ॥

भाषार्थ–जैसे एक पहियेसे रथ नहीं चलता, उसी प्रकार विना उद्योगके दैव सिद्ध नहीं होता है. सारांश यह कि–जैसा रथ दो पहियोंसे चलता है इसी प्रकार मनुष्यरूपी रथके उद्योग और दैव ये दो पहिये हैं ॥ ५ ॥

पूर्वजन्मकृतं कर्म तद्दैवमिति कथ्यते ॥
तस्मात्पुरुषकारेण विना दैवं न सिद्ध्यति ॥ ६ ॥

भाषार्थ–पूर्व जन्मका किया जो कर्म है उसीको दैव कहा गया है. इस कारण विना पुरुषार्थके दैव सिद्ध नहीं होता है ॥ ६ ॥

उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी-
दैवं प्रधानमिति कापुरुषा वदन्ति ॥
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या
यत्ने कृते यदि न सिद्ध्यति कोऽत्र दोषः ॥ ७ ॥

भाषार्थ–उद्योगी श्रेष्ठ मनुष्यकोही लक्ष्मी प्राप्त होती है. दैव (प्रारब्ध) प्रधान (मुख्य) है यह आलसी छोटे मनुष्य कहते हैं. दैवको हटाकर अपनी शक्तिके अनुसार पौरुष (उद्योग) करो. यत्न करनेसे यदि कार्य सिद्ध न हो तो इसमें क्या दोष है ? अर्थात् कुछभी दोष नहीं है ॥ ७ ॥

---

१ पुरुषश्रेष्ठम् । २. कुत्सितपुरुषाः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

व्यापारान्तरमुत्सृज्य वीक्ष्यमाणो वधूमुखम् ॥
यो गृहेष्वेव निद्राति दरिद्राति स दुर्मतिः ॥ ८ ॥

भाषार्थ—जो कामधन्धेको छोड़कर अपनी स्त्रीका मुख देखा करता और घरमें पड़ा सोया करता है वह दुर्बुद्धि मनुष्य दरिद्री हो जाता है ॥ ८ ॥

यस्तु संचरते देशान् यस्तु सेवेत पण्डितान् ॥
तस्य विस्तारिता बुद्धिस्तैलबिन्दुरिवाम्भसि ॥ ९ ॥

भाषार्थ—जो मनुष्य देशाटन करता है और जो पंडितोंकी सेवा करता है उसकी बुद्धि जलमें छोड़े हुए तेलके बूँदके समान फैल जाती है ॥ ९ ॥

यो न संचरते देशान् यो न सेवेत पंडितान् ॥
तस्य संकुचिता बुद्धिर्घृतबिन्दुरिवाम्भसि ॥ १० ॥

भाषार्थ—जो मनुष्य देशाटन नहीं करता और जो पंडितोंकी सेवा नहीं करता, उसकी बुद्धि जलमें घीके बूँदके समान संकुचित हो जाती है अर्थात् सिमट जाती है ॥ १० ॥

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः ॥
शरीरयात्राऽपि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ॥ ११ ॥

भाषार्थ—श्रीकृष्णजी अर्जुनसे कहते हैं कि—तुम प्रतिदिन कर्म करो; कर्म न करनेसे कर्म करना अच्छा है. यदि तुम कर्म न करोगे तो तुह्मारा शरीरव्यवहारभी नहीं चलेगा ॥ ११ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

वीरः सुधीः सुविद्यश्च पुरुषः पुरुषार्थवान् ॥
तदन्ये पुरुषाकाराः पशवः पुच्छवर्जिताः ॥ १२ ॥

भाषार्थ–वीर, बुद्धिवान् और विद्वान् पुरुष पुरुषार्थी कहे जाते हैं. और दूसरे पुरुषके आकारवाले पुच्छरहित पशु हैं ॥ १२ ॥

सिंहाः सत्पुरुषाश्चैव निजदर्पोपजीविनः ॥
पराश्रयेण जीवन्ति कातराः शिशवः[1] स्त्रियः ॥ १३ ॥

भाषार्थ–पराक्रमी और उद्योगी पुरुष अपने दर्प (हिम्मत) से आजीविका करते हैं. दूसरेके भरोसे जीविका करनेवाले कायर बालक (मूर्ख) और स्त्रियां हैं ॥ १३ ॥

यो हि दिष्टमुपासीनो निर्विचेष्टः सुखं शयेत् ॥
अवसीदेत्स दुर्बुद्धिरामो घट इवोदके ॥ १४ ॥

भाषार्थ–जो मनुष्य प्रारब्धहीके भरोसे रहकर कुछ उद्यम न करके सुखसे पड़ा सोता रहता है वह मूर्ख जलमें कच्चे घड़ेके समान विनष्ट हो जाता है ॥ १४ ॥

विद्या वितर्को विज्ञानं स्मृतिस्तत्परता क्रिया ॥
यस्यैते षड्गुणास्तस्य न साध्यमतिवर्तते ॥ १५ ॥

भाषार्थ–विद्या, तर्क, यथार्थ ज्ञान, स्मरणशक्ति, कार्यमें दत्त-चित्त होना और उद्योग ये छः गुण जिसकू होते हैं उसका कोई भी कार्य नहीं बिघडता है ॥ १५ ॥

---

1 बालकाः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यत्रोत्साहसमारम्भो यत्रालस्यविहीनता ॥
नयविक्रमसंयोगस्तत्र श्रीरचला ध्रुवम् ॥ १६ ॥

भाषार्थ–जहाँ उत्साहके साथ कार्यका प्रारंभ होता है, जहाँ आलस्य नहीं है और जहाँ नीति तथा पराक्रम इनका संयोग है, निश्चय करके वहाँही लक्ष्मी अचल रहती है ॥ १६ ॥

नात्मानमवमन्येत पूर्वाभिरसमृद्धिभिः ॥
आमृत्योः श्रियमन्विच्छन्नैनां मन्येत दुर्लभाम् ॥ १७ ॥

भाषार्थ–पूर्व सम्पदाओंके न होनेपर अपनी अवज्ञा न करनी चाहिये. किन्तु मनुष्य मरणपर्यन्त सम्पत्तिकी चाहना करे और सम्पत्तिको कभी दुर्लभ न माने अर्थात् सम्पत्तिको दुर्लभ मानकर उद्योगका त्याग नहीं करे ॥ १७ ॥

न त्वेवात्माऽवमन्तव्यः पुरुषेण कदा च न ॥
न ह्यात्मपरिभूतस्य भूतिर्भवति शोभना ॥ १८ ॥

भाषार्थ–पुरुषको अपनी आत्माका अपमान कभी नहीं करना चाहिये. क्योंकि आत्माके निद्रित होनेपर भलीभाँति ऐश्वर्यकी प्राप्ति नहीं होती ॥ १८ ॥

आरभेतैव कर्माणि श्रान्तः श्रान्तः पुनः पुनः ॥
कर्माण्यारभमाणं हि पुरुषं श्रीर्निषेवते ॥ १९ ॥

भाषार्थ–बारंबार श्रान्त हो होकर यानी थकावट मिटा मिटाकर कर्मोंको करना चाहिये. निरन्तर कर्म करनेवाले पुरुषकोही लक्ष्मी सेवन करती है ॥ १९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शुभाशुभाभ्यां मार्गाभ्यां वहन्ती वासनासरित् ॥
पौरुषेण प्रयत्नेन योजनीया शुभे पथि ॥ २० ॥

भावार्थ-वासना (इच्छा) रूपी नदी शुभाशुभ मार्गोंसे बहती है;उसको अपने पुरुषार्थ और प्रयत्नसे शुभ मार्गमें लगाना चाहिये॥२०॥

आबाल्यादलमभ्यस्तैः शास्त्रसत्संगमादिभिः ॥
गुणैः पुरुषयत्नेन सोऽर्थः सम्प्राप्यते हितः ॥ २१ ॥

भावार्थ-बालपनसेही अभ्यास किये हुए शास्त्र और सत्समागम आदि गुणोंसे क्या हो सकता है ? इच्छित अर्थ तो पुरुषके प्रयत्नसे-ही प्राप्त होता है ॥ २१ ॥

पूर्वजन्मजनितं पुराविदः कर्म दैवमिति संप्रचक्षते ॥
उद्यमेन तदुपार्जितं चिराद्दैवमुद्यमवशं न तत्कथम् ॥२२

भावार्थ-ज्ञानी मनुष्य पूर्व जन्ममें किये हुए कर्मकोही दैव कहते हैं. ऐसा जो उद्योगसे बना हुआ कर्म है वह चिरकाल उद्योगके आधीन कैसे न रहेगा अर्थात् कर्म उद्योगहीसे उत्पन्न हुआ है और उद्योगहीके आधीन रहता है ॥ २२ ॥

आलस्यं स्त्रीसेवा सरोगता जन्मभूमिवात्सल्यम् ॥
सन्तोषो भीरुत्वं षड्व्याघाता महत्त्वस्य ॥ २३ ॥

भावार्थ-आलस्य, स्त्रीकी सेवा, रोगी रहना, जन्मभूमिमें प्रेम, सन्तोष, भीरुपन (भय मानना) ये छः बातें महत्त्व (श्रेष्ठता) को नष्ट करनेवाली हैं ॥ २३ ॥

केचिदज्ञानतो नष्टाः केचिन्नष्टाः प्रमादतः ॥
केचिज्ज्ञानावलेपेन केचिन्नष्टैस्तु नाशिताः ॥ २४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–कुछ लोग अज्ञानसे नष्ट हुए हैं, कुछ लोग प्रमाद (असावधानता) से नष्ट हुए हैं और कितने लोग ज्ञानके अभिमानसे नष्ट हुए हैं तथा कितनेही लोगोंको बिगड़े हुए लोगोंने बिगाड़ दिया है ॥ २४ ॥

यो यमर्थं प्रार्थयते यदर्थं घटतेऽपि च ॥
अवश्यं तदवाप्नोति न चेच्छान्तो निवर्तते ॥२५॥

भावार्थ–जो जिस अर्थकी इच्छा करता है और जो उसकी सिद्धिके लिये यत्न करता है वह अर्थ अवश्य उसको प्राप्त होता है. यदि कदाचित् यत्न करनेपर भी अर्थ प्राप्त न हुआ तो वह शान्त होकर उससे निवृत्त हो जाता है ॥ २५ ॥

चिन्तनीया हि विपदामादावेव प्रतिक्रिया ॥
न कूपखननं युक्तं प्रदीप्ते वह्निना गृहे ॥ २६ ॥

भावार्थ–आनेवाली विपदाओंका प्रतीकार पहलेही सोच विचारकर करना चाहिये. घरमें अग्नि लग जानेपर पीछेसे कुवाँ खोदना उचित नहीं है ॥ २६ ॥

विहाय पौरुषं यो हि दैवमेवावलम्बते ॥
प्रासादसिंहवत्तस्य मूर्ध्नि तिष्ठन्ति वायसाः ॥२७॥

भावार्थ–उद्यमको छोड़कर जो पुरुष दैवके ही भरोसे रहता है, वह मनुष्य मन्दिरपर बनाये हुए सिंहकासा है. कि–उसके माथेपर कौवा बैठा करते हैं ॥ २७ ॥

वरं दारिद्र्यमन्यायप्रभवाद्विभवादिह ॥
कृशताऽभिमता देहे पीनता न तु शोफतः ॥२८॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–अन्यायसे उपार्जन कियेहुए ऐश्वर्यसे दरिद्रता श्रेष्ठ है. जैसे शरीर दुबला रहना अच्छा; परन्तु सूजन (रोगजनित मुटाई) से मोटा होना नहीं अच्छा ॥ २८ ॥

अन्येन मर्त्यदेहेन यल्लोकद्वयशर्मदम् ॥
विचिन्त्य तदनुष्ठेयं कर्म हेयं ततोऽन्यथा ॥ २९ ॥

भाषार्थ–इस मनुज देहसे जो काम दोनों लोक (इहलोक व परलोक) में कल्याणदायक हो उसको विचार पूर्वक करना चाहिये और उससे विपरीत कर्म नहीं करना चाहिये ॥ २९ ॥

न कश्चिदपि जानाति किं कस्य श्वो भविष्यति ॥
अतः श्वः करणीयानि कुर्यादद्यैव बुद्धिमान् ॥ ३० ॥

भाषार्थ–कोई भी यह नहीं जानता कि–कल किसको क्या होगा? अतः बुद्धिवान्को उचित है कि– वे कलके करने योग्य काम आजही कर लेवें ॥ ३० ॥

उद्यमः साहसं धैर्यं बुद्धिः शक्तिः पराक्रमः ॥
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र देवः सहायवान् ॥ ३१ ॥

भाषार्थ–उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम ये छः जिस पुरुषमें रहते हैं उसकी देवता सहायता करते हैं ॥ ३१ ॥

प्राक्कर्मवशतः सर्वं भवत्येवेति निश्चितम् ॥
तदोपदेशा व्यर्थाः स्युः कार्याकार्यप्रबोधकाः ॥ ३२ ॥

भाषार्थ–पूर्व कर्मानुसार सब कुछ होता है; यदि यह निश्चित बात है तो कार्य अकार्यके विचारको प्रकट करनेवाले उपदेश व्यर्थही हुए ॥ ३२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भोक्ता तृप्यति नाभोक्ता गन्ता गच्छति नागतिः॥
वक्ता वक्ति न चावक्ता पौरुषं सफलं नृणाम्॥ ३३॥

भाषार्थ–भोजन करनेवालाही तृप्त होता है; न भोजन करनेवाला नहीं. जानेवालाही जाता है; न जानेवाला नहीं और बोलनेवालाही बोलता है; न बोलनेवाला नहीं. तात्पर्य यह कि– जिसमें उद्योग किया जाता है वही होता है. पुरुषार्थही मनुष्यको फलता है; विना पुरुषार्थके कुछ नहीं बनता॥ ३३॥

धीमन्तो वन्द्यचरिता मन्यन्ते पौरुषं महत्॥
अशक्ताः पौरुषं कर्तुं क्लीबा दैवमुपासते॥ ३४॥

भाषार्थ–बुद्धिमान् पवित्र चरित्रवाले पुरुष उद्योगकोही श्रेष्ठ मानते हैं और उद्योग करनेमें असमर्थ नपुंसक दैव (प्रारब्ध) के भरोसे रहते हैं. तात्पर्य यह कि– जो पुरुष उद्योग न करके केवल प्रारब्धके भरोसे रहते हैं वे अपना समय व्यर्थ नष्ट कर रहे हैं॥ ३४॥

दैवमेवेह चेत्कर्तृ पुंसः किमिव चेष्टया॥
स्नानदानासनोच्चारान्दैवमेव करिष्यति॥ ३५॥

भाषार्थ–यदि दैवकोही कर्ता माना जाय तो मनुष्यको उद्योगसे क्या प्रयोजन? स्नान, दान, बैठना उठना आदि सब काम दैवही करेगा॥ ३५॥

आरभन्तेऽल्पमेवाज्ञाः कार्यं व्यग्रा भवन्ति च॥
महारम्भाः कृतधियस्तिष्ठन्ति च निराकुलाः॥ ३६॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–अल्प बुद्धिवाले मूढजन छोटेसे कार्यको आरंभ करते हैं और घवड़ा जाते हैं; परन्तु बुद्धिमान् मनुष्य बडी धीरताके साथ बडे बडे कार्योंको प्रारंभ करते हैं और घबडाते नहीं हैं ॥ ३६ ॥

अलब्धं चैव लिप्सेत लब्धं रक्षेदवेक्षया ॥
रक्षितं वर्धयेत्सम्यग्वृद्धं पात्रेषु निक्षिपेत् ॥ ३७ ॥

भाषार्थ–मनुष्यको उचित है कि– वे अप्राप्त धनके प्राप्त होनेकी इच्छा करें और प्राप्त धनकी भली भाँति रक्षा करें और रक्षित धन दान देने आदिसे व्यय (खर्च) करें ॥ ३७ ॥

अलसस्य कुतो विद्या ? ह्यविद्यस्य कुतो धनम् ? ॥
अधनस्य कुतो मित्रममित्रस्य कुतः सुखम् ?॥ ३८ ॥

भाषार्थ–आलसी मनुष्यको विद्या कहाँ और विद्याहीनको धन कहाँ ? धनहीनको मित्र कहाँ ? मित्रहीनको सुख कहाँ ? सारांश यह कि–उद्योगहीके आधीन सब पदार्थ हैं ॥ ३८ ॥

यस्य यस्य हि यो भावस्तेन तेन हि तं नरम् ॥
अनुप्रविश्य मेधावी क्षिप्रमात्मवशं नयेत् ॥ ३९ ॥

भाषार्थ–जिस जिसका जो जो स्वभाव हो उस उस उपायसे उसको बुद्धिमान् पुरुष तुरंत अपने वशमें करें ॥ ३९ ॥

प्राप्यापदं न व्यथते कदाचि-
दुद्योगमन्विच्छति चाप्रमत्तः ॥
दुःखं च काले सहते महात्मा
धुरन्धरस्तस्य विपद्विनश्येत् ॥ ४० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—आपत्तिकालमें कभी दुःखी नहीं होते; बल्कि दक्ष होकर उद्योगही करते हैं. समय पाकर दुःखभी सहते हैं ऐसे धुरन्धर महात्माकी विपत्ति दूर हो जाती है ॥ ४० ॥

अर्थं सुखं कीर्तिरपीह माभू-
दनर्थ एवास्तु तथापि धीराः ॥
निजप्रतिज्ञामधिरुह्यमाना
महोद्यमाः कर्म समारभन्ते ॥ ४१ ॥

भाषार्थ—अर्थ, सुख और कीर्ति न हो; केवल अनर्थही हो तौभी धीर पुरुष अपनी प्रतिज्ञापर आरूढ होकर परम उद्योगवान् होते हुए कर्मका आरंभ करते हैं ॥ ४१ ॥

कुचैलिनं दन्तमलावधारिणं
बह्वाशिनं नित्यकठोरभाषिणम् ? ॥
सूर्योदये चास्तमये च शायिनं
विमुञ्चति श्रीरपि चक्रपाणिनम् ॥ ४२ ॥

भाषार्थ—मैले और फटे वस्त्र पहरनेवाले, दाँतोंमें मैल रखनेवाले, बहुत खानेवाले, सदा कठोर बात कहनेवाले और सूर्यके उदय तथा अस्तसमय शयन करनेवाले, यदि चक्रपाणि यानि विष्णु भी हों तो उनको लक्ष्मी छोड देती है तो मनुष्योंकी कौन बात है ? ॥ ४२ ॥

गन्तव्या राजसभा द्रष्टव्या राजवल्लभाः पुरुषाः ॥
यद्यपि न भवत्यर्थो भवत्यनर्थप्रतीकारः ॥ ४३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-राजसभामें जाना चाहिये और राजाके प्रिय लोगोंकोभी देखना चाहिये. यदि कुछ प्रयोजन सिद्ध न हो तौभी अनर्थोंका अवश्य नाश होता है ॥ ४३ ॥

यस्यास्ति सर्वत्र गतिः स कस्मा-
त्स्वदेशरागेण हि याति नाशम् ॥
तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणाः
क्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति ॥ ४४ ॥

भाषार्थ-जिसकी सर्वत्र गति है अर्थात् जो सब देशान्तरोंमें चारों ओर भ्रमण करता है, वह अपनेही देशके अनुरागसे कैसा नष्ट हो सकता है ? हमारे पिताका यह कूआँ है ऐसा कहनेवाले नीच लोग खारा पानी पीते हैं ॥ ४४ ॥

देशान्तरेषु बहुविधभाषावेषादि येन न ज्ञातम् ॥
भ्रमता धरणीपीठे तस्य फलं जन्मनो व्यर्थम् ॥ ४५ ॥

भाषार्थ-देश देश भ्रमण कर जिसने अनेक भाषा और भेष आदिको नहीं जाना तो समझना चाहिये कि- पृथ्वीपर उसके जन्म लेनेका फल कुछ नहीं अर्थात् उस मनुष्यका जन्म लेनाही वृथा है॥४५

विद्यां वित्तं शिल्पं तावन्नाप्नोति मानवः सम्यक् ॥
यावद्व्रजति न भूमौ देशाद्देशान्तरं हृष्टः ॥ ४६ ॥

भाषार्थ-मनुष्य तभीतक विद्या, धन और शिल्प (कला) को भलीभाँति नहीं पाता कि-जबतक पृथ्वीपर घूमकर देश देशान्तर नहीं देखता ॥ ४६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

संहतिप्रशंसा ।

अल्पानामपि वस्तूनां संहतिः कार्यसाधिका ॥
तृणैर्गुणत्वमापन्नैर्बध्यन्ते मत्तदन्तिनः ॥ १ ॥

भाषार्थ–छोटी वस्तुओंकी भी एकता कार्यकी साधिका होती है. जैसे बहुतसे इकट्ठे हुए तृणोंकी जब रस्सी बन जाती है तब उससे मदोन्मत्त हाथी बाँधे जाते हैं ॥ १ ॥

संहतिः श्रेयसी पुंसां स्वकुलैरल्पकैरपि ॥
तुषेणापि परित्यक्ता न प्ररोहन्ति तण्डुलाः ॥ २ ॥

भाषार्थ–अपना कुल थोड़ा होनेपरभी पुरुषोंकी एकता बड़ी श्रेयस्कर होती है. जैसे विना भूसीके चावल नहीं जमते हैं ॥ २ ॥

बहूनां चैव सत्त्वानां समवायो रिपुञ्जयः ॥
वर्षाधाराधरो मेघस्तृणैरपि निवार्यते ॥ ३ ॥

भाषार्थ–बहुतसे जीवोंका समुदायभी शत्रुको जीतनेमें समर्थ होता है. जैसे धाराओंसे वर्षनेवाला मेघ तृणसमूह (तिनकों) से निवारण किया जाता है ॥ ३ ॥

पृथिव्यप्तेजसां सङ्घो दृष्टः कार्यस्य साधकः ॥
भिन्नास्तदणवः सर्वे न शक्तास्तस्य सिद्धये ॥ ४ ॥

भाषार्थ–पृथ्वी, जल, तेजका समुदाय कार्यका साधक देख पड़ता है; परन्तु पृथ्वी, जल, तेज इनके पृथक् किये हुए परमाणु कार्य सिद्धिके अर्थ समर्थ नहीं होते ॥ ४ ॥

---

१ रज्जुत्वम् । २ संघातः । ३ धान्यत्वक् । ४ अंकुरजननक्षमा न भवन्तीति भावः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

वानराणां तथा दृष्टा ह्यन्योन्यस्य सहायता ॥
मनुष्यैरपि कर्तव्यो न विरोधः कदा च न ॥ ५ ॥

भाषार्थ–वैसेही वानरोंकीभी परस्पर (आपसमें) सहायता देखी जाती है इसी प्रकार मनुष्योंकोभी परस्पर सहायता करनी चाहिये; विरोध कभी नहीं करना चाहिये ॥ ५ ॥

एकस्मिन्पक्षिणि काके यदा विज्ञायते विपत् ॥
ते काका मिलितास्सन्तो यतन्ते तन्निवृत्तये ॥ ६ ॥

भाषार्थ–जब एक कौवे पक्षीपर विपत्ति आ पडती है तब उसके समीप सब कौवे मिलकर उसकी विपत्तिके निवारणार्थ प्रयत्न करते हैं ॥ ६ ॥

महानप्येकजो वृक्षो बलवान्सुप्रतिष्ठितः ॥
प्रसह्य एव वातेन शक्यो धर्षयितुं क्षणात् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–अकेला वृक्ष बडा और दृढ़ होनेपरभी वायुके झकोरेको न सहता हुआ क्षणमात्रमें उखड़ने योग्य हो जाता है ॥ ७ ॥

एवं मनुष्यमप्येकं शौर्येणापि समन्वितम् ॥
शक्यं द्विषन्तो मन्यन्ते हिंसन्ति च ततः परम् ॥ ८ ॥

भाषार्थ–इसी प्रकार अकेले शूर मनुष्यको भी शत्रु लोग जीत लेने योग्य मानते हैं; फिर उसको मारभी डालते हैं ॥ ८ ॥

अन्योन्यसमुपष्टम्भादन्योन्यार्थाश्रयेण च ॥
ज्ञातयः संप्रवर्द्धन्ते सरसीवोत्पलान्युत ॥ ९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ-जैसे सरोवरमें कमल बढ़ते हैं, वैसेही परस्पर मिलाय रहनेसे और परस्पर लेनदेन करनेसे ज्ञातियाँ बढती हैं ॥ ९ ॥

ये वै भेदनशीलास्तु सकामा निस्त्रपाः शठाः ॥
ते पापा इति विख्याताः संवासे परिगर्हिताः ॥ १० ॥

भावार्थ-जिनका एकताको तोडनेका स्वभाव है, जो कामी, लज्जाहीन और शठ हैं वे पापी कहलाते हैं. ऐसे लोग सहवासमें त्याज्य हैं अर्थात् ऐसे पापियोंके संग रहना उचित नहीं है ॥ १० ॥

जायापत्योश्च पित्रोश्च भ्रात्रोश्च स्वामिभृत्ययोः ॥
भगिन्योर्मित्रयोर्भेदं न कुर्याद्गुरुशिष्ययोः ॥ ११ ॥

भावार्थ-स्त्रीपुरुषमें, पितापुत्रमें, भाईभाईमें, स्वामिसेवकमें, बहिनबहिनमें, मित्रमित्रमें और गुरुशिष्यमें जो एकता है उसको कभी नहीं तोड़ना चाहिये ॥ ११ ॥

संभोजनं संकथनं संप्रीतिश्च परस्परम् ॥
ज्ञातिभिः सह कार्याणि न विरोधः कदा च न ॥ १२ ॥

भावार्थ-भोजन, वार्तालाप और प्रीति अपनी ज्ञातिवालेसे परस्पर करना चाहिये; विरोध तो कभी नहीं करना चाहिये ॥ १२ ॥

यत्रात्मीयो जनो नास्ति भेदस्तत्र न विद्यते ॥
कुठारे दण्डनिर्मुक्ते भिद्यन्ते तरवः कथम् ? ॥ १३ ॥

भावार्थ-जहाँ आत्मीयजन (अपना ज्ञातिबान्धव) नहीं है वहाँ अपना भेद नहीं खुलता है. जैसे कुल्हाडीसे दंड निकाल लिया जाय तो वृक्ष कैसे काटे जा सकते हैं ? ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कुठारमालिकां दृष्ट्वा कम्पिताः सकला द्रुमाः ॥
वृद्धस्तरुरुवाचेदं स्वजातिर्नैव दृश्यते ॥ १४ ॥

भाषार्थ-बहुतसे कुठार देखकर सब वृक्ष काँपने लगे. तब एक बूडा वृक्ष बोला कि-इनमें अपना जातिवाला नहीं है. अर्थात्, अपना जातिबान्धव दंड इनमें (कुठारोंमें) नहीं रहेगा तबतक ये कुछ नहीं कर सकते हैं ॥ १४ ॥

ज्ञातिभिर्विग्रहस्तात ! न कर्तव्यः शुभार्थिना ॥
सुखानि सहभोज्यनि ज्ञातिभिर्भरतर्षभ ! ॥ १५ ॥

भाषार्थ-हे भरतवंशभूषण राजन् ! सुखकी इच्छावाले पुरुषको अपनी ज्ञातिवालोंके साथ बिगाड़ नहीं करना चाहिये. किन्तु, सुखपुर्वक उनके साथ भोजनादिकका सम्बन्ध बनाये रखना चाहिये ॥१५॥

न वै भिन्ना जातु चरन्ति धर्मं
न वै सुखं प्राप्नुवन्तीह भिन्नाः ॥
न वै भिन्ना गौरवं प्राप्नुवन्ति
न वै भिन्नाः प्रशमं रोचयन्ति ॥ १६ ॥

भाषार्थ-अपने जातिबान्धवोंसे भेदभावको प्राप्त हुऐ पुरुष न धर्माचरण कर सकते हैं, न सुख पा सकते हैं, न बडाईको प्राप्त हो सकते हैं और न शान्तिलाभ कर सकते हैं. सारांश यह कि-अपने जातिबान्धवोंसे विरोध कदापि नहीं करना चाहिये ॥ १६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

क्षमाप्रशंसा ।

क्षमा बलमशक्तानां शक्तानां भूषणं क्षमा ॥
क्षमा वशीकृतिर्लोके क्षमया किं न सिद्ध्यति ? १

भावार्थ–क्षमा (शान्ति) असमर्थ जनोंका बल (पराक्रम) है, क्षमा समर्थ जनोंका भूषण है और क्षमा संसारमें वशीकरण मंत्र है. क्षमासे क्या नहीं सिद्ध होता ? अर्थात् सब कार्य क्षमासे सिद्ध हो सकते हैं ॥ १ ॥

नरस्याभरणं रूपं रूपस्याभरणं गुणः ॥
गुणस्याभरणं ज्ञानं ज्ञानस्याभरणं क्षमा ॥ २ ॥

भावार्थ–मनुष्यका आभूषण रूप है, रूपका आभूषण गुण है, गुणका आभूषण ज्ञान है, ज्ञानका आभूषण क्षमा है ॥ २ ॥

क्षमाखड्गं करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति ? ॥
अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेवोपशाम्यति ॥ ३ ॥

भावार्थ–क्षमारूपी खड्ग जिसके हाथमें है उसका दुर्जन क्या कर सकेगा ? जहाँ तृण नहीं है वहां यदि अग्नि गिरे तो वह स्वयंही शान्त हो जाता है ॥ ३ ॥

विनयप्रशंसा ।

तिष्ठतां तपसि पुण्यमासृजन्संपदोऽनुगुणयन्सुखैषिणाम्
योगिनां परिणमन्विमुक्तये केन नास्तु विनयः सतां प्रियः १

भावार्थ–तपस्वियोंकी तपस्यामें विनयसेहि पुण्य संपादन होता है,

---

१ शांतिः(क्षमा)के विषयमें पूरा व्याख्यान व्याख्यानरत्नमालामें हमने लिखा है । २ तपोनिष्ठानाम् । ३ संपादयन् । ४ अनुकूलयन् । ५ संपद्यमानः । ६ अपवर्गाय

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सुखके अभिलाषियोंको विनयसेहि संपदा अनुकूल होती हैं और योगियोंकोभी मोक्षके अर्थ विनयसेहि परिणाम प्राप्त होता है. तो फिर सत्पुरुषोंको विनय क्यो नहीं प्रिय होवै? ॥ १ ॥

सत्यप्रशंसा।

सत्यं मृदु प्रियं वाक्यं धीरो हितकरं वदेत् ॥
आत्मोत्कर्षं तथा निन्दां परेषां परिवर्जयेत् ॥ १ ॥

भाषार्थ–धीरपुरुषको सत्य, कोमल, प्रिय और हितकारक वचन बोलना उचित है और अपनी प्रशंसा तथा दूसरोंकी निन्दा ये अनुचित हैं. इसलिये इन दोनोंका वे त्याग करें॥ १ ॥

गोभिर्विप्रैश्च वेदैश्च सतीभिः सत्यवादिभिः ॥
अलुब्धैर्दानशूरैश्च सप्तभिर्धार्यते मही ॥ २ ॥

भाषार्थ–गौ, ब्राह्मण, वेद, पतिव्रता स्त्री, सत्यवादी, निर्लोभी और दानशूर इन सातोंसे पृथ्वी ठहरी हुई है ॥ २ ॥

असत्यनिन्दा।

असत्यमप्रत्ययमूलकारणं कुवासनासद्म समृद्धिवारणम् ॥
विपन्निदानं परवञ्चनोर्जितं कृताऽपराधं कृतिभिर्विवर्जितम् १

भाषार्थ–असत्य भाषण, अविश्वासका मूल कारण है, कुवासनाका घर है, समृद्धिका निवारण करनेवाला है, विपत्तिका आदि कारण है, दूसरेको उठानेके निमित्त कमाई है, अपराध करनेवाला है और इसी लिये सत्पुरुषोंने उसका त्याग किया है ॥ १ ॥

---

१ अविश्वासः।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

आत्मश्लाघानिन्दा ।

परैः प्रोक्ता गुणा यस्य निर्गुणोऽपि गुणी भवेत् ॥
इन्द्रोऽपि लघुतां याति स्वयं प्रख्यापितैर्गुणैः ॥ १ ॥

भाषार्थ—जिसके गुणोंका दूसरे लोगोंने वर्णन किया, वह पुरुष निर्गुण हो तोभी गुणी कहलाता है, और अपने गुणोंका स्वयं वर्णन करनेवाला—यदि वह इन्द्रभी हो—लघुताको प्राप्त होता है ॥ १ ॥

निजगुणगरिमा सुखाकरः स्यात्
स्वयमनुवर्णयतां सतां न तावत् ॥
निजकरकमलेन कामिनीनां
कुचकलशाकलनेन को विनोदः? ॥ २ ॥

भाषार्थ—अपने आप अपने गुणोंकी बड़ाई करना यह, सत्पुरुषोंको सुखकारी नहीं होता. अपने करकमलोंसे कुच—कलश मर्दन करनेसे स्त्रियोंको कौन आनन्द है ? ॥ २ ॥

न सुखं न च सौभाग्यं स्वयं स्वगुणवर्णने ॥
यथैव च पुरन्ध्रीणां स्वहस्तकुचमर्दने ॥ ३ ॥

भाषार्थ—अपने आप अपने गुण वर्णन करनेमें न सुख है, न अच्छा लगता है. स्त्रियोंको, अपने हाथसे कुचोंका मर्दन करनेमें न सुख है, न अच्छा लगता है ॥ ३ ॥

स्वभाववर्णन ।

सर्वस्य हि परीक्ष्यन्ते स्वभावा नेतरे गुणाः ॥
अतीत्य हि गुणान् सर्वान् स्वभावो नेतरे गुणाः॥१॥

---

१ स्त्रीणाम् । २ अतिक्रम्य ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—सबके स्वभावहीकी परीक्षा होती है; स्वभावसे इतर गुणोंकी नहीं. क्योंकि—सब गुणोंका उल्लंघन कर स्वभावही शिरपर रहता है. अर्थात् गुणी जनभी यदि स्वभावके अच्छे न हों तो उनका गुणी होना, निष्फल है. उत्तम स्वभाव होनेसेहि गुण शोभा पाते हैं; स्वभाव अच्छा न हो तो गुण वृथा हैं ॥ १ ॥

सति शीले गुणा भान्ति पुंसां शौर्यादयो यथा ॥
यौवने सदलङ्कारः शोभां बिभ्रति सुभ्रुवः ॥ २ ॥

भाषार्थ—यदि पुरुषका शील अच्छा हो तोहि उसके वे शौर्य आदि गुण, शोभाको प्राप्त होते हैं. अच्छे अच्छे अलङ्कार धारण करनेवाली स्त्रियां, यदि उनकी युवावस्था हो तोहि शोभित होती हैं॥२॥

किं कुलेन विशालेन ? शीलमेवात्र कारणम् ॥
कृमयः किं न जायन्ते ? कुसुमेषु सुगन्धिषु ॥३॥

भाषार्थ—विशाल कुलसे क्या अर्थात् उत्तमकुलमें जन्म होनेसे कौन फल है ? किन्तु, शीलही यहां कारण है. अर्थात्, अच्छा स्वभाव होना इस संसारमें मुख्य है. क्या कीडे, सुगन्धित फूलोंमें उत्पन्न नहीं होते हैं ? अर्थात् होते हैं ॥ ३ ॥

परोपदेशकुशला दृश्यन्ते बहवो जनाः ॥
स्वभावमतिवर्तन्तः सहस्रेष्वपि दुर्लभाः ॥ ४ ॥

भाषार्थ—दूसरेको उपदेश देनेमें कुशल अर्थात् औरोंको उपदेश करनेवाले मनुष्य, बहुत दीख पड़ते हैं. परन्तु, ठीक स्वभावसे वर्ताव करनेवाला मनुष्य हजारोंमेंभी दुर्लभ है ॥ ४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विदेशेषु धनं विद्या व्यसनेषु धनं मतिः ॥
परलोके धनं धर्मः शीलं सर्वत्र वै धनम् ॥ ५ ॥

भाषार्थ–देशान्तरमें धन विद्या है, व्यसनमें धन मति है, परलोकमें धन धर्म है और शील (अच्छा स्वभाव) सर्वत्र धन है ॥ ५ ॥

रक्तत्वं कमलानां सत्पुरुषाणां परोपकारित्वम् ॥
असतां च निर्दयत्वं स्वभावसिद्धं त्रिषु त्रितयम् ॥६॥

भाषार्थ–कमलोंके रक्तत्व, सत्पुरुषोंके परोपकारित्व और असत्पुरुषोंके निर्दयत्व ये तीनौंमें तीन स्वभावसिद्ध हैं. अर्थात् कमलोंमें लाल रंग होना, सज्जनोंमें परोपकार करनेकी बुद्धि और दुर्जनोंमें दयाहीनत्व होना स्वभावसेही जानना चाहिये ॥ ६ ॥

वचो हि सत्यं परमं विभूषणं
यथाऽङ्गनायाः कृशता कटौ तथा ॥
द्विजस्य विद्यैव पुनस्तथा क्षमा
शीलं हि सर्वस्य नरस्य भूषणम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार सत्यवचन श्रेष्ठ आभूषण है तथा, स्त्रीकी कटिमें कृशता (पतलापन) परम आभूषण है. द्विज (ब्राह्मणादि) के विद्याही श्रेष्ठ आभूषण है, इसी प्रकार क्षमाशील अर्थात् परमोत्तम स्वभाव, सब मनुष्योंका आभूषण है. अर्थात्, उत्तम स्वभाववाला मनुष्य सबमें शिरोमणि माना जाता है ॥ ७ ॥

काकः पद्मवने रतिं न कुरुते हंसो न कूपोदके
मूर्खः पण्डितसङ्गमे न रमते दासो न सिंहासने ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कुस्त्री सज्जनसङ्गमे न रमते नीचं जनं सेवते
या यस्य प्रकृतिः स्वभावजनिता केनापि न त्यज्यते

भाषार्थ–कौआ कमलवनमें प्रीति नहीं करता है, हंस कुवाँके जलमें प्रीति नहीं करता है, मूर्ख जन पंडितके साथमें रहना नहीं चाहता है, दास सिंहासनपर बैठना नहीं चाहता है, दुष्ट स्त्री सज्जनके साथ रमण करना नहीं चाहती; नीच जनका सेवन करती है. जो जिसकी प्रकृति स्वभावसे उत्पन्न है वह किसीसेभी नहीं त्यागी जा सकती. अर्थात् जिसका जो स्वभाव है वह नहीं छूट सकता ॥ ८ ॥

वाग् (वाणी) वर्णन।

तास्तु वाचः सभायोग्या याश्चित्ताकर्षणक्षमाः ॥
स्वेषां परेषां विदुषां द्विषामविदुषामपि ॥ १ ॥

भाषार्थ–वे वाणियाँ अर्थात् वे वचन सभाके योग्य हैं. जो अपने, पराये, पंडितोंके, द्वेष करनेवालोंके और मूर्खोंकेभी मनको अपनी ओर आकर्षण करने (खींचने) में समर्थ हैं ॥ १ ॥

अस्त्यद्यापि चतुःसमुद्रपरिखापर्यन्तमुर्वीतलं
वर्तन्तेऽपि च तत्र तत्र रसिका गोष्ठीषु सक्ता नृपाः
एकस्तत्र निरादरो भवति चेदन्यो भवेत्सादरो
वाग्देवी वदनाम्बुजे वसति चेत्को नाम दीनो जनः? २

भाषार्थ–आजभी चारौं ओर समुद्रकी परिखा (खाई) पर्यन्त पृथ्वीतल है और वहाँ वहाँ रसिक तथा सभाओंमें आसक्त राजा लोग वर्तमान हैं. उनमें यदि एक ' निरादर करनेवाला ' होता है,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तो अन्य आदरयुक्त होता है. परंतु, यदि वाग्देवी (सरस्वती) मुखकमलमें वास करती है तो कौन जन जगत्में दीन है? अर्थात् विद्वान् पुरुष दीन कहलानेके योग्य नहीं हो सकता है ॥ २ ॥

वाग्मि (वक्ता) प्रशंसा।

श्रुतिसिद्धान्तशूरस्य तद्विरुद्धान्निरुन्धतः ॥
वल्गितं वावदूकस्य कृतिनः किं न शोभते? ॥१॥

भाषार्थ–वेदके सिद्धान्त जाननेमें शूर और वेदविरुद्ध मतोंको रोकते हुये भाग्यवाले वक्ताका कहा हुआ वचन क्या शोभाको प्राप्त नहीं होता? अर्थात् वैदिक सिद्धान्तमें दृढमति पुरुषका वचन सर्वत्र शोभा पाता है ॥ १ ॥

अल्पाक्षररमणीयं यः कथयति निश्चितं स खलु वाग्मी।
बहुवचनमल्पसारं यः कथयति विप्रलापी सः ॥ २ ॥

भाषार्थ–जो थोडे अक्षरोंमें रमणीय अर्थात् मनोहर कथन करता है वह निश्चित वाग्मी (वक्ता) है और जो वचनें तो बहुत और उनमें सार तो थोडा ऐसा कथन करता है वह विप्रलापी है ॥ २ ॥

तद्वक्ता सदसि ब्रवीतु वचनं यच्छृण्वतां चेतसः।
प्रोल्लासं रसपूरणं श्रवणयोरक्ष्णोर्विकासश्रियम् ॥
क्षुन्निद्राश्रमदुःखकालगतिहृत्कार्यान्तरप्रस्मृतिं
प्रोत्कण्ठामनिशं श्रुतो वितनुते शोकं विरामादपि ३

---

१ प्रतिवक्तुः

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–वह वक्ता है, कि–सभामें जिसके बोलनेसे सुननेवालोंके चित्तको आनन्द हो, दोनौं कान रससे पूरित हों, नेत्र आश्चर्यसे विकसित हों, क्षुधा (भूँख), निद्रा (नींद), श्रम (थकावट अथवा परिश्रम) और कालगति (समयके बीत जाने) का ज्ञान न रहे, अन्य कार्योंकी विस्मृति हो जाय, सुननेमें निरन्तर उत्कण्ठा बढती रहे, कथनके समाप्त होनेपर शोक हो, अर्थात् चित्तमें यही उत्कण्ठा हो कि 'सुनतेही रहें, व्याख्यान समाप्त न हो' ॥ २ ॥

मौनगुणवर्णन।

रूपवाँश्चापि मूर्खोऽपि गत्वां च विपुलां सभाम् ॥
संरक्षेच्च स्वकां जिह्वां भार्य्यां दुश्चारिणीं यथा ॥ १ ॥

भाषार्थ–मूर्ख मनुष्य रूपवान् होनेपरभी बडी सभामें जाकर अपनी जिव्हाकी रक्षा करे अर्थात् मौन रहे. जैसे, दुराचारिणी स्त्री मौन धारण कर अपनी रक्षा करती है ॥ १ ॥

आत्मनो मुखदोषेण बध्यन्ते शुकसारिकाः ॥
बकास्तत्र न बध्यंते मौनं सर्वार्थसाधनम् ॥ २ ॥

भाषार्थ–अपने मुखदोषसे तोता मैना बाँधे जाते हैं. परन्तु, बगुले नहीं बाँधे जाते हैं. इससे यह सिद्ध हुआ कि–मौन सर्वार्थसाधन है. अर्थात्, मौन धारण करनेसे अनेक काम बन जाते हैं ॥ २ ॥

कोलाहले काककुलस्य जाते
विराजते कोकिलकूजितं किम्? ॥
परस्परं संवदतां खलानां
मौनं विधेयं सततं सुधीभिः ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-काककुल (कौवों) के कोलाहल (कॉंकॉं) आदि कुशब्द होनेपर कोकिलका मधुर शब्द क्या है ? मूर्खजनोंके परस्पर वार्तालाप करते हुये बुद्धिमान् जनोंको निरन्तर मौनहि धरना चाहिये ॥३॥

स्थानमाहात्म्य ।

कुस्थानस्थ प्रवेशेन गुणवानपि पीड्यते ॥
वैश्वानरोऽपि लोहस्थः कारुकैरभिहन्यते ॥ १ ॥

भाषार्थ-दुष्ट स्थानमें प्रवेश होनेसे गुणवान्भी पीडित किया जाता है. देखो, अग्निभी लोहमें स्थित होनेपर लोहकारकरके ताडित किया जाता है ॥ १ ॥

राजा कुलवधूर्विप्रा मंत्रिणश्च पयोधराः ॥
स्थानभ्रष्टा न शोभन्ते दन्ताः केशा नखा नराः॥२॥

भाषार्थ-राजा, कुलवधू, ब्राह्मण, मंत्री और कुच, दाँत, केश, नख तथा मनुष्य ये सब स्थानभ्रष्ट होनेपर शोभाको नहीं प्राप्त होते हैं अर्थात् अशोभित हो जाते हैं ॥ २ ॥

स्थानभ्रष्टा न शोभन्ते दन्ता केशा नखा नराः ॥
इति विज्ञाय मतिमान्स्वस्थानं न परित्यजेत् ॥ ३ ॥

भाषार्थ-" दाँत, केश और मनुष्य ये तीनौं जब स्थानसे भ्रष्ट हो जाते हैं तब शोभाको प्राप्त नहीं होते हैं " ऐसा जानकर बुद्धिमान् जन अपने स्थानका परित्याग न करै ॥ ३ ॥

अश्वः शस्त्रं शास्त्रं वीणा वाणी नरश्च नारी च ॥
पुरुषविशेषं प्राप्ता भवन्ति योग्या अयोग्याश्च ॥ ४ ॥

---

१ लोहकारैः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-अश्व (घोडा), शस्त्र (हथियार), शास्त्र, वीणा, वाणी, नर, नारी ये पुरुषको प्राप्त होकर योग्य और अयोग्य होते हैं. अर्थात्, उत्तम पुरुषके संयोगसे योग्य और अधम पुरुषके संयोगसे अयोग्य होते हैं ॥ ४ ॥

जानामि नागेन्द्र ! तव प्रभावं
कण्ठे स्थितो गर्जसि शंकरस्य ॥
स्थानं प्रधानं न बलं प्रधानं
स्थाने स्थितः कापुरुषोऽपि शूरः ॥ ५ ॥

भाषार्थ-एक समय गरुडध्वज, नारायण श्रीसदाशिवजीके दर्शननिमित्त कैलासपुरीमें पहुँचे. वहाँ शिवजीके कंठमें नागराज लिपट रहा था. उसने गरुडको देखकर फुंकार शब्द किया. वह देखकर गरुडजी बोले कि-हे नागेंद्र ! मैं तुम्हारे प्रभावको जानता हूं, कि-तुम हमारे भक्षण हो. परंतु, शंकरजीके कंठमें स्थित हो इससे गर्ज रह हो. यहाँ स्थान प्रधान है. बल प्रधान नहीं है. स्थानमें स्थित कापुरुष (कायर) भी शूर हो जाता है. कहावत है कि-"अपनी गलीमें कुत्ता बरुआर होता है" ॥ ५ ॥

सत्सङ्गप्रशंसा ।

महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः ? ॥
पद्मपत्रस्थितं वारि धत्ते मुक्ताफलप्रदम् ॥ १ ॥

भाषार्थ-महाजन (श्रेष्ठ मनुष्य) का सत्सङ्ग किसकी उन्नति करनेवाला नहीं होता ? अर्थात्, श्रेष्ठ जनोंके सत्संगसे सबकी उन्नति

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

होती है. कमलके पत्तेमें स्थित जल मुक्ताफल (मोती) की शोभाको धारण करता है ॥ १ ॥

मलयाचलगन्धेन त्विन्धनं चन्दनायते ॥
तथा सज्जनसङ्गेन दुर्जनः सज्जनायते ॥ २ ॥

भाषार्थ–मलयागिरिके गन्धसे इन्धन जैसे चन्दन हो जाता है, वैसेही सज्जनके संगसे दुर्जन, सज्जन हो जाता है ॥ २ ॥

चन्दनं शीतलं लोके चन्दनादपि चन्द्रमाः ॥
चन्द्रचन्दनयोर्मध्ये शीतला साधुसङ्गतिः ॥ ३ ॥

भाषार्थ–संसारमें चन्दन शीतल है. चन्दनसेभी चन्द्रमा शीतल है. चन्द्रमा और चन्दन इन दोनोंमें साधु (सज्जन) की सङ्गति शीतल है ॥ ३ ॥

हीयते हि मतिस्तात ! हीनैः सह समागमात् ॥
समैश्च समतामेति विशिष्टैश्च विशिष्टताम् ॥ ४ ॥

भाषार्थ–हे तात ! नीच जनोंके समागमसे बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, समान योग्यतावाले जनोंके समागमसे समताको प्राप्त होती है और विशेष जनों (सज्जनों) के समागमसे बुद्धि श्रेष्ठताको प्राप्त होती है अर्थात् बुद्धि श्रेष्ठ हो जाती है ॥ ४ ॥

काचः काञ्चनसंसर्गाद्धत्ते मारकती द्युतीः ॥
तथा सत्सन्निधानेन मूर्खो याति प्रवीणताम् ॥ ५ ॥

भाषार्थ–जैसे काच, कांचन (सुवर्ण) के संसर्गसे मर्कत मणिकी शोभाको धारण करै है, इसी प्रकार सज्जनके संगसे मूर्खजन बुद्धिमान् हो जाता है ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यदि सत्सङ्गनिरतो भविष्यसि भविष्यसि॥
अथ दुर्जनसंसर्गे पतिष्यसि पतिष्यसि ॥ ६ ॥

भाषार्थ-यदि तुम सत्संगमें प्रीति करोगे तो होगे २ अर्थात् होनहार कहलाओगे और 'सज्जन हो जाओगे' और यदि दुर्जनकी संगति करोगे तो गिरोगे गिरोगे अर्थात् पतित हो जाओगे ॥ ६ ॥

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति ॥
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं
सत्सङ्गतिः कथय किं न करोति पुंसाम् ? ॥७॥

भाषार्थ-बुद्धिकी जडताको हर लेती है, वाणीमें सत्यरूप अमृतको सींचती है, मान (प्रतिष्ठा) की उन्नति करती है, पापोंको दूर करती है, चित्तको प्रसन्न करती है और दिशाओंमें कीर्तिको फैलाती है. श्रेष्ठ जनोंकी संगति कहिये मनुष्योंको क्या कुछ नहीं करती है ? अर्थात् सब कुछ करती है ॥ ७ ॥

सत्संगाद्भवति हि साधुता खलानां
साधूनां नहि खलसङ्गमात्खलत्वम् ॥
आमोदं कुसुमभवं मृदेव धत्ते
मृद्गन्धं नहि कुसुमानि धारयन्ति ॥ ८ ॥

भाषार्थ-सत्संगसे दुर्जनोंको साधुता प्राप्त हो जाती है. परन्तु; सज्जनोंको दुर्जनके संगसे दुष्टता नहीं आती. फूलोंसे उत्पन्न गन्धको

१ मान्यम् । २ ददाति । ३ निराकरोति । ४ विस्तारयति । ५ सुगंधम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मिट्टी धारण करती है. परन्तु, मिट्टीके गन्धको फूलें धारण नहीं करतीं ॥ ८ ॥

किंवा परेण बहुना परिजल्पितेन ?
संसर्ग एव महतां महते फलाय ॥
अम्भोनिधेस्तटरुहास्तरवोऽपि येन
वेलाजलोच्छलितरत्नकृतालवालाः ॥ ९ ॥

भावार्थ–अधिक बात बढाकर बकनेसे क्या प्रयोजन ? महात्माओंका संगही महान् फल अर्थात् बडी भारी सिद्धिका कारण होता है. क्यों-कि–समुद्रके निकट उत्पन्न हुये वृक्षभी तटपर जलके साथ उछलते हुये रत्नोंकरके थलहोंवाले बन जाते हैं ॥ ९ ॥

दूरीकरोति कुमतिं विमलीकरोति
चेतश्चिरन्तनमघं चुलुकीकरोति ॥
भूतेषु किं च करुणां बहुलीकरोति
सङ्गः सतां किमु न मङ्गलमातनोति ? ॥ १० ॥

भावार्थ–कुमतिको दूर करता है, चित्तको निर्मल करता है, पुराने पापको चुल्लूके समान करता है और प्राणियोंमें दयाको बढाता है. सज्जनोंका संग कौनसे मंगलको विस्तृत नहीं करता है ? ॥ १० ॥

एके केचिद्यतिकरगताः पात्रसंज्ञां लभन्ते
गायन्त्यन्ये सरसमधुरं वीणया संप्रयुक्ताः ॥
एके तेषां सहगतिवशाद्दुस्तरं तारयन्ति
केचित्तेषां ज्वलितहृदया रक्तमेवापिबन्ति॥ ११॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—कई एक तूँबा यतियोंके हाथमें जानेसे पात्र बन जाते हैं, कई एक वीणा आदिके काममें आते हैं कि—जिससे लोग भावयुक्त सुरीले शब्दके साथ गान करते हैं, कई एक तूँबा अथाह जलमें तिरानेके काममें आते हैं, कईएक तूंबा, दुष्ट अंतःकरणवाले मनुष्योंके, रुधिर आदि अमङ्गल पदार्थोंका पान करते वख्त काममें आते हैं. सारांश यही कि—एकही मनुष्य संगके प्रभावसे तूंबेकी भांति अनेक प्रकारका बनता है ॥ ११ ॥

कान्तारभूमितरुमौलिनिवासशीलाः
प्रायः पलायनपरा जनवीक्षणेन ॥
कूजन्ति तेऽपि हि शुकाः खलु रामनाम
सङ्गः स्वभावपरिवर्तविधौ निदानम् ॥ १२ ॥

भाषार्थ—वनके वृक्षोंके शिखरोंपर निवास करनेका जिनका स्वभाव है और जो प्रायः मनुष्यको देखतेही उड जाते हैं, वे तोतेभी 'संगतिसे' रामनामका उच्चारण करते हैं. भावार्थ यह कि—स्वभावके परिवर्तनमें संगतिही मुख्य कारण है ॥ १२ ॥

असारसंसारपयोऽब्धिमध्ये
निमज्जतां सद्भिरुदारवृत्तैः ॥
महात्मभिः सङ्गतिरेवसाध्या
नान्यस्तदुत्तारविधावुपायः ॥ १३ ॥

भाषार्थ—असार—संसार—सागरमें डूबते हुये उदारचरित्रवाले सज्जनोंको, महात्माओंके साथही संगति करनी चाहिये. सत्संगके विना उस संसार—सागरको तैरनेका अन्य उपाय नहीं है ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

रे जीव ! सत्सङ्गमवाप्नुहि त्व-
मसत्प्रसङ्गं त्वरया विहाय ॥
धन्योऽपि निन्दां लभते कुसङ्गात्
सिन्दूरबिंदुर्विधवाललाटे ॥ १४ ॥

भाषार्थ–हे जीव ! तुम सज्जनका संग करो और दुर्जनकी सङ्गतिका शीघ्र त्याग कर दो. धन्यपुरुष भी कुसंगसे निन्दाको प्राप्त होता है. जैसे–विधवा स्त्रीके मस्तकपर सिन्दूरविन्दु शोभाको प्राप्त नहीं होता है ॥ १४ ॥

भाग्योदयेन बहुजन्मसमार्जितेन
सत्सङ्गमं च लभते पुरुषो यदा वै ॥
अज्ञानहेतुकृतमोहमदान्धकार-
नाशं विधाय हि तदोदयते विवेकः ॥ १५ ॥

भाषार्थ–अनेक जन्मोंके इकट्ठे किये हुये भाग्यके उदय होनेपर पुरुष जब सत्सङ्गको प्राप्त होता है, तबही अज्ञानकरके किये हुये मद–मोहरूप अन्धकारका नाश करके विवेकको प्राप्त होता है ॥ १५ ॥

सुजनः सुजनेन सङ्गतः परिपुष्णाति मतिं शनैः शनैः ॥
परिपुष्टमतिर्विवेकवाञ्छनकैर्हेयगुणं विमुञ्चति ॥ १६ ॥

भाषार्थ–श्रेष्ठपुरुष, श्रेष्ठपुरुषके संगसे धीरेधीरे अपनी बुद्धिको भलीभाँति पुष्ट करता है और इस तरह बुद्धिको पुष्ट करके विवेकी बनता है. अनन्तर धीरेधीरे त्याग करने योग्य बातोंका त्याग कर देता है ॥ १६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

महत्सेवां द्वारमाहुर्विमुक्ते-
स्तमोद्वारं योषितां सङ्गिसङ्गम् ॥
महान्तस्ते समचित्ताः प्रशान्ता
विमन्यवः सुहृदः साधवो ये ॥ १७ ॥

भाषार्थ–महात्माओंकी सेवाही, मोक्षमार्गका द्वार है और स्त्रियोंके संगवालोंका संग नरकका द्वार है. महात्मा वे हैं, कि–जो समचित्त अर्थात् शत्रुमित्रको समानभावसे देखनेवाले, शान्त, क्रोधसे रहित और शुद्धहृदयवाले हैं ॥ १७ ॥

असज्जनः सज्जनसङ्गिसङ्गात्
करोति दुःसाध्यमपीह साध्यम् ॥
पुष्पाश्रयाच्छंभुशिरोऽधिरूढा
पिपीलिका चुम्बति चन्द्रबिम्बम् ॥ १८ ॥

भाषार्थ–असज्जन (दुष्ट पुरुष) सज्जनके साथ संग करता है तो इस जगत्में जो कठिन कार्य है उस कठिन कार्यकोभी सहजमेंही कर लेता है. जैसे, एक मन्दिरमें किसी पुजारी द्वारा फूलके आश्रयसे शंभुजीके शिरपर चढी हुई चिउँटी, शिवजीके मस्तकपर विराजमान चन्द्रमाके बिम्बका चुम्बन करती है ॥ १८ ॥

असत्सङ्गनिन्दा।

असत्सङ्गाद्गुणज्ञोऽपि विषयासक्तमानसः ॥
अकस्मात्प्रलयं याति गीतरक्तो मृगो यथा ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ—असत् (खोटे) मनुष्यके संगसे गुणवान् पुरुषभी विषयोंमें आसक्तमनवाला होकर अकस्मात् प्रलयको प्राप्त हो जाता है. अर्थात्, दुर्जनके संगसे गुणवान् मनुष्यभी नष्ट हो जाता है. जैसे गीतमें अनुरागवाला मृग (हरिण) नाशको प्राप्त होता है ॥ १ ॥

अहो ! दुर्जनसंसर्गान्मानहानिः पदे पदे ॥
पावको लोहसङ्गेन मुद्गरैरभिहन्यते ॥ २ ॥

भावार्थ—अहो ! खेदकी बात है कि—दुर्जनके संसर्गसे पदपदपर मानहानि होती है. देखो, पावक (अग्नि) लोहेके संगसे मुद्गरोंकरके कूटा जाता है ॥ २ ॥

अणुरप्यसतां सङ्गो सद्गुणं हन्ति विस्तृतम् ॥
गुणरूपान्तरं याति तक्रयोगाद्यथा पयः ॥ ३ ॥

भावार्थ—थोडासाभी असत्पुरुषोंका संग विस्तारवाले सद्गुणोंको नष्ट कर देता है और गुणरूपान्तरको प्राप्त होता है. जैसे—तक्र (छाछ) के योग (मेल) से दूधका गुण और रूप बदल जाता है. तात्पर्य यह कि—सज्जनको उचित है कि—दुर्जनका संग थोडे समयके लियेभी नहीं करै ॥ ३ ॥

आहृत्य रक्ष्यमाणाऽपि यत्नेनान्तर्विरागिणी ॥
असन्मैत्री च वेश्या च श्रीश्च कस्य कदा स्थिरा ? ॥४॥

भावार्थ—असत्पुरुषकी अर्थात् दुर्जनकी मित्रता, वेश्या और लक्ष्मी यत्नपूर्वक लाकर रक्षा की हुईभी अन्तःस्थ विरागिणी होनेसे अर्थात् अन्तःकरणमें विराग होनेके कारण कब किसके यहाँ स्थिर हुई है ? ॥४॥

दुर्जनजनसंसर्गात्सज्जनपुरुषोऽत्र दोषमायाति ॥
रावणकृताऽपराधाज्जलधेरपि बन्धनं प्राप्तम् ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–इस संसारमें दुर्जनके संसर्गसे सज्जनभी दोषको प्राप्त होता है. देखो, रावणके किये हुए अपराधसे समुद्रभी बन्धनको प्राप्त हुआ॥५॥

पात्रमपात्रीकुरुते दहति गुणं[2] स्नेहमाशु[3] नाशयति ॥
अमले मलं[4] नियच्छति दीपज्वालेव खलमैत्री ॥ ६ ॥

भाषार्थ–पात्र (दीपक) को अपात्र (अयोग्य) बनावै है अथवा सुपात्रको कुपात्र बनावै है और गुण (सूत्र 'बत्ती') को जलावै है अथवा विनय आदि गुणोंको नष्ट करै है, स्नेह (तैल) को जलावै है अथवा प्रीतिका नाश करै है, अमल (निर्मल) 'पात्र' में स्याही लावै है अथवा निर्मलचरित्रवालेमें दोष उत्पन्न करै है. इस प्रकार दीपककी ज्वाला (लौ) की नाईं खल (असज्जन) की मैत्री होती है ॥ ६ ॥

हंसोऽध्वगः श्रममपोहयितुं दिनान्ते
कारण्डकाकबककोककुलं प्रविष्टः ॥
मूकोऽयमित्युपहसन्ति लुनन्ति पक्षा-
न्नीचाश्रयो हि महतामपमानहेतुः ॥ ७ ॥

भाषार्थ–एक हंस मार्गमें प्राप्त हो थकावटको दूर करनेके निमित्त दिनके अन्त (सन्ध्यासमय) में सारस, कौआ, बगुला और कोकिला इनके समुदायमें प्रविष्ट हो गया अर्थात् ठहर गया. तब वे कारण्ड, बक आदि पक्षियोनें 'यह मूक (गूँगा) है' ऐसा समझकर उस हंसकी हंसी की–इतनाही नहीं–उसके परोंकोभी नोचा. ठीकहि है. नीचजनोंका आश्रय बडोंके अपमानका कारण होता है. सारांश यह कि–नीचोंका आश्रय दुःखप्रद होता है ॥ ७ ॥

---

१ अयोग्यम्। २ सूत्रम् 'पक्षे' विनयादिकं। ३ तैलम् 'पक्षे' प्रीतिं। ४ मलीम् 'पक्षे दोषम्।'

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दुर्वृत्तसङ्गतिरनर्थपरम्पराया
हेतुः सतां भवति किं वचनीयमत्र ? ॥
लंकेश्वरो हरति दाशरथेः कलत्रं
प्राप्नोति बन्धनमसौ किल सिन्धुराजः ॥८॥

भाषार्थ–दुराचारी मनुष्यकी संगति, सज्जनोंके अनर्थ–परम्पराका हेतु होती है. अर्थात्, खोटेके संगसे अनेक अनर्थ प्रगट होते हैं इसमें कहनाही क्या है ? लंकेश्वर (रावण) ने रामचन्द्रजीकी स्त्री (सीता) का हरण किया और सागर बन्धनको प्राप्त हुआ ! ॥ ८ ॥

दैवयोगसे एक हंस एक कौआकी संगतिमें पड़कर एक वृक्षपर आ बैठा. उस वृक्षके नीचे एक राजा दोपहरके समय आराम कर रहा था. कौआने वृक्षपर ' काउँकाउँ ' शब्द किया. कि–जिससे राजा चौंक पड़ा. इतनेमें कौआने राजाके वस्त्रपर वीठ कर दी. तब राजाने क्रोधित होकर अपनी बन्दूक लेकर छर्रा मार दिया. कौआ तो पहलेही चौकन्ना हो रहा था तुरन्त उड गया. हंस उस छर्रांके लगतेही राजाके सन्मुख आ गिरा. हंसको देखकर कोई बोला–"यह सपेद कौआ है." किसीने कहा– " यह कौआ अद्भुत है." तब हंस बोला कि–

अहं काक न भो राजन् ! हंसोऽहं विमले जले ॥
नीचसङ्गप्रभावेन मृत्युरेव न संशयः ॥ ९ ॥

भाषार्थ–हे राजन् ! मैं कौआ नहीं हूं मैं (मानससरोवर) के निर्मल जलमें यथेच्छ विहार करनेवाला हंस हूं. नीचके संगसे मेरी मृत्यु होनेमें कुछ विशेष आश्चर्यकी बात नहीं है. क्योंकि–नीचका संग मृत्युका कारण हि है ॥ ९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्नेहवर्णन ।

सखि ! साहजिकं प्रेम दूरादपि विराजते ॥
चकोरीनयनद्वन्द्वमानन्दयति चन्द्रमाः ॥ १ ॥

भाषार्थ–हे सखि ! स्वाभाविक प्रेम दूरसेही प्रकाशित हो जाता है. देखो, दूरस्थ चन्द्रमा, चकोरपक्षीके नेत्रोंको आनन्दित करता है ॥१॥

क्वेन्दोर्मण्डलमम्बुधिः ? क्व च रविः ? पद्माकरः क्व स्थितः ?
क्वाभ्राः सन्ति ? मयूरपंक्तिरमला क्वालिः ? क्व वा मालती- ।
हारं ? प्रस्थितहंसवृन्दमपि तत्क्वासौ सरो मानसं ?
यो यस्याऽभिमतः स तस्य निकटे दूरेऽपि सन्वल्लभः ॥२॥

भाषार्थ–कहाँ चन्द्रमण्डल और कहां समुद्र? कहाँ सूर्य और कहा कमलोंकी खान ? कहाँ मेघ और कहाँ मयूरोंकी निर्मल पंक्ति ? कहाँ भ्रमर और कहाँ चमेलीके फूलोंका हार ? एवं कहाँ हंसोंकी स्थिति और कहाँ मानससरोवर ? तात्पर्य यह है कि–जो जिसके मनमें वस रहा है वह उसके निकट है. दूर होनेपरभी उसको प्यारा है. अर्थात्, अपना प्यारा हृदयमें रहनेके कारण दूर होनेपरभी निकट है ॥ २ ॥

सुमित्रप्रशंसा ।

शुचित्वं त्यागिता शौर्यं सामान्यं सुखदुःखयोः ॥
दाक्षिण्यं चानुरक्तिश्च सत्यता च सुहृद्गुणाः ॥ १ ॥

भाषार्थ–शुचित्व (स्वभाव अथवा मनमें पवित्रता), त्यागिता दानशीलता), शौर्य (शूरता), सुख और दुःख इनमें समानता,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दाक्षिण्य (सरलता), अनुरक्ति (प्रीति) और सत्यता ये सुहृद्-(मित्र) के गुण हैं ॥ १ ॥

यस्य मित्रेण संभाषा[1] यस्य मित्रेण संस्थितिः ॥
मित्रेण सह यो भुंक्ते ततो[2] नास्तीह पुण्यवान् ॥ २ ॥

भावार्थ—जिसका मित्रके साथ सम्भाषण होता है, जिसकी मित्रके साथ स्थिति रहती है, जो मित्रके साथ भोजन करता है, उससे अधिक पुण्यवान् (भाग्यवाला) इस मृत्युलोकमें कोई नहीं है ॥ २ ॥

व्याधितस्यार्थहीनस्य देशान्तरगतस्य च ॥
नरस्य शोकदग्धस्य सुहृद्दर्शनमौषधम् ॥ ३ ॥

भावार्थ—रोगसे पीडित और धनहीन तथा विदेशको गये हुये और शोकसे दग्ध हुये मनुष्यको सुहृद् (मित्र) का दर्शन औषध है ॥ ३ ॥

उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे राष्ट्रविप्लवे ॥
राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः ॥ ४ ॥

भावार्थ—उत्सवमें, व्यसनमें (संकटमें), दुर्भिक्षमें, राजविप्लव अर्थात् राजाओंमें लडाई होनेपर प्रजामें जो अशान्ति फैल जाती है, उस समयमें और राजद्वारमें, तथा श्मशानमें जो साथ रहता है वही बन्धु है ॥ ४ ॥

शोकारातिभयत्राणं प्रीतिविश्रम्भभाजनम् ॥
केन रत्नमिदं सृष्टं मित्रमित्यक्षरद्वयम् ? ॥ ५ ॥

---

१ मिथो भाषणम्। २ तस्मात्पुरुषात्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–शोकका शत्रु अर्थात् शोकको दूर करनेवाला, भयसे रक्षा करनेवाला और प्रीति तथा विश्वासका पात्र 'मित्र' यह दो अक्षर-वाला रत्न किसने रचा ?॥ ५ ॥

न मातरि न दारेषु न सोदर्ये न चात्मनि ॥
विश्वासस्तादृशः पुंसां यादृङ् मित्रे स्वभावजे ॥ ६ ॥

भाषार्थ–न मातामें, न स्त्रीमें, न सहोदर (सगेभाई) में वैसा वि-श्वास पुरुषोंका होता है जैसा, स्वभावसे उत्पन्न मित्रपर होता है ॥ ६ ॥

कराविव शरीरस्य नेत्रयोरिव पक्ष्मणी ॥
अविचार्य प्रियं कुर्यात्तन्मित्रं मित्रमुच्यते ॥ ७ ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार दोनौं हाथ शरीरकी रक्षा करते हैं और जैसे दोनौं पलक दोनौं नेत्रोंकी रक्षा करते हैं, उसीप्रकार विना विचार किये अर्थात् निष्कपटभावसे हित करै वही मित्र 'मित्र' कहलाता है ॥ ७ ॥

औरसं कृतसम्बन्धं तथा वंशक्रमागतम् ॥
रक्षितं व्यसनेभ्यश्च मित्रं ज्ञेयं चतुर्विधम् ॥ ८ ॥

भाषार्थ–जो मित्र साक्षात् अपनाही किया हो वह औरस मित्र कहलाता है और जिस मित्रने सम्बन्ध करके मित्रता कर ली है, तथा वंशपरम्परासे जो मित्र होता आया हो–जैसे, अपने पिता और मित्रके पितासे मित्रता हो इस कारण परस्पर मित्रता हो–और व्यसनोंसे जिसने रक्षा की हो ऐसे चार प्रकारके मित्र जानने चाहिये ॥ ८ ॥

तदेवास्य परं मित्रं यत्र संक्रामति द्वयम् ॥
दृष्टे सुखं च दुःखं च प्रतिच्छायेव दर्पणे ॥ ९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–वही इस मनुष्यका परम मित्र है, जिसमें दो भाव नहीं हैं और जो सुख तथा दुःख इनमें सदा साथ रहता है. जैसे–दर्पणमें प्रतिबिंब सर्वदा साथ रहता है ॥ ९ ॥

दर्शने स्पर्शने वापि श्रवणे भाषणेऽपि वा ॥
यत्र द्रवन्त्यन्तरङ्गं स स्नेह इति कथ्यते ॥ १० ॥

भाषार्थ–दर्शनमें अर्थात् देखनेमें, स्पर्शनमें अर्थात् छूनेमें, श्रवणमें अर्थात् सुननेमें, भाषणमें अर्थात् बोलनेमें जो निरन्तर द्रवीभूत होता है, वही 'स्नेही' कहलाता है ॥ १० ॥

स्वाभाविकं तु यन्मित्रं भाग्येनैवाभिजायते ॥
तदकृत्रिमसौहार्दमापत्स्वपि न मुञ्चति ॥ ११ ॥

भाषार्थ–जो स्वाभाविक मित्र है वह भाग्यसेही प्राप्त होता है. अकृत्रिम अर्थात् निष्कपटभावसे मित्रता करनेवाला मित्र, आपत्कालमें साथ नहीं छोडता है ॥ ११ ॥

पापान्निवारयति योजयते हिताय ।
गुह्यानि गूहति गुणान् प्रकटीकरोति ॥
आपद्गतं च न जहाति ददाति काले ।
सन्मित्रलक्षणमिदं प्रवदन्ति सन्तः ॥ १२ ॥

भाषार्थ–पापोंसे छुटाता है, हित (कल्याण) की इच्छासे अच्छे कामोंमें लगाता है, छिपाने योग्य बातोंको अर्थात् अवगुणोंको छिपाता है और गुणोंको प्रगट करता है, आपत्तिकालमें त्याग नहीं करता अर्थात् किसी प्रकारकी विपत् आ पड़ने साथ नहीं छोडताहै, समयानुसार देताभी है अर्थात् आवश्यक कार्यमें समयपर धन आदि

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

देकर सहायता करता है, उसीको, सत्पुरुष, ' सन्मित्र ' ऐसा बोलते हैं ॥ १२ ॥

क्षीरेणात्मगतोदकाय हि गुणा दत्ताः पुरा तेऽखिलाः।
क्षीरे तापमवेक्ष्य तेन पयसा ह्यात्मा कृशानौ हुतः॥
गन्तुं पावकमुन्मनस्तदभवद्दृष्ट्वा तु मित्रापदं ।
युक्तं तेन जलेन शाम्यति सतां मैत्री पुनस्त्वीदृशी॥ १३॥

भाषार्थ—दूधमें जब जलरूपी मित्र आकर मिला अर्थात् जलने, दूधके साथ आकर मित्रता की तब दूधने अपने सब गुण जलरूपी मित्रको दे दिये. दूधमें ताप देखकर उस जलरूपी मित्रने अपनेको अग्निमें होम दिया. जब दूधने देखा कि—हमारा जलरूपी मित्र अग्निमें जल जाता है तब दूध, मित्रकी आपत्ति देखकर अग्निमें गिरने लगता है. फिर उस जलरूपी मित्रसे अर्थात् जलके छींटेसे मित्रको आया जानकर शान्त हो जाता है. ठीक है, सत्पुरुषोंकी मैत्री ऐसीही होती है. अर्थात्, अच्छे लोगोंकी मित्रता दूध और जलके समान होती है ॥ १३ ॥

कुमित्रनिन्दा ।

रहस्यभेदो याञ्चा च नैष्ठुर्यं चलचित्तता ॥
क्रोधो निःसत्यता द्यूतमेतन्मित्रस्य दूषणम् ॥ १ ॥

भाषार्थ—रहस्यभेद अर्थात् गुप्तबातको प्रकाशकर देना, याञ्चा अर्थात् याचना करना (माँगना), निष्ठुरता, चलचित्तता अर्थात् मनमें चंचलता, क्रोध करना, निःसत्यता अर्थात् असत्य बात कहना,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

द्यूत अर्थात् जुवाँ खेलना ये मित्रके दूषण हैं अर्थात् कुमित्रके येही लक्षण हैं ॥ १ ॥

परोक्षे कार्यहन्तारं प्रत्यक्षे प्रियवादिनम् ॥
वर्जयेत्तादृशं मित्रं विषकुम्भं पयोमुखम् ॥ २ ॥

भाषार्थ–परोक्षमें अर्थात् जब मित्र पास नहीं ऐसे वख्त (मित्रके पीछे) कार्यको बिगाडनेवाला और प्रत्यक्षमें अर्थात् मित्रके सामने प्रियवचन बोलनेवाला (लल्लो पत्तो करनेवाला) ऐसे मित्रका, पयोमुखी विषकुम्भके समान अर्थात् जिस घडेमें संपूर्ण विष भरा हो और ऊपर थोडासा दूध हो ऐसे घडेके समान परित्याग करै ॥ २ ॥

सुमित्रके जितने लक्षण वर्णन किये गये हैं उन लक्षणोंसे विपरीत वर्ताव करनेवाले कुमित्र कहाते हैं ॥

वाङ्माधुर्य-प्रशंसा ।

वाङ्माधुर्यान्नान्यदस्ति प्रियत्वं
वाक्पारुष्याच्चोपकारोऽपि नष्टः ।
किं तद्द्रव्यं कोकिलेनोपनीतं ?
को वा लोके वायसस्यापराधः ? ॥ १ ॥

भाषार्थ–वाङ्माधुर्य (वाणीकी मधुरता से परे अन्य कुछ प्रिय नहीं है और वाक्-पारुष्य (वाणीकी कठोरता अर्थात् कठोर वाणी) से किया हुआ उपकारभी नष्ट हो जाता है. कोकिल (कोयल) ने क्या द्रव्य लाकर दे दिया? जो उसके शब्दपर मोहित हो जाना पडता है और कौआका क्या अपराध है? ॥ १ ॥ एक दोहा है, कि–

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कागाका को हर लियो, कोयलका को दीन ॥
मीठे वचन सुनायके, जग आपन करि लीन ॥ १ ॥

प्रियवाक्यप्रसादेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः ॥
तस्मात्तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता ? ॥ २ ॥

भाषार्थ–प्रियवचन बोलनेसे सब प्राणी प्रसन्न रहते हैं इस कारण, प्रियवचनही बोलना चाहिये. वचनमें क्या दरिद्रता ? अर्थात् सर्वदा मधुर वचन बोलना उचित है ॥ २ ॥

नहीदृशं संवननं त्रिषु लोकेषु किंचन ॥
दया मैत्री च भूतेषु दानं च मधुरा च वाक् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–सब प्राणियोंपर दया, मित्रता, दान और मधुर भाषण इनके समान और कोई वशीकरण त्रिलोकीमें नहीं है ॥ ३ ॥

भार्य्या पुत्रोऽप्युद्विजेत कटुवाक्यात्प्रदण्डतः ॥
पशवोऽपि वशं यांति दानैश्च मृदुभाषणैः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–कटुवचन बोलनेसे स्त्रीपुत्रभी उद्विग्नचित्तवाले हो जाते हैं और दान तथा मधुर भाषण इनसे पशुभी वश हो जाते हैं ॥ ४ ॥

यदीच्छसि वशीकर्तुं जगदेकेन कर्मणा ॥
परापवादसस्येभ्यो गां[1] चरन्तीं निवारय ॥ ५ ॥

भाषार्थ–यदि एकही कर्मसे जगत्को वशमें करनेकी इच्छा हो तो, परापवादरूपी सस्य (धान्य) से चरती हुई गौका निवारण करो अर्थात् पराई निन्दा करनेसे वाणीको रोको ॥ ५ ॥ एक दोहा है कि–

मधुरवचनसंयोगसे, सुख उपजत चहुँ ओर ।
वशीकरण यक मंत्र है, तजि दे वचन कठोर ॥ १ ॥

---

1 वाणीम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

संसारवर्णन।

संसारविषवृक्षस्य द्वे फले ह्यमृतोपमे ॥
काव्यामृतरसास्वाद आलापः सज्जनैः सह ॥ १ ॥

भाषार्थ–संसाररूप विषवृक्षके दोही अमृतसमान फल हैं. एक काव्यरूप अमृतरसका स्वाद और दूसरा सज्जनोंके साथ आलाप अर्थात् संभाषण ॥ १ ॥

अयमविचारितचारुतया संसारो भाति रमणीयः ॥
अत्र पुनः परमार्थदृशा न किमपि साररमणीयः॥२॥

भाषार्थ–यह संसार, विना विचारवाली सुन्दरतासे रमणीय भासता है. परंतु, परमार्थदृष्टिसे इसमें कुछभी रमणीय सार नहीं है ॥ २ ॥

दुःखाङ्गारकतीव्रः संसारोऽयं महानसो गहनः ॥
इह विषयामृतलालस मानसमार्जार ! मा निपत ॥ ३ ॥

भाषार्थ–यह संसार तीव्र–दुःखरूपी अंगारोंसे धधकता हुआ गहन महानस अर्थात् बिकट रसोईघर है. हे मानसमार्जार ! अर्थात् मन-रूपी बिलाव ! इस संसारमें विषयरूप अमृतकी लालसामें नहीं फस जाना. अर्थात्, इस संसारमें विषयरूप आनन्दमें फँसकर अपना मनुष्यजन्म निरर्थक नहीं करना ॥ ३ ॥

क्वचिद्विद्वद्गोष्टी क्वचिदपि सुरामत्तकलहः ।
क्वचिद्वीणावादः क्वचिदपि च हाहेति ! रुदितम् ॥
क्वचिद्रम्या रामा क्वचिदपि जराजर्जरतनु- ।
र्न जाने संसारः किममृतमयः किं विषमयः ॥ ४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—कहीं विद्वान् जनोंकी गोष्ठी (सभा) है, कहीं मदिरापीनेवाले कलह कर रहे हैं, कहीं वीणाका मधुर शब्द सुनाई देता है, कहीं 'हाय! हाय!!' करके रोनेका शब्द हो रहा है, कहीं सुन्दरी स्त्री देख पडती हैं, कहीं बुढापेसे जिनका शरीर जर्जर हो गया है ऐसे पुरुष देख पडते हैं. न जाने यह संसार क्या अमृतमय है या विषमय है ॥ ४॥

गृहस्थाश्रमप्रशंसा।

यथा नदी नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम् ॥
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम् ॥ १ ॥

भाषार्थ—जिस प्रकार सब नदी और नद सागरमें जाकर स्थिर होते हैं, उसी प्रकार सब आश्रमवाले, गृहस्थजनके आश्रय स्थित होते हैं ॥ १ ॥

यस्मात्त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम् ॥
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही ॥ २ ॥

भाषार्थ—जिससे तीनौं आश्रमवालों (ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी) को अन्न आदि दानसे प्रतिदिन गृहस्थजन धारण करता है, इसकारण गृहस्थाश्रम सबसे बड़ा है ॥ २ ॥

न्यायार्जितधनस्तत्वज्ञाननिष्ठोऽतिथिप्रियः ॥
शास्त्रवित्सत्यवादी च गृहस्थोऽपि विमुच्यते[1] ॥ ३ ॥

भाषार्थ—न्यायपूर्वक धनोपार्जन करनेवाला, तत्वज्ञानमें मनको लगानेवाला, अतिथिप्रिय, शास्त्रको जाननेवाला तथा सत्यवादी गृहस्थ पुरुषभी मुक्त हो जाता है ॥ ३ ॥

---

1 मुक्तो भवति।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ता प्रियालापिनी।
सन्मित्रं सुधनं स्वयोषितरतिश्चाज्ञापराः सेवकाः ॥
आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे
साधोः सङ्गमुपासते हि सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः ४

भाषार्थ-आनन्दयुक्त घर हो, श्रेष्ठबुद्धिवाले पुत्र हों, स्त्री प्रियवादिनी हो, श्रेष्ठ मित्र हो, उत्तम धन हो, अपनी स्त्रीमें प्रीति हो, आज्ञा माननेवाले सेवक हों, अतिथिका सत्कार और शिवका पूजन हो, प्रतिदिन घरमें मिष्टान्नपान हो, साधुजनोंका निरन्तर सत्सङ्ग प्राप्त हो ऐसा गृहस्थाश्रम धन्य है ॥ ४ ॥

गृहस्थाश्रमनिन्दा।

न विप्रपादोदकपङ्किलानि न वेदशास्त्रध्वनिगर्जितानि।
स्वाहास्वधाकारविवर्जितानि श्मशानतुल्यानि गृहाणि तानि

भाषार्थ-जिस घरमें ब्राह्मणोंके चरणोदककी कींच नहीं, जहां वेदशास्त्रध्वनिकी गर्जना नहीं और 'स्वाहास्वधा' का शब्द नहीं अर्थात्, जिस गृहस्थके घरमें ब्राह्मण नहीं जीमते, वेदपाठ नहीं होता, हवन और पितृश्राद्ध नहीं होता वह घर श्मशानके तुल्य है ॥ १ ॥

यत्र नास्ति दधिमन्थनघोषो
यत्र नो लघुलघूनि शिशूनि ॥
यत्र नास्ति गुरुगौरवपूजा तानि
किं बत गृहाणि वनानि ॥ २ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जहाँ दही मथनेका शब्द नहीं होता, जिसमें छोटे२ बालक नहीं हैं और जहां गुरुजनोंका सत्कार नहीं होता, वह घर क्या है? वन है ॥ २ ॥

तावद्विद्यानवद्या गुणगणमहिमा रूपसम्पत्तिशौर्यं।
स्वस्थाने सर्वशोभा परगुणकथने वाक्पटुस्तावदेव ॥
यावत्पाकाकुलाभिः स्वगृहयुवतिभिः प्रेषितापत्यवक्रा-
द्धे बावा! नास्ति तैलं न च लवणमपीत्यादिवाचां प्रचारः ३

भाषार्थ-तबतकहि विद्या निर्दोष है, गुणोंकी महिमा है, रूप, सम्पत्ति, शूरता और अपने स्थानमें सर्व शोभा तथा दूसरेके गुण कथनेमें वाणीकी चतुराई है, कि-जबतक रसोई बनानेके प्रबन्धवाली अपने घरकी आकुल स्त्रियों द्वारा भेजे हुये बालकोंके मुखसे "हे बावा! तेल नहीं है, लवण (नमक) भी नहीं है" इत्यादि वाणीका प्रचार नहीं होता ॥ ३ ॥

क्रोशन्तः शिशवः सवारि सदनं पङ्कावृतं चाङ्गणं।
शय्या दंशवती च रूक्षमशनं धूमेन पूर्णं गृहम् ॥
भार्य्या निष्ठुरभाषिणी प्रभुरपि क्रोधेन पूर्णः सदा।
स्नानं शीतलवारिणा हि सततं धिग्धिग्गृहस्थाश्रमम्४

भाषार्थ-जहां बालक कोसते हैं, घर जलसे भरा रहता है और आँगनमें कींच बनी रहती है, शय्या खटमल आदि जंतु होनेसे काटनेवाली है, रूखा (विना स्नेह) भोजन, घर धुवाँसे भरा हुआ है जिसमें कठोरभाषिणी स्त्री, स्वामीभी सदा क्रोधसे पूर्ण और निरन्तर शीतल जलसे स्नान ऐसे गृहस्थाश्रमको वारंवार धिक्कार है! ॥ ४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पुत्रप्रशंसा ।

दिग्वाससं गतव्रीडं जटिलं धूलिधूसरम् ॥
पुण्याधिका हि पश्यन्ति गङ्गाधरमिवात्मजम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–नंगेशरीर, निर्लज्ज, जटाधारी, धूलिसे भूरा रंग ऐसे गंगाधर (शिव) समान पुत्रको अधिक पुण्यवाले लोग देखते हैं ॥ १ ॥

निन्द्यते पितृभिस्तप्तैर्निरपत्यधनः पुमान् ॥
अध्वनीनैरतिश्रान्तैरवकेशीव पादपः ॥ २ ॥

भाषार्थ–सन्तापको प्राप्त हुये पितर, संतान और धनसे हीन पुरुषकी निन्दा करते हैं. जैसे–बहुत थके हुये पथिक, वन्ध्य वृक्ष अर्थात् फलहीन अथवा छायाहीन वृक्षकी निन्दा करते हैं ॥ २ ॥

किंमृष्टं ? सुतवचनं, मृष्टतरं किं ? तदेव सुतवचनम् ॥
मृष्टान्मृष्टतमं किं ? श्रुतपरिपक्वं तदेव सुतवचनम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–मधुर क्या है ? सुतवचन. अधिक मधुर क्या है वही सुतवचन और अधिक मधुरसे मधुर क्या है ? वेदार्थसे युक्त वही सुतवचन ॥ ३ ॥

कन्यानिन्दा ।

जातेति कन्या महती हि चिन्ता
कस्मै प्रदेयेति महान् वितर्कः ॥
दत्ता सुखं यास्यति वा न वेति
कन्यापितृत्वं खलु नाम कष्टम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–प्रथम तो ' कन्याका जन्म हुआ ' यही सुनकर बडी चिन्ता हुई. फिर किसको यह कन्या दी जाय यह महान् विचार मनको

१ पान्थैः । २ वन्ध्यः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

डामाडोल करता रहता है. जब किसीको जैसे वैसे कन्यादानभी करदिया तब इसको सुख मिलैगा अथवा नहीं, इसप्रकार कन्याका पिता होनाही अथवा कन्याका पिता कहलानाहि महाकष्टकी बात है ॥ १ ॥

सत्पुत्रप्रशंसा ।

एकेनापि सुपुत्रेण सिंही स्वपिति निर्भयम् ॥
सहैव दशभिः पुत्रैर्भारं वहति रासभी ॥ १ ॥

भावार्थ–एकही अच्छे पुत्रसे सिंहिनी वनमें निर्भय होकर शयन करती है और गधी बिचारी दश पुत्र होनेसेभी बोझा ढोती है॥ १ ॥

एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगन्धिना ॥
वासितं तद्वनं सर्वं सुपुत्रेण कुलं यथा ॥ २ ॥

भावार्थ–पुष्पित (फूले हुए) और सुगन्धिसे युक्त एकही उत्तम वृक्षसे सब वन सुगन्धित हो जाता है. जैसे–सत्पुत्रसे कुल सुशोभित हो जाता है ॥ २ ॥

किं जातैर्बहुभिः पुत्रैः शोकसन्तापकारकैः ? ॥
वरमेकः कुलालम्बी यत्र विश्राम्यते कुलम् ॥ ३ ॥

भावार्थ–शोक और सन्ताप करनेवाले बहुतसे पुत्रोंके उत्पन्न होनेसे क्या ? कुलका आश्रयदाता एकही सत्पुत्र श्रेष्ठ होता है. जिसके आश्रयसे कुल विश्राम पाता है ॥ ३ ॥

विद्याविहीना बहवोऽपि पुत्राः
कल्पायुषः सन्तु पितुः किमेतैः ? ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

क्षयिष्णुना[1] वापि कलावता[2] वा
तस्य प्रमोदः शशिनेव[3] सिन्धोः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–विद्याहीन (मूर्ख) और कल्पपर्यन्त आयुवाले (चिरंजीवी) बहुतसेभी पुत्र क्यों न हों परन्तु पिताको इन पुत्रोंसे क्या आनन्द प्राप्त हो सकता है? क्षयशील अथवा कलापूर्ण चन्द्रसेही उस समुद्रको आनन्द प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

पात्रं न तापयति नैव मलं प्रसूते
स्नेहं न संहरति नैव गुणान्क्षिणोति ॥
द्रव्यावसानसमये चलतां न धत्ते
सत्पुत्र एष कुलसद्मनि[4] कोऽपि दीपः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–पात्रको तापयुक्त नहीं करता अर्थात् सज्जनको नहीं सताता, मनमें ग्लानिको उत्पन्न नहीं होने देता, स्नेहको दूर नहीं करता और गुणोंको नष्ट नहीं करता. तथा धन न रहनेके समय चंचलताको धारण नहीं करता है ऐसा सत्पुत्र, कुलरूपी गृहमें कोईही दीपक होता है ॥ ५ ॥

कुपुत्रनिन्दा।

एकेन शुष्कवृक्षेण दह्यमानेन वह्निना ॥
दह्यते तद्वनं सर्वं दुष्पुत्रेण कुलं यथा ॥ १ ॥

भाषार्थ–अग्निद्वारा एकही सूखे वृक्षके जलनेसे सब वन दग्ध हो जाता है. जैसे, कुपुत्रसे कुल कलंकित होजाता है ॥ १ ॥

---

१ क्षयशीलेन । २ कलापूर्णेन । ३ चन्द्रेण ४ कुलमेव सद्म गृहं तस्मिन् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

किं तेन जातु जातेन मातृयौवनहारिणा ? ॥
आरोहति न यः स्वस्य वंशस्याग्रे ध्वजो यथा ॥ २ ॥

भाषार्थ–माताके यौवनको हरनेवाले उस पुत्रके उत्पन्न होनेसे क्या प्रयोजन ? जो अपने वंशके अग्रभागमें ध्वजाके समान नहीं फहराता है ॥ २ ॥

अविनीतः सुतो जातः कथं न दहनात्मकः ? ॥
विनीतस्तु सुतो जातः कथं न पुरुषोत्तमः ? ॥ ३ ॥

भाषार्थ–यदि पुत्र अशिक्षित हुआ तो वह अग्निस्वरूप क्यों नहीं है और यदि पुत्र शिक्षित हुआ तो वह पुरुषोत्तम (श्रेष्ठ पुरुष) क्यों नहीं ? ॥ ३ ॥

निरुत्साहं निरानन्दं निर्वीर्यमरिनन्दनम् ।
मास्म सीमन्तिनी काचित् जनयेत्पुत्रमीदृशम् ॥ ४ ॥

भाषार्थ–निरुत्साह (उत्साहरहित), निरानन्द (आनन्दरहित) निर्वीर्य (निर्बल), अरिनन्दन (शत्रुको आनन्द देनेवाला) ऐसे पुत्रको कोईभी स्त्री उत्पन्न न करै ॥ ४ ॥

यदि पुत्रः कुपुत्रः स्याद्व्यर्थो हि धनसञ्चयः ।
यदि पुत्रः सुपुत्रः स्याद्व्यर्थो हि धनसञ्चयः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–यदि पुत्र कुपुत्र होवै तो धनका संचय (इकट्ठा करना) व्यर्थही है और यदि पुत्र सुपुत्र है तोभी धनसंचय करना व्यर्थ है ॥५॥

यस्य पुत्रो न वै विद्वान् न शूरो न च धार्मिकः ॥
अप्रकाशं कुलं तस्य नष्टचन्द्रेव शर्वरी ॥ ६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जिसका पुत्र न विद्वान् है, न शूर है, न धार्मिक है उसका कुल नष्टचन्द्रमावाली अर्थात् अमावास्याकी रात्रिके समान अप्रकाश (प्रकाशरहित) अर्थात् अन्धकारमय है ॥ ६ ॥

अजातमृतमूर्खेभ्यो मृताजातौ सुतौ वरौ ॥
यस्तावदल्पदुःखाय यावज्जीवं जडो दहेत् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–अजात अर्थात् जो उत्पन्नही नहीं हुआ और मृत अर्थात् जो उत्पन्न होकर मर गया, तथा मूर्ख इन तीन प्रकारके पुत्रोंमेंसे अजात और मृत ये दोनों पुत्र श्रेष्ठ हैं. क्योंकि–अजात और मृत ये दोनों थोडे दुःखके निमित्त हैं. अर्थात्, इनसे थोडेही दिन दुःख रहता है. परन्तु जड़ (मूर्ख) पुत्र जीवनपर्यन्त जलाया करता है ॥ ७ ॥

कोटरान्तःस्थितो वह्निस्तरुमेकं दहेत्खलु ॥
कुपुत्रस्तु कुले जातः स्वकुलं नाशयत्यहो ! ॥ ८ ॥

भाषार्थ–कोटर (वृक्षकी खोह) में स्थित अग्नि केवल उस एकही वृक्षको भस्म करै है. अहो ! खेद है कि–कुपुत्रसे कलह होनेपर वह अपने कुलको नाश कर देता है ॥ ८ ॥

पित्रोर्नैव वचः शृणोति दिवसत्यागे व्रजत्यालयं
यान्तीभिर्युवतीभिरध्वनि मुहुः कौतूहलं विन्दति ॥
बन्धूनामुपदेशवाचि वदति क्रोधैकतालं वचः ।
साधून्निन्दति दुर्जनं च मनुते मित्रं कुपुत्रो जनः ॥ ९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–कुपुत्र अपने मातापिताका वचन नहीं सुनता है अर्थात्, मातापिताकी आज्ञाको नहीं मानता है, दिन व्यतीत हो जानेपर संध्यासमय घरपर आता है, मार्गमें जाती हुई स्त्रियोंसे वारंवार हँसी खेलकी बात करता है, बन्धुजनोंके उपदेशवचन (शिक्षा) सुनकर क्रोधसे तानोंके वचन कहने लगता है और साधुजनोंकी निन्दा करता है तथा दुर्जनोंको मित्र मानता है. ऐसा कुपुत्र जन होता है ॥ ९ ॥

वरं गर्भस्रावो वरमपि च नैवाभिगमनं ।
वरं जातः प्रेतो वरमपि च कन्यैव जनिता ॥
वरं वन्ध्या भार्य्या वरमपि च गर्भेषु वसति- ।
र्न चाविद्वान् रूपद्रविणगुणयुक्तोऽपि तनयः ॥ १० ॥

भाषार्थ–गर्भस्राव होना अर्थात् गर्भ गिर जाना अच्छा है और स्त्रीसे सम्भोग न करना अच्छा है. तथा पुत्र उत्पन्न होकर मर जाना अच्छा है, किंवा कन्याही उत्पन्न होना अच्छा है, यद्वा स्त्री वन्ध्या रहे तो भी अच्छा है, अथवा गर्भमें स्थित रहे तोभी अच्छा है. परन्तु रूप, धन और अनेक सेवक इनसे युक्त परन्तु अविद्वान्, ऐसा पुत्र अच्छा नहीं ॥ १० ॥

दैववर्णन।

यथा धेनुसहस्रेषु वत्सो विन्दति मातरम् ॥
तथा पूर्वकृतं कर्म कर्तारमनुगच्छति ॥ १ ॥

भाषार्थ–जैसे हजारों गौओंमें बछरा अपनी माताको प्राप्त होता

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

है अर्थात् अपनी माताको ढूँडकर उसके समीप दौड जाता है वैसेही पूर्वकृतकर्म कर्ताके पीछे जाता है ॥ १ ॥

तादृशी जायते बुद्धिर्व्यवसायोऽपि तादृशः ॥
सहायास्तादृशा एव यादृशी भवितव्यता ॥ २ ॥

भाषार्थ–वैसीही बुद्धि होती है और उपायभी वैसाही होता है और सहायकभी वैसेही होते हैं, जैसी भवितव्यता होती है ॥ २ ॥

नहि भवति यन्न भाव्यं भवति च भाव्यं विनापि यत्नेन ॥
करतलगतमपि नश्यति यस्य हि भवितव्यता नास्ति ।३।

भाषार्थ–जो होनहार नहीं है वह नहीं होता है और जो होनहार है वह विना यत्न किये होता है. जिसका जो कार्य होनहार नहीं है उसका–वह यदि हाथमें आया हो तोभी–नाश होजाता है ॥ ३ ॥

आरोहतु गिरिशिखरं तरतु समुद्रं प्रयातु पातालम् ॥
विधिलिखिताक्षरमालं फलति कपालं न भूपालः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–चाहे पर्वतकी चोटीपर चढ जाओ, समुद्रको तर जाओ, पातालको चले जाओ परन्तु विधिने जो अक्षर कपालपर लिख दिये हैं वे अवश्य अपना फल दिखाते हैं. राजा होनेपरभी निष्फल नहीं होते हैं ॥ ४ ॥

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता
परो ददातीति कुबुद्धिरेषा ॥
अहं करोमीति वृथाभिमानः
स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–सुखदुःखका दाता कोईभी नहीं है. "दूसरा देता है" ऐसा विचार करना यह कुबुद्धि है. "मैं करता हूं" यह वृथा अभिमान है. क्योंकि संसार अपने कर्मसूत्रमें बंधा हुआ है ॥ ५ ॥

यः सुन्दरस्तद्वनिता कुरूपा या सुन्दरी सा पतिरूपहीना॥
यत्रोभय तत्र दरिद्रता च विधेर्विचित्राणि विचेष्टितानि ॥६॥

भाषार्थ–जो पुरुष सुन्दर होता है उसकी स्त्री कुरूपा होती है, और जो स्त्री सुन्दरी होती है उसका पति कुरूप होता है. जहां स्त्री-पुरुष दोनौं सुन्दर होते हैं वहां निर्धनता होती है. इसतरह विधिकी विचित्र चेष्टा है. अर्थात्, विधिकी गति अद्भुत है ॥ ६ ॥

जरावर्णन ।

कृतान्तस्य दूती जरा कर्णमूले
समागत्य वक्तीति लोकाः श्रृणुध्वम् ॥
परस्त्रीपरद्रव्यवाञ्छां त्यजध्वं
भजध्वं रमानाथपादारविन्दम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–कृतान्त (मृत्यु) की दूती जरा, कर्णमूलमें आकर यह कहती है कि–लोगौ ! सुनो, पराई स्त्री और पराये धनकी इच्छाको त्याग दो और कमलापति भगवान्के चरणारविन्दका भजन करो. तात्पर्य यह कि–कनपटीके समीपके केश सबसे पहले श्वेत हो जाते हैं यही जराका संदेश है ॥ १ ॥

गात्रं सङ्कुचितं गतिर्विगलिता भ्रष्टा च दन्तावलि-
र्दृष्टिर्नश्यति वर्धते बधिरता वक्रं च लालायते ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

वाक्यं नाद्रियते च बान्धवजनैर्भार्या न शुश्रूषते ॥
हा कष्टं ! पुरुषस्य जीर्णवयसः पुत्रोऽप्यमित्रायते ॥२॥

भाषार्थ–गात्र संकुचित हो जाते हैं अर्थात्, अंग सिकुड जाते हैं, गति विगलित हो जाती है अर्थात् चलनेका सामर्थ्य नहीं रहता है, दन्तावलि (दांतोंकी पंक्ति) भ्रष्ट हो जाती है, दृष्टिका विनाश हो जाता है अर्थात् नेत्रोंसे दिखाई नहीं पडता है, बधिरताकी वृद्धि हो जाती है अर्थात् कानोंसे सुनाई नहीं देता है, मुख झूरा हो जाता है और बन्धुजनोंकरके वाक्यका निरादर किया जाता है अर्थात्, भाई भतीजे कोईभी बातका आदर नहीं करते हैं, स्त्री सेवा नहीं करती है. हा कष्ट! बडे खेदकी बात है कि–पुरुषकी आयु क्षीण हो जानेपर अर्थात् बूढी अवस्था (बुढापे) में पुत्रभी शत्रुके समान आचरण (वर्ताव) करता है ॥ २ ॥

क्षुधावर्णन ।

वासुदेव जरा कष्टं कष्टं निर्धनजीवनम् ॥
पुत्रशोको महाकष्टं कष्टात्कष्टतरं क्षुधा ॥ १ ॥

भाषार्थ–वासुदेव कहते हैं कि जरा (वृद्धावस्था) कष्ट देनेवाली होती है और निर्धनका जीवनभी कष्टसेही व्यतीत होता है. पुत्रशोकभी महाकष्ट देनेवाला होता है परंतु कष्टसे अधिक कष्ट देनेवाली क्षुधा है १

नास्ति क्षुधासमं दुःखं नास्ति रोगः क्षुधासमः ॥
नास्त्याहारसमं सौख्यं नास्ति क्रोधसमो रिपुः ॥ २ ॥

---

1 शत्रुवदाचरति. ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-क्षुधा (भूँख) के समान दुःख नहीं है, क्षुधाके समान कोई रोग नहीं है, आहार (भोजन) के समान सुख नहीं है और क्रोधके समान कोई शत्रु नहीं है ॥ २ ॥

शय्या वस्त्रं चन्दनं चारु हास्यं
वीणा वाणी दर्शनीया च नारी ॥
न भ्राजन्ते क्षुत्पिपासातुराणां
सर्वारम्भास्तण्डुलप्रस्थमात्रम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ-शय्या, वस्त्र, चन्दन, हास्य, विलास, वीणा, वाणी, सुन्दरी स्त्री ये सब क्षुधा और पिपासासे आतुर पुरुषोंको अच्छे नहीं लगते हैं. प्रस्थमात्र चावलसे सब आरम्भ होता है अर्थात् जब क्षुधा शान्त होती है तब सब अच्छा लगता है ॥ ३ ॥

भिक्षुकवर्णन ।

तितिक्षाज्ञानवैराग्यसमाधिगुणवर्जितम् ॥
भिक्षामात्रेण जीवन्ति ते नराः पशुवत्किल ॥ १ ॥

भाषार्थ-जो तप, ज्ञान और वैराग्य इन गुणोंसे रहित होकर भिक्षामात्रसे अपना जीवन बिताते हैं वे मनुष्य पशुके समान हैं ॥ १ ॥

एक विद्वान् साधुने भिक्षावृत्तिका अनुभव करके यह वचन कहाहै-

आश्वाद्य स्वयमेव वच्मि महतीर्मर्मच्छिदो यातनाः ।
माभूत् कस्यचिदप्ययं परिभवो याञ्चेति संसारिणः ॥
पश्य भ्रातरियं हि गौरवहरा धिक्कारकेलिस्थली ।
मानम्लानमयीं गुणव्यतिकरं प्रागल्भ्यगर्वच्युतिः ॥ २ ॥

---

१ सुन्दरी इति पाठान्तरम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–मैंने स्वयं इस मांगनेकी पीडाको भोगकर इसके स्वादका अनुभव लिया है, इसकारण कहता हूं कि–हे भगवन् ! इस संसारमें किसीकोभी माँगनेकी पीडा न प्राप्त हो. अर्थात्, कोई किसीसे भिक्षा न माँगै. देखो, भाइयो ! यह भिक्षावृत्ति भिक्षुक और दाता इन दोनोंके हृदयको छेदनेवाली महादुःखदायिनी है. यह वृत्ति बडप्पनको दूर करनेवाली और धिक्कारकी खान है. तथा मानको मलीन करनेके लिये स्याहीके तुल्य है. यह माँगना गुणोंको छिपानेवाला और उपदेष्टाओंके गर्वको गिरानेवाला है ॥ २ ॥

परगृहवासनिन्दा ।

विना कार्येण ये मूढा गच्छन्ति परमन्दिरम् ॥
अवश्यं लघुतां यान्ति कृष्णपक्षे यथा शशी ॥ १ ॥

भाषार्थ–जो मूढजन विना किसी कार्यके पराये घर जाते हैं वे अवश्य लघुताको प्राप्त होते हैं. जैसे, कृष्णपक्षमें चन्द्रमा ॥ १ ॥

कष्टं खलु मूर्खत्वं कष्टं खलु यौवनेषु दारिद्र्यम् ॥
कष्टादपि कष्टतरं परगृहवासः परान्नं च ॥ २ ॥

भाषार्थ–मूर्खता कष्ट देनेवाली होती है और युवावस्थामें दरिद्रता (निर्धनता) भी कष्ट देनेवाली होती है. परंतु उस कष्टसेभी अधिक कष्ट, पराये घरमें वास और परान्नभोजन इनसे होता है ॥ २ ॥

उदरपूरणदूषण ।

किमकारि न कार्पण्यं ? कस्यालंघि न देहली ? ॥
अस्य पापोदरस्यार्थे किमनाटि न नाटकम् ? ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–इस पापीउदर (पेट) के निमित्त क्या कृपणता नहीं करी ? किसकी देहली नहीं लाँघी और कौन नाटक नहीं खेला अर्थात् कौन नाच नहीं नाचा ? ॥ १ ॥

अस्य दग्धोदरस्यार्थे किं न कुर्वन्ति पण्डिताः ? ॥
वानरीमिव वाग्देवीं नर्तयन्ति गृहे गृहे ॥ २ ॥

भाषार्थ–इस दग्ध (जले) उदरके निमित्त पंडित लोग क्या नहीं करते हैं ? जो वाग्देवी (सरस्वती अर्थात् पूजनीय वाणी) को वानरी-(बन्दरिया) के समान घरघरमें नचाते हैं ॥ २ ॥

इयमुदरदरी दुरन्तपूरा
यदि न भवेदभिमानभङ्गभूमिः ॥
क्षणमपि न सहे भवादृशानां
कुटिलकटाक्षनिरीक्षणं नृपाणाम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–यदि दुरन्तपूरा (कठिनतासे पूर्ण होनेवाली), अभिमानको भंग करनेवाली भूमि ऐसी यह उदरदरी (पेटरूपीगुफा) न होती, तो, आपसरीखे राजाओंके कुटिलकटाक्षनिरीक्षणको अर्थात् टेढ़ी निगाहसे देखनेको क्षणभरभी सहन नहीं करता होता ॥ ३ ॥

ऋणनिन्दा।

न विषं विषमित्याहुर्ब्रह्मस्वं विषमुच्यते ॥
विषमेकाकिनं हन्ति ब्रह्मस्वं पुत्रपौत्रकम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–विषको विष नहीं कहा है; ब्रह्मस्व (ऋण) को विष कहा है. क्योंकि, विष केवल खानेवालेकोही मारता है, परन्तु ब्रह्मस्व (ऋण) पुत्रपौत्रतकको हानि पहुँचाता है ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

व्यापारवर्णन।

आसीत्सत्ययुगे बलिस्तदनु च त्रेतायुगे भार्गवो।
रामः सत्यपराक्रमोऽथ भगवान् धर्मस्तथा द्वापरे॥
दाता कोऽपि न चास्ति संप्रति कलौ जीवन्ति केनार्थिनः ?।
चेत्येवं कृतनिश्चयेन विधिना व्यापारिणो निर्मिताः ॥१॥

भावार्थ–"सत्ययुगमें राजा बलि हुये, तिस पीछे त्रेतायुगमें सत्यपराक्रमी श्रीपरशुरामजी हुये, अनन्तर द्वापरमें धर्म भगवान् श्रीयुधिष्ठिर हुये. कलियुगमें कोईभी दानी इस समय नहीं है. याचकजन किसके आश्रयसे अपना जीवन व्यतीत करैं" इसप्रकार निश्चय करके विधिनाने व्यापारियोंको रचा है॥ १॥

प्रवासवर्णन।

व्यापारान्तरमुत्सृज्य वीक्ष्यमाणो वधूमुखम्॥
यो गृहेष्वेव निद्राति दरिद्राति स दुर्मतिः॥ १॥

भावार्थ–देशान्तरमें व्यापार करना त्यागकर जो पुरुष स्त्रीका मुख देखता हुआ घरमेंही पडा सोता रहता है वह दुर्बुद्धि सदा दरिद्री रहता है॥ १॥

यो न संचरते देशान् यो न सेवेत पंडितान्॥
तस्य संकुचिता बुद्धिर्घृतबिन्दुरिवाम्भसि॥ २॥

भावार्थ–जो पुरुष देशान्तरोंमें परिभ्रमण नहीं करता, और जो पण्डितोंकी सेवा नहीं करता, उसकी बुद्धि जलमें घृतबिन्दुकी नाईं संकुचित रहती है॥ २॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यस्तु संचरते देशान् यस्तु सेवेत पण्डितान्॥
तस्य विस्तारिता बुद्धिस्तैलबिन्दुरिवाम्भसि ॥ ३ ॥

भाषार्थ–जो पुरुष देशदेशमें विचरता है और जो पण्डितोंकी सेवा करता है, उसकी बुद्धि जलमें तेलके बूंदके समान विस्तृत हो जाती है अर्थात् फैल जाती है ॥ ३ ॥

तीर्थानामवलोकनं परिचयः सर्वत्र वित्तार्जनं।
नानाश्चर्यनिरीक्षणं चतुरता बुद्धेः प्रशस्ता गिरः॥
एते सन्ति गुणाः प्रवासविषये दोषोऽस्ति चैको महान्।
यन्मुग्धामधुराधराधरसुधापानं विना स्थीयते॥ ४॥

भाषार्थ–तीर्थोंका दर्शन, सर्वत्र परिचय अर्थात् अनेक पुरुषोंसे पहिचान, वित्तार्जन अर्थात् धनोपार्जन, अनेक प्रकारके आश्चर्यनिरीक्षण, बुद्धिकी चतुरता, वाणीकी विस्तृतता, परदेशभ्रमण करनेमें इतने गुण हैं, परन्तु एक महान् दोष है. वह यह कि–जो मधुरभाषिणी स्त्रीके अधरामृतपानके विना रहना पडता है ॥ ४ ॥

सेवकनिन्दा।

वरं[1] वनं वरं भैक्ष्यं[2] वरं भारोपजीवनम्[3]॥
पुंसां विवेकहीनानां सेवया न धनार्जनम्॥ १॥

भाषार्थ–वनमें रहना अच्छा है, भिक्षा माँगकर निर्वाह करना अच्छा है, बोझ उठाकर जीवन व्यतीत करना अच्छा है, परन्तु अविवेकी पुरुषोंकी सेवासे धनोपार्जन करना नहीं अच्छा है॥ १॥

सेवा श्ववृत्तिर्यैरुक्ता न तैः सम्यगुदाहृतम्॥
स्वच्छन्दचारी कुत्र श्वा? विक्रीतासुः क्व सेवकः? ॥२॥

---

१ श्रेष्ठम्। २ भिक्षा। ३ भारवाहकत्वेनोपजीवनम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जिन्होंने सेवाको 'कुत्ताकी वृत्ति' कहा है उन्होंने ठीक नहीं कहा. भला कहाँ स्वच्छन्दचारी (इच्छानुसार विचरनेवाला) कुत्ता और कहाँ विके प्राणोंवाला सेवक? ॥ २ ॥

स्वाभिप्रायपरोक्षस्य परचित्तानुवर्तिनः ॥
स्वयं विक्रीतदेहस्य सेवकस्य कुतः सुखम् ? ॥ ३ ॥

भाषार्थ–अपने अभिप्रायके अनुसार न रहनेवाले, दूसरेके चित्तके अनुसार वर्ताव करनेवाले तथा स्वयं विक्रीतदेह अर्थात् विके हुये शरीरवाले सेवकको सुख कहाँ प्राप्त हो सकता है? ॥ ३ ॥

आहारे वडवानलश्च शयने यः कुम्भकर्णायते ।
संदेशे बधिरः पलायनविधौ सिंहः शृगालो रणे ॥
अन्धो वस्तुनिरीक्षणेऽथ गमने खञ्जः पटुः क्रन्दने ।
भाग्येनैव हि लभ्यते पुनरसौ सर्वोत्तमः सेवकः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–जो आहार (भोजन करने) में वडवानल, शयन करनेमें कुम्भकर्ण, संदेश सुननेमें बधिर, भागनेमें सिंह और रण (युद्ध) में गीदड, वस्तुओंके देखनेमें अन्धा तथा गमनकालमें खंज (चरणरोगी) रोनेमें चतुर ऐसा सर्वोत्तम सेवक भाग्यसेही प्राप्त होता है ! ! ॥ ४ ॥

जीवितसाफल्य ।

वाणी रसवती यस्य भार्या पुत्रवती सती ॥
लक्ष्मीर्दानवती यस्य सफलं तस्य जीवितम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–जिसकी वाणी रसवती हो और स्त्री पुत्रवती व पतिव्रता हो, तथा जिसकी लक्ष्मी दानवती हो उसका जीवन सफल है ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

चलं वित्तं चलं चित्तं चले जीवितयौवने ॥
चलाचलमिदं सर्वं कीर्तिर्यस्य स जीवति ॥ २ ॥

भाषार्थ-वित्त (धन) चल है, चित्त (मन) चंचल है, जीवन और यौवनभी चल हैं अर्थात् स्थिर नहीं हैं, यह सब जगत् निरन्तर चल है. जिसकी कीर्ति स्थिर है वही जीता है ॥ २ ॥

यस्य जीवन्ति धर्मेण पुत्रा मित्राणि बांधवाः ॥
सफलं जीवितं तस्य ह्यात्मार्थे को न जीवति ? ॥ ३ ॥

भाषार्थ-जिसके धर्मसे पुत्र, मित्र और बांधव लोग जीते हैं उसीका जीवन सफल है. अपने निमित्त कौन नहीं जीता है ? ॥ ३ ॥

यस्मिन् जीवति जीवन्ति बहवः स तु जीवतु ॥
काकोऽपि किं न कुरुते चंच्वा स्वोदरपूरणम् ? ॥ ४ ॥

भाषार्थ-जिसके जीते हुये बहुत जीते हैं वह जीवित रहै, अर्थात् उसीका जीना सफल है कि-जिसके जीवनमें बहुतोंका जीवन है. अन्यथा (नहीं तो) कौआभी क्या अपनी चोंचसे अपना उदर (पेट) नहीं भर लेता है ? ॥ ४ ॥

यस्य मित्राणि मित्राणि शत्रवः शत्रवस्तथा ॥
अनुकम्प्योऽनुकम्प्यश्च स जातः स च जीवति ॥ ५ ॥

भाषार्थ-जिसके मित्रही मित्र हैं तथा जिसके शत्रुही शत्रु हैं, जिसके कृपापात्रही कृपापात्र (दया करनेवाले) हैं, वही पुरुष उत्पन्न हुआ और वही इस संसारमें जीता है. अर्थात्, उसीका जीवन सफल है ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स जीवति यशो यस्य कीर्तिर्यस्य स जीवति ॥
अयशोऽकीर्तिसंयुक्तो जीवन्नपि मृतोपमः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–जिसका यश है वह जीता है. जिसकी कीर्ति है वह जीता है. अयश और अकीर्ति इन्होंसे युक्त जीता हुआभी मरे हुयेके समान है ॥ ६ ॥

स जीवति गुणा यस्य धर्मो यस्य स जीवति ॥
गुणधर्मविहीनो यो निष्फलं तस्य जीवितम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–जिसके गुण प्रसिद्ध हैं और जिसका आचरण धर्मयुक्त होता है वही इस संसारमें जीता है. जो गुण और धर्मसे विहीन है अर्थात् जिसमें गुण नहीं और धर्मभी नहीं, उसका जीना निष्फल है ॥ ७ ॥

रविश्चन्द्रो घना वृक्षा नदी गावश्च सज्जनाः ॥
एते परोपकाराय युगे दैवेन निर्मिताः ॥ ८ ॥

भाषार्थ–सूर्य, चन्द्र, मेघ, वृक्ष, नदियाँ, गौवें, सज्जन आदि सब परमात्माने युगयुगमें परोपकारनिमित्त निर्माण किये हैं अर्थात् ये सब परोपकारार्थ रचे हैं ॥ ८ ॥

एतद्धि जन्मसाफल्यं यदनायत्तवृत्तिता ॥
ये पराधीनतां यातास्ते वै जीवन्ति के मृताः ? ॥ ९ ॥

भाषार्थ–पराधीनवृत्ति न होकर जिसका जीना है यही जीवनकी सफलता है और जो पराधीनताको प्राप्त हुये हैं यदि वे जीते हैं तो मरे हुये कौन हैं ? अर्थात् जो पराधीन हैं वेही मरे हुये हैं ॥ ९ ॥

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः परोपकाराय वहन्ति नद्यः ॥
परोपकाराय दुहन्ति गावः परोपकारार्थमिदं शरीरम् ॥ १० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–परोपकारनिमित्त वृक्ष फलते हैं, परोपकारनिमित्त नदियाँ बहती हैं, परोपकारनिमित्त गौवें दुग्धप्रदान करती हैं, परोपकारनिमित्तही यह शरीर है॥ १०॥

पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः
स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः॥
नादन्ति सस्यं खलु वारिवाहाः
परोपकाराय सतां विभूतयः॥ ११॥

भाषार्थ–नदियाँ अपना जल स्वयं नहीं पीती हैं और वृक्ष अपने फल आप नहीं खाते हैं, तथा मेघभी अन्नको उत्पन्न करके स्वयं नहीं खाते हैं; किन्तु सज्जनोंकी सम्पत्ति परोपकारार्थही है॥ ११॥

भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमै-
र्नवांबुभिर्भूरिविलंबिनो घनाः॥
अनुद्धता सत्पुरुषा समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥ १२॥

भाषार्थ–फल आनेसे वृक्ष नम्र हो जाते हैं अर्थात् झुक जाते हैं और मेघ नवीन जलसे नीचेको झुककर आ जाते हैं, तथा सत्पुरुष सम्पत्ति होनेसे नम्रहि हो जाते हैं; उद्धत नहीं होते. किन्तु परोपकार करनेवाले पुरुषोंका यह स्वभावही है॥ १२॥

परोपकरणं येषां जागर्ति हृदये सताम्॥
विपदश्चैव नश्यन्ति सम्पदः स्युः पदे पदे॥ १३॥

भाषार्थ–जिन सज्जनोंके हृदयमें निरन्तर परोपकारबुद्धि जागृत

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

रहती है, उनकी सब विपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं और सम्पत्तियाँ पदपदमें प्राप्त होती हैं ॥ १३ ॥

स जातो येन जातेन याति वंशः समुन्नतिम् ॥
परिवर्तिनि संसारे मृतः को वा न जायते ? ॥१४॥

भाषार्थ-जिसके जन्म होनेसे वंश उन्नतिको प्राप्त होता है उसीका जन्म होना सफल है. नहीं तो इस असार संसारमें कौन नहीं मरता अथवा जन्म लेता है ? ॥ १४ ॥

यो नात्मजे न च गुरौ न च भृत्यवर्गे
दीने दयां न कुरुते न च बन्धुवर्गे ॥
किं तस्य जीवितफलं हि मनुष्यलोके ?
काकोऽपि जीवति चिराय बलिं च भुंक्ते १५

भाषार्थ-जो मनुष्य न अपने पुत्रमें, न गुरुमें, न सेवकजनोंमें और न दीनजनोंमें तथा न बन्धुजनोंमें दया करता है, उसके जीनेसे संसारमें क्या फल हुआ ? अर्थात् कुछ नहीं. क्योंकि-ऐसे कौआभी तो बहुत काल जीता और बलिभोजन करता है ॥ १५ ॥

कलिमहिमा।

परान्नेन मुखं दग्धं हस्तौ दग्धौ प्रतिग्रहात् ॥
परस्त्रीभिर्मनो दग्धं कुतः शापः कलौ युगे ? ॥१॥

भाषार्थ-पराये अन्नका भोजन करनेसे मुख दग्ध हो रहा है, दान लेनेसे दोनौं हाथ दग्ध हो रहे हैं, पराई स्त्रीके दर्शनसे मन दग्ध हो रहा है, तो कलियुगमें और अन्य कौनसा शाप है ? ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

राक्षसाः कलिमाश्रित्य जायन्ते ब्रह्मयोनिषु ॥
ब्राह्मणानेव बाधन्ते तत्रापि श्रोत्रियान्द्विजान् ॥ २ ॥

भाषार्थ–कलियुगमें राक्षस लोग, ब्राह्मणयोनिमें उत्पन्न होकर ब्राह्मणोंकोहि सताते हैं. वहाँभी विशेष करके वेदपढनेवाले ब्राह्मणोंको बहुत ॥ २ ॥

कुशलाः शब्दवार्तायां वृत्तिहीनाः सुरागिणः ॥
कलौ वेदान्तिनो भान्ति फाल्गुने बालका इव ॥ ३ ॥

भाषार्थ–शब्दवार्तामें कुशल अर्थात् बात करनेमें प्रवीण, वृत्तिहीन अर्थात् जीविकासे रहित और महारागी ऐसे वेदान्ती कलियुगमें, फाल्गुणमासके बालकोंकी नाईं प्रायः बहुत हैं ॥ ३ ॥

वागुच्चारोत्सवं मात्रं तत्क्रियां कर्तुमक्षमाः ॥
कलौ वेदान्तिनो भान्ति फाल्गुने बालका इव ॥ ४ ॥

भाषार्थ–वाणीसे उच्चारणमात्रमें कुशल; परंतु उसके अनुसार क्रिया करनेमें असमर्थ ऐसे वेदान्ती प्रायः कलियुगमें फाल्गुनमासके बालकोंकी नाईं बहुत हैं ॥ ४ ॥

सीदन्ति सन्तो विलसन्त्यसन्तः पुत्रा म्रियन्ते जनकश्चिरायुः।
परेषु मैत्री स्वजनेषु वैरं पश्यन्तु लोकाः ! कलिकौतुकानि५

भाषार्थ–सज्जन दुःख पाते हैं, दुर्जन आनन्द करते हैं, पुत्र मर जाते हैं, पिताकी आयु बहुत हो जाती है, दूसरोंसे मित्रता होती है और अपने जनोंसे वैर हो जाता है. हे लोगो ! आपलोग कलियुगके ये कौतुक देखैं ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

निर्वीर्या पृथिवी निरौषधिरसा नीचा महत्वं गताः ।
भूपाला निजधर्मकर्मरहिता विप्राः कुमार्गे रताः ॥
भार्या भर्तृविरोधिनी पररता पुत्राः पितुर्द्वेषिणो ।
हा कष्टं! खलु वर्तते कलियुगे धन्या नरा ये मृताः॥६॥

भाषार्थ–पृथ्वी निर्वीर्य हुई, औषधियोंमें रस नहीं रहा, राजा लोग, अपने प्रजापालनादि धर्मकर्मसे रहित हुये, ब्राह्मणलोग कुमार्गगामी हुये, भार्या भर्तासे विरोध करनेवाली और दूसरेसे प्रीति करनेवाली हुई, पुत्र पितासे द्वेष माननेवाले हुये. हा कष्ट! कलियुगमें जो लोग मृत्युको प्राप्त हो गये हैं वे धन्य हैं ॥ ६ ॥

सन्तः क्वापि न सन्ति सन्ति यदि वा दुःखेन जीवन्ति ते ।
विद्वांसोऽपि न सन्ति सन्ति यदि वा मात्सर्ययुक्ताश्च ते ॥
राजानोऽपि न सन्ति सन्ति यदि वा लोभाद्धनग्राहिणो ।
दातारोऽपि न सन्ति सन्ति यदि वा सेवानुकुलाः कलौ॥७॥

भाषार्थ–कलियुगमें कहींभी सन्त नहीं हैं, यदि वा हैं वे दुःखसे जीवन व्यतीत कर रहे हैं. विद्वान्भी नहीं हैं, यदि वा हैं वे मात्सर्ययुक्त (ईर्षालु) हैं. राजाभी नहीं हैं, यदि वा हैं वे लोभकरके धनग्रहण करनेवाले हैं. दातालोगभी नहीं है, यदि वा हैं वे सेवानुकूल हैं अर्थात् सेवा कराकर कुछ देनेवाले हैं ॥ ७ ॥

मद्यपानगर्हण ।

मद्यपस्य कुतः सत्यं ? दया मांसाशिनः कुतः ? ॥
कामिनश्च कुतो विद्या ? निर्धनस्य कुतः सुखम् ? ॥१॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–मद्यपान करनेवालेको सत्य कहां? मांसाहारीको दया कहां? कामीपुरुषको विद्या कहां? निर्धनपुरुषको सुख कहां है? ॥ १ ॥

एकतश्चतुरो वेदा ब्रह्मचर्यं तथैकतः ॥
एकतः सर्वपापानि मद्यपानं तथैकतः ॥ २ ॥

भाषार्थ–एक ओर चारौ वेद और एक ओर ब्रह्मचर्य, और एक ओर सब पाप और एक ओर मद्यपान ॥ २ ॥

वैकल्यं[1] धरणीपातमयथोचितजल्पनम्[2] ॥
संनिपातस्य[3] चिंह्नानि[4] मद्यं सर्वाणि दर्शयेत् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–विकलता, पृथ्वीपर गिर पडना, अनुचित वार्तालाप इत्यादि सन्निपातके सब लक्षण मद्य दिखाता है ॥ ३ ॥

मत्तो हिनस्ति सर्वं मिथ्या प्रलपति हि विकलया बुद्ध्या ॥
मातरमपि कामयते! सावज्ञं मद्यपानमत्तः सन् ॥ ४ ॥

भाषार्थ–मत्त (मतवाला) पुरुष अपना सर्वस्व नष्ट कर लेता है और विकलबुद्धिसे प्रलाप करता है. मद्यपान करनेसे मत्त हुआ पुरुष अवज्ञाके साथ माताकीभी इच्छा करता है ॥ ४ ॥

चित्ते भ्रान्तिर्जायते मद्यपानात्
भ्रान्ते चित्ते पापचर्यामुपैति ।
पापं कृत्वा दुर्गतिं यान्ति मूढा-
स्तस्मान्मद्यं नैव पेयं न पेयम् ॥ ५ ॥

१ विकलत्वम् । २ अयुक्तप्रलापः । ३ त्रिदोषस्य । ४ लक्षणानि ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–मदिरा पीनेसे चित्तमें भ्रान्ति होती है, चित्तमें भ्रान्ति होनेसे मनुष्य पापाचरण करनेवाला होता है और पापाचरणकरके दुर्गतिको प्राप्त होता है. इसकारण, मदिरा नहीं पीना चाहिये; नहीं पीना चाहिये ॥ ९ ॥

तमाखुवर्णन।

तमाखुपत्रं राजेन्द्र ! भज मांज्ञानदायकम् ॥
तमाखुपत्रं राजेन्द्र ! भज माऽज्ञानदायकम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–मूषकवाहन गणेशजीका भजन कर. क्योंकि वे श्रीलक्ष्मी और ज्ञानके देनेवाले हैं और हे राजेन्द्र ! तमाखू मत खा. क्योंकि वह अज्ञानको बढानेवाली है ॥ १ ॥

बिडौजाः पुरा पृष्टवान्पद्मयोनिं
धरित्रीतले सारभूतं किमस्ति ?।
चतुर्भिर्मुखैरित्यवोचद्विरिंचि-
स्तमाखुस्तमाखुस्तमाखुस्तमाखुः ॥ २ ॥

भाषार्थ–इन्द्रने पूर्वसमय ब्रह्माजीसे पूछा कि–'पृथ्वीतलपर सारभूत क्या है ?' तब ब्रह्माजीने चारो मुखोंसे उत्तर दिया कि–'तमाखू तमाखू तमाखू तमाखू' ॥ २ ॥

न स्वादु नौषधमिदं न च वा सुगन्धि।
नाक्षिप्रियं किमपि शुष्कतमाखुचूर्णम् ॥

---

१ आखुर्मूषिकः पत्रं वाहनं यस्य। २ लक्ष्मीः। ३ इन्द्रः। ४ ब्रह्मदेवम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

किं चाक्षिरोगजनकं च तदस्य भोगे ।
बीजं नृणां न हि न हि व्यसनं विनान्यत् ॥ ३ ॥

भाषार्थ--न स्वादु है, न औषध है, न उसमें सुगन्धि है, न नेत्रों-को हित है, ऊलटा नेत्रोंमें रोगको उत्पन्न करता है. ऐसा होनेपरभी लोग जो इस तमाखूका खानेमें या सूंघनेमें उपयोग करते हैं इसका कारण विना व्यसन (लत) और अन्य कुछ नहीं है ॥ ३ ॥

श्रीकृष्णः पूतनायाः स्तनमलमपिबत्कालकूटेन पूर्णं ।
प्रस्कन्नं भूप्रदेशे किमपि च पिबतो यत्तदा तस्य वक्त्रात् ॥
तस्मादेषा तमाखुः सुरवरपरमोच्छिष्टमेतद्दुरापं
स्तुत्वा नत्वा मिलित्वा ह्यनिशमतिमुदा सेव्यते वैष्णवाग्र्यैः

भाषार्थ--श्रीकृष्णभगवान्ने पूतनाके स्तनमें लिपटे हुये कालकूट विषके मैलको चूसकर पृथ्वीपर थूक दिया. तो श्रीकृष्णजीके मुखसे निगलनेके कारण तमाखु नामसे प्रसिद्ध है, और देवदेवोत्तम हरि भगवान् पान करी, इससे इस दुर्लभ पदार्थको स्तुति कर नमस्कार कर मिलापयोग्य पदार्थ मानकर वैष्णवोंने सेवन किया ॥ ४ ॥

भ्रातः ! कस्त्वं ? तमाखुर्गमनमिहकुतो ? वारिधेः पूर्वपारा-
त्कस्यं त्वं दण्डधारी ? न हि तव विदितं ? श्रीकलेरेव राज्ञः॥
चातुर्वर्ण्यं विधात्रा विविधविरचितं ब्रह्मणा धर्महेतो-
रेकीकर्तुं बलात्तन्निखिलजगति रे ! शासनादागतोऽस्मि ५

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—हे भ्रातः ! तुम कौन हो ? तमाखु. कहांसे आये हो ? समुद्रके पूर्वपारसे. तुम किसके दण्डधारी (सिपाही) हो ? क्या तुमको विदित नहीं है ? श्रीकलिमहाराजके हम सिपाही हैं. ब्रह्माजीने चार वर्ण रचे धर्मकी वृद्धिके हेतु. परंतु मैं सबका धर्म बलात्कार-पूर्वक एकही करनेके निमित्त श्रीकलिमहाराजके आज्ञासे यहां आया हूं. रे लोगो ! इस बातको ध्यानमें रक्खो, मैं कलिमहाराजके आ-ज्ञाकी पालना कर रहा हूं ॥ ९ ॥

इतिश्रीमदयोध्यामण्डलान्तर्वर्ति लखीमपुरखीरीनिवासि
ज्योतिर्वित्पण्डितनारायणप्रसादमिश्रकृत
भाषार्थसमन्विते सुभाषितरत्नाकरे
प्रथमः प्रकाशः समाप्तः ॥ १ ॥

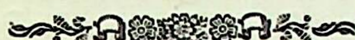
॥ शुभमस्तु ॥



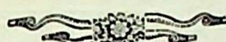
CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

॥ श्रीः ॥

॥ अथ सुभाषितरत्नाकरः ॥



॥ द्वितीयप्रकाशः ॥



राजसभावर्णन ।

विद्वांसः कवयो भट्टा गायकाः परिहासकाः ॥
इतिहासपुराणज्ञाः सभा सप्ताङ्गसंयुता ॥ १ ॥

भाषार्थ-विद्वान्, कवि, भट्ट, गन्धर्व, हँसानेवाले, इतिहासके ज्ञाता और पुराणके जाननेवाले इन सात अंगोंवाली सभा होती है ॥ १ ॥

सभाकल्पतरुं वन्दे वेदशाखोपशोभितम् ॥
शास्त्रपुष्पसमाकीर्णं विद्वद्भ्रमरमण्डितम् ॥ २ ॥

भाषार्थ-सभारूपी कल्पवृक्षको वन्दना करता हूं, जो वेदरूपशाखाओंकरके उपशोभित और शास्त्ररूप फूलोंकरके समाकीर्ण तथा विद्वानूरूप भ्रमरोंसे मंडित है ॥ २ ॥

अनेकविद्वज्जनरत्नपूर्णं वेदोदकन्यायतरङ्गरम्यम् ॥
अलङ्घनीयं गुरुतीर्थमेकं सभासमुद्रं शिरसा नमामि ॥३॥

भाषार्थ-अनेक विद्वानूरूप रत्नोंसे परिपूर्ण और वेदरूप जल तथा न्यायरूप सुंदर तरंग इनसे युक्त, अलंघनीय, एकही गुरुतीर्थ ऐसे सभारूपी समुद्रको शिरसे प्रणाम करता हूं ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गुरुरेकः कविरेकः सदसि मघोनः कलाधरोप्येकः ॥
अद्भुतमत्र सभायां गुरवः कवयः कलाधराः सर्वे ॥ ४ ॥

भाषार्थ–इन्द्रकी सभामें गुरु (बृहस्पति) एक है, कवि (शुक्र) एक है, कलाधर (चन्द्रमा) एक है; परन्तु यहां तो अद्भुत बात है कि–'इस सभामें सबही गुरु, कवि और कलाधर हैं ' ॥ ४ ॥

राजप्रशंसा ।

आर्तानामिह जन्तूनामार्तिच्छेदं करोति यः ॥
शंखचक्रगदाहीनो द्विभुजः परमेश्वरः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–जो पीडित जन्तुवोंकी पीडाको दूर करता है वह शंख, चक्र और गदा इनसे रहित दोभुजावाला परमेश्वर (विष्णु) है अर्थात् प्रजाकी संकटसे रक्षा करनेवाला विना शंख चक्र गदाके दोभुजावाला राजाही विष्णु है ॥ ५ ॥

उद्दण्डे भुजदण्डे तव कोदण्डे परिस्फुरति ॥
अरिमण्डलरविमण्डलरम्भाकुचमण्डलानि वेपन्ते ॥६॥

भाषार्थ–तुह्मारे उद्दंड भुजदंडमें जब कोदंड (धनुष) स्फुरित होता है, तब शत्रुमंडल, रविमण्डल और रंभाकुचमंडल कम्पायमान होने लगते हैं ॥ ६ ॥

कमलभूतनया वदनाम्बुजे वसतु ते कमला करपल्लवे ॥
वपुषि ते रमतां कमलाङ्गजः प्रतिदिनं हृदये कमलापतिः ।७।

भाषार्थ–सरस्वती, तुम्हारे मुखारविन्दमें और लक्ष्मी, तुम्हारे करपल्लवमें अर्थात् हथेलीपर निवास करै, तथा तुम्हारे शरीरमें आनन्द

---

१ बृहस्पतिः । २ शुक्रः । ३ सभायाम् । ४ इन्द्रस्य । ५ चन्द्रः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अथवा आरोग्यता रहे और प्रतिदिन तुम्हारे हृदयमें कमलापति (हरि भगवान्) वास करैं ॥ ७ ॥

चकोराणां चन्द्रः कुसुमसमयः काननभुवाम् ।
सरोजानां भानुः कुवलयकदम्बं मधुलिहाम् ॥
मयूराणां मेघः प्रथयति यथा चेतसि सुखम् ।
तथाऽस्माकं प्रीतिं जनयति तवालोकनमिदम् ॥८॥

भाषार्थ–जैसे चकोरोंको चन्द्रमा, वनजन्तुवोंको फूलनेका समय अर्थात् वसन्तऋतु, कमलोंको भानु, भ्रमरोंको फूला हुवा कदम्ब, मोरोंको मेघ सुखकारक होते हैं, तैसेही आपका दर्शन यह हमारे अंतःकरणमें प्रीतिको प्रगट करता है ॥ ८ ॥

यत्कीर्त्या धवलीकृतं त्रिभुवनं मूर्त्या जगन्मोहितं ।
भक्त्येशः परितोषितः सुचरितैरानन्दिताः सज्जनाः ॥
पूर्णाशा बहवः कृता वितरणैर्येन त्वया याचका- ।
स्तस्मै सर्वगुणाश्रयाय भवते दीर्घायुराशास्महे ॥ ९ ॥

भाषार्थ–जिसने कीर्तिसे तीनौं लोकोंको उज्ज्वल किया और अपनी मूर्तिसे जगत्को मोहित किया, अपनी भक्तिसे ईश्वरको प्रसन्न किया, अपने श्रेष्ठआचरणोंसे सज्जनोंको आनंदयुक्त किया और अपने दानसे याचकोंकी सम्पूर्ण आशाओंको पूर्ण किया ऐसे सर्वगुणके आश्रय अर्थात् सकलगुणसम्पन्न आपके दीर्घ आयुकी आशा हम करते हैं अर्थात् आप चिरंजीवी होवैं ऐसी आशा है॥ ९ ॥

दाने कल्पतरुर्नये सुरगुरुः काव्ये कविस्तेजसि ।
प्रौढग्रीष्मरविर्धने धनपतिः सत्ये दयायां शिबिः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गाम्भीर्ये सरितांपतिर्निरुपमे शौर्ये सुभद्रापतिः ।
श्रीमान्धर्मरतिर्महीपतिरयं जीयात्सहस्रं समाः ॥ १० ॥

भाषार्थ–दानमें कल्पतरु, नीतिमें बृहस्पति, काव्यरचनामें शुक्र, तेजमें तीव्रकिरणवाले ग्रीष्मऋतुके सूर्य, धनमें कुबेर, सत्य और दया इनमें राजा शिबि, गम्भीरतामें समुद्र, शूरतामें अर्जुनके समान, श्रीमान्, धर्ममें तत्पर ऐसा यह महाराजा हजारों वर्ष जीवै ॥ १० ॥

सदानुरक्तप्रकृतिः प्रजापालनतत्परः ॥
विनीतात्मा हि नृपतिर्भूयसीं श्रियमश्नुते ॥ ११ ॥

भाषार्थ–सदैव अनुरागसे युक्तप्रकृतिवाला, प्रजाकी पालनामें तत्पर और विनीतात्मा ऐसा राजा महाशोभाको प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

पर्जन्य इव भूतानामाधारः पृथिवीपतिः ॥
विकलेऽपि हि पर्जन्ये जीव्यते न तु भूपतौ ॥ १२ ॥

भाषार्थ–जिसप्रकार मेघ सब जीवोंके आधार हैं, इसीप्रकार राजा सब प्राणियोंका आधार है. मेघके न वर्षनेपरभी एकवार जीवन हो सकता है, परन्तु राजाके न होनेसे जीवन नहीं हो सकता है ॥ १२ ॥

उत्खातान् प्रतिरोपयन् कुसुमितांश्चिन्वंल्लघून् वर्धयन् ।
अत्युच्चान्नमयन् नतान् समुदयन् विश्लेषयन्संहतान् ॥
क्षुद्रान् कण्टकिनो बहिर्निरसयन् म्लानान् पुनः सेचयन् ।
मालाकार इव प्रयोगनिपुणो राजा चिरं नन्दति ॥ १३ ॥

भाषार्थ–उखाडे हुवोंको फिर जमाना, फूले हुवोंको चुगना, छोटोंको बढाना, बहुत ऊँचे पौधोंको झुकाना, झुके हुवोंको उठाना

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

और युद्धआदिमें संहत हुवे हों उनको वियुक्त करना, तथा क्षुद्र और काँटोंवाले पौधोंको बाहर निकालना और म्लान (कुम्हिलाये) हुवोंको फिर सींचना एवं मालाकारके समान प्रयोगनिपुण राजा बहुत-कालपर्यन्त आनन्द करता है ॥ १३ ॥

राजञ्छ्रीः समलंकृता तव धिया सा चापि विद्वत्तया।
विद्वत्ता नयवित्तया परमया नीतिश्च शौर्येण ते ॥
शौर्यं ते यशसा यशश्च चरितैश्चेष्टाश्च ते तेजसा।
तेजश्च स्वकुलाद्गतं कुलमपि श्लाघ्यं भवज्जन्मना॥ १४॥

भाषार्थ–हे राजन्! आपकी लक्ष्मी आपकी बुद्धिसे अलंकृत है, वह बुद्धिभी आपकी विद्यासे विभूषित है, आपकी विद्याभी नीतिसे युक्त है और आपकी नीतिभी शूरतासे सुशोभित है. आपकी शूरता आपके यशसे शोभावाली है और यश आपके चरित्रोंके समान है, आपकी चेष्टा आपके तेजसे सुशोभित है और तेजभी कुलपरंपरागत है और कुलभी आपके जन्मसे महत्वको प्राप्त हो रहा है ॥ १४ ॥

रणप्रशंसा।

संग्रामाङ्गणमागतेन भवता चापे समारोपिते।
रामाकर्णय येन येन सहसा यद्यत्समासादितम् ॥
कोदंडेन शराः शरैररिशिरस्तेनापि भूमण्डलं।
तेन त्वं भवता च कीर्तिरमला कीर्त्या च लोकत्रयम् १५

भाषार्थ–हे राजन्! संग्रामभूमिमें आकर जब जब आप धनुष-बाण उठाते हो, तब तब जो जो कोई जिस जिस वस्तुको प्राप्त होता है सो सुनो. कि धनुष तो बाणको प्राप्त होता है और बाण शत्रुके शी-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शको प्राप्त होता है, तथा शत्रुशीश भूतलको प्राप्त होता है और भूतल आपको प्राप्त होता है और आप कीर्तिको प्राप्त होते हैं और वह कीर्ति तीनौं लोकको प्राप्त होती है ॥ १५ ॥

कीर्तिवर्णन।

सरस्वतीः स्थिता वक्त्रे लक्ष्मीर्वेश्मनि ते स्थिता ॥
कीर्तिः किं कुपिता ? राजन् ! येन देशान्तरं गता ॥ १६ ॥

भावार्थ–सरस्वती मुखमें विराजमान हो, लक्ष्मी तुम्हारे घरमें हो, हे राजन् ! तुम्हारी कीर्ति क्यों कुपित हुई ? जो देशान्तरको गई ॥ १६ ॥

दूरेऽपि श्रुत्वा भवदीयकीर्तिं कर्णौ हि तृप्तौ न च चक्षुषी मे ॥
तयोर्विवादं परिहर्तुकामं समागतोऽहं तव दर्शनाय ॥ १७ ॥

भावार्थ–दूरहीसे आपकी कीर्तिको सुनकर हमारे दोनौं कान तृप्त हो गये, परन्तु नेत्रोंको रस न पहुँचा. तब नेत्र और कर्ण दोनौंका झगडा हुवा. सो उस विवादको दूर करनेके अर्थ आपके दर्शनार्थ हम यहाँ आकर प्राप्त हुये तो जैसा कानोंसे सुना था वैसाही नेत्रोंसे देखा ॥ १७ ॥

आकर्ण्य भूपाल ! यशस्त्वदीयं विधूनयन्तीह न के शिरांसि ?
विश्वम्भराभङ्गभयेन धात्रा नाकारि कर्णौ भुजगाधिपस्य ॥ १८ ॥

भावार्थ–हे राजन् ! आपका यश सुनकर कौन शिर नहीं कँपाते हैं ? पृथ्वीके भंगके भयसे ब्रह्माजीने शेषजीके कान नहीं बनाये, ऐसा आपका यश है ॥ १८ ॥

---

१ कम्पयति। २ पृथ्वी। ३ शेषस्य।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गायन्ति किन्नरगणाः सह कामिनीभिः।
प्रोत्तुंगशैलशिखरेषु हिमाचलस्य ॥
शंखेन्दुकुन्ददलबालमृणालनाल-।
नीहारहारहरहाससितं यशस्ते ॥ १९ ॥

भाषार्थ-हे राजन्! आपका यश हिमालय पर्वतके ऊँचे शिलामय कंगूरोंपर किन्नरगण अपनी स्त्रियोंके साथ गान करते हैं. कैसा है आपका यश कि-शंख, चन्द्रमा और कुन्दके पुष्पोंके दल, तथा कोमलकमलके नाल और बर्फ, मोतियोंके हार, तथा शिवहास इनके समान निर्मल है ॥ १९ ॥

कुन्दं क्षणक्षयि कलंकि शशांकबिम्बं।
क्षीरं विकारि जडसंगति हंसवृन्दम् ॥
हारास्सरन्ध्रवपुषो धवलद्युतीनां
केनोपमां व्रजतु? नाथ! यशस्त्वदीयम् ॥२०॥

भाषार्थ-हे नाथ! आपका यश स्वच्छ प्रकाशवाली वस्तुओंमें किसके तुल्य माना जावे? जो कुन्दपुष्पकी उपमा दी जाय, तो उस कुन्दफलका थोडेही कालमें नाश हो जाता है और जो चन्द्रबिम्बकी उपमा दी जाय तो वह कलंकित है, तथा जो दूधकी उपमा दी जाय तो वह विकारको प्राप्त हो जाता है और जो हंसवृन्दकी उपमा दी जाय तो वह जडोंकी संगतिवाला है, तथा जो हारोंकी उपमा दी जाय तो वे भीतरसे छिद्रवाले होते हैं. अर्थात् आपका यश निरुपम है ॥ २० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कनककुंडलमंडितगंडया
जघनदेशनिवेशितवीणया ॥
अमरराजपुरेश्वरकन्यया
तव यशो विमलं परिगीयते ॥ २१ ॥

भाषार्थ–हे राजन्! सुवर्णके कुंडलोंसे सुशोभित है कपोल जिसका और जंघापर वीणाको धारण किया है जिसने ऐसी जो अमरराजपुरेश्वरकन्या (सरस्वती) तिसकरके आपका निर्मल यश गान किया जाता है ॥ २१ ॥

कृत्वा मेरुमुलूखलं प्रहसता वृन्देन दिग्योषिताम् ।
स्वर्गङ्गामुशलेन शालय इव त्वत्कीर्तयः कण्डिताः ॥
तासां राशिरसौ तुषारशिखरी तारागणस्तत्कणाः ।
प्रोद्यत्पूर्णसुधांशुबिम्बमसृणज्योत्स्नाश्च तात्पांसवः २२

भाषार्थ–हे राजन्! अतिप्रसन्न होती हुई सम्पूर्ण देवांगनाओंने सुमेरुपर्वतको ओखली बनाके श्रीगंगाजीकी धाररूपी मुशलसे आपकी कीर्तिको धानके तुल्य कूटा. सो उसी कीर्तिरूपी राशिका यह हिमालय पर्वत है और उसी कीर्तिको कूटनेसे चारों और उछले हुये कण सोई तारागण हैं और कूटनेके समय जो धूल उडी है सोई यह चन्द्रमाकी सघन चाँदनी है, जो विकाशित होकर शोभा दे रही है. ऐसी आपकी कीर्ति है ॥ २२ ॥

यशः कुसुमवाटिका गुणनिधानमंजूषिका ।
कलाकमलदीर्घिका कलितरुप्रवालाशनिः ॥
द्विषत्तिमिरचन्द्रिका वरविलासिनी चेतसाम् ।
वशीकरणवर्तिका कुशलिनी तनुस्तावकी ॥ २३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–हे राजन्! आपका शरीर यशकी फुलवारी है और गुणोंसे भरी हुई सन्दूक है, तथा कलारूपी कमलोंकी पखुरी है और पापरूपी वृक्षके पत्तोंके गिरानेको वज्र है, तथा शत्रुरूपी अन्धकारके दूर करनेको चांदनी है और सुन्दरियोंके चित्तको वश करनेकी गुटिका है ॥ २३ ॥

माधुर्यादिगुणैर्जुषां सुवचसां रीत्यादिसंशोभिनां ।
सर्वालंकृतिशालिनां कलयसे सम्यक् रसास्वादनम् ॥
सत्काव्यार्थविभावनैकनिपुणः प्राज्ञोऽसि तेनास्म्यहं ।
कीर्तिस्यूतगुणादिवर्णनविधौ जातस्तवोत्कंठितः॥२४॥

भावार्थ–हे राजन्! आप माधुर्यआदि गुणोंसे, अपने मनोहर-वचनोंसे और समस्त आभूषणोंसे शोभित सुन्दर वचनोंके रसके स्वादको भलीभांति जानते हो और अच्छे काव्यके अर्थविचारसे कुशल एकही चतुर हो और आप पंडित हो, इसी कारणसे मैं आपकी कीर्ति-करके युक्त गुणादिकोंके वर्णनविधिमें उत्कण्ठित हुवा हूं ॥ २४ ॥

त्वत्कीर्तिव्रततिः समीरपदवीमासाद्य लोकत्रयम् ।
मंचं व्याप्य बभार पुष्पकलिका नक्षत्ररूपेण याः ॥
तासामस्फुटमेकमिन्दुकुसुमं त्रैलोक्यमादीपय- ।
न्नो जाने विकचासु तासु भविता सर्वासु कीदृग् जगत्२५

भावार्थ–हे राजन्! आपकी कीर्तिरूपी लता वायुकी पदवीको प्राप्त होकर अर्थात् आकाशपर चढ़कर त्रैलोक्यरूपी मंचके चारौ ओर व्याप्त होकर नक्षत्ररूपसे जो अनेक प्रकारके फूलोंकी कलियोंको धारण कर रही है, उन कलियोंमेंसे एक कली खिलनेसे चंद्रमारूपी

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

फूल त्रैलोक्यमें प्रकाश करता हुवा वर्तमान है. न मालूम सब कलियाँ खिल जानेसे यह संसार किस प्रकार प्रफुल्लित हो जाता. ऐसी आपकी कीर्ति है ॥ २५ ॥

त्रैलोक्ये चाभिवन्द्या सकलजनमनानन्दकर्त्री सुवासा ।
निःशंकं संभ्रमन्तो त्रिभुवनमखिलं लीलया त्वद्गुणौघैः ॥
सुश्वेता चारुहासा कविवररसनामंचके नर्तमाना ।
पृथ्वीश ! प्रायशस्ते विलसति नितरां कीर्तिमूर्तिर्वरिष्ठा २६

भावार्थ–हे राजन् ! आपकी कीर्तिरूपी मूर्ति बहुत बडी शोभावाली है और तीनौ लोकोंमें पूजा करनेयोग्य है और सब मनुष्योंके मनको आनन्दित करनेवाली है, तथा आपके गुणोंसे सुन्दरवस्त्रवाली है और अपनी प्रसन्नतासे इन तीनौं भुवनोंमें निर्भय होकर डोलती है. तथा गौरवर्ण, बहुत प्रसन्नतासे हंसती हुई बडेबडे कवियोंकी जीभरूपी मंचपर नाचती है. ऐसी मगन हो रही है ॥ २६ ॥

देवाकर्णय नाकिनां पुरि नृणां लोके पुरे भोगिना- ।
मासन्केचन सन्ति केचन तथा स्थास्यन्ति ये केचन ॥
तन्मध्ये न बभूव नास्ति भविता तादृङ् न नीतौ नतौ ।
कांतौ काव्यरतौ नुतौ रिपुहतौ कीर्तौ च यस्ते समः ॥२७॥

भावार्थ–हे राजन् ! सुनिये कि–स्वर्गलोकमें और मनुष्यलोकमें तथा पातालमें जो कोई थे, जो हैं और जो रहेंगे उनमेंसे ऐसा कोई न हुवा, न है और न होगा. जो कि राजनीतिमें अर्थात् धर्माधर्म, कर्तव्याकर्तव्य और विनय तथा सुन्दरता, काव्यशास्त्रावलोकन, गौरव,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

इनमें तथा शत्रुवोंका नाश करनेमें और कीर्तिमें आपके समान होवै ॥ २७ ॥

कस्तूरी सितिमानमागतवती शौक्ल्यं गताः कुन्तला ।
नीलं चोलमभूत्सितं धवलिमा जातो मणीनां गणे ॥
ध्वांतं शान्तमभूत्समं द्विजपते ! त्वत्कीर्तिचन्द्रोदये ।
त्रैलोक्येप्यभिसारकृत्वपटिमा शान्तः कुरंगीदृशाम् ॥ २८ ॥

भावार्थ-हे राजन् ! आपके कीर्तिरूपी चन्द्रिकाका उदय होनेसे कस्तूरी श्वेत हो गई और केशभी सब श्वेत हो गये, तथा नीलवर्ण चोलीभी श्वेत हो गई, श्याम मणियाँ शुक्लवर्ण हो गईं, सब संसारके अन्धकार शान्त हो गये. और कहाँतक कहें, त्रिलोकीमें स्त्रियोंका व्यभिचारनिमित्त अन्यत्र गमनभी शान्त हो गया अर्थात् जगत्का सब कुकर्म जाता रहा ॥ २८ ॥

कुंजे कुंजे भ्रमति भवतः कीर्तिरेकाकिनीयं ।
तस्याः पश्चाद्व्रजति सहसा सत्प्रतापोनुरक्तः ॥
नैवाश्लेषो नतु रतिकला नाम्बराकर्षणादि- ।
स्तेनाद्यापि द्वयमतितरां स्फीतमेवाविरस्ति ॥ २९ ॥

भावार्थ-हे राजन् ! आपकी कीर्ति अकेली कुंज कुंज (गली गली) में दौडती है और उसके पीछेही अनुरागसहित आपका श्रेष्ठ प्रतापभी गमन करता हुवा दौड रहा है. सो न तो वह प्रताप उस कीर्तिको आलिंगनही कर पाता है, न मिलापही होता है और न वस्त्रोंका खींचना आदिही होता है. आजतक आपकी कीर्ति और आपका प्रताप दोनौं शुद्ध हैं ॥ २९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्रीमन्नाथ ! तवानने भगवती वाणी नरीनृत्यते।
तद्द्रष्टुं कमला समागतवतो लोलेति बद्धा गुणैः॥
कीर्तिश्चन्द्रकरीन्द्रदन्तकुमुदक्षीरोदनीरोपमा।
त्रासादंबुनिधिं विलंघ्य भवतो नाद्यापि विश्राम्यति ३०

भाषार्थ–हे श्रीमान् ! हे नाथ ! आपके मुखमें सरस्वती नाचती अर्थात् चमत्कारपूर्वक बोलती है, सो उसको देखनेके अर्थ लक्ष्मीजी आई, परन्तु उसको चंचल जानकर आपने अपने गुणरूपी रस्सीसे बाँध लिया. इसीसे आपके भयसे अर्थात् लक्ष्मीजीको बँधा देखकर चन्द्रमा, ऐरावत, हाथी और उसके दाँत तथा कुमुद, पुष्प, और समुद्रजल इनके समान स्वच्छ और शोभावाली कीर्ति सागरोंको भी उल्लंघन करके जो देशदेशमें भ्रमण किया करती है वह अबभी विश्राम नहीं लेती है ३०

अनिःसरन्तीमपि गेहगर्भात्कीर्तिं परेषामसतीं वदन्ति॥
स्वैरं चरन्तीमपिचत्रिलोक्यां त्वत्कीर्तिमाहुः कवयःसतींनु॥

भाषार्थ–हे राजन् ! घरसे बाहर नहीं निकलनेवाली ऐसी आपके शत्रुवोंकी जो कीर्तिरूपी स्त्री उसको बडे बडे कविलोग 'असती' (व्यभिचारिणी) कहा करते हैं और आपकी कीर्ति तो 'बहुत सती' (पतिव्रता) ऐसा कहते हैं॥ ३१॥

प्रतिनगरमटन्ती प्रत्यगारं व्रजन्ती।
प्रतिनरपतिवक्षःकंठपीठे लुठन्ती॥
गिरिगरिमनितंबाच्छादने सावधाना।
तदपि च तव कीर्तिर्निर्मलैवेति चित्रम्!॥ ३२॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-हे राजन्! आपकी कीर्ति सब नगरोंमें और घरघरमें डोलती है और सब राजाओंकी छातीपर लोटती है और पर्वतोंके बडेबडे जो नितंब उनके ढकनेमें अति चतुर है तोभी अपनी निर्मलहि यह बडे आश्चर्यकी बात है ॥ ३२ ॥

॥ राजनीतिवर्णन ॥

तत्रादौ राजावर्णन।

राजास्य जगतो वृद्धेर्हेतुर्वृद्धाभिसंगतः ॥
नयमानन्दजननः शशाङ्क इव वारिधेः ॥ ३३ ॥

भाषार्थ-राजा जगत्की वृद्धिका हेतु होता है, राजासे प्रजाकी वृद्धि (उन्नति) होती है, और नीति तथा आनन्दको उत्पन्न करनेवाला राजाहि होता है. जैसे, चन्द्रमा समुद्रको आनन्द करनेवाला होता है. (चन्द्रोदय होनेसे समुद्रमें तरंगें उठने लगती हैं) ॥ ३३ ॥

सर्वदेवमयस्यापि विशेषो भूपतेरयम् ॥
शुभाशुभफलं सद्यो नृपाद्देवाद्भवान्तरे ॥ ३४ ॥

भाषार्थ-सर्व देवमय होनेपरभी राजामें यह विशेषता है कि-जगत्के बीच शुभाशुभ फल शीघ्र राजासेही होता है और देवसे अन्य जन्ममें

सर्वदेवमयो राजा मनुना संप्रकीर्तितः ॥
तस्मात्तमेव सेवेत न व्यलीके न कर्हिचित् ॥ ३५ ॥

भाषार्थ- 'सर्वदेवमय राजा है' यह मनुने कहा है. इस कारण राजाकाही सेवन करै. राजाकी आज्ञाका उल्लंघन कभी नहीं करै ॥ ३५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

बालोऽपि नावमन्तव्यो मनुष्य इति भूमिपः ॥
महती देवता ह्येषा नररूपेण तिष्ठति ॥ ३६ ॥

भाषार्थ–मनुष्योंको उचित है कि– यदि राजा बालकभी हो तो उसका अपमान नहीं करै. क्योंकि, यह राजा यानी, एक बडी देवता-हि मनुष्यरूपसे पृथ्वीपर रहती है ॥ ३६ ॥

यस्य प्रसादे पद्माऽऽस्ते विजयश्च पराक्रमे ॥
मृत्युश्च वसति क्रोधे सर्वतेजोमयो हि सः ॥ ३७ ॥

भाषार्थ–जिसकी प्रसन्नतामें लक्ष्मी वसती है और पराक्रममें विजय तथा क्रोधमें मृत्युका निवास है अतः सर्वतेजोमय राजाही है ॥ ३७ ॥

अशुचिर्वचनाद्यस्य शुचिर्भवति पूरुषः ॥
शुचिश्चैवाशुचिः सद्यः कथं राजा न दैवतम् ? ॥३८॥

भाषार्थ–जिसके वचनसे अर्थात् जिसकी आज्ञासे अपवित्र पुरुष पवित्र हो जाता है और पवित्रसे शीघ्रही अपवित्र हो जाता है, तो राजा, देवता क्यों नहीं ? अर्थात् राजाको देवता कहना चाहिये ॥३८॥

मंत्री ।

अधीतव्यवहारज्ञं मौलं ख्यातं विपश्चितम् ॥
अर्थस्योत्पादकं चैव विदध्यान्मंत्रिणं नृपः ॥ ३९ ॥

भाषार्थ–अधीत (पढे हुवोंके) व्यवहारको जाननेवाला, मौल-(बातकी जडको जाननेवाला), विख्यात, विद्वान् और धनका उपार्जन करानेवाला ऐसा मनुष्य राजाको, मंत्रीपदपर नियुक्त करना चाहिये ॥ ३९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्वदेशजं कुलाचारं विशुद्धमथवाऽशुचिम् ॥
मंत्रज्ञमव्यसनिनं व्यभिचारविवर्जितम् ॥ ४० ॥

भाषार्थ–अपने देशके, पवित्र अथवा अपवित्र कुलाचार जाननेवाला, मंत्रज्ञ अर्थात् सम्मति देनेमें परम चतुर, व्यसन और व्यभिचार इन्होंने रहित ऐसा मंत्री होना चाहिये ॥ ४० ॥

अन्तःसारैरकुटिलै च्छिद्रैः सुपरीक्षितैः ॥
मंत्रिभिर्धार्यते राज्यं सुस्तम्भैरिव मन्दिरम् ॥४१॥

भाषार्थ–अन्तःकरणमें सार बातैं हों, कुटिलता न हो, छिद्र न हो, सुपरीक्षासे युक्त ऐसे मंत्रीसे राज्य धारण किया जाता है. जैसे ठोस, सीधे, छिद्रहीन और चारौ ओरसे ठीक ऐसे सुन्दर स्तम्भ (पुष्टखंभ) से मन्दिर सुरक्षित रहता है ॥ ४१ ॥

न्यायाधीश।

मूर्खं व्यसनिनं लुब्धमप्रगल्भं भयाकुलम् ॥
क्रूरमन्यायकर्तारं नाधिपत्ये नियोजयेत् ॥ ४२ ॥

भाषार्थ–मूर्ख, व्यसनी, लोभी, अप्रगल्भ, भीरू, क्रूर, अन्यायी ऐसा न्यायाधीश नहीं होना चाहिये· अर्थात् राजा, मूर्ख आदि सात लक्षणवाले पुरुषको न्याय करनेके पदपर नहीं नियुक्त करैं ॥ ४२ ॥

सभासद।

धर्मशास्त्रार्थकुशलाः कुलीनाः सत्यवादिनः ॥
समाः शत्रौ च मित्रे च नृपतेः स्युः सभासदः ॥४३॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–धर्मशास्त्रके अर्थमें कुशल, कुलीन और सत्यवादी, शत्रु- और मित्र इनमें समानभावसे वर्ताव करनेवाले पुरुष राजाके सभासद होने चाहिये ॥ ४३ ॥

श्रुत्यध्ययनसपन्ना धर्मज्ञाः सत्यवादिनः ॥
राज्ञा सभासदः कार्या रिपौ मित्रे च ये समाः ॥४४॥

भाषार्थ–श्रुत्यध्ययनसंपन्न अर्थात् वेद पढे हुये, धर्मज्ञ, सत्यवादी और शत्रुमित्रमें समानभाववाले ऐसे पुरुष राजा सभासद बनावै ॥ ४४ ॥

पुरोहित ।

वेदवेदाङ्गतत्वज्ञो जपहोमपरायणः ॥
आशीर्वादपरो नित्यमेष राजपुरोहितः ॥ ४५ ॥

भाषार्थ–वेद (ऋग्, यजु, साम व अथर्व), वेदांग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष व छन्द) इनके तत्वको जाननेवाला, जप और हवन ये निरन्तर करनेवाला और नित्य आशीर्वादमें तत्पर अर्थात् सर्वदा कल्याणकी इच्छावाला ऐसा पुरुष राजपुरोहित होना चाहिये ॥ ४५ ॥

वैद्य ।

आयुर्वेदकृताभ्यासः सर्वेषां प्रियदर्शनः ॥
आर्यशीलगुणोपेत एष वैद्यो विधीयते ॥ ४६ ॥

भाषार्थ–जिसने आयुर्वेदका भलीभाँति अभ्यास किया है, जिसका दर्शन सबको प्रिय लगता है और जो (श्रेष्ठ) गुणोंसे युक्त है ऐसा पुरुष वैद्य होनेके योग्य जानना ॥ ४६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सेनापति ।

समस्तनीतिशास्त्रज्ञो वाहने पूजितश्रमः ॥
शौर्यवीर्यगुणोपेतः सेनाध्यक्षो विधीयते ॥ ४७ ॥

भाषार्थ–संपूर्ण (सब प्रकारसे) नीतिशास्त्रको जाननेवाला, वाहन-(सवारी) में भलीभाँति श्रम करनेवाला अर्थात् सवारी करनेमें महाचतुर और शौर्य–वीर्य–धैर्यादि उत्तमगुणोंसे युक्त ऐसा पुरुष सेनापति होना चाहिये ॥ ४७ ॥

शूरोऽर्थशास्त्रनिपुणः कृतशास्त्रकर्मा ।
संग्रामकेलिचतुरश्च तुरङ्गयुक्तः ॥
भर्तुर्निदेशवशगोऽभिमतश्च तन्त्रे ।
सेनापतिर्नरपतिर्विजयागमाय ॥ ४८ ॥

भाषार्थ–शूर और अर्थशास्त्रमें निपुण, शास्त्रविधिके अनुसार कर्म करनेवाला, संग्रामकेलिमें चतुर (कवायद करानेमें निपुण), घोडासे युक्त (सवार) हो, अपने स्वामीकी आज्ञाके अनुसार वर्ताव करनेवाला, तथा गुप्तविचारोंमें अभिमत ऐसा पुरुष राजाके विजयके अर्थ सेनापति होनेके योग्य होता है ॥ ४८ ॥

गज ।

यतः सत्यं ततो धर्मो यतो धर्मस्ततो धनम् ॥
यतो रूपं ततः शीलं यतो नागस्ततो जयः ॥ ४९ ॥

भाषार्थ–जहाँ सत्य है वहीं धर्म है और जहाँ धर्म है वहीं धन है; जहाँ रूप है वहीं शील है और जहाँ नाग (हाथी) है वहीं जय है ४९

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यतो गजैर्विना राज्ञां राज्यशोभा न जायते ॥
जयप्रतापौ सैन्यस्य रक्षा तस्मादिहोच्यते ॥ ५० ॥

भाषार्थ-जिस राजाके यहाँ हाथी नहीं हैं उसके उस राज्यकी शोभा नहीं होती है. हाथीहीसे जय होता है और प्रतापकी वृद्धि होती है. सेनाकी रक्षाभी हाथीहीसे कही है ॥ ५० ॥

यद्वद्वनमसिंहं च यद्वद्राष्ट्रमपार्थिवम् ॥
यद्वच्छौर्यमशस्त्रं तु तद्वत्सैन्यमकुंजरम् ॥ ५१ ॥

भाषार्थ-जैसे, सिंहके विना वन, राजाके विना राज्य, शस्त्रके विना शूरता ये नहीं शोभती हैं तैसेही विना हाथीके सेना नहीं शोभती है ॥ ५१ ॥

रक्षन्ति पक्षं मुदिताः स्वकीयं मथ्नन्ति सैन्यं कुपिताः परेण ॥
प्राणैरपीच्छन्ति हितं प्रभूणां गजैः समानं क्व बलं बलीयः ?

भाषार्थ-आनन्दयुक्त अपने पक्षकी रक्षा करते हैं और क्रोधित हुये शत्रुके पक्षको मथते हैं और प्राणोंसे प्रभुके हितको चाहते हैं ऐसे हाथियोंके समान अधिक बलवान् और क्या बल हो सकता है ? ॥ ५२ ॥

चलन्ति येषां न शतं गजेन्द्राः पुरः प्रयाणे बत शैलतुल्याः ॥
वाञ्छन्ति चैवं विजयं कथं ते राजेतिशब्दं च कथं लभन्ते ५३

भाषार्थ-यात्राके समय जिनके आगे पर्वतसमान अर्थात् बहुत ऊँचे सौ हाथी न चलैं वे अपना विजय कैसे चाहते हैं ? अर्थात् वे कैसे जीत सकते हैं और वे 'राजा' इस शब्दको कैसे पा सकते हैं

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अर्थात् वे राजा कैसे कहे जा सकते हैं ? उनको राजा नहीं कहना चाहिये ॥ ५३ ॥

तुरगवर्णन ।

निपत्य युधि वेगेन मिषतां सर्वधन्विनाम् ॥
शत्रुं निहत्य यात्येकः शूरो वाजिप्रभावतः ॥ ५४ ॥

भाषार्थ–युद्धके समय एकही शूर वीर सब धनुर्धारियोंके देखते घोडेके प्रभावसे वेगसे गिरकर शत्रुको मारकर जाता है ॥ ५४ ॥

अश्वा यस्य जयस्तस्य यस्याश्वास्तस्य मेदिनी ॥
अश्वा यस्य यशस्तस्य यस्याश्वास्तस्य काञ्चनम् ॥५५॥

भाषार्थ–जिसके यहाँ घोडे होते हैं उसीकी जीत होती है, जिसके यहाँ घोडे होते हैं उसीकी पृथिवी है, जिसके यहाँ घोडे होते हैं, उसीका यश जगत्में फैल जाता है, जिसके पास घोडे होते हैं उसीका धन है ॥ ५५ ॥

शस्त्रास्त्रैर्भिन्नदेहोऽपि श्रान्तोऽपि गुरुभारतः ॥
न मुंचति रणेनाथ मतः कोऽन्यो हयात्सुहृत् ? ॥५६॥

भाषार्थ–देह, शस्त्र और अस्त्र इनसे भिन्न होनेपरभी और अधिक भार (बहुत बोझा) से थक जानेपरभी संग्राममें जो अपने स्वामीका नहीं त्याग करता है अतः घोडेसे बढकर क्या कोई और मित्र हो सकता है ? ॥ ५६ ॥

न गजैर्न नरैः कार्यं सिद्धिमभ्येति भूभृताम् ॥
तथा निमेषमात्रेण यथा वाहैः सुसाधितैः ॥ ५७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-राजाओंका कार्य जैसा साधे हुये घोडोंसे शीघ्र सिद्ध हो सकता है वैसा हाथियों और मनुष्योंसे सिद्ध नहीं हो सकता है ॥ ५७ ॥

दूरस्थोऽपि बली शत्रुर्न शेते रजनीष्वपि ॥
तस्य भीत्या गृहे यस्य हरयो वेगवत्तराः ॥ ५८ ॥

भाषार्थ-दूर रहनेपरभी बलवान् शत्रु रात्रिमेंभी उसके भयसे नहीं सोता है, कि-जिसके यहाँ वेगवाले घोडे होते हैं ॥ ५८ ॥

राज्यं शतक्रतुसमृद्धिसमानमश्वै- ।
रश्वैः श्रियः सकलकामदुघा भवन्ति ॥
अश्वैर्यशांसि विपुलानि समुल्लसन्ति ।
नाश्वैः प्रयान्ति सदृशत्वमिभादयोऽपि ॥ ५९ ॥

भाषार्थ-इन्द्रके राज्यसमान ऐश्वर्य, घोडोंके होनेसे होता है, घोडोंकरके राजालोग ऐश्वर्यमें सम्पूर्ण कामधेनुसमान दाता हो जाते हैं, घोडोंके होनेसे कीर्तिकी वृद्धि होती है, हाथीआदि होनेपरभी घोडोंके समान ऐश्वर्य प्राप्त नहीं होता है, अर्थात् घोडोंकी बराबरी हाथी नहीं कर सकते हैं ॥ ५९ ॥

खड्ग ।

खड्गाल्लक्ष्मीस्तथा राज्यं यशः खड्गादवाप्यते ॥
खड्गाद्वैरिविनाशौ च यत्नात्तमभिदध्महे ॥ ६० ॥

भाषार्थ-खड्ग (तलवार) से लक्ष्मी (धन), तथा राज्य प्राप्त होता है और खड्गसे यश मिलता है. खड्गसेही वैरियोंका विनाश होता है. अतः खड्गको यत्नसे धारण करना चाहिये ॥ ६० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सैन्य ।

स्वभावशूरमस्त्रज्ञमविरक्तं जितश्रमम् ॥
प्रसिद्धक्षत्रियप्रायं बलं श्रेष्ठतमं विदुः ॥ ६१ ॥

भाषार्थ–सेनामें अस्त्र जाननेवाले शूरका स्वभाव ठीक हो जाता है, मन लगाकर जीतनेमें श्रम करनेवाला हो जाता है, वह क्षत्रिय सर्वत्र प्रसिद्ध हो जाता है, जो सेनामें रहता है. इसीसे सेना श्रेष्ठ कही है॥६१

दुर्ग ।

न गजानां सहस्रेण न लक्षेण च वाजिनाम् ॥
तथा सिद्ध्यन्ति कार्याणि यथा दुर्गप्रभावतः ॥ ६२ ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार दुर्ग (गढ) के प्रभावसे कार्य सिद्ध होते हैं वैसे हजारों हाथी और लाख घोडोंसे नहीं हो सकते. अर्थात् दुर्गसे राजाकी रक्षा भली भाँति हो सकती है ॥ ६२ ॥

विषहीनो यथा नागो मदहीनो यथा गजः ॥
सर्वेषां वश्यतां याति दुर्गहीनस्तथा नृपः ॥ ६३ ॥

भाषार्थ–जैसे विषविना साँप और मद विना हाथी सबके वशमें हो जाते हैं, उसीप्रकार दुर्ग (गढ ‘ किला ’) से हीन राजा सबके वशमें हो सकता है ॥ ६३ ॥

शतमेकोऽपि संधत्ते प्राकारस्थो धनुर्धरः ॥
तस्माद्दुर्गं प्रशंसन्ति नीतिशास्त्रविदो जनाः ॥ ६४ ॥

भाषार्थ–प्राकार (किलेकी भीत) पर स्थित धनुषधारी पुरुष सौ मनुष्योंका सामना अकेलाही कर सकता है. इसकारण, नीतिशास्त्रके जाननेवाले पुरुष, दुर्गकी प्रशंसा करते हैं ॥ ६४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दुर्गाणि राज्ञा कार्याणि सजलानि दृढानि च ॥
द्रव्यमन्नं च तेष्वेव स्थापनीयं प्रयत्नतः ॥ ६५ ॥

भाषार्थ–राजा, ऐसा किला बनावे जिसके चारौ ओर जल भरा हो और जो बहुत दृढ हो, उसीमें द्रव्य और अन्न रक्खै. अर्थात्,कोष (खजाना) और वखारी किलेके भीतरही बनावै ॥ ६९ ॥

दूत ।

मेधावी वाक्पटुः प्राज्ञः परचित्तोपलक्षकः ॥
धीरो यथोक्तवादी च एष दूतो विधीयते ॥ ६६ ॥

भाषार्थ–बुद्धिमान्, बात करनेमें निपुण, सब बातोंमें चतुर, पराये मनकी बात जाननेवाला, धीर, यथार्थवादी अर्थात् सत्यबात कहने॰ वाला ऐसा दूत राजाके योग्य कहा है ॥ ६६ ॥

भक्तो गुणी शुचिर्दक्षः प्रगल्भो व्यसनी क्षमी ॥
ब्राह्मणः परमर्मज्ञो दूतः स्यात्प्रतिभानवान् ॥ ६७ ॥

भाषार्थ–राजभक्त, गुणवान्, पवित्र रहनेवाला, निपुण, साहसी, व्यसनरहित, क्षमा करनेवाला, ब्राह्मण और दूसरेके मर्म (भेद) को जाननेवाला, बुद्धिमान् दूत होने योग्य होता है ॥ ६७ ॥

भांडागारी ।

प्रवीणो वाक्पटुर्धीमान् स्वामिभक्तश्च नित्यशः ॥
अलुब्धः सत्यवादी च भाण्डागारी स इष्यते ॥६८॥

भाषार्थ–जो प्रवीण, बात करनेमें चतुर, बुद्धिमान्, सदा स्वामिभक्त, लोभहीन, सत्यवादी हो ऐसाहि पुरुष भाण्डागारी (खजांची) होने योग्य होता है ॥ ६८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लेखक ।

सकृदुक्तगृहीतार्थो लघुहस्तो जितेन्द्रियः ॥
शब्दशास्त्रपरिज्ञाता एष लेखक इष्यते ॥ ६९ ॥

भाषार्थ–एकही वार कहे वाक्यका अर्थग्रहण कर लेनेवाला, लघुहस्त (छोटे हाथवाला) जितेन्द्रिय, व्याकरण जाननेवाला ऐसा लेखक कहा है ॥ ६९ ॥

प्रतीहारी ।

इङ्गिताकारतत्वज्ञो बलवान् प्रियदर्शनः ॥
समयज्ञः स्वामिभक्तः प्रतीहारी स इष्यते ॥ ७० ॥

भाषार्थ–दूसरेके मनका भाव और आकार देखकर तत्वको जान लेनेवाला, बलवान्, देखनेमें अच्छा और समयको जाननेवाला, स्वामिभक्त ऐसा पुरुष प्रतीहारी (द्वारपाल) होने योग्य कहा है ॥ ७० ॥

सूपकार ।

पुत्रपौत्रगुणोपेतः शास्त्रज्ञो मृष्टपाचकः ॥
शूरश्च कठिनश्चैव सूपकारः स इष्यते ॥ ७१ ॥

भाषार्थ–पुत्र पौत्र और गुणोंसे युक्त, शास्त्रको जाननेवाला, भोजन मीठा बनानेवाला, चतुर, शूर और बलवान् ऐसा पुरुष सूपकार (रसोइया) होने योग्य कहा है ॥ ७१ ॥

चार ।

भवेत्स्वपरराष्ट्राणां कार्याकार्यावलोकने ॥
चारचक्षुर्महीभर्तुर्यस्य नास्त्यन्ध एव सः ॥ ७२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—अपने पराये राज्योंमें कार्य अकार्यको देखनेमें जो चार होते हैं वेही राजाके नेत्र हैं. जिस राजाके यहां चार नहीं हैं वह मानों अन्धा है ॥ ७२ ॥

अन्तःपुरवर्ग ।

काणाः कुब्जाश्च षण्ढाश्च तथा वृद्धाश्च पङ्गवः ॥
एते चान्तःपुरे नित्यं नियोक्तव्याः क्षमाभृता ॥ ७३ ॥

भाषार्थ—काणे, कूबडे, हिजडे तथा बूढे और लंगड़े ऐसे मनुष्य अन्तःपुरमें अर्थात् स्त्रियोंके मन्दिरमें राजा नियुक्त करै ॥ ७३ ॥

स्त्रीवर्ग ।

पक्वान्नमिव राजेन्द्र ! सर्वसाधारणाः स्त्रियः ॥
परोक्षे च समक्षे च रक्षितव्याः प्रयत्नतः ॥ ७४ ॥

भाषार्थ—हे राजेन्द्र ! सर्वसाधारण स्त्रियोंकी पक्वान्नके समान परोक्षमें और समक्षमें यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिये ॥ ७४ ॥

सूक्ष्मेभ्योऽपि प्रसङ्गेभ्यो रक्ष्या नार्यो हि सर्वदा ॥
द्वयोर्हि कुलयोः शोकमावहेयुररक्षिताः ॥ ७५ ॥

भाषार्थ—सूक्ष्मप्रसंगोंसेभी स्त्रियोंकी सर्वदा रक्षा करनी चाहिये. क्योंकि, नहीं रक्षा की हुई स्त्रियां दोनौं कुलोंको शोक उत्पन्न करने-वाली हो जाती हैं ॥ ७५ ॥

महिषी ।

महिष्या हृष्टया भाव्यं गृहकार्येषु दक्षया ॥
सुसंस्कृतोपस्करया व्यये चामुक्तहस्तया ॥ ७६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–महिषी (रानी) को उचित हैं कि प्रसन्नमनसे घरके कामों चतुराईसे, उत्तमसंस्कार अर्थात् भलीभाँति सब पदार्थोंकी चौकसी रक्खे, कोई पदार्थ बिगडने न पावै, घरको शुद्ध रक्खै और व्यय (खर्च) करनेमें बहुत उदार न हो अर्थात् उचित व्यय करै॥७६॥

भृत्य (सेवक)।

तृणैरावेष्ट्यते रज्जुस्तया नागो हि बद्ध्यते ॥
एवं ज्ञात्वा नरेन्द्रेण भृत्याः कार्या विचक्षणाः ॥ ७७॥

भाषार्थ–तृणोंसे रस्सी बन जाती है, उस रस्सीसे हाथी बाँध लिया जाता है, इसप्रकार जानकर राजाको बुद्धिमान् सेवक रखने चाहिये॥७७॥

न विना पार्थिवो भृत्यैर्न भृत्याः पार्थिवं विना ॥
तेषां च व्यवहारोऽयं परस्परनिबन्धनः ॥ ७८ ॥

भाषार्थ–सेवकोंके विना राजा और राजाके विना सेवक नहीं रह सकते· कारण कि–उन दोनोंका सब व्यवहार परस्पर बंधा हुवा है ॥ ७८ ॥

भृत्यैर्विना स्वयं राजा लोकाऽनुग्रहकार्यपि ॥
मयूखैरिव दीप्तांशुस्तेजस्व्यपि न शोभते ॥ ७९ ॥

भाषार्थ–सेवकोंके विना स्वयं राजालोक, परानुग्रह करनेयोग्य और तेजस्वी ऐसे होनेसेभी जैसे किरणों विना सूर्य शोभा नहीं पाता वैसे वह राजाभी शोभा नहीं पाता है ॥ ७९ ॥

योऽनाहूतः समभ्येति द्वारे तिष्ठति सर्वदा ॥
पृष्टः सत्यं मितं ब्रूते स भृत्योऽर्हो महीभुजाम् ॥ ८० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जो विना बुलाये आवे, सदैव द्वारपर स्थित रहे, पूछनेपर सत्य कहे, वह सेवक राजावोंके योग्य होता है ॥ ८० ॥

न क्षुधा पीडयते यस्तु निद्रया न कदाचन ॥
न च शीतातपाद्यैश्च स भृत्योऽर्हो महीभुजाम् ॥८१॥

भाषार्थ–जो भूँखसे पीडित न हो और नींदसे कभी पीडित न हो, शीत (जाडा) और धूपसेभी विकल न हो जाता हो वह सेवक राजावोंके योग्य होता है ॥ ८१ ॥

सीमा वृद्धिं समायाति शुक्लपक्ष इवोडुराट् ॥
नियोगसंस्थिते यस्मिन् स भृत्योऽर्हो महीभुजाम् ॥८२॥

भाषार्थ–जैसे शुक्लपक्षमें चन्द्रमा बढता है वैसेही जिसके प्रधान-कर्मचारी होनेपर सीमाकी वृद्धि होवै तो वह कर्मचारी राजावोंके योग्य होता है ॥ ८२ ॥

ताडितोऽपि दुरुक्तोऽपि दण्डितोऽपि महीभुजा ॥
न चिन्तयति यः पापं स भृत्योऽर्हो महीभुजाम्॥८३॥

भाषार्थ–राजाकरके ताडित हुवा और कठोर वचन कहा-हुवा, तथा दंड किया हुवाभी जो कर्मचारी पापविचार नहीं करता है, वह सेवक राजावोंके योग्य होता है ॥ ८३ ॥

राजा तुष्टोऽपि भृत्यानां मानमात्रं प्रयच्छति ॥
तेऽपि संमानमात्रेण प्राणैः प्रत्युपकुर्वते ॥ ८४ ॥

भाषार्थ–प्रसन्न होनेपर राजा केवल मानहि देता है. परंतु सेवक केवल मान पानेसेही अपने प्राणोंको न्योछावर कर देता है ॥ ८४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

द्विजा अपि न गच्छन्ति यां गतिं नैव योगिनः ॥
स्वाम्यर्थे संत्यजन् प्राणान् तां गतिं याति सेवकः ।८५।

भाषार्थ–अपने स्वामीके निमित्त सेवक अपने प्राणोंका त्याग करता हुवा, जिस गतिको पाता है उस गतिको ब्राह्मणभी नहीं पाते और योगीभी उस गतिको नहीं पाते हैं ॥ ८५ ॥

सालसं मुखरं क्रूरं स्तब्धं व्यसनिनं शठम् ॥
असन्तुष्टमभक्तं च त्यजेद्भृत्यं नराधिपः ॥ ८६ ॥

भाषार्थ–आलसी, वाचाल, क्रूर, हठी, व्यसनी, मूर्ख, असन्तोषी, अभक्त ऐसे सेवकका राजा त्याग करै ॥ ८६ ॥

स्नान ।

स्नानं नाम मनःप्रसादजननं दुःस्वप्नविध्वंसनं ।
शौचस्यायतनं मलापहरणं संवर्धनं तेजसः ॥
रूपोद्योतकरं गदप्रशमनं कामाग्निसंदीपनं ।
नारीणां च मनोहरं श्रमहरं स्नाने दशैते गुणाः ॥८७॥

भाषार्थ–स्नान करनेसे मन प्रसन्न होता है और दुष्टफलदायक स्वप्नका विध्वंस हो जाता है, शौचका स्थान स्नान है, स्नान मलको दूर करता और तेजको बढाता है, रूपको प्रकाशित करता तथा रोगका शमन करता है, स्त्रियोंके कामाग्निका दीपन करता है, मनोहर है, श्रमको हरता है, स्नानमें ये दश गुण हैं ॥ ८७ ॥

गुणा दश स्नानपरस्य साधो ! रूपं च तेजश्च बलं च शौचम्॥
आयुष्यमारोग्यमलोलुपत्वं दुःस्वप्ननाशश्च यशश्च मेधाः८८

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—हे साधो ! स्नानके गुण दश हैं· रूप, तेज, बल, पवित्रता, आयुवृद्धि, आरोग्यता, धैर्य, दुःस्वप्ननाश यश और बुद्धिवृद्धि ॥ ८८ ॥

ताम्बूल ।

ताम्बूलं मुखरोगनाशि निपुणं संवर्धनं तेजसो ।
नित्यं जाठरवह्निवृद्धिजननं दुर्गन्धदोषापहम् ॥
वक्त्राऽलंकरणं प्रहर्षजननं विद्वन्नृपाग्रे रणे
कामस्यायतनं समुद्भवकरं लक्ष्म्याः सुखस्याऽऽस्पदम् ८९

भाषार्थ—ताम्बूल मुखरोगका नाश करता है, तेजको बढ़ाता है, जठराग्निकी वृद्धि करता है, दुर्गन्धदोषको हरता है, मुखका आभरण है अर्थात् मुँहकी शोभा है, आनन्दको प्रगट करता है, विद्वान् और राजाको विवाद और रणमें अग्रणीय है, कामका स्थान है अर्थात् कामदेवको जगाता है, लक्ष्मी और सुखका घर है ॥ ८९ ॥

चामर—सिंहासन ।

चामरं श्रीकरं दिव्यं राज्यशोभाकरं परम् ॥
सिंहासनं सुखैश्वर्यकरं लोकानुरंजनम् ॥ ९० ॥

भाषार्थ—चामर (चँवर) श्रीकर और राज्यकी महाशोभाको बढानेवाला है· सिंहासन, सुखऐश्वर्यको करनेवाला और लोगोंको प्रसन्न करनेवाला है ॥ ९० ॥

चन्दनलेपन, मालाधारण ।

पापालक्ष्मीप्रशमनं चन्दनाद्यनुलेपनम् ॥
सुमनोधररत्नानां धारणं दिव्यरूपकृत् ॥ ९१ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-पाप और अलक्ष्मी (दारिद्र्य) को दूर करनेवाला, चन्दनआदिका अनुलेपन है। फूलोंकी माला और रत्नोंका धारण रूपको दिव्य करता है ॥ ९१ ॥

तरु।

बहुभिर्बत किं जातैः पुत्रैर्धर्मार्थवर्जितैः ? ॥
वरमेकः पथि तरुर्यत्र विश्रमते जनः ॥ ९२ ॥

भाषार्थ-धर्म और अर्थसे रहित ऐसे बहुतसे पुत्रोंसे क्या प्रयोजन ? यदि सुपुत्र एकही हो तो अच्छा है। जैसे, मार्गमें एकही वृक्ष अच्छा है, जिसकी छायामें पथिक विश्राम पाता है ॥ ९२ ॥

दशकूपसमा वापी दशवापीसमो ह्रदः ॥
दशह्रदसमः पुत्रो दशपुत्रसमो द्रुमः ॥ ९३ ॥

भाषार्थ-दश कुँवांके समान बावली, दश बावलीके समान नद और दश नदके समान पुत्र और दशपुत्रोंके समान वृक्ष होता है ॥९३॥

नीतिवर्णन।

यः कुलाभिजनाचारैरतिशुद्धः प्रतापवान् ॥
धार्मिको नीतिकुशलः स स्वामी युज्यते भुवि ९४

भाषार्थ-जो अपने कुल, परिवार और आचरणोंसे अति पवित्र है, प्रतापवान् है, धर्मात्मा है, नीतिमें कुशल है वह स्वामी पृथ्वीपर योग्य होता है ॥ ९४ ॥

सुलभाः पुरुषा राजन् ! सततं प्रियवादिनः ॥
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥९५॥

भाषार्थ-हे राजन् ! मधुरवचन बोलनेवाले पुरुष सदा सुलभ हैं,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

परन्तु अप्रिय और हितकारी वचन बोलनेवाले और वह सुननेवाले दोनों दुर्लभ हैं ॥ ९५ ॥

राज्ञि धर्मिणि धर्मिष्ठा पापे पापाः समे समाः ॥
लोकास्तमनुवर्तन्ते यथा राजा तथा प्रजा ॥ ९६ ॥

भाषार्थ–राजा, धर्मात्मा होनेसे प्रजाभी धर्मात्मा होती है. पापी होनेसे पापी और सम होनेसे सम. भावार्थ यह कि–जैसा राजा होता है वैसीही प्रजा होती है ॥ ९६ ॥

नृपाणां च नराणां च केवलं तुल्यमूर्तिता ॥
आधिक्यं तु क्षमा धैर्यमाज्ञा दानं पराक्रमः ॥ ९७ ॥

भाषार्थ–राजा और प्रजा अर्थात् मनुष्य इनकी मूर्ति एकतुल्य होती है अर्थात् राजा–प्रजाके स्वरूपमें कुछ भेद नहीं है. राजामें अधिकता यह है कि–उसमें क्षमा, धैर्य, आज्ञा, दान और पराक्रम ये विशेष होते हैं ॥ ९७ ॥

यथा बीजाङ्कुरः सूक्ष्मः प्रयत्नेनाऽभिवर्धितः ॥
फलप्रदो भवेत्काले तद्वल्लोकाः सुरक्षिताः ॥ ९८ ॥

भाषार्थ–जिसप्रकार छोटासा बीजका अंकुर प्रयत्नसे बढ़ाया हुवा समयपाय फल देनेवाला होता है इसीप्रकार, सुरक्षित (भलीभाँति रक्षा किये हुये) प्रजाजन समयपर काम आते हैं ॥ ९८ ॥

प्रजां न रंजयेद्यस्तु राजा रक्षादिभिर्गुणैः ॥
अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम् ॥ ९९ ॥

भाषार्थ–जो राजा रक्षाआदि गुणोंसे अपनी प्रजाकी रक्षा नहीं

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

करता उसका जन्म, अजा (बकरी) के गलेके स्तनके समान व्यर्थ है ॥ ९९ ॥

राजानो यं प्रशंसन्ति यं प्रशंसन्ति वै द्विजाः ॥
साधवो यं प्रशंसन्ति स पार्थ! पुरुषोत्तमः ॥ १०० ॥

भाषार्थ–राजालोग जिसकी प्रशंसा करते हैं और जिसकी प्रशंसा ब्राह्मणलोग करते हैं, तथा साधुजन जिसकी प्रशंसा करते हैं, हे पार्थ (अर्जुन) ! वह पुरुषोत्तम है ॥ १०० ॥

अप्राप्तकालं वचनं बृहस्पतिरपि ब्रुवन् ॥
प्राप्नुयाद्बुद्ध्यवज्ञानमपमानं च शाश्वतम् ॥१०१॥

भाषार्थ–जिसवचनके कहनेका समय नहीं ऐसा वचन बोलता हुवा बृहस्पतिभी बुद्धिका अवज्ञान और निरन्तर अपमानको प्राप्त होता है ॥ १०१ ॥

जनं जनपदा नित्यं अर्चयन्ति नृपार्चितम् ॥
नृपेणावमतो यस्तु स सर्वैरवमन्यते ॥ १०२ ॥

भाषार्थ–उसी मनुष्यका लोग सत्कार करते हैं कि–जिसका सत्कार राजाने किया है, और जो जन राजासे तिरस्कार पाता है, उसका सब निरादर करते हैं ॥ १०२ ॥

यो यत्र कुशलः कार्ये तं तत्र विनियोजयेत् ॥
कर्मस्वदृष्टाकर्मा यः शास्त्रज्ञोऽपि विमुह्यति॥१०३॥

भाषार्थ–जो पुरुष जिस काममें निपुण हो, उसको उसी काममें लगावे. क्योंकि, जिसने जिस कामको देखा नहीं वह काम शास्त्रका

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ज्ञाताभी नहीं कर सकता. अर्थात्, शास्त्रीभी विना देखी बातमें मोहको प्राप्त हो जाता है ॥ १०३ ॥

न तच्छस्त्रैर्न नागेन्द्रैर्न हयैर्न च पत्तिभिः ॥
कार्यं संसिद्धिमभ्येति यथा बुद्ध्या प्रसाधितम् १०४

भाषार्थ–बुद्धिसे जैसी कार्यसिद्धि होती है वैसी न शस्त्रसे, न हाथियोंसे, न घोडोंसे, न पत्ति (सिपाहियों) से होती है ॥ १०४ ॥

एकं हन्यान्न वा हन्यादिषुर्मुक्तो धनुष्मता ॥
बुद्धिर्बुद्धिमता युक्ता हन्ति राष्ट्रं सनायकम् ।१०५।

भाषार्थ–धनुर्धरपुरुषने छोडा हुवा बाण एकको मारता है अथवा मारताभी नहीं है. परन्तु बुद्धिमान् पुरुष, अपनी विलक्षण बुद्धिमत्तासे राजासहित राज्यका विनाश करता है ॥ १०५ ॥

दुर्योधनः समर्थोऽपि दुर्मंत्री प्रलयं गतः
राज्यमेकश्चकारोच्चैः सुमंत्री चन्द्रगुप्तकः ॥ १०६ ॥

भाषार्थ–राजा दुर्योधन, समर्थ होनेपरभी दुष्टमंत्री होनेसे विनष्ट हो गया और सुमंत्री होनेसे राजा चन्द्रगुप्त भलीभाँति राज्य करता रहा ॥ १०६ ॥

त्रिविधाः पुरुषा राजन् ! उत्तमाधममध्यमाः ॥
नियोजयेत्तथैवैतान् त्रिविधेष्वेव कर्मसु ॥ १०७ ॥

भाषार्थ–हे राजन् ! उत्तम, मध्यम और अधम ऐसे तीन प्रकारके मनुष्य होते हैं. इनमेंसे उत्तमको उत्तमपदपर, अधमको अधमपदपर और मध्यमको मध्यमपदपर नियुक्त करे ॥ १०७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

प्रसादो निष्फलो यस्य क्रोधश्चापि निरर्थकः ॥
न तं राजानमिच्छन्ति षण्ढं पतिमिवाङ्गना ॥१०८॥

भाषार्थ-जिस राजाकी प्रसन्नता निष्फल और क्रोध निरर्थक, अर्थात् जो राजा प्रसन्न होनेसे कुछ देता नहीं और क्रोधयुक्त होनेसे कुछ कर सकता नहीं, उस राजाको सेवकलोग नहीं चाहते हैं. जैसे, नपुंसक पतिको स्त्रियां नहीं चाहती हैं ॥ १०८ ॥

आत्मनश्च परेषां च यः समीक्ष्य बलाबलम् ॥
अन्तरं नैव जानाति स तिरस्क्रियतेऽरिभिः ॥१०९॥

भाषार्थ-जो राजा अपने और परायेके बलाबलको तथा अन्तरको नहीं जानता है वह राजा, शत्रुवोंसे तिरस्कृत किया जाता है ॥१०९॥

राज्ञि मातरि देव्यां च कुमारे मुख्यमंत्रिणि ॥
पुरोहिते प्रतीहारे समं वर्तेत राजवत् ॥ ११० ॥

भाषार्थ-राजमाता, रानी, राजकुमार, मुख्यमंत्री, राजपुरोहित और द्वारपाल इनमें राजाके समान वर्ताव करना योग्य है ॥ ११० ॥

निर्विशेषो यदा राजा समं भृत्येषु तिष्ठति ॥
तत्रोद्यमसमर्थानामुत्साहः परिहीयते ॥ १११ ॥

भाषार्थ-जब राजा सेवकोंमें एकसमान वर्ताव करने लगता है, तब वहां उद्यम करनेमें समर्थ होनेपरभी राजाकी निर्विशेषताके वर्तावसे उन लोगोंका उत्साह भंग हो जाता है ॥ १११ ॥

यस्मिन्नेवाधिकं चक्षुरारोपयति पार्थिवः ॥
कुलीनो वाऽकुलीनो वा सः श्रियो भाजनं भवेत् ११२

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जिस राजकर्मचारीपर राजाकी दृष्टि विशेष प्रकारसे रहती है, वह कुलीन हो अथवा अकुलीन हो, वही लक्ष्मीपात्र होता है अर्थात् धनवान् हो जाता है ॥ ११२॥

पानमक्षास्तथा नार्यो मृगया गीतवादिते ॥
एतानि युक्त्या सेवेत प्रसङ्गो ह्यत्र दोषवान् ११३

भाषार्थ-मद्यपान, द्यूत, स्त्री, आखेट, गीत-वाद्य, इनका सेवन युक्तिपूर्वक प्रसङ्ग पाय करै, परन्तु इनमें आसक्त नहीं होवै. क्योंकि, ये वस्तुवें दोषवाली हैं ॥ ११३ ॥

आयाच्चतुर्थभागेन व्ययकर्म प्रवर्तयेत् ॥
प्रभूततैलदीपो हि चिरं भद्राणि पश्यति ॥११४॥

भाषार्थ-आय (आमदानी) से चौथा भाग व्यय (खर्च) में लगावै, तो वह राजा बहुतसमयपर्यन्त ऐश्वर्यसम्पन्न रहता है. जैसे, तैल अधिक होनेसे दीपक बहुतकाल प्रज्वलित रहता है ॥ ११४ ॥

कर्मणा मनसा वाचा चक्षुषाऽपि चतुर्विधम् ॥
प्रसाधयति लोकं यस्तं लोकोऽनुप्रसीदति ॥ ११५ ॥

भाषार्थ-कर्म, मन, वाणी और दृष्टि, इन चारौ प्रकारोंसे जो राजा अपनी प्रजाका हित करता है, उसको प्रजाभी प्रसन्न रखती है ॥ ११५ ॥

संभोजनं संकथनं संप्रश्नोऽथ समागमः ॥
ज्ञातिभिः सह कार्याणि न विरोधः कदाचन ११६

भाषार्थ-अपनी ज्ञाति (जाति) वाले लोगोंके साथ भोजन,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

वार्तालाप, कुशलप्रश्न, समागम (मेल ' मिलाप ') भलीभाँति करता रहे. विरोध कभी न करै ॥ ११६ ॥

सुगन्धं केतकीपुष्पं कंटकैः परिवेष्टितम् ॥
यथा पुष्पं तथा राजा दुर्जनैः परिवेष्टितः ॥११७॥

भाषार्थ–सुगन्धवाली केतकीका फूल जैसे काँटोंसे घिरा रहता है, वैसेंही राजाभी दुर्जनोंसे घिरा रहता है ॥ ११७ ॥

जातमात्रं न यः शत्रुं व्याधिं च प्रशमं नयेत् ॥
अतिपुष्टाङ्गयुक्तोऽपि स पश्चात्तेन हन्यते ॥११८॥

भाषार्थ–जो, शत्रुको तथा व्याधिको वे उत्पन्न होतेही नहीं नष्ट करता वह अतिपुष्ट हो जानेपर पीछेसे उसीकरके मारा जाता है ११८

प्राज्ञे नियोज्यमाने तु सन्ति राज्ञस्त्रयो गुणाः ॥
यशः स्वर्गनिवासश्च विपुलश्च धनागमः ॥ ११९ ॥

भाषार्थ–प्राज्ञ (बुद्धिमान्) पुरुषको कार्यमें नियुक्त करनेसे यश (कीर्ति), स्वर्गवास (महान् सुख) और विपुल धनकी प्राप्ति येतीन गुण राजाको प्राप्त होते. हैं ॥ ११९ ॥

मूर्खे नियोज्यमाने तु त्रयो दोषा महीपतेः ॥
अयशश्चार्थनाशश्च नरके गमनं तथा ॥ १२० ॥

भाषार्थ–मूर्खको राजकर्मचारी बनानेसे राजाको तीन दोष प्राप्त होते हैं. एक अपयश, दूसरा धननाश और तीसरा नरकवास ! ॥१२० ॥

राजा सम्पत्तिहीनोऽपि सेव्यः सेव्यगुणाश्रयः ॥
भवत्याजीवनं तस्मात्फलं कालान्तरादपि ॥ १२१ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–यदि राजा उत्तमगुणोंसे युक्त हो तो सम्पत्तिहीन होनेपरभी सेवन करनेयोग्य होता है. क्योंकि–उससे जीवन होता है और बहुतकालपाय फलभी प्राप्त होता है. अर्थात्, उत्तमगुणोंके आश्रयसे ऐश्वर्यवान् होकर राजा अपने प्रजाकी भलाईमें नियुक्त होता है ॥ १२१ ॥

राज्यलोभादहंकारादिच्छतः स्वामिनः पदम् ॥
प्रायश्चित्तं तु तस्यैकं जीवोत्सर्गो न चापरम् ॥१२२॥

भाषार्थ–जो राज्यलोभसे, अथवा अहंकारसे स्वामीके पदको चाहता है, उसको प्राणपरित्यागरूप प्रायश्चित्तके विना और दूसरा प्रायश्चित्त नहीं है ॥ १२२ ॥

पिता वा यदि वा भ्राता पुत्रो वा यदि वा सुहृत् ॥
प्राणच्छेदकरा राज्ञा हन्तव्या भूतिमिच्छता ॥ १२३ ॥

भाषार्थ–पिता वा भाई अथवा पुत्र यदि वा मित्र, चाहे कोई हो, जो अपने प्राण हरण करना चाहता हो, राज्यैश्वर्यकी इच्छावाले राजाको उचित है कि–उसको मरवा डाले ॥ १२३ ॥

धान्यानां संग्रहो राजन् ! उत्तमः सर्वसंग्रहात् ॥
निक्षिप्तं हि मुखे रत्नं न कुर्यात् प्राणधारणम् ॥१२४॥

भाषार्थ–हे राजन् ! सब संग्रहोंसे धान्यका संग्रह उत्तम है. मुखमें डाला हुवा रत्न प्राणधारण नहीं कर सकता है अर्थात् प्राणरक्षा धान्यसेही होती है ॥ १२४ ॥

आकारैरिङ्गितैर्गत्या चेष्टया भाषणेन च ॥
नेत्रवक्त्रविकाराभ्यां लक्ष्यतेन्तर्गतं मनः ॥ १२५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–आकारसे, संकेतसे, गतिसे, चेष्टासे और भाषण (बोलचाल) से, तथा नेत्रसे और मुखके विकारोंसे मनका अन्तर्गत (भाव) जाना जा सकता है ॥ १२५ ॥

सत्यं शौर्यं दया त्यागो नृपस्यैते महागुणाः ॥
एभिर्मुक्तो महीपालः प्राप्नोति खलु वाच्यताम्॥१२६॥

भाषार्थ–सत्य, शूरता, दया और दान ये राजाके महागुण हैं. इन गुणोंको छोड देनेसे राजा अवश्य निन्दाको प्राप्त होता है ॥१२६॥

अविद्वानपि भूपालो विद्यावृद्धोपसेवया ॥
परां श्रियमवाप्नोति जलासन्नतरुर्यथा ॥ १२७ ॥

भाषार्थ–विद्याहीन राजाभी विद्वान् पुरुषोंकी सेवासे जलके समीपवर्ती वृक्षके समान परम ऐश्वर्यको प्राप्त होता है ॥ १२७ ॥

दाता क्षमी गुणग्राही स्वामी दुःखेन लभ्यते ॥
शुचिर्दक्षोऽनुरक्तश्च जाने भृत्योऽपि दुर्लभः ॥१२८॥

भाषार्थ–" दानी, क्षमावान्, गुणग्राही इन गुणोंवाला स्वामी दुर्लभ है और पवित्र, दक्ष, तथा अनुरागयुक्त (प्रेमी) सेवकभी दुर्लभ है " ऐसा मैं जानता हूं ॥ १२८ ॥

हर्षक्रोधौ समौ यस्य शास्त्रार्थे प्रत्ययः सदा ॥
नित्यं भृत्यानपेक्षा च तस्य स्याद्धनदा धरा१२९॥

भाषार्थ–जिस स्वामीके हर्ष और क्रोध दोनों समान हैं, जिसका शास्त्रके अर्थमें सदा विश्वास है, जिसको सेवकोंकी सदा अनपेक्षा है, उस राजाकी पृथिवी सदैव धन देनेवाली होती है ॥ १२९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

आहवेषु च ये शूराः स्वाम्यर्थे त्यक्तजीविताः ॥
भर्तृभक्ताः कृतज्ञाश्च ते नराः स्वर्गगामिनः ॥ १३० ॥

भाषार्थ-जो शूर संग्राममें स्वामीके अर्थ प्राणत्यागभी करते हैं, तथा जो स्वामिभक्त और कृतज्ञ हैं वेही मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं॥१३०॥

कृतकृत्यस्य भृत्यस्य कृतं नैव प्रणाशयेत् ॥
फलेन मनसा वाचा दृष्ट्या चैनं प्रहर्षयेत् ॥१३१॥

भाषार्थ-कृतकृत्य सेवकके कर्मको राजा विनष्ट नहीं करै. किन्तु फलसे, मनसे, वाणीसे और दृष्टिसे उसको प्रसन्न रक्खै ॥ १३१ ॥

ये जात्यादिमहागर्वान्नरेन्द्रान्नोपयांति च ॥
तेषामामरणं भिक्षा प्रायश्चित्तं विनिर्मितम् ॥ १३२ ॥

भाषार्थ-जो लोग अपनी जातिआदिके गर्वसे राजाओंके निकट नहीं जाते, उनको प्रायश्चित्त, मरणकालतक भिक्षा यह है ॥ १३२ ॥

विद्यावतां महेच्छानां शिल्पविक्रमशालिनाम् ॥
सेवावृत्तिविदां चैव नाश्रयः पार्थिवं विना ॥ १३३ ॥

भाषार्थ-विद्वानों, महोदयों, शिल्पी और बलवानों तथा सेवावृत्ति जाननेवालोंका आश्रय, विना राजाके और कोई नहीं है ॥१३३॥

राजानमेव संश्रित्य विद्वान् याति परां गतिम् ॥
विना मलयमन्यत्र चन्दनं न प्ररोहति ॥ १३४ ॥

भाषार्थ-राजावोंके आश्रय होकर विद्वान् जन श्रेष्ठ गति पाता है. अर्थात्, विद्वान् लोग राजाके समीप रहकर प्रसिद्धि पाते हैं. मलयगिरिके विना अन्य कहीं चन्दन नहीं उपजता है ॥ १३४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सर्पान् व्याघ्रान् गजान् सिंहान् दृष्ट्वोपायैर्वशीकृतान् ॥
राजेति कियती मात्रा ? धीमतामप्रमादिनाम् ॥१३५॥

भाषार्थ–सांपोंको, व्याघ्रोंको, हाथियोंको और सिंहोंको उपायोंसे वशमें किये हुये देखकर सावधान मनवाले बुद्धिमानोंको राजाको वश करना कौन बडी बात है ? ॥ १३५ ॥

धवलान्यातपत्राणि वाजिनश्च मनोरमाः ॥
सदा मत्ताश्च नागेन्द्राः प्रसन्ने सति भूपतौ ॥१३६॥

भाषार्थ–श्वेतछत्र, मनोहर घोडे, मत्तहाथी ये सब राजाके प्रसन्न होनेसे सदा रहते हैं ॥ १३६ ॥

यो न वेत्ति गुणान् यस्य न तं सेवेत पंडितः ॥
न हि तस्मात्फलं किंचित्सुकृष्टादूषरादिव ॥ १३७ ॥

भाषार्थ–जो जिसके गुणोंको नहीं जानता है पंडितजन उसका सेवन नहीं करै; क्योंकि, उससे कुछभी फल प्राप्त नहीं होता. जैसे, ऊषरभूमिमें बीज बोनेसे नहीं ऊगता है ॥ १३७ ॥

युद्धकालेऽग्रगो यः स्यात्सदा पृष्टानुगः पुरे ॥
प्रभोर्द्वाराश्रितो हर्म्ये स भवेद्राजवल्लभः ॥ १३८ ॥

भाषार्थ–युद्धसमयमें जो आगे रहता है, पुरमें पीछे रहता है और राजमन्दिरमें अपने स्वामीके आश्रित रहता है, वह राजाका प्यारा होता है ॥ १३८ ॥

यमाश्रित्य न विश्रामं क्षुधार्ता यान्ति सेवकाः ॥
सोऽर्कवन्नृपतिस्त्याज्यः सदा पुष्पफलोऽपि सन् ॥१३९॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

करके लज्जासे कुछभी नहीं कहता है उससे राजा सहायवाला होता है ॥ १४७ ॥

कालातिक्रमणं वृत्तेर्यो न कुर्वीत भूपतिः ॥
कदाचित्तं न मुञ्चन्ति भर्त्सिता अपि सेवकाः ॥१४८॥

भावार्थ-जो राजा अपने सेवककी वृत्ति (वेतन अथवा पगार)-का कालातिक्रमण नहीं करता अर्थात् समयपर नौकरीका पैसा दे देता है, उसके डाटनेपरभी नौकर उसका कभी नहीं त्याग करता है ॥ १४८ ॥

यत्सकाशान्न लाभः स्यात्केवलाः स्युर्विपत्तयः ॥
सः स्वामी दूरतस्त्याज्यो विशेषादनुजीविभिः ॥१४९॥

भावार्थ-जिस राजाके आश्रयसे लाभ नहीं होता है, केवल विपत्तियां प्राप्त होती हैं; अर्थात् लाभ कुछ नहीं और संकट रहता है, जीविकाकी इच्छावालोंको वह राजा विशेषकरके त्याग कर देने योग्य होता है ॥ १४९ ॥

अपि संमानसंयुक्ताः कुलीना भक्तितत्पराः ॥
वृत्तिभङ्गान्महीपालं त्यक्त्वा यान्ति सुसेवकाः॥१५०॥

भावार्थ-सन्मानवाले, कुलीन और स्वामिभक्त सुसेवकभी वृत्ति-(जीविका) भंग होनेसे राजाको त्यागकर चले जाते हैं ॥ १५० ॥

अपि स्वल्पमसत्यं यः पुरो वदति भूभुजाम् ॥
देवानां च विनश्येत स द्रुतं सुमहानपि ॥ १५१ ॥

भावार्थ-जो पुरुष राजावों और देवतावोंके आगे थोडाभी असत्य

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कहता है, वह महाजन (बडा आदमी) होनेपरभी उसका शीघ्रही नाश हो जाता है ॥ १५१ ॥

फलहीनं नृपं भृत्याः कुलीनमपि चोन्नतम् ॥
संत्यज्यान्यत्र गच्छन्ति शुष्कं वृक्षमिवाण्डजाः ॥१५२॥

भाषार्थ-कुलीन और उन्नत परन्तु फलहीन, ऐसे राजाकोभी सेवक जन त्याग देते हैं. जैसे, सूखे वृक्षका पक्षीगण ॥ १५२ ॥

लोकाऽनुग्रहकर्तारः प्रवर्धन्ते नरेश्वराः ॥
लोकानां संक्षयाच्चैव क्षयं यांति न संशयः॥१५३॥

भाषार्थ-लोकोंपर अनुग्रह करनेवाले राजालोग, वृद्धिको प्राप्त होते हैं और लोकोंका क्षय होनेसे क्षयको प्राप्त होते हैं इसमें सन्देह नहीं है ॥ १५३ ॥

राजा बन्धुरबन्धूनां राजा चक्षुरचक्षुषाम् ॥
राजा पिता च माता च सर्वेषां न्यायवर्तिनाम् १५४

भाषार्थ-जिनके कोई बन्धु नहीं उनका बन्धु राजा है, जिनको नेत्र नहीं उनको नेत्र राजा है, राजाही सब न्यायवालोंका पिता माता है ॥ १५४ ॥

उत्तिष्ठमानस्तु परो नोपेक्ष्यः पथ्यमिच्छता ॥
समौ हि शिष्टैराम्नातौ वत्स्यन्तावामयः स च ॥१५५॥

भाषार्थ-अपना हित चाहनेवाले राजाको उचित है कि-शत्रुके उठनेकी उपेक्षा न करै. शिष्टजनोंने बढेहुये शत्रु और रोगको एक-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

समान कहा है. अर्थात् राजाको उचित है कि शत्रुको बढने नहीं देवै ॥ १५५ ॥

यः सम्मानं समाधत्ते भृत्यानां क्षितिपोऽधिकम् ॥
वित्ताभावेऽपि तं दृष्ट्वा ते त्यजन्ति न कर्हिचित्॥ १५६॥

भावार्थ—जो राजा अपने सेवकोंका अधिक सन्मान करता है, उस राजाके पास धन नहीं देखकर केभी सेवक उसका कभी त्याग नहीं करते हैं

अपृष्टस्तु नरः किञ्चिद्यो ब्रूयाद्राजसंसदि ॥
न केवलमसम्मानं लभते च विडम्बनम् ॥ १५७ ॥

भावार्थ—जो मनुष्य राजसभामें विना पूछेही कुछ कहने लगता है, वह केवल असम्मानको इतनाहि नहीं किन्तु विडम्बनाकोभी प्राप्त होता है अर्थात् उसका अपमान होता है ॥ १५७ ॥

कारुण्यं संविभागश्च यस्य भृत्येषु सर्वदा ॥
संभवेत्स महीपालस्त्रैलोक्यस्यापि रक्षणे ॥ १५८ ॥

भावार्थ—जिस राजाका सेवकजनोंमें भलीभांति दयाका भाव है, वह राजा तीनों लोककी रक्षा, करनेमें समर्थ होता है ॥ १५८ ॥

निर्विषोऽपि यदा सर्पः फणाटोपैर्भयङ्करः ॥
तथाडम्बरवान्न राजा न परैः परिभूयते ॥ १५९ ॥

भावार्थ—जैसे, विषहीनभी साँप, फन खडा कर देनेसे भयंकर होता है, वैसेहि आडम्बरवाला राजाभी भयंकर होनेसे शत्रुवोंसे पराजित नहीं होता है ॥ १५९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

नोपेक्षितव्यो विद्वद्भिः शत्रुरल्पोऽप्यवज्ञया ॥
वह्निरल्पोऽपि संवृद्धः कुरुते भस्मसाद्वनम् ॥ १६० ॥

भाषार्थ-विद्वान् जनोंकरके थोडीभी अवज्ञासे शत्रुकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये. क्योंकि, थोडीसीभी अग्नि बढ जानेसे वनको भस्मकर डालती है ॥ १६० ॥

शपथैः संधितस्यापि न विश्वासं व्रजेद्रिपोः ॥
राज्यलोभोद्यतो विप्रः शक्रेण शपथैर्हतः ॥ १६१ ॥

भाषार्थ-शपथ (सौगन्द) करके सन्धि (मिलाप) कर लेनेपरभी शत्रुका विश्वास नहीं करै. राज्यके लोभसे उद्यत विप्रको इन्द्रने शपथकरकेहि मार डाला ॥ १६१ ॥

रक्षाधिकारादीशत्वाद्दूताऽनुग्रहकारणात् ॥
यदेव कुरुते राजा तत्प्रमाणमिति स्थितिः ॥ १६२ ॥

भाषार्थ-रक्षाके अधिकारसे, स्वामी होनेसे और दूतोंपर अनुग्रह करनेसे जो कुछ राजा करता है वह प्रमाण है, अर्थात् ठीकही है यही राज्यस्थितिका कारण है ॥ १६२ ॥

पुष्पैरपि न योद्धव्यं किं पुनर्निशितैः शरैः ? ॥
जये भवति सन्देहः प्रधानपुरुषक्षयः ॥ १६३ ॥

भाषार्थ-फूलोंसेभी युद्ध नहीं करना. फिर तीक्ष्ण बाणोंसे क्या कहना ? क्योंकि, युद्ध करनेसे जय होनेमें सन्देह और प्रधानपुरुषोंका विनाश होता है ॥ १६३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

राज्ञामाज्ञाभयाद्यस्मान्न च्यवन्ते पथः प्रजाः
व्यवहारस्ततो ज्ञेयः शान्तितो राजशासनम्॥ १६४

भाषार्थ-राजावोंकी आज्ञाके भयसे जब कि प्रजाजन मार्गका उल्लंघन न करैं अर्थात् प्रजालोग राजनियमोंका पालन भलीभांति करने लगें, तब वह प्रजाजनका व्यवहार शान्तिपूर्वक राजशासन जानना ॥ १६४ ॥

राज्ञस्तु दर्शनं कुर्यात् ज्ञात्वावसरसौष्टवम् ॥
गुणादिख्यापनात्पूर्वमुपनीतो महाशयैः ॥ १६५ ॥

भाषार्थ-राजाका दर्शन उत्तमसमय जानकर करै. गुणआदिकोंका वर्णन महाशयों (श्रेष्ठजनों) द्वारा पहले हो जावे तब आदरसहित जावै अर्थात् जब अपना गुण, उत्तम जनोंद्वारा राजाको प्रगट हो जावे और आदरसे राजा बुलावै तब सन्मानपूर्वक ले जानेसे जाकर राजाका दर्शन करै ॥ १६५ ॥

दर्शनं नाधमद्वारा राज्ञः कार्यं विपश्चिता ॥
गरिष्ठोऽप्यतिनीचः स्यादुपनीतो लघुर्भवेत्॥ १६६॥

भाषार्थ-अधमपुरुषके द्वारा राजदर्शन कभी न करै. क्योंकि, अधमपुरुषके साथ जानेसे महान् पुरुषभी अति नीच हो जाता है और उसको हलकापन आता है ॥ १६६ ॥

गंतव्या राजसभा द्रष्टव्या राजपूजिता लोकाः ॥
यद्यपि न भवंत्यर्था स्तथाप्यनर्था विनश्यन्ति ॥१६७॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-राजसभामें गमन करना उचित है और राजासे आदर पायेहुवे लोगोंको देखनाभी उचित है. वहाँ यद्यपि अर्थसिद्धि न होवे तौभी अनर्थ दूर हो जाते हैं ॥ १६७ ॥

परस्पराऽनुरक्ता ये योधा शार्ङ्गधनुर्धराः ॥
सन्नद्धास्तुरगारूढास्ते जयन्ति रणे रिपून् ॥ १६८ ॥

भाषार्थ-जो योधा धनुषको धारण करनेवाले परस्पर अनुरागसे युक्त घोडोंपर चढे तैयार हैं वेही वीर, रणमें शत्रुवोंको जीतते हैं १६८

एतदर्थं कुलीनानां नृपाः कुर्वन्ति संग्रहम् ॥
आदिमध्यावसानेषु न ते यास्यन्ति विक्रियाम् ॥ १६९ ॥

भाषार्थ-इसकारण राजालोग अच्छे लोगोंका संग्रह करते हैं. क्योंकि, वे आदि, मध्य और अन्तमें विक्रिया (विकारभाव) को प्राप्त नहीं होते हैं ॥ १६९ ॥

सर्वे यत्र विनेतारः सर्वे यत्राभिमानिनः ॥
सर्वे महत्त्वमिच्छन्ति कुलं तदवसीदति ॥ १७० ॥

भाषार्थ-जिस कुलमें सब नेता हों और सब अभिमानी हों, तथा सबही बडप्पनकी इच्छा करते हों वह कुल विनष्ट हो जाता है ॥१७०॥

रुष्टोऽपि राजा यद्दद्यान्न तत्तुष्टो वणिक्जनः ॥
अतो भूमिपतिः सेव्यस्त्याज्यो दूरतरेण सः ॥ १७१ ॥

भाषार्थ-रुष्ट होनेसेभी राजा जो कुछ देता है सो वणिक्जन प्रसन्न होनेपरभी नहीं दे सकता है. अतः राजा सेवन करने योग्य है और वह वणिक्जन दूरहीसे त्याग करनेयोग्य है ॥ १७१ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गृध्राकारोऽपि सेव्यः स्यात् हंसाकारैः सभासदैः ॥
हंसाकारोऽपि संत्याज्यो गृध्राकारैः सभासदैः ॥१७२॥

भावार्थ–गीधके आकारवालाभी राजा, हंसके आकारवाले सभासदोंसे सेवन करने योग्य होता है और हंसके आकारवालाभी राजा गीधके आकारवाले सभासदोंसे युक्त हो तो त्याग करनेयोग्य होता है ॥ १७२ ॥

सद्वंशसम्भवः शुद्धः कोटिदोऽपि गुणान्वितः ॥
कामंधनुरपि क्रूरो वर्जनीयः सतां प्रभुः ॥ १७३ ॥

भावार्थ–उत्तम वंशमें उत्पन्न, पवित्र, करोड मुद्रा देनेवालाभी स्वामी यदि धनुषकी भांति क्रूर (दुःस्वभाववाला) है वह सज्जनों-करके त्याग देनेयोग्य होता है ॥ १७३ ॥

दुर्गदेशप्रविष्टोऽपि शूरोऽभ्येति पराभवम् ॥
गाढपङ्कनिमग्नाङ्गो मातङ्गोऽप्यवसीदति ॥ १७४ ॥

भावार्थ–दुर्गदेशमें प्रविष्ट अर्थात् बीचमें घिर जानेसे शूरवीरभी, पराभवको प्राप्त होता है अर्थात् हार जाता है. जैसे, गाढे कीचड-(दलदल) में फँस जानेसे हाथी दुःख पाकर विनष्ट हो जाता है॥१७४॥

ये ह्याहवेषु बध्यन्ते स्वाम्यर्थमपराङ्मुखाः ॥
विकटैरायुधैर्यान्ति ते स्वर्गं योगिनो यथा ॥१७५॥

भावार्थ–युद्धमें नहीं भागे हुये अपने स्वामीके निमित्त जो सेवक-विकटशस्त्रोंसे मारे जाते हैं वे, जैसे योगीजन स्वर्गलोकको जाते हैं, वैसेंही स्वर्गगामी होते हैं ॥ १७५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सपक्षो लभते काको वृक्षस्य विविधं फलम् ॥
पक्षहीनो मृगेन्द्रोऽपि भूमिसंस्थो निरीक्षते ॥ १७६ ॥

भाषार्थ—पक्षसहित अर्थात् परोंवाला कौवा वृक्षके विविध फलोंको पाता है और विना पक्षका सिंहभी भूमिपर खडा हुवा देखा करता है. भावार्थ यह कि—राजाको, अपने पक्षवाले अधिक बनाने चाहिये. जिस राजाके पक्षपर दूसरे राजालोग नहीं होते वह राजा शत्रुवोंसे मारा जाता है. विना पक्षका राजा, मृगेन्द्रसमान होनेपरभी बलहीन होता है ॥ १७६ ॥

उपेक्षितः क्षीणबलोऽपि शत्रुः
प्रमाददोषात्पुरुषैर्मदान्धैः ॥
साध्योऽपि भूत्वा प्रथमं ततोऽसा-
वसाध्यतां व्याधिरिव प्रयाति ॥ १७७ ॥

भाषार्थ—मदान्धपुरुष प्रमाददोषसे क्षीणबल शत्रुकी उपेक्षा करते हैं अर्थात् अहंकारसे अन्धे होकर असावधानीसे अपने शत्रुको निर्बल जानकर निश्चिन्त हो जाते हैं. परन्तु वह शत्रु प्रथम तो साध्यभी हो तथापि पीछेसे रोगकी भांति असाध्य हो जाता है ॥ १७७ ॥

आश्रयितव्यो नरपतिर्जयितव्यानि भूरिवित्तानि ॥
आरब्धव्यं वितरणमानेतव्यं यशोऽपि दशदिग्भ्यः १७८

भाषार्थ—राजाका आश्रय लेना, बहुत धन मिलाना, संसारसागरसे पार होनेका उपाय शुरू करना और अपना यशभी दशोंदिशावोंमें फैलाना चाहिये ॥ १७८ ॥

असमैः समीयमानः समैश्च परिहीयमाणसत्कारः ॥
धुरि यो न नियुज्यमानस्त्रिभिरर्थपतिं त्यजति भृत्यः १७९

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जो अपने समान नहीं हैं उनसे समानताका वर्ताव करना और अपने समानवालोंसे समानताका वर्ताव नहीं करना, तथा जो उत्तमलोग उच्चपदके अधिकारी हैं उनको उच्चपदपर नियत न करना इन तीन दोषोंसे सेवक अपने स्वामीका त्याग करता है ॥ १७९ ॥

यदि तव हृदयं विद्वन्! सुनयं स्वप्नेऽपि मास्म सेविष्ठाः ॥
सचिवजितं षण्ढजितं युवतिजितं चैव राजानम् ॥ १८० ॥

भाषार्थ–हे विद्वन्! यदि तुह्मारा हृदय स्वप्नमेंभी उत्तम नीतिकी कामना रखता है तो मंत्रीसे जीते हुये, हिजडोंसे जीते हुये और स्त्री-जनोंसे जीते हुये राजाका सेवन नहीं करना ॥ १८० ॥

यत्रात्मीयो जनो नास्ति भेदस्तत्र न विद्यते ॥
कुठारैर्दण्डनिर्मुक्तैर्भिद्यन्ते तरवः कथम्? ॥ १८१ ॥

भाषार्थ–जहां अपना कोईभी जन नहीं होता है, वहां भेद नहीं जाना जाता है. कुदालमेंसे दंड निकाल लेनेपर वह कुदाल वृक्षोंको कैसे काट सकेगा? ॥ १८१ ॥

नापरीक्ष्य नयेद्दण्डं न च मंत्रं प्रकाशयेत् ॥
विसृजेन्नैव लुब्धेभ्यो विश्वसेन्नापकारिषु ॥ १८२ ॥

भाषार्थ–विना परीक्षा किये अर्थात् अन्यायसे दंड नहीं देवै और अपने मंत्र (सम्मत) को प्रकाश नहीं करै, लोभीजनोंसे दान देनेका काम नहीं करावै, तथा अपकार करनेवालोंमें विश्वास नहीं करै. भावार्थ यह कि–अपराधको भलीभांति निश्चयकरके दंड देवै. और अ-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पनी आज्ञाको अथवा सम्मतिको पहलेही प्रगट न करै, तथा लोभीको धन न सौंपै. अपकारीका विश्वास न करै॥ १८२॥

जिते लक्ष्मी मृते स्वर्गः कीर्तिश्च धरणीतले॥
तस्माद्युद्धं विधातव्यं हन्तव्या परवाहिनी॥१८३॥

भाषार्थ–जीत होनेसे लक्ष्मी प्राप्त होती है, मर जानेसे स्वर्ग प्राप्त होता है और पृथ्वीपर कीर्ति (यश) का विस्तार होता है. इसकारण, युद्ध करना चाहिये और शत्रुके सेनाको मारना चाहिये॥ १८३॥

विधाय वैरं सामर्षे नरोऽरौ य उदासते॥
प्रक्षिप्योदर्चिषं कक्षे शेरते तेऽभिमारुतम्॥१८४॥

भाषार्थ–क्रोधपूर्वक वैर करके जो पुरुष शत्रुसे उदास हो जाता है अर्थात् युद्ध नहीं करता है, वह अग्निको तृणसमूहमें डालकर वायुके सन्मुख शयन करता है॥ १८४॥

सुमंत्रिणा वर्धयते नृपाणां लक्ष्मीमहीधर्मयशःसमूहः॥
दुर्मंत्रिणा नाशयते तथैव लक्ष्मीमहीधर्मयशःसमूहः१८५

भाषार्थ–उत्तम मंत्री होनेसे राजावोंकी लक्ष्मी, भूमि, धर्म और यश इनकी वृद्धि होती है. तथा दुष्ट मंत्रीसे लक्ष्मी, भूमि, धर्म और यश इनका नाश हो जाता है॥ १८५॥

क्रतौ विवाहे व्यसने रिपुक्षये
यशस्करे कर्मणि मित्रसंग्रहे॥
प्रियासु नारीष्वधनेषु बन्धुषु
धनव्ययस्तेषु न गण्यते बुधैः॥ १८६॥

---

१ अग्निम्। २ तृणसमूहे।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–यज्ञमें, विवाहमें, व्यसनमें, शत्रुक्षयमें, यश बढानेवाले कर्मोंमें, मित्रोंके संग्रहमें, प्रिय स्त्रियोंमें, धनहीन बन्धुजनोंमें जो धनव्यय (खर्च) होता है, बुधजनोंने उस धनव्ययको ' धनव्यय ' नहीं माना है ॥ १८६ ॥

स किं सखा ? साधु न शास्ति योऽधिपं
हितान्न यः संश्रृणुते स किं प्रभुः ? ॥
सदाऽनुकूलेषु हि कुर्वते रतिं
नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः ॥ १८७ ॥

भाषार्थ–क्या वह सखा है ? जो स्वामीको उत्तम शिक्षा नहीं देता है और क्या वह स्वामी है ? जो अपने सखाके हितवचनको नहीं सुनता है. क्योंकि, सब सम्पदायें सदा अनुकूलही राजावों और मंत्रियोंमें रमण करती हैं ॥ १८७ ॥

नरपतिहितकर्ता द्वेष्यतां याति लोके
जनपदहितकर्ता त्यज्यते पार्थिवेन ॥
इति महति विरोधे विद्यमाने समाने
नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्ता ॥१८८॥

भाषार्थ–राजाका हितकर्ता लोकमें द्वेष्यताको प्राप्त होता है, अर्थात् जो राजकर्मचारी राजाका हितकारी होता है, उससे लोग द्वेषभाव मानने लगते हैं और जो सब लोगोंका हितकारी होता है वह राजाकरके त्यागं दिया जाता है. यह बडे भारी विरोधके समान विद्यमान होनेपर राजा और अन्य सब लोगोंका हितकार्य करनेवाला दुर्लभ है ॥ १८८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

व्रजन्ति ते मूढधियः पराभवं
भवन्ति मायाविषु ये न मायिनः ॥
प्रविश्य हि घ्नन्ति शठास्तथाविधा
न संवृताङ्गान्निशिता इवेषवः ॥ १८९ ॥

भाषार्थ–जो मायावी (छली) लोगोंमें मायाधारी नहीं होते हैं, वे मूढबुद्धिवाले लोग पराभव (पराजय) को प्राप्त होते हैं. क्योंकि, शठलोग ऐसे लोगों (मायावियोंमें मायावी न बननेवालों) को घुसकर मार डालते हैं. जैसे, तीक्ष्ण बाण कवचहीन अंगवाले पुरुषोंको वींध डालते हैं ॥ १८९ ॥

आज्ञा कीर्तिः पालनं ब्राह्मणानां दानं भोगो मित्रसंरक्षणं च॥
येषामेते षड्गुणा न प्रवृत्ता कोऽर्थस्तेषां पार्थिवोपाश्रयेण ?

भाषार्थ–आज्ञा, कीर्ति, ब्राह्मणोंका पालन, दान, भोग और मित्रोंकी रक्षा करना ये छे गुण जिनके प्रवृत्त नहीं, उनका राजाके आश्रयसे कौन अर्थ सिद्ध हो सकता है ? भावार्थ यह कि–आज्ञा करने, कीर्ति फैलने, ब्राह्मणोंकी रक्षा करने, दानकरने और भोग भोगने तथा तथा मित्रोंका उपकार करनेके अर्थ राजाका आश्रय लिया जाता है. अर्थात्, राजाके आश्रय रहकर जिसके आज्ञा (हुक्म हासिल) नहीं, यश नहीं, जिसने ब्राह्मणोंकी रक्षा नहीं की, दान नहीं दिया, सुख नहीं भोगा, मित्रोंपर उपकार नहीं किया, उसका राजाके आश्रय रहना वृथा है ॥ १९० ॥

यदि मरणमपास्य नास्ति मृत्यो–।
र्भयमिति युक्तमितोऽन्यतः प्रयातुम् ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अथ मरणमवश्यमेव जन्तोः ।
किमिति मुधा मलिनं यशः क्रियेत ?॥ १९१ ॥

भाषार्थ–जो समरभूमिको छोडकर मृत्युका भय नहीं रहे तो अन्यत्र भाग जाना ठीक है परन्तु प्राणीको मरण तो निश्चितही है. तब क्यों वृथा यश मलीन किया जाय ? अर्थात् समरभूमिमें पीठ दिखानेसे बडाभारी कलंक लगता है और मृत्यु पीछा नहीं छोडती है. इस कारण, क्षत्रिय (शूरवीर) को पीठ दिखाकर समरभूमिसे हट जाना उचित नहीं है ॥ १९१ ॥

आसन्नमेव नृपतिर्भजते मनुष्यं
विद्याविहीनमकुलीनमसंस्कृतं वा ॥
प्रायेण भूमिपतयः प्रमदा लताश्च
यः पार्श्वतो भवति तं परिवेष्टयन्ति ॥ १९२ ॥

भाषार्थ–राजा अपने समीपवर्ती मनुष्यकोही मानता है. चाहे वह विद्याविहीन (अविद्वान्), अकुलीन (कुलहीन). अथवा संस्काररहित क्यों न हो. राजालोग, स्त्रियां और लतायें (वेलें) ये प्रायः अपने समीप जो होता है उसको लिपटते हैं, अर्थात् राजालोग अपने समीपवर्तीका विश्वास मानते हैं, स्त्रियां अपने निकटवर्तीका आश्रय लेती हैं, एवं लतायें अपने समीप बालवृक्षादिसे लिपटकर फैल जाती हैं ॥१९२॥

एकं भूमिपतिः करोति सचिवं राज्ये प्रमाणं यदा ।
तं मोहाच्छ्रयते मदः स च मदाद्दास्येन निर्विद्यते ॥
निर्भिन्नस्य पदं करोति हृदये तस्य स्वतंत्रस्पृहा
स्वातंत्र्यस्पृहया ततः स नृपतेः प्राणेष्वभिद्रुह्यते १९३

भाषार्थ–जब राजा अपने राज्यभरमें एकही मंत्रीको नियुक्त कर

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

देता है, तब उस मंत्रीको मोहके कारण मद (अहंकार) हो जाता है. और फिर मदयुक्त होकर दास्य करके वैराग्यको प्राप्त हो जाता है, अनन्तर वैराग्ययुक्त मंत्रीके हृदयमें स्वतंत्रताकी इच्छा होती है, अर्थात् 'मैं अकेलाही राज्याधिकारी होता' दूसरे किसीका भय मुझको न रहता' ऐसी इच्छा होनेसे फिर वह मंत्री राजाके प्राणोंपर द्रोह करता है अर्थात् राजाके प्राण लेनेको तैयार हो जाता है ॥ १९३ ॥

अविवेकमतिर्नृपतिर्मंत्री गुणवत्सु वक्रितग्रीवः ॥
यत्र खलाश्च प्रबलास्तत्र कथं सज्जनावसरः ? ॥ १९४ ॥

भाषार्थ–जहां राजा अविवेकमतिवाला हो अर्थात् अज्ञानी हो, और मंत्री गुणवानोंको देखकर टेढी ग्रीवावाला हो, अर्थात् गुणियोंका आदर न करै तथा जहां दुष्टोंकी प्रबलता हो, वहां सज्जनको अवसर कैसे मिल सकता है ? अर्थात् वहां ऐसा समय नहीं कि–सज्जन कुछ बात कर सकै ॥ १९४ ॥

नियुक्तहस्तार्पितराज्यभारा-
स्तिष्ठन्ति ये सौधविहारसाराः ॥
बिडालवृन्दाऽर्पितदुग्धपूराः
स्वपन्ति ते मूढधियः क्षितीन्द्राः ॥ १९५ ॥

भाषार्थ–जो अपने राज्यका भार दूसरे लोगोंके हाथमें सौंपकर आप राजमन्दिरमें विहार करते हैं, दूधसे भरे पात्र बिडालसमूहको सौंपकर वे मूढबुद्धिवाले राजालोग शयन करते हैं ॥ १९५ ॥

कः कालः कानि मित्राणि को देशः कौ व्ययागमौ ॥
कश्चाहं का च मे शक्तिरिति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः ॥ १९६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-"कौन समय है, कौन मित्र है, कौन देश है, क्या आय-व्यय (लाभखर्च) है मैं, कौन हूं और क्या मेरी शक्ति है" यह वारंवार विचार करना चाहिये ॥ १९६ ॥

सत्यानृता च परुषा[1] प्रियवादिनी च
हिंस्रा[2] दयालुरपि चार्थपरा वदान्या[3] ॥
नित्यव्यया प्रचुरनित्यधनागमा च
वेश्याङ्गनेव नृपनीतिरनेकरूपा ॥ १९७ ॥

भाषार्थ-सत्य बोलनेवाली, असत्यवादिनी, कर्कशा, प्रिय वचन बोलनेवाली, घातिनी, दयावती, अर्थपरा, दानशौण्डा, नित्यव्यय करनेवाली और नित्य अधिक धनप्राप्ति करनेवाली, वेश्याङ्गनाके समान राजनीति अनेक रूपवाली है ॥ १९७ ॥

राजन् ! दुधुक्षसि यदि क्षितिधेनुमेतां
तेनाद्य वत्समिव लोकममुं पुषाण ॥
तस्मिंश्च सम्यगनिशं परिपोष्यमाणे
नानाफलैः फलति कल्पलतेव भूमिः॥१९८॥

भाषार्थ-हे राजन् ! जो तुम पृथिवीरूपिणी धेनुको दुहना चाहते हो तो, आजसेही बछडाके समान इस लोक (प्रजा) की पालना करो. क्योंकि, प्रजाके भलीभांति पालन करनेसे भूमि कल्पलताके समान विविधफलोंसे फलवती हो जाती है ॥ १९८ ॥

वाग्दण्डं प्रथमं कुर्याद्धिग्दण्डं तदनन्तरम् ॥
तृतीयं धनदण्डं तु वधदण्डमतःपरम् ॥ १९९ ॥

१ कर्कशा । २ घातुका । ३ दानशौण्डा ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-प्रथम वाणीरूप दंड देवै, अनन्तर धिक्काररूपी दण्ड देवै, तीसरी वार धनदण्ड देवै, तिस पीछे वधदंड देवै अर्थात् पहले अपराध सूचित कर देवै और समझा देवै, दूसरी वार धिक्कार कर समझावै, तीसरी वार अपराध करनेपर धनदंड देवै अर्थात् जुर्माना करै, चौथी वार मार देवै. यह अपराध करनेवालेको दंड देना ऐसा पूर्वाचार्योंने कहा है. भोजप्रबंधसारमेंभी यह श्लोक लिखा है ॥ १९९ ॥

अदण्ड्यान् दण्डयन् राजा दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन् ॥
अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति ॥ २०० ॥

भाषार्थ-जो राजा नहीं दंड देने योग्य प्राणियोंको दंड देता है, और दंडयोग्य प्राणियोंको दंड नहीं देता है, वह राजा अयश (निन्दा)-को प्राप्त होता है और नरकको जाता है ॥ २०० ॥

दण्डः शास्ति प्रजाः सर्वा दण्ड एवाभिरक्षति ॥
दण्डः सुप्तेषु जागर्ति दण्डं धर्मं विदुर्बुधाः ॥ २०१ ॥

भाषार्थ-सब प्रजाके ऊपर दंड शासन करता है, दण्डही सब ओरसे रक्षा करता है, शयन करतेसमय दण्डही जागता है, बुधजन दण्डहीको 'धर्म' कहते हैं ॥ २०१ ॥

जगदेतन्निरालम्बं कामलोभादिभिर्बलात् ॥
निमज्जमानं निरये राज्ञा दण्डेन धार्यते ॥ २०२ ॥

भाषार्थ-यह जगत्, काम और लोभके द्वारा बलसे निरालम्ब नरकमें डूबता है. केवल दण्डसे राजाही इसको धारण करता है॥ २०२ ॥

इदं प्रकृत्या विषयैर्वशीकृतं परस्परं स्त्रीधनलोलुपं जगत् ॥
सनातने वर्त्मनि साधुसेविते प्रतिष्ठते दण्डभयोपपीडितम् ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–यह जगत्, स्वभावसेही विषयोंके वशीभूत है, परस्पर स्त्री और धनमें लोभित हो रहा है, तब साधुसेवित सनातनमार्गमें दण्डके भयसे पीडित हुआही स्थित होता है ॥ २०३ ॥

नियतविषयवर्त्ती प्रायशो दण्डयोगात् ॥
जगति परवशेऽस्मिन् दुर्लभः साधुवृत्तः ।
कृशमथ विकलं वा व्याधितं वाऽधनं वा ॥
पतिमिव कुलनारी दण्डनीत्याऽभ्युपैति ॥२०४॥

भाषार्थ–निरन्तर विषयोंमें वर्तनेवाले इस परवश जगत्में साधुचरित्रवाला पुरुष दुर्लभ है. दण्डयोगसेही स्थिति होती है । कृश, अंगहीन, व्याधित, निर्धन पतिको कुलनारी दण्डसेही प्राप्त होती है, ऐसेही प्रजा दण्डभयसे नियमके वशीभूत रहती है ॥ २०४ ॥

इति परिगणितार्थः प्राप्तमार्गानुसारा ।
नियमयति यतात्मा यः प्रजां दण्डनीत्या ॥
अपुनरपगमाय प्राप्तमार्गप्रचाराः ।
सरित इव समुद्रं सम्पदस्तं विशन्ति ॥ २०५ ॥

भाषार्थ–इसप्रकार जो राजा सब अर्थोंको भलीप्रकार जानता है और सनातन मार्गका अवलम्बन करता है और स्वयं आत्मसंयमी होकर प्रजाको दण्डनीतिसे नियममें रखता है, उसने मुक्तिके निमित्त अपना मार्ग खोललिया है. जैसे, नदियें समुद्रमें प्रवेश करती हैं, इसीप्रकार सब सम्पत्तियें उसमें प्रविष्ट होती हैं ॥ २०५ ॥

इति श्रीमदयोध्यामण्डलान्तर्वर्तिलखीमपुरखीरीनिवासि-
ज्योतिर्वित्पण्डित नारायणप्रसाद मिश्रकृत
भाषार्थसमन्विते सुभाषितरत्नाकरे
द्वितीयः प्रकाशः समाप्तः ॥ २ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

॥ अथ सुभाषितरत्नाकरः ॥



॥ तृतीयः प्रकाशः ॥

सामान्यनीतिवर्णन ।



सद्भिरेव सहासीत सद्भिः कुर्वीत संगतिम् ॥
सद्भिर्विवादं मैत्रीं च नासद्भिः किञ्चिदाचरेत् ॥ १ ॥

भाषार्थ–सज्जनोंके साथ रहै, सज्जनोंकी संगति करै, सज्जनोंके यहां विवाह करै और सज्जनोंसे मित्रता करै. दुर्जनोंके साथ कुछभी वर्ताव न करै ॥ १ ॥

अनुगन्तुं सतां वर्त्म कृत्स्नं यदि न शक्यते ॥
स्वल्पमप्यनुगन्तव्यं मार्गस्थो नावसीदति ॥ २ ॥

भाषार्थ–जो सत्पुरुषोंके मार्गसे भलीभांति चलनेकी सामर्थ्य न हो तो थोडाही चलना चाहिये. क्योंकि, सत्पुरुषोंके मार्गसे चलता हुवा पुरुष क्लेश नहीं पाता है ॥ २ ॥

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत नरश्चरितमात्मनः ॥
किन्नु मे पशुभिस्तुल्यं किन्नु सत्पुरुषैरिति ॥ ३ ॥

भाषार्थ–मनुष्य, प्रतिदिन अपने चरितको देखे कि–मुझमें पशुवोंके तुल्य कौनसा वर्ताव है और सज्जनोंकासा वर्ताव कौनसा है ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न द्विषन्ति न याचन्ते परनिन्दां न कुर्वते ॥
अनाहूता न चायान्ति तेनाश्मानोऽपि देवताः॥४॥

भाषार्थ–न किसीसे वैर करते हैं, न किसीसे कुछ माँगते हैं, न पराई निन्दा करते हैं और न विना बुलाये आते हैं, इसकारण पत्थरभी देवता हैं. सारांश यह कि–ऐसे आचरणोंसे पत्थरभी देवता माने जाते हैं. यदि मनुष्य ऐसे आचरणवाले हों तो क्यों न देवता माने जायँ ? ॥ ४ ॥

पठतो नास्ति मूर्खत्वं जपतो नास्ति पातकम् ॥
मौनिनः कलहो नास्ति न भयं चास्ति जाग्रतः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–पढनेसे मूर्खता नहीं रहती, जप करनेसे पातक नहीं रहता, मौन हो जानेसे लडाई नहीं होती है और जागनेसे भय नहीं होता है ॥ ५ ॥

गतेऽपि[1] वयसि ग्राह्या विद्या सर्वात्मना बुधैः ॥
यद्यपि स्यान्न फलदा सुलभा साऽन्यजन्मनि ॥ ६ ॥

भाषार्थ–बुधजनोंको उचित है कि आयु अधिक हो जानेपरभी सर्व प्रकारसे विद्या ग्रहण करै. यद्यपि इस जन्ममें वह फल देनेवाली न हो तथापि दूसरे जन्ममें विद्या सुलभ हो जाती है. अर्थात् विद्याका प्रभाव जन्मजन्मान्तरपर्यन्त रहता है ॥ ६ ॥

यस्य चाप्रियमन्विच्छेत्तस्य कुर्यात्सदा प्रियम् ॥
व्याधा मृगवधं कर्तुं सम्यग्गायन्ति सुस्वरम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–जिसके अप्रियकी इच्छा करै उसका सदा प्रिय करै,

1 वृद्धत्वेऽपि ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अर्थात् जिसका बुरा चाहै उससे सदा हित करै. व्याध, हिरणके मारनेको भलीभांति मधुरस्वरसे गान करते हैं अर्थात् वीणा अथवा वाँसुरीकी ध्वनि सुनाकर हिरणको व्याध मारता है ॥ ७ ॥

केचिदज्ञानतो नष्टाः केचिन्नष्टाः प्रमादतः ॥
केचिज्ज्ञानावलेपेन केचिन्नष्टैस्तु नाशिताः ॥ ८ ॥

भाषार्थ–कोई अज्ञानसे नष्ट हुवे और कोई प्रमादसे नष्ट हो गये; कोई ज्ञानके लेशसे नष्ट हो गये, तथा कोई नष्ट हुवे लोगोंकरके नाशको प्राप्त हुये ॥ ८ ॥

अतिदानाद्बलिर्बद्धो ह्यतिमानात्सुयोधनः ॥
विनष्टो रावणो लौल्यादतिसर्वत्र वर्जयेत् ॥ ९ ॥

भाषार्थ–अतिदानसे राजा बलि बाँधा गया, अतिमानसे सुयोधन (राजा दुर्योधन) का नाश हुवा, अतिचंचल होनेसे रावण मारा गया. इसकारण, अति सर्वत्र वर्जित है ॥ ९ ॥

चिन्तनीया हि विपदामादावेव प्रतिक्रिया ॥
न कूपखननं युक्तं प्रदीप्ते वह्निना गृहे ॥ १० ॥

भाषार्थ–विपत्तिकालमें पहलेसेही उपाय सोचना चाहिये. गृह (घर) में अग्नि प्रदीप्त हो जानेपर अर्थात् आग लग जानेपर कुवां खोदना ठीक नहीं ॥ १० ॥

धनमस्तीति वाणिज्यं किंचिदस्तीति कर्षणम् ॥
सेवा न किंचिदस्तीति भिक्षा नैव च नैव च ॥ ११ ॥

भाषार्थ–वाणिज्य (व्यापार) से धनलाभ होता है, खेती करनेसे कुछ धन प्राप्त होता है, सेवा (नौकरी) से कुछ नहीं होता है. भिक्षासे कुछभी नहीं ! कुछभी नहीं !! ॥ ११ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गीतशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम् ॥
व्यसनेन तु मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ॥ १२ ॥

भावार्थ—गीतशास्त्रके विनोदसे बुद्धिमान् जनोंका समय व्यतीत होता है और मूर्खोंका समय व्यसन, निद्रा अथवा कलहकरके व्यतीत होता है ॥ १२ ॥

जानन्ति पशवो गन्धाद्वेदाज्जानन्ति पण्डिताः ॥
चाराज्जानन्ति राजानश्चक्षुर्भ्यामितरे जनाः ॥ १३ ॥

भावार्थ—पशु, गन्धसे वस्तुको जान लेते हैं; पंडितलोग, वेदसे पदार्थोंको जानते हैं; दूतोंद्वारा राजालोग अपने राज्यका समाचार जानते हैं; अन्यजन, नेत्रोंसे देखकर जान लेते हैं ॥ १३ ॥

युक्तियुक्तं प्रगृह्णीयाद्बालादपि विचक्षणः ॥
रवेरविषयं वस्तु किं न दीपः प्रकाशयेत्? ॥ १४ ॥

भावार्थ—युक्तियुक्त वाक्य बालकसेभी बुद्धिवान् ग्रहण करै. क्योंकि जहाँ सूर्यकी किरण नहीं पहुँचती वहां क्या दीपक न प्रकाश करै? ॥१४॥

वृथा वृष्टिः समुद्रेषु वृथा तृप्तस्य भोजनम् ॥
वृथा दानं समर्थस्य वृथा दीपो दिवाऽपि च ॥१५॥

भावार्थ—समुद्रमें वर्षा होना वृथा है, तृप्तको भोजन देना वृथा है, समर्थको दान देना वृथा है और दिनमें दीपक दिखाना वृथा है ॥१५॥

अजायुद्धमृषिश्राद्धं प्रभाते मेघडम्बरम् ॥
दंपत्योः कलहश्चैव परिणामे न किंचन ॥ १६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–छागका युद्ध, ऋषिका श्राद्ध, प्रातःकालमें मेघडम्बर, और स्त्री–पुरुषकी लडाई इनके परिणाममें कुछभी नहीं ॥ १६ ॥

अर्थनाशं मनस्तापं गृहे दुश्चरितानि च ॥
वंचनं चापमानं च मतिमान्न प्रकाशयेत् ॥ १७ ॥

भाषार्थ–धननाश, मनका संताप, घरमें दुश्चरित, ठगना और अपमान, बुद्धिमान् पुरुष पूर्वोक्त बातोंका प्रकाश न करै ॥ १७ ॥

अवृत्तिकं त्यजेद्देशं वृत्तिं सोपद्रवां त्यजेत् ॥
त्यजेन्मायाविनं मित्रं धनं प्राणहरं त्यजेत् ॥ १८ ॥

भाषार्थ–विना जीविकावाला देश त्याग देवै. उपद्रववाली जीविकाको त्याग देवै, और मायावी (छली–कपटी) मित्रको त्याग देवै. प्राण हरनेवाले धनको त्याग देवै ॥ १८ ॥

त्यजेदेकं कुलस्यार्थे ग्रामस्यार्थे कुलं त्यजेत् ॥
ग्रामं जनपदस्यार्थे ह्यात्मार्थे पृथिवीं त्यजेत् ॥ १९ ॥

भाषार्थ–कुलके अर्थ एकको त्याग देवै, ग्रामके अर्थ कुलको त्याग देवै; देशके अर्थ ग्रामको और अपने अर्थ पृथिवीको त्याग देवै ॥ १९ ॥

न गणस्याग्रतो गच्छेत्सिद्धे कार्ये समं फलम् ॥
यदि कार्ये विपत्तिः स्यान्मुखरस्तत्र हन्यते ॥ २० ॥

भाषार्थ–जनसमूहके आगे होकर न चलै. क्योंकि–कार्य सिद्ध होनेपर सबको समान फल प्राप्त होता है और यदि काम बिगड जाय तो वहां आगे चलनेवाला मारा जाता है ॥ २० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

धनिकः श्रोत्रियो राजा नदी वैद्यस्तु पंचमः ॥
पंच यत्र न विद्यन्ते न तत्र दिवसं वसेत् ॥ २१ ॥

भाषार्थ-धनवान्, वेद जाननेवाला, राजा, नदी और वैद्य ये पांचौं जहां नहीं होते हैं वहां एक दिनभी निवास न करै ॥ २१ ॥

अनायके न वस्तव्यं न वसेद्बहुनायके ॥
स्त्रीनायके न वस्तव्यं न वसेद्बालनायके ॥ २२ ॥

भाषार्थ-जहां कोई नायक (राजा) न हो, वहां नहीं वसना चाहिये, और जहां बहुतसे नायक हों वहां नहीं वसना चाहिये, और जहां स्त्री नायक हो वहां नहीं वसै, तथा जहां बालक नायक हो वहांभी वास नहीं करै ॥ २२ ॥

चलत्येकेन पादेन तिष्ठत्येकेन पंडितः ॥
नासमीक्ष्य परं स्थानं पूर्वमायतनं त्यजेत् ॥ २३ ॥

भाषार्थ-पंडितजन एक पांवसे चलता है और एक पांवसे ठहरता है. दूसरे स्थानको विना देखे पूर्वस्थानका त्याग नहीं करै ॥ २३ ॥

पठन्ति चतुरो वेदान् धर्मशास्त्राण्यनेकशः ॥
आत्मानं नैव जानन्ति दर्वी पाकरसं यथा ॥२४॥

भाषार्थ-जो चारौ वेद और अनेक धर्मशास्त्र पढते हैं, परन्तु आ. त्माको नहीं जानते हैं वे ऐसे हैं, जैसे पाकके रसकी करछी होती है ॥ २४ ॥

अनेनमर्त्यदेहेन यल्लोकद्वयशर्मदम् ॥
विचिन्त्य तदनुष्ठेयं कर्म हेयं ततोऽन्यथा ॥ २५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-इस मनुष्यशरीरसे ऐसा कर्म विचारकर करना चाहिये. जो दोनौं लोक अर्थात् इसलोक और परलोकमें कल्याण देनेवाला हो, और जो कर्म इससे अन्यथा हो अर्थात् इसलोक और परलोकमें कल्याण देनेवाला न हो उसको त्याग देवै ॥ २५ ॥

न किंचिदपि जानाति किं कस्य श्वो भविष्यति ॥
अतः श्वः करणीयानि कुर्यादद्यैव बुद्धिमान् ॥ २६ ॥

भाषार्थ-यह कोईभी नहीं जानता है कि, किसको कल क्या होगा. अतः बुद्धिमान् जन कल करनेवाले काम आजही कर लेवै॥२६॥

परदारा न गन्तव्याः सर्ववर्णेषु कर्हिचित् ॥
नहीदृशमनायुष्यं त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ २७ ॥

भाषार्थ-सब वर्णोंमें कोईभी परस्त्रीसे संयोग कभी न करै. इस (परस्त्रीगमन) से बढ़कर आयु घटानेवाला और पापकर्म तीनौ लोकोंमें कौनसाभी नहीं है ॥ २७ ॥

मात्रा स्वस्रा दुहित्रा वा नैकशय्यासनो भवेत् ॥
बलवानिन्द्रियग्रामो विद्वांसमपि कर्षति ॥ २८ ॥

भाषार्थ-माता, बहिन अथवा कन्याके साथ एक शय्यापर नहीं बैठे. क्योंकि-इन्द्रियग्राम बलवान् है. विद्वान्पुरुषकोभी खींच लेता है ॥ २८ ॥

ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः ॥
महान्ति पातकान्याहुस्तत्संसर्गी च पंचमः ॥२९॥

भाषार्थ-ब्रह्महत्या, मदिरापान, चोरी और गुरूकी स्त्रीसे संभोग ये चार और पांचवां इनका संसर्ग ये महापातक कहे हैं ॥ २९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्त्रीबालस्वामिमित्रघ्नो गोघ्नो विश्वासघातकः ॥
सुरापो ब्रह्महा चौरो यान्त्येते सर्वनारकान् ॥ ३० ॥

भाषार्थ–स्त्री, बालक, स्वामी और मित्र इनको मारनेवाला, गौ मारनेवाला, विश्वासघाती, मदिरा पीनेवाला, ब्रह्मघाती, चोर ये सब नरकगामी होते हैं ॥ ३० ॥

नहीदृशं संवननं त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥
दया मैत्री च भूतेषु दानं च मधुरा च वाक् ॥३१॥

भाषार्थ–ऐसा वशीकरण त्रिलोकीमें नहीं है कि–सबपर दया करना, सबसे मित्रता करना, दान देना और मधुर वचन बोलना ॥३१॥

प्रियवाक्यप्रदानेन सर्वे तुष्यन्ति जन्तवः ॥
तस्मात्तदेव वक्तव्यं वचने का दरिद्रता ? ॥ ३२ ॥

भाषार्थ–प्रिय वचन बोलनेसे सब जीव प्रसन्न हो जाते हैं, इसकारण प्रियवचन बोलै. वचनमें क्या दरिद्रता ? ॥ ३२ ॥

विवादो धनसम्बन्धो याचनं स्त्रीषु संगतिः ॥
आदानमग्रतः स्थानं मैत्रीभङ्गस्य हेतवः ॥ ३३ ॥

भाषार्थ–विवाद, धनका सम्बन्ध (लेन देन), माँगना और स्त्रियोंकी संगति, आदान (ऋण) और आगे बैठना ये छे कारण मैत्रीभंग हो जानेके हैं ॥ ३३ ॥

ययोरेव समं वित्तं ययोरेव समं कुलम् ॥
तयोर्मैत्री विवाहश्च न तु पुष्टविपुष्टयोः ॥ ३४ ॥

---

१ वशीकरणम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ-जिन दोनौंका धन समान हो और जिन दोनौंका कुल समान हो उनमें परस्पर मैत्री और विवाह ठीक जानना. पुष्ट-विपुष्टका मैत्री-विवाह ठीक नहीं होता है ॥ ३४ ॥

उत्तमा आत्मना ख्याताः पितुः ख्याताश्च मध्यमाः ॥
अधमा मातुलख्याताः श्वशुराच्चाधमाधमाः ॥ ३५ ॥

भावार्थ-मनुष्य, अपने नामसे विख्यात होनेवाला उत्तम, पिताके नामसे प्रसिद्ध होनेवाला मध्यम और मामाके नामसे प्रसिद्ध होनेवाला अधम, तथा श्वशुरके नामसे प्रसिद्ध होनेवाला अधमसे अधम कहा जाता है ॥ ३५ ॥

ऋणशेषश्चाग्निशेषः शत्रुशेषस्तथैव च ॥
पुनः पुनः प्रवर्तन्ते तस्माच्छेषं न रक्षयेत् ॥ ३६ ॥

भावार्थ-ऋण, अग्नि तथा शत्रु इनका शेष रह जानेसे वे वारंवार प्रवृत्त होते हैं. इसकारण इनके शेषकी रक्षा न करै. सारांश यह कि-जो ऋण शेष रह जाता है तो व्याज मिलाकर फिर ज्योंका त्यों हो जाता है. अग्नि शेष रह जानेसे फिर प्रज्वलित हो जाती है. शत्रु शेष रह जानेसे फिर क्लेश देता है. इस कारण, इनमेंसे किसीकाभी शेष न रहने देवै ॥ ३६ ॥

कुभोज्येन दिनं नष्टं कुकलत्रेण शर्वरी ॥
कुपुत्रेण कुलं नष्टं यन्नष्टं तन्न दीयते ॥ ३७ ॥

भावार्थ-कुभोजनसे दिन नष्ट होता है; दुष्टा स्त्रीसे रात्रि नष्ट हो जाती है; कुपुत्रसे कुल नष्ट हो जाता है. जो नष्ट है वह नहीं देवै, अर्थात् नष्टका ध्यान कर पहलेहीसे त्याग करै ॥ ३७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सा भार्या या प्रियं ब्रूते स पुत्रो यत्र निर्वृतिः ॥
तन्मित्रं यत्र विश्वासः स देशो यत्र जीव्यते ॥ ३८ ॥

भावार्थ—वही स्त्री है जो प्रियवचन बोलनेवाली है, वही पुत्र है जिससे निश्चिन्तता है, वही मित्र है जिसपर विश्वास है, वही अपना देश है, जहां जीविका है ॥ ३८ ॥

कुर्यान्न परदारेच्छां विश्वासं स्त्रीषु वर्जयेत् ॥
हतो दशास्यः सीतार्थी हतः पत्न्या विदूरथः ॥ ३९ ॥

भावार्थ—पराई स्त्रीकी इच्छा न करै और स्त्रीका विश्वास न करै. देखो, परस्त्री जो सीता उसकी इच्छावाला रावण मारा गया. स्त्रीका विश्वास करनेसे विदूरथका विनाश हुवा ॥ ३९ ॥

व्रजत्यधः प्रयात्युच्चैर्नरः स्वैरेव कर्मभिः ॥
अधः कूपस्य खनक ऊर्ध्वं प्रासादकारकः ॥ ४० ॥

भावार्थ—मनुष्य अपनेही कर्मोंसे नीचेको जाता है अर्थात् नरकमें गिरता है और अपनेही कर्मोंसे ऊपरको जाता है अर्थात् स्वर्गगामी होता है. कुवां खोदनेवाला नीचे और मंदिर बनानेवाला ऊपरको जाता है ॥ ४० ॥

क्षिपेद्वाक्यशरान्घोरान् न पारुष्यविषप्लुतान् ॥
वाक्पारुष्यरुषा चक्रे भीमः कुरुकुलक्षयम् ॥ ४१ ॥

भावार्थ—मनुष्यको उचित है कि—'वचनरूपी घोर बाण, कठोरता-रूप विषसे युक्त नहीं फेंकै.' देखो, तानाभरे वचनोंसे क्रोधित होकर भीमसेनजीने कुरुवंशका नाश कर दिया ॥ ४१ ॥

तीव्रे तपसि लीनानामिन्द्रियाणां न विश्वसेत् ॥
विश्वामित्रोऽपि सोत्कण्ठं कण्ठे जग्राह मेनकाम् ॥ ४२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-तीव्र तपमें लीन होनेपरभी इन्द्रियोंका विश्वास न करै. देखो, विश्वामित्रनेभी उत्कंठित होके कण्ठमें मेनका 'अप्सरा' को ग्रहण किया ॥ ४२ ॥

भक्तं रक्तं सदा सक्तं निर्दोषं न परित्यजेत् ॥
रामस्त्यक्त्वा सतीं सीतां शोकशल्याकुलोऽभवत् ॥४३॥

भाषार्थ-भक्त, रक्त (अनुरागी), सदा आसक्त और दोषहीनका त्याग नहीं करै. रामचन्द्रजी सती (पतिव्रता) सीताका त्यागकर शोकशल्य (दुःखरूपी बाण) से व्याकुल हुवे ॥ ४२ ॥

वर्जयेदिन्द्रियजयी निर्जने जननीरपि ॥
पुत्रीकृतोऽपि प्रद्युम्नः कामितः शम्बरस्त्रिया ॥४४॥

भाषार्थ-इन्द्रियोंको जीतनेवालाभी जनरहितस्थान (एकान्त) में माताकोभी वर्जित करै अर्थात् माताके साथभी एकान्तमें न रहे. देखो, पुत्र बनानेपरभी प्रद्युम्नजीने शम्बरके घर स्त्री (रति) को चाहा अर्थात् शम्बर असुरको मार रतिको साथ ले प्रद्युम्नजी द्वारकापुरीको चले गये थे. यह कथा श्रीमद्भागवतके दशमस्कन्धमें लिखी है ॥ ४४ ॥

प्रभुप्रसादे विश्वासं न कुर्यात्स्वप्नसन्निभे ॥
नन्देन मंत्री निक्षिप्तः शकटारोऽपि बन्धने ॥४५॥

भाषार्थ-स्वामीकी प्रसन्नताका विश्वास स्वप्नमेंभी नहीं करै. देखो, नन्दराजाने शकटार मंत्रीकोभी बन्धनमें डाल दिया ॥ ४५ ॥

अप्युन्नतपदारूढः पूज्यान्नैवावमानयेत् ॥
नहुषः शक्रतां प्राप्य च्युतोऽगस्त्यावमाननात् ४६

भाषार्थ-उन्नत पदपर आरूढ होकरभी अर्थात् उच्च अधिकार

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पानेपरभी पूज्यलोगोंका तिरस्कार न करै. राजा नहुष इन्द्रपद पाकर अगस्त्यमुनिके तिरस्कार करनेपर इन्द्रपदवीसे गिर गया ॥ ४६ ॥

हितोपदेशं शृणुयात्कुर्वीत च यथोदितम् ॥
विदुरोक्तमकृत्वाभूत्कौरवः शोकशल्यभाक् ॥ ४७ ॥

भाषार्थ–हितकारी उपदेश सुनकर जैसा उचित वचन हो, उसी अनुसार करै. विदूरके कहे नीतिवचनोंके अनुसार वर्ताव न करनेसे कौरव लोग शोकरूपी बाणसे व्यथित हुये ॥ ४७ ॥

प्राणातिपातः स्तैन्यं च परदाराभिमर्शनम् ॥
त्रीणि पापानि कायेन नित्यशः परिवर्जयेत् ॥४८॥

भाषार्थ–प्राणहरण, चोरी, परस्त्रीगमन इन तीन पापोंका प्रतिदिन शरीरसे परित्याग करै ॥ ४८ ॥

घटं भिन्द्यात्पटं छिन्द्यात्कुर्याद्रासभरोहणम् ॥
येन केन प्रकारेण प्रसिद्धः पुरुषो भवेत् ॥ ४९ ॥

भाषार्थ–घटको भेदकर, वस्त्रको छेदकर, रासभपर चढकर जिस किसी प्रकारसे पुरुष प्रसिद्ध होवै ॥ ४९ ॥

न पुत्रायत्तमैश्वर्यं कुर्यादार्यः कथंचन ॥
पुत्रार्पितप्रभुत्वोऽभूद्धृतराष्ट्रस्तृणोपमः ॥ ५० ॥

भाषार्थ–पुत्रको अपना ऐश्वर्य श्रेष्ठपुरुष किसी प्रकारसे भी न सौंपैः पुत्रको अपना प्रभुत्व देकर धृतराष्ट्र तृणकी उपमाको प्राप्त हुवा ॥ ५० ॥

---

१ वहुतेरे लोग अपनेको अधिक प्रसिद्ध करना चाहते हैं परंतु कोई गुण नहीं जिससे प्रसिद्ध होवें, उनके लिये यह श्लोक लिखा है कि–घडेका मुह तोड गलेमें पहिनकर चीथडे लपेटकर गदहेपर सवार होकर अपनेको प्रसिद्ध करै ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्रुतिस्मृत्युक्तमाचारं न त्यजेत्साधुसेवितम् ॥
दैत्यानां श्रीवियोगोऽभूत्सत्यधर्मक्रियामुचाम् ५१॥

भावार्थ–साधुजनोंकरके सेवित श्रुतिस्मृतिमें कहे आचार (धर्म)-को न त्यागै. सत्यधर्मक्रियाका त्याग करनेसे दैत्यलोग ऐश्वर्य-रहित हुये ॥ ५१ ॥

नदीनां नखिनां चैव शृङ्गिणां शस्त्रपाणिनाम् ॥
विश्वासो नैव कर्तव्यः स्त्रीषु राजकुलेषु च ॥ ५२ ॥

भावार्थ–नदियोंका, नखधारी जीवोंका, सींगवालोंका और शस्त्र-धारियोंका विश्वास नहीं करना चाहिये. एवं स्त्रीमें और राजकुलमेंभी विश्वास नहीं करना चाहिये ॥ ५२ ॥

व्याकुलोऽपि विपत्पातैः स्मरेद्विष्णुं सदा हृदि ॥
शरतल्पगतो भीष्मः सस्मार गरुडध्वजम् ॥ ५३ ॥

भावार्थ–आपत्तिकालमें व्याकुल होनेपरभी अपने हृदयमें सदा विष्णुभगवान्का स्मरण करै. देखो, शरशय्यापर भीष्मजीने मरण-कालतक गरुडध्वज भगवान्का स्मरण किया ॥ ५३ ॥

चिन्ता जरा मनुष्याणामनध्वा वाजिनां जरा ॥
असंभोगो जरा स्त्रीणां वस्त्राणामातपो जरा ॥ ५४ ॥

भावार्थ–चिन्ता करनेसे मनुष्योंको बुढापा आ जाता है; मार्ग न चलनेसे घोडे बूढे हो जाते हैं; संभोग न करनेसे स्त्रियोंको बुढापा घेर लेता है; घाममें सूखनेसे वस्त्र जीर्ण हो जाते हैं ॥ ५४ ॥

पंचभिः सह गन्तव्यं स्थातव्यं पंचभिः सह ॥
पंचभिः सह वक्तव्यं न दुःखं पंचभिः सह ॥ ५५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–पांचके साथ मिलकर चलना चाहिये, पांचके साथ मिलकर रहना चाहिये, पांचके साथ मिलकर बोलना चाहिये, पांचके साथ रहनेसे दुःख नहीं होतां है॥ ५५॥

यान्ति न्याय[1]प्रवृत्तस्य तिर्यञ्चा[2]ऽपि सहायताम्॥
अपन्थानं तु गच्छन्तं सोदरोऽपि विमुञ्चति॥ ५६॥

भाषार्थ–जो न्यायमार्गपर चलते हैं, उनकी सहायता पशुभी करते हैं और कुमार्गपर चलनेवालोंका भाईभी त्याग करता है॥ ५६॥

"पंची पंचा कीजै काज, हारे जीते न आवै लाज।" यह एक हिंदी मसल है. औरभी कहा है कि–पांच पंच मिलकर जिस राह-पर चलैं उसी राहपर चलना चाहिये. पंचायतके अनुसार काम कर-नेसे मनुष्य क्लेश नहीं पाता, पांचपंचोंके पीछे २ चलना उचित है. पंचलोग परमेश्वरसमान मानने योग्य होते हैं. देखो, पंचायतसे जो फैसला हो जाता है, उसकी अपील सरकार गवर्नमेन्टभी नामंजूर करती है. पंचायती फैसलाकी अपीलही नहीं है.

विद्याभ्यासो विचारश्च समयोरेव शोभते॥
विवाहश्च विवादश्च समयोरेव शोभते॥ ५७॥

भाषार्थ–विद्याभ्यास और विचार समानवालोंकाही शोभा पाता है, विवाह और विवादभी समानवालोंका शोभा पाता है. अर्थात्, समानविद्यावालोंका मिलकर अभ्यास करना ठीक है. और समानबुद्धिवालोंका विचार अच्छा होता है. विवाह अपने बराबरमेंही अच्छा होता है और विवाद करना बराबरवालोंकाही ठीक होताहै ५७

१ न्यायमार्गानुसारेण। २ तिर्यक्जातीया पशव इत्यर्थः।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लक्ष्मीर्वसति जिह्वाग्रे जिह्वाग्रे मित्रबान्धवाः ॥
जिह्वाग्रे बन्धनं प्राप्तं जिह्वाग्रे मरणं ध्रुवम् ॥५८॥

भाषार्थ–जीभके आगे लक्ष्मी निवास करती है, जीभके आगे मित्र और बन्धुजन रहते हैं, जीभके आगे बंधन प्राप्त है, जीभके आगे निश्चय मरण है. सारांश यह कि–बात करनेसेही धन मिलता है, बातचीत अच्छे प्रकार होनेसे मित्र और भाईलोग प्रसन्न रहते हैं, बातहीसे मनुष्य बँधा जाता है, बातचीत बिगड जानेसे मारा जाता है ॥ ५८ ॥

यस्मिन्देशे न सम्मानो न प्रीतिर्नच बान्धवाः ॥
न च विद्यागमः कश्चित् न तत्र दिवसं वसेत् ॥ ५९ ॥

भाषार्थ–जिस देशमें सत्कार नहीं, प्रीति नहीं, बन्धुजन नहीं और कुछ विद्याकी प्राप्ति नहीं, वहां एकदिनभी नहीं रहना चाहिये ॥ ५९ ॥

सर्वनाशे समुत्पन्ने ह्यर्धं त्यजति पंडितः ॥
अर्धेन कुरुते कार्यं सर्वनाशो न जायते ॥ ६० ॥

भाषार्थ–सर्वनाश होनेकी आशंकासे पंडितजन आधा त्याग कर देवै· आधेसे काम करै,तो सर्वनाश नहीं होता है॥६०॥एक हिंदी मसल है कि
'जो धन जानै जात, तामैं लीजै आधा बांट' ।

मूर्खशिष्योपदेशेन दुष्टस्त्रीभरणेन च ॥
द्विषतां संप्रयोगेण पंडितोऽप्यवसीदति ॥ ६१ ॥

भाषार्थ–मूर्ख शिष्यको उपदेश करनेसे, दुष्टा स्त्रीको भरनेसे, शत्रुजनोंके साथ मेलमिलाप करनेसे पंडितजनभी क्लेश पाता है ॥६१॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मित्रद्रुहः कृतघ्नश्च स्त्रीघ्नश्च पिशुनस्य च ॥
चतुर्णामपि चैतेषां निष्कृतिर्नैव विश्रुता ॥ ६२ ॥

भावार्थ–मित्रसे द्रोह करनेवाला, उपकारको नहीं माननेवाला, स्त्रीको मारनेवाला, चुगली वा निन्दा करनेवाला इन चारोंकी निष्कृति अर्थात् छुटकारा नहीं सुननेमें आया. अर्थात् इनका परमेश्वरके यहांभी छुटकारा नहीं सुना गया है ॥ ६२ ॥

गतश्रीर्गणकान्द्वेष्टि गतायुश्च चिकित्सकान् ॥
गतश्रीश्च गतायुश्च ब्राह्मणान्द्वेष्टि भारत ! ॥ ६३ ॥

भावार्थ–हे भारत ! ज्योतिषियोंसे द्वेष करनेपर लक्ष्मी जाती रहती है, चिकित्सा करनेवालोंसे द्वेष करनेपर आयु नष्ट होती है और ब्राह्मणोंसे द्वेष करनेमें लक्ष्मी और आयु दोनौंका विनाश हो जाता है ॥ ६३ ॥

आत्मबुद्धिः सुखायैव गुरुबुद्धिर्विशेषतः ॥
परबुद्धिर्विनाशाय स्त्रीबुद्धिः प्रलयावहा ॥ ६४ ॥

भावार्थ–अपनी बुद्धि सुखका कारण होती है, गुरुकी बुद्धि विशेषकरके सुखदायिनी होती है, पराई बुद्धि विनाश करनेवाली होती है और स्त्रीकी बुद्धि प्रलय कर देती है अर्थात् स्त्रीकी बुद्धिसे सर्वनाश हो जाता है ॥ ६४ ॥

विषादप्यमृतं ग्राह्यं अमेध्यादपि काञ्चनम् ॥
नीचादप्युत्तमां विद्यां स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि ॥ ६५ ॥

भावार्थ–विषसेभी अमृत ग्रहण करै, अपवित्र स्थानसेभी सुवर्ण ग्रहण करै, नीचसेभी उत्तम विद्या ग्रहण करै, दुष्कुलसेभी स्त्रीरत्न ग्रहण करै ॥ ६५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लुब्धमर्थेन गृह्णीयात्क्रुद्धमंजलिकर्मणा ॥
मूर्खं छन्दोऽनुवृत्त्या च तत्वार्थेन च पंडितम्॥६६॥

भाषार्थ-लोभीको धनसे ग्रहण करै, क्रोधीको अंजलिकर्मसे अर्थात् हाथ जोडकर और मूर्खको उसके अनुकूल होकर, तथा पंडितको तत्वार्थसे ग्रहण करै अर्थात् वश करै ॥ ६६ ॥

जानीयात्संगरे भृत्यान् बान्धवान् व्यसनागमे ॥
आपत्कालेषु मित्राणि भार्यां च विभवक्षये ॥ ६७ ॥

भाषार्थ-सेवकजनोंको समरमें जानै, दुःख आनेपर बन्धुजनोंको जानै, आपत्कालमें मित्रोंको जानै और स्त्रीको धननाश हो जानेपर जानै अर्थात् परखै ॥ ६७ ॥ तुलसीकृतरामायणमें लिखा है कि-'आपत्काल परखिये चारी। धीरज धर्म मित्र अरु नारी'॥

खरं श्वानं गजं मत्तं रंडां च बहुभाषिणीम् ॥
राजपुत्रं कुमित्रं च दूरतः परिवर्जयेत् ॥ ६८ ॥

भाषार्थ-खर (गर्दभ), श्वान (कुत्ता), गज (हाथी), मत्त (मतवाला) और बहुत बोलनेवाली रांड स्त्री, राजपुत्र तथा दुष्टमित्र इनका दूरसेही परित्याग करै ॥ ६८ ॥

दूरस्थं जलमध्यस्थं धावन्तं धनगर्वितम् ॥
क्रोधवन्तं मदोन्मत्तं नमस्कारेऽपि वर्जयेत् ॥ ६९ ॥

भाषार्थ-दूर रहनेवाले, जलके बीच स्थित, भागते हुये और धनसे गर्वित, क्रोधी तथा मदसे उन्मत्तको नमस्कारमेंभी वर्जित करै अर्थात् इनसे नमस्कारभी न करै ॥ ६९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पिपीलिकार्जितं धान्यं मक्षिकासंचितं मधु ॥
लुब्धेन संचितं द्रव्यं समूलं च विनश्यति ॥ ७० ॥

भावार्थ–चींउंटीसे इकट्ठा किया हुवा अन्न, मक्खियोंकरके एकत्र किया हुवा शहद और लोभीद्वारा संचितधन इनका मूलसहित नाश होता है ॥ ७० ॥

न सारणीया धीरेण रसना नीरसे जने ॥
को नाम कुरुते फेरौ नायका सायकक्षतिम् ?॥७१॥

भावार्थ–धीरपुरुषको उचित है कि निरस वस्तुपर जीभ नहीं निकालै. देखो, कोईभी नायक गीदडको मारनेमें अपने बाण नष्ट नहीं करता है ॥ ७१ ॥

धातुवादेषु वित्ताशा मोक्षाशा कौलिके गते ॥
जामातरि च पुत्राशा त्रयमेतन्निरर्थकम् ॥ ७२ ॥

भावार्थ–रसायनिक पुरुषोंमें धनकी आशावाले, कौलमार्गमें मोक्षकी आशावाले, दामादमें पुत्रकी आशावाले ये तीनौं निरर्थक हैं ॥ ७२ ॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके सुखिनौ न कदाचन ॥
यश्चाधनः कामयते यश्च कुप्यत्यनीश्वरः ॥ ७३ ॥

भावार्थ–संसारमें ये दो प्रकारके पुरुष सुखी नहीं हो सकते. एक जो धनहीन होकर प्रत्येक वस्तुकी चाहना करता रहता है और दूसरा जो ऐश्वर्यवान् न होकर क्रोध करता है ॥७३॥ एक उर्दू मसल है कि–

'कमताकत गुस्सा ज्यादा मार खानेकी अलामत'।

द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमंडलभेदिनौ ॥
परिव्राड् योगयुक्तश्च रणे चाभिमुखो हतः ॥ ७४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-इस संसारमें दो प्रकारके पुरुष सूर्यमंडलको भेदन करनेवाले हैं, अर्थात् ब्रह्मलोकको जाते हैं. एक योगी और दूसरा जो समरभूमिपर घनघोर रणमें मारा जावै ॥ ७४ ॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके स्वर्गस्योपरि तिष्ठतः ॥
प्रभुश्च क्षमया युक्तो दरिद्रश्च प्रदानवान् ॥ ७५ ॥

भाषार्थ-इस संसारमें दो पुरुष स्वर्गके ऊपर रहते हैं. एक क्षमावान् प्रभु और दूसरा धनहीन होकर दान करनेवाला ॥ ७५ ॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके न भूतौ न भविष्यतः ॥
प्रार्थितं यश्च कुरुते यश्च नार्थयते परम् ॥ ७६ ॥

भाषार्थ-इस संसारमें दो पुरुष न हुवे न होंगे. एक तो जिससे जो कुछ माँगा जाय सो देवै और दूसरा जो कभी किसीसे कुछ माँगता नहीं ॥ ७६ ॥

शत्रुर्दहति संयोगे वियोगे मित्रमप्यहो ! ॥
उभयोर्दुःखदायित्वं को भेदः शत्रुमित्रयोः ? ॥७७॥

भाषार्थ-शत्रुके संयोगमें अर्थात् शत्रुके मिलनेपर और मित्रके वियोगमें अर्थात् मित्रके पृथक् होनेपर हृदयमें दाह (संताप 'दुःख') होता है. अहो ! दोनौं दुःखदायीही हैं. तो फिर शत्रु और मित्र दोनौंमें भेद (अन्तर) ही क्या है ? ॥ ७७ ॥

दुष्टा भार्या शठं मित्रं भृत्यश्चोत्तरदायकः ॥
ससर्पे च गृहे वासो मृत्युरेव न संशयः ॥ ७८ ॥

भाषार्थ-दुष्ट स्त्री, कपटी मित्र, उत्तर (जबाब) देनेवाला सेवक,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सर्पवाले घरमें वास ये चार जिस पुरुषको हों, उस मनुष्यकी निस्सन्देह मृत्यु जानिये अर्थात् ये चारौ मृत्युके कारण हैं ॥ ७८ ॥

निस्सारस्य पदार्थस्य प्रायेणाडम्बरो महान् ॥
न सुवर्णे ध्वनिस्तादृग्यादृक्कांस्ये प्रजायते ॥ ७९ ॥

भाषार्थ–जिस पदार्थमें कुछ सार नहीं है, उसका प्रायः बडा आडम्बर होता है. सुवर्णमें वैसी ध्वनि नहीं है जैसी कांसमें होती है॥७९॥

मत्स्यादयोऽपि जानन्ति नीरक्षीरविवेचनम् ॥
प्रसिद्धिरेव हंसस्य यशः पुण्यैरवाप्यते ॥ ८० ॥

भाषार्थ–मत्स्य आदिभी नीरक्षीरके विवेचनको जानते हैं. परन्तु प्रसिद्धि हंसहीकी है. पुण्योंकरके यश प्राप्त होता है ॥ ८० ॥

हस्तादपि न दातव्यं गृहादपि न दीयते ॥
परोपकरणार्थाय वचने किं दरिद्रता ? ॥ ८१ ॥

भाषार्थ–हाथसेभी न देवै, घरसेभी न देवै, तो परोपकारनिमित्त वचनमें क्या दरिद्रता है ? ॥ ८१ ॥

वनानि दहतो वह्नेः सखा भवति मारुतः ॥
स एव दीपनाशाय कृशे कस्यास्ति सौहृदम् ? ॥८२॥

भाषार्थ–वनमें अग्नि प्रज्वलित होनेपर पवन उसका सखा होता है और सहायता करता है. वही पवन दीपकको बुझा देता है. निर्बलतामें कौन किसका मित्र होतां है ॥ ८२ ॥ 'दैवो दुर्बलघातकः' ।

दोहा–सबै सहायक सबलके, कोउ न निबल सहाय ।
पवन जगावत आगको, दीपहि देत बुझाय ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जीवन्तोऽपि मृताःपञ्च व्यासेन परिकीर्तिताः ॥
दरिद्रो व्याधितो मूर्खः प्रवासी नित्यसेवकः ॥८३॥

भाषार्थ–व्यासजीने पांच पुरुषोंको जीतेही मरेहुवे बतलाया है. एक दरिद्र (धनहीन), दूसरा रोगी, तीसरा मूर्ख, चौथा प्रवासी (सदा परदेशवासी) और पांचवां नित्य सेवा करनेवाला ॥ ८३ ॥

अमृतं दुर्लभं नृणां देवानामुदकं तथा ॥
पितृणां दुर्लभः पुत्रस्तक्रं शक्रस्य दुर्लभम् ॥ ८४ ॥

भाषार्थ–मनुष्योंको अमृत दुर्लभ है, तथा देवतावोंको जल दुर्लभ है, पितरोंको पुत्र दुर्लभ है, इन्द्रको तक्र (छाछ) दुर्लभ है ॥ ८४ ॥

शनैः पन्था शनैः कन्थाः शनैः पर्वतमस्तके ॥
शनैर्विद्या शनैर्वित्तं पञ्चैतानि शनैः शनैः ॥ ८५ ॥

भाषार्थ–मार्ग शनैः २ अर्थात् धीरे धीरे मार्गमें चलनेसे मनुष्य सुखपूर्वक ठिकानेपर पहुँच जाता है, शनैः २ कंथा अर्थात् गुदडी धीरे धीरे बनती है, शनैः २ पर्वतपर चढा जाता है, धीरे धीरे विद्यामें अभ्यास बढता है और धनभी धीरे धीरे वृद्धिको प्राप्त होता है. ये पांच धीरे धीरे करना उचित है ॥ ८५ ॥

मक्षिका मशको वेश्या मूषको याचकस्तथा ॥
वानरो गणकश्चैव सप्तैते परभक्षकाः ॥ ८६ ॥

भाषार्थ–मक्खी, मसा, वेश्या, चूहा, माँगनेवाला, तथा वानर और गणक (गाँवका पंडित 'पाधा' अथवा पुरोहित) अर्थात् पत्रहिता ज्योतिषी ये सात पराया अन्न भक्षण करनेवाले हैं ॥ ८६ ॥

१ ग्रामणी इति पाठांतरम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शोभन्ते विद्यया विप्राः क्षत्रिया विजयश्रिया ॥
श्रियोऽनुकूलदानेन लज्जया च कुलाङ्गनाः[1] ॥ ८७ ॥

भाषार्थ–ब्राह्मणोंकी शोभा विद्यासे, क्षत्रियोंकी विजयलक्ष्मीसे, लक्ष्मीकी अनुकूल दानसे और कुलाङ्गना (कुलवंतीस्त्रियों) की लज्जासे शोभा है ॥ ८७ ॥

ब्राह्मणा गणका वेश्याः सारमेयाश्च कुक्कुटाः ॥
दृष्टेष्वन्येषु कुप्यन्ति न जाने कस्य कारणम् ॥ ८८॥

भाषार्थ–ब्राह्मण, पंडित, वेश्या, कुत्ता, मुर्गा ये अन्यको देखकर कुपित हो जाते हैं अर्थात् ब्राह्मण ब्राह्मणमें, पंडित पंडितमें, वेश्या वेश्यामें, कुत्ता कुत्तामें, मुर्ग मुर्गमें द्वेष मानते हैं. परन्तु इसका कारण जाननेमें नहीं आता ॥ ८८ ॥

पुत्रपौत्रवधूभृत्यैः सम्पूर्णमपि सर्वदा ॥
भार्याहीनगृहस्थस्य शून्यमेव गृहं मतम् ॥ ८९ ॥

भाषार्थ–पुत्र, पौत्र, वधू, सेवक ये सब सदा रहनेपरभी स्त्रीकरके हीन गृहस्थका घर सूनाही है ऐसा जानना ॥ ८९ ॥

नवे वयसि यः शान्तः स शान्त इति मे मतिः ॥
धातुषु क्षीयमाणेषु शान्तिः कस्य न जायते ? ॥९०॥

भाषार्थ–यौवनावस्थामें जो शान्त है मेरी सम्मतिमें वही शान्त है. धातुवोंके क्षीण हो जानेपर किसको वैराग्य नहीं आता ? ॥ ९० ॥

अश्वं नैव गजं नैव व्याघ्रं नैव च नैव च ॥
अजापुत्रं बलिं दद्याद्देवो दुर्बलघातकः ! ॥ ९१ ॥

---

१ कुलस्त्रियः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–घोडेको नहीं, हाथीको नहीं, व्याघ्रकोभी नहीं, बकरीके पुत्रको बलि प्रदान किया जाता है ! दैव दुर्बलघातक है !! ॥ ९१ ॥

दुर्मंत्री राज्यनाशाय ग्रामनाशाय कुंजरः ॥
श्यालको गृहनाशाय सर्वनाशाय मातुलः ॥९२॥

भाषार्थ–दुष्ट मंत्रीसे राज्यका नाश हो जाता है, हाथीसे गांव उजड जाता है. सालेसे घर बिगड जाता है, मामासे सर्वनाश हो जाता है ॥ ९२ ॥

उद्योगः कलहः कण्डूर्द्यूतं मद्यं परस्त्रियः ॥
आहारो मैथुनं निद्रा सेवनात्तु विवर्धते ॥ ९३ ॥

भाषार्थ–उद्योग, कलह, खुजली, जुवां, मदिरा, पराई स्त्रियां, भोजन, स्त्रीप्रसंग, नींद ये नवौ सेवन करनेपर वृद्धिको प्राप्त होते हैं ॥९३॥

चक्षुःपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम् ॥
सत्यपूतां वदेद्वाणीं मनःपूतं समाचरेत् ॥ ९४ ॥

भाषार्थ–चलते समय नेत्रोंसे आगे देखकर पांव धरै, वस्त्रसे छानकर जल पीवै, सत्य जानकर वचन बोलै, मनसे विचारकर आचरण करै अर्थात् समझकर अपना वर्ताव ठीक रक्खै ॥ ९४ ॥

नास्ति यज्ञः स्त्रियः किंचिन्न व्रतं नोपवासकम् ॥
या तु भर्तरि शुश्रूषा तया स्वर्गं जयत्यसौ ॥ ९५ ॥

भाषार्थ–स्त्रीके कोई दूसरा यज्ञ नहीं है, न व्रत है, अपने पतिकी जो सेवा है वही यज्ञ और व्रत है. उसीसे वह स्वर्गको जीत लेती है ॥ ९५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शुचि भूमिगतं तोयं शुचिर्नारी पतिव्रता ॥
शुचिः क्षेमकरो राजा सन्तोषी ब्राह्मणः शुचिः ९६

भावार्थ–पृथ्वीमें भरा हुवा जल पवित्र है, पतिव्रता स्त्री पवित्र है, कल्याण करनेवाला राजा पवित्र है, सन्तोषी ब्राह्मण पवित्र है ॥ ९६ ॥

असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम् ॥
काश्यां वासः सतां संगो गंगाम्भः शंभुसेवनम् ९७

भावार्थ–असार संसारमें ये चार वस्तु सार हैं. काशीमें वास, सत्पुरुषोंका संग, गंगाजीका जल और शिवजीकी सेवा ॥ ९७ ॥

उदारस्य तृणं वित्तं शूरस्य मरणं तृणम् ॥
विरक्तस्य तृणं भार्या निःस्पृहस्य तृणं जगत्॥९८॥

भावार्थ–उदार पुरुषको धन तृण है अर्थात् उदारपुरुष, धनको तृणसमान जानता है और शूरवीर पुरुष मृत्युको तृणवत् मानता है, विरक्त पुरुष स्त्रीको तृणकें समान समझता है. निःस्पृह (इच्छारहित) पुरुष जगत् तृण मानता है ॥ ९८ ॥

भर्ता देवो गुरुर्भर्ता धर्मतीर्थव्रतानि च ॥
तस्मात्सर्वं परित्यज्य पतिमेकं भजेत्सती ॥९९॥

भावार्थ–पति देवता है, पति गुरु है, धर्म–तीर्थ-व्रतभी पतिही है. इस कारण, सबको छोडकर पतिव्रता स्त्री केवल पतिहीकी सेवा करै॥९९॥

सप्तैतानि न पूर्यन्ते पूर्यमाणान्यनेकशः ॥
ब्राह्मणोऽग्निर्यमो राजा पयोधिरुदरं गृहम् ॥१००॥

भावार्थ–ये सात पूर्ण नहीं होते हैं. अन्य सब पूर्ण हो जाते हैं,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ब्राह्मण, अग्नि, यम, राजा, समुद्र, उदर और घर. अर्थात् ये सातौ कभी पूर्ण नहीं होते हैं ॥ १०० ॥

जलबिन्दुनिपातेन क्रमशः पूर्यते घटः ॥
स हेतुः सर्वविद्यानां धर्मस्य च धनस्य च ॥ १ ॥

भाषार्थ–एक एक बूँद जल गिरनेसे घडा भर जाता है, वही हेतु सब विद्याओंका, धर्मका और धनका है ॥ १ ॥

साक्षरं पुरुषं दृष्ट्वा यो नरो नाभिमन्यते ॥
बलीवर्दसमो लोके खुरशृंगविवर्जितः ॥ २ ॥

भाषार्थ–जो मनुष्य साक्षर (विद्वान्) पुरुषको देखकर नहीं झुकता, वह विना खुरसींगवाला बैलहि है ॥२॥

को न याति वशं लोके? मुखे पिंडेन पूरितः ॥
मृदंगो मुखलेपेन करोति मधुरध्वनिम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–मुख पिंडसे पूरित होनेपर कौन वशमें नहीं हो जाता ? देखो, मृदंगका मुखलेपन कर देनेसे मधुर ध्वनि करने लगता है. भावार्थ यह कि, मुख मीठा हो जानेसे अथवा धन पा जानेसे प्रायः लोग वशमें होकर मीठी मीठी बातें करने लगते हैं. जैसे, मृदंगके मुखपर जब आटा लगा दिया जाता है तब वह मधुरध्वनिसे बजने लगता है ॥३॥

लुब्धानां याचकः शत्रुश्चोराणं चन्द्रमा रिपुः ॥
जारस्त्रीणां पतिः शत्रुर्मूर्खाणां बोधको रिपुः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–लोभी पुरुषोंका याचक शत्रु है, चोरोंका चन्द्रमा शत्रु है, जारस्त्रियोंका पति शत्रु है और बोधक अर्थात् हितोपदेश करनेवाला पुरुष मूर्खजनोंका शत्रु है ॥ ४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

परोपदेशवेलायां शिष्टा सर्वे भवन्ति वै ॥
विस्मरन्तीह शिष्टत्वं स्वकार्ये समुपस्थिते ॥ ५ ॥

भाषार्थ—दूसरेको उपदेश करनेके समय सब श्रेष्ठ होजाते हैं. पर अपने कामके समय शिष्टताको भूल जाते हैं ॥ ५ ॥

गुणिनां निर्गुणानां च दृश्यते महदन्तरम् ॥
हारः कण्ठगतः स्त्रीणां नूपुराणि च पादयोः ॥ ६ ॥

भाषार्थ—गुणी जन और निर्गुणी जन इनके मध्य बडा अन्तर दीख पडता है. मोतियोंका हार स्त्रियोंके कंठमें पहना जाता है और पायजेब पांवोंमें पहनी जाती हैं ॥ ६ ॥

अलभ्यं लुब्धकामस्य जनस्य गतिरीदृशी ॥
अलभ्येषु मनस्तापः संचितार्थो विनश्यति ॥ ७ ॥

भाषार्थ—लोभकी इच्छावाले मनुष्यकी लाभ न होनेसे ऐसी गति होती है कि—लाभ न होनेसे मनमें दुःख होता है और लाभ होनेसे संचित धनका विनाश हो जाता है. क्योंकि, लोभी पुरुषी खर्च तो करही नहीं सकता है ॥ ७ ॥

शत्रुवाक्यामृतं श्रुत्वा तेन सौहार्द्रमार्जवम् ॥
नहि धीरेण कर्तव्यमात्मनः शुभमिच्छता ॥ ८ ॥

भाषार्थ—अपनी भलाई चाहनेवाले बुद्धिमान् पुरुषको उचित है कि-शत्रुके अमृतवचन सुनकर उससे सुहृद्ता और नम्रताका व्यवहार न करै ॥ ८ ॥

शूराश्च कृतविद्याश्च रूपवत्यश्च योषितः ॥
यत्र यत्र गमिष्यन्ति तत्र तत्र कृतादराः ॥ ९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–शूर, विद्वान् और सुन्दरी स्त्री ये जहां जावेंगे वहां वहां उनका आदरहि किया जायगा ॥ ९ ॥

चत्वारो धनदायादा धर्माग्निनृपतस्कराः ॥
तेषां ज्येष्ठावमानेन त्रयं कुप्यति बान्धवाः ॥११०॥

भाषार्थ–धर्म, अग्नि, राजा और चोर ये चार भाई मनुष्यके धनदाय (दायभागी) अर्थात् हिस्सेदार हैं. इनमें बडा भाई धर्म है. धर्मका तिरस्कार करनेसे तीनौं छोटे भाई अप्रसन्न हों जाते हैं अर्थात् धर्मद्वारा धनव्यय करनेसे मनुष्यको किसीका खटका नहीं रहता है ॥११०॥

शीलभारवती कान्ता पुष्पभारवती लता ॥
अर्थभारवती वाणी भजते कामपि[1] श्रियम्[2] ॥ ११ ॥

भाषार्थ–शीलके भारसे युक्त स्त्री, फूलोंके भारसे युक्त लता (वेल) और अर्थके भारसे युक्त वाणी ये तीनौं कुछ अचिंतनीय शोभाको धारण करती हैं ॥ ११ ॥

आर्ता देवान्नमस्यन्ति तपः कुर्वन्ति रोगिणः ॥
निर्धना दानमिच्छन्ति वृद्धा नारी पतिव्रता ॥ १२ ॥

भाषार्थ–आर्त (पीडित) जन, देवतावोंको नमस्कार करते हैं अर्थात् क्लेश मिलनेपर देवता मनाये जाते हैं, रोगीजन तप करने लगते हैं, धनहीन पुरुष दान देनेकी इच्छा करते हैं, बूढी स्त्री पतिव्रता बन जाती है ॥ १२ ॥

जामाता जठरं जाया जातवेदो जलाशयः ॥
पूरिता नैव पूर्यन्ते जकाराः पंच दुर्भराः ॥ १३ ॥

---

१ अचिन्त्याम् । २ शोभाम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–दामाद, उदर, स्त्री, अग्नि और जलाशय (कुवाँ तालाव आदि) पूर्ण होनेपरभी पूर्ण नहीं होते हैं; ये पांच जकार दुर्भर हैं अर्थात् भरनेसे पूरे नहीं हो सकते हैं ॥ १३ ॥

जननी जन्मभूमिश्च जाह्नवी च जनार्दनः ॥
जनकः पंचमश्चैव जकारा पंच दुर्लभाः ॥ १४ ॥

भाषार्थ–माता, जन्मभूमि, गंगा, विष्णु और पिता ये पांच जकार दुर्लभ हैं ॥ १४ ॥

संपत्सरस्वती सत्यं सन्तानं सदनुग्रहः ॥
सत्ता सुकृतसंभारः सकाराः सप्त दुर्लभाः ॥ १५ ॥

भाषार्थ–सम्पदा, विद्या, सत्य, सन्तान, सत्पुरुषोंकी कृपा, पराक्रम और पुण्यात्मा होना ये सात सकार दुर्लभ हैं ॥ १५ ॥

सा श्रीर्या न मदं कुर्यात्स सुखी तृष्णयोज्झितः ॥
तन्मित्रं यत्र विश्वासः पुरुषः स जितेन्द्रियः ॥ १६ ॥

भाषार्थ–वही लक्ष्मी है, जो मद न करै; वही सुखी है, जहां तृष्णा नहीं; वही मित्र है, जिसपर विश्वास है; वही पुरुष है, जो इन्द्रियोंको जीतनेवाला है ॥ १६ ॥

अभ्रच्छाया खलप्रीतिर्नवसस्यानि योषितः ॥
किंचित्कालोपभोग्यानि यौवनानि धनानि च ॥१७॥

भाषार्थ–मेघकी छाया, दुष्टजनकी प्रीति, नवीन धान्य, स्त्रियां, यौवन (जवानी) और धन ये छे कुछही समयपर्यन्त उपभोगने योग्य होते हैं ॥ १७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

एकस्य कर्म संवीक्ष्य करोत्यन्योऽपि गर्हितम् ॥
गताऽनुगतिको लोको न लोकः परमार्थिकः॥१८॥

भाषार्थ-एकके निन्द्यको देखकर दूसराभी वैसाही कर्म करने लगता है. लोग चलनेवालेके पीछे चलते हैं. परमार्थमें लोगोंका ध्यान नहीं है ॥ १८ ॥

क्वचिद्रुष्टः क्वचित्तुष्टो रुष्टस्तुष्टः क्षणे क्षणे ॥
अव्यवस्थितचित्तस्य प्रसादोऽपि भयङ्करः ॥ १९ ॥

भाषार्थ-कभी रुष्ट, कभी प्रसन्न और कभी क्षणक्षणमें रुष्ट और प्रसन्न ऐसे चंचलचित्तवालेका प्रसन्न होनाभी भयंकर है ॥ १९ ॥

सुलभं वस्तु सर्वस्य न यात्यादरणीयताम् ॥
स्वदारपरिहारेण परदारार्थिनो जनाः ॥ १२० ॥

भाषार्थ-जो वस्तु सबको सुलभ है, उसका आदर नहीं किया जाता है. देखो, प्रायः मनुष्य अपनी स्त्रीको छोडकर दूसरेकी स्त्रियोंको चाहते हैं ॥ १२० ॥

यस्मिन् रुष्टे भयं नास्ति तुष्टे नैव धनागमः ॥
निग्रहाऽनुग्रहौ न स्तः स रुष्टः किं करिष्यति ?॥२१॥

भाषार्थ-जिसके रुष्ट होनेमें भय नहीं, प्रसन्न होनेमें धनका लाभ नहीं, निग्रहभी नहीं और अनुग्रहभी नहीं वह रुष्ट होकर क्या करेगा ? ॥ २१ ॥

आलस्योपहता विद्या परहस्तगताः स्त्रियः ॥
अल्पबीजं हतं क्षेत्रं हतं सैन्यमनायकम् ॥२२॥

---

१ निन्द्यम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–आलस्यसे विद्या नष्ट हो जाती है, पराये हाथमें गई हुई स्त्रियां नष्ट हो जाती हैं, थोडा बीज डालनेसे खेत नष्ट हो जाता है, विना सेनापतिके सेना नष्ट हो जाती है ॥ २२ ॥

नारी परमुखद्रष्ट्री कविरव्यवहारवित् ॥
अपथ्यसेवी रोगी च कियद्भिर्नोपहास्यते ? ॥२३॥

भाषार्थ–पराया मुख देखनेवाली स्त्री, व्यवहारको न जाननेवाला कवि, अपथ्यसेवी रोगी अर्थात् पथ्यसे नहीं रहनेवाला रोगी इन तीनोंको कौन नहीं हँसता है ? ॥ २३ ॥

सांसारिकसुखासक्तं ब्रह्मज्ञोऽस्मीति वादिनम् ॥
कर्मब्रह्मोभयभ्रष्टं तं त्यजेदन्त्यजं यथा ॥ २४ ॥

भाषार्थ–सांसारिक सुखोंमें आसक्त और अपनेको ब्रह्मज्ञानी कहलानेवाला, ऐसे कर्म और ब्रह्म दोनोंसे भ्रष्ट मनुष्यको त्याग देवै. जैसे, चाण्डाल त्याग दिया जाता है ॥ २४ ॥

शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे ॥
साधवो नहि सर्वत्र चन्दनं न वने वने ॥ २५ ॥

भाषार्थ–प्रत्येक पर्वतपर माणिक्य नहीं है और प्रत्येक गजके मस्तकमें मोती नहीं है, सर्वत्र साधु नहीं होते, प्रत्येक वनमें चन्दन वृक्ष नहीं होते हैं ॥ २५ ॥

मनो मधुकरो मेघो मानिनी मदनो मरुत् ॥
मा मदो मर्कटो मत्स्यो मकारा दश चंचलाः ॥ २६ ॥

भाषार्थ–मन, मधुकर (भौंरा), मेघ, मानिनी (स्त्री), मदन

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

(कामदेव), मरुत् (वायु), मा (लक्ष्मी), मद, मर्कट (वानर) और मत्स्य (मछली) ये १० मकार चंचल हैं ॥ २६ ॥

यावज्जीवं सुखं जीवेदृणं कृत्वा घृतं पिबेत् ॥
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः ? ॥ २७ ॥

भाषार्थ–जबतक जीव रहे तबतक सुखपूर्वक जीवै. ऋण लेकर घी पीवै. देहके भस्म हो जानेपर फिर आना कहाँ अर्थात् जब देह भस्म हो जायगा तब ऋण देने नहीं पडेगा. यह श्लोक सनातन धर्मके अनुकूल नहीं है. किसी अन्यमतका है, हँसीके तौरपर यहां लिख दिया है ॥ २७ ॥

असार एष संसारः सारः सारङ्गलोचनाः ॥
तदर्थं धनमिच्छन्ति तत्त्यागे तु धनेन किम् ? ॥ २८ ॥

भाषार्थ–इस असार संसारमें मृगनयनी स्त्री सार है. उस (स्त्री) के अर्थ धनकी इच्छा करते हैं. उसके त्यागनेपर फिर धनसे क्या काम रहा ? ॥ २८ ॥

सत्यानुसारिणी लक्ष्मीर्कीर्तिस्त्यागानुसारिणी ॥
अभ्याससारिणी विद्या बुद्धिः कर्मानुसारिणी ॥ २९ ॥

भाषार्थ–लक्ष्मी सत्यके पीछे चलनेवाली है, कीर्ति दानके पीछे चलनेवाली है, एवं विद्या अभ्यासके अनुसार होती है, तथा बुद्धि कर्मके अनुसार होती है ॥ २९ ॥

सदयं हृदयं यस्य भाषितं सत्यभूषितम् ॥
कायः परहिते यस्य कलिस्तस्य करोति किम् ? ॥ ३० ॥

१ 'जीवस्य' इत्यपि पाठः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जिसका हृदय दयासे युक्त है, जिसका भाषण सत्यसे भूषित है, जिसका शरीर दूसरेके हितार्थ है, अर्थात् जो मनुष्य दयालु, सत्यवादी और परोपकारी है, उसका कलियुग क्या कर सकता है? १३०

आज्ञामात्रफलं राज्यं ब्रह्मचर्यफलं तपः ॥
परिज्ञानफलं विद्या दत्तभुक्तफलं धनम् ॥ ३१ ॥

भाषार्थ–केवल आज्ञाही राज्यका फल है, ब्रह्मचर्यही तपका फल है, एवं भलीभांति ज्ञान होना विद्याका फल है, देना और भोगना यह धनका फल है ॥ ३१ ॥

आयुर्वित्तं गृहच्छिद्रं मंत्रमौषधमैथुने ॥
दानं मानापमानं च नव गोप्यानि कारयेत् ॥३२॥

भाषार्थ–आयु, धन, घरका दोष, मंत्र, औषध, मैथुन, दान, मान और अपमान ये नव गुप्त रक्खै अर्थात् इन नव बातौंको प्रगट न करै ॥ ३२ ॥

सम्भ्रमः स्नेहमाख्याति वपुराख्याति भोजनम् ॥
विनयो[1] वंशमाख्याति देशमाख्याति भाषितम् ॥३३॥

भाषार्थ–आदर स्नेहको प्रगट करता है अर्थात् सन्मानसेही स्नेह प्रगट हो जाता है, शरीर भोजनको प्रगट कर देता है, अर्थात् जैसा उत्तम भोजन किया जाता है वैसाही शरीरभी हृष्टपुष्ट होता है, विनय वंशको प्रगट करता है अर्थात् वर्तावसे वंश प्रगट हो जाता है, भाषणसे देश प्रगट होता है अर्थात् बोलीसे देश प्रगट हो जाता है ॥ ३३ ॥

---

१ 'आचारः कुलमाख्याति' इति पाठान्तरम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

किं विद्यया ? किं तपसा ? किं योगेन ? श्रुतेन च ? ॥
किं विविक्तेन मौनेन ? स्त्रीभिर्यस्य मनो हतम् ॥ ३४ ॥

भाषार्थ-विद्यासे, तपसे, योगसे और श्रुतसे तथा एकान्तमें मौनसाधनसे क्या फल ? कि जिसका स्त्रीकरके मन मारा गया ॥१३४॥

अतिथिर्बालकः पत्नी जननी जनकस्तथा ॥
पञ्चैते गृहिणः पोष्या इतरे च स्वशक्तितः ॥ ३५ ॥

भाषार्थ-अभ्यागत, बालक, स्त्री, माता तथा पिता इन पांचौंका पालन गृहस्थजन अवश्य करै; अन्य जनोंका पोषण अपनी शक्तिके अनुसार करै ॥ १३५ ॥

गाढं गुणवती विद्या न मुदे विनयं विना ॥
मूर्खतापि मुदे भूयान्महत्सु विनयान्विता ॥३६॥

भाषार्थ-गुणवती विद्या विना विनयके आनन्द देनेवाली नहीं हो सकती है. मूर्खताभी यदि विनयसे युक्त हो तो महान् पुरुषोंमें आनन्द देनेवाली होती है ॥ १३६ ॥

अहो ! साहजिकं प्रेम दूरादपि विराजते ॥
चकोरनयनद्वन्द्वमाह्लादयति चन्द्रमाः ॥ ३७ ॥

भाषार्थ-अहो ! स्वाभाविक प्रेम दूरसेभी प्रगट हो जाता है. देखो, चन्द्रमा चकोरके नेत्रोंको दूरसेभी आल्हादित कर देता है ॥ १३७ ॥

एकस्तपो द्विरध्यायी त्रिभिर्गीतं चतुष्पथम् ॥
पंचसप्तकृषीणां च संग्रामो बहुभिर्जनैः ॥ ३८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–एकसे तप, दोसे पढना, तीनसे गीत, चारसे पंथ, पांच-सातसे खेती और बहुत मनुष्योंसे संग्राम होता है ॥१३८॥

काकः पक्षिषु चांडालः स्मृतः पशुषु गर्दभः ॥
क्रोधी साधुषु चांडालः स्मृतः सर्वेषु निन्दकः॥३९ ॥

भाषार्थ–पक्षियोंमें कौवा चांडाल है, पशुओंमें गर्दभ चांडाल है, साधुवोंमें क्रोधी चांडाल है, सबमें निन्दा करनेवाला चांडाल है ॥१३९॥

लोभमूलानि पापानि रसमूलानि व्याधयः ॥
स्नेहमूलानि दुःखानि त्रीणि त्यक्त्वा सुखी भव१४०

भाषार्थ–लोभ पापकी जड है, रस व्याधियोंका मूल है, स्नेह दुःखकी जड है; अतः इन तीनौंको त्यागकर सुखी हो जावो. भावार्थ यह कि लोभसे पाप हो जाया करता है, अनेक रसोंसेही रोग प्रगट हो जाते हैं, अधिक स्नेहसे वियोग होनेपर दुःखित होना पडता है. अतः इन तीनौंको त्यागकर सुखी हो जाना उचित है ॥ १४० ॥

प्रदोषे दीपकश्चन्द्रः प्रभाते दीपको रविः ॥
त्रैलोक्ये दीपको धर्मः सुपुत्रः कुलदीपकः ॥ ४१ ॥

भाषार्थ–प्रदोषसमय (सन्ध्याकाल) में चन्द्रमा दीपक है, प्रभात-समयमें दीपक सूर्य है; त्रिलोकीमें दीपक धर्म है; कुलमें दीपक सु-पुत्र है ॥४१॥

सुखार्थी त्यजते विद्यां विद्यार्थी त्यजते सुखम् ॥
सुखार्थिनः कुतो विद्या? कुतो विद्यार्थिनःसुखम्?४२

---

१ ' इष्टमूलानि शोकानि ' इत्यपि पाठः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

C.N.Sharma

भाषार्थ-जिसको सुख प्यारा हो, वह विद्या पढना छोड देवै और जो विद्याका अर्थी हो, वह सुखको त्याग देवै. सुखार्थीको विद्या कहाँ और विद्यार्थीको सुख कहाँ ? ॥ १४२ ॥

अन्नदानात्परं दानं विद्यादानमतः परम् ॥
अन्नेन क्षणिका तृप्तिर्यावज्जीवं च विद्यया ॥ ४३ ॥

भाषार्थ-अन्नदान अतिश्रेष्ठ दान है परंतु विद्यादान अन्नदानसेभी उत्तम है: क्योंकि, अन्नसे थोडेही समयतक तृप्ति होती है. और विद्यासे जीवनपर्यन्त तृप्ति होती है ॥ १४३ ॥

दूरस्थाः पर्वता रम्या वेश्या च मुखमंडने ॥
युद्धस्य वार्ता रम्या च त्रीणि रम्याणि दूरतः॥४४ ॥

भाषार्थ-दूरवाले पर्वत देखनेपर अच्छे लगते हैं और वेश्याका मुख दूरसे अच्छा लगता है. युद्धकी बात दूरसे अच्छी लगती है. ये तीनौं दूरसेही सुहावने लगते हैं; निकटसे भयदायक होते हैं ॥१४४॥

माता यदि विषं दद्याद्विक्रीणाति पिता सुतम् ॥
राजा हरति सर्वस्वं तत्र का परिवेदना ? ॥ ४५ ॥

भाषार्थ-माताहि यदि विष देवै, पिता पुत्रको वेंचै और राजा सर्वस्व हर लेवै तहां फिर वेदना (शोचविचार) क्या है ? ॥ १४५ ॥

लेखनी पुस्तकं रामा परहस्ते गता गता ॥
कदाचित्पुनरायाता भ्रष्टा मृष्टा च चुम्बिता ॥४६ ॥

भाषार्थ-लेखनी (कलम), पुस्तक और स्त्री ये तीनौं दूसरेके हाथमें जानेसे खो जाते हैं, कदाचित् फिर आ जायँ तो, भ्रष्ट,मृष्ट और

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

चुम्बित• अर्थात् कलम भ्रष्ट हो जाती है, पुस्तक अस्ताव्यस्त हो जाती है, स्त्री चुम्बित हो जाती है ॥ १४६ ॥

श्रुत्वा धर्मं विजानाति श्रुत्वा त्यजति दुर्मतिम् ॥
श्रुत्वा ज्ञानमवाप्नोति श्रुत्वा मोक्षं च विन्दति ॥४७॥

भाषार्थ–मनुष्य सुनकर धर्मको जानता है, सुनकरही कुमतिको त्याग देता है, सुनकरही ज्ञानको प्राप्त होता है और सुनकरही मनुष्य मोक्ष पाता है ॥ १४७ ॥

मनो धावति सर्वत्र मदोन्मत्तगजेन्द्रवत् ॥
ज्ञानाङ्कुशसमा बुद्धिस्तस्य निश्चलते मनः ॥ १४८ ॥

भाषार्थ–मन्दगतिवाले उन्मत्त गजेन्द्रके समान मन सर्वत्र दौडता है• परन्तु ज्ञानरूप अंकुशके समान बुद्धिसे मनुष्यका मन निश्चल हो जाता है ॥ १४८ ॥

इच्छेच्चेद्विपुलां मैत्रीं त्रीणि तत्र• न कारयेत् ॥
वाग्वादमर्थसम्बधं तत्पत्नीपरिभाषणम् ॥ १४९ ॥

भाषार्थ–यदि मनुष्यको किसीसे मित्रता बढाना हो अर्थात् परम मित्र बनाना हो, तो वहां वाग्वाद (वादविवाद), अर्थसम्बन्ध (देन-लेन) और मित्रकी स्त्रीसे संभाषण (बातचीत) न करै ॥ १४९ ॥

अयुक्तं स्वामिनो युक्तं युक्तं नोचस्य दूषणम् ॥
अमृतं राहवे मृत्युर्विषं रुद्रस्य भूषणम् ॥ १५० ॥

भाषार्थ–स्वामीको अयुक्त वस्तुभी युक्त हो जाती है और नीचको

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

युक्त वस्तुभी दोषवाली हो जाती है. जैसे, राहुको अमृतका पीना मृत्युका कारण हुवा और विषका पान रुद्र (महादेवजी) को भूषण हो गया. विषपानसेही शिवजी नीलकंठ कहाते हैं ॥ १५० ॥

पंडिते चैव मूर्खे च बलवत्यपि दुर्जने ॥
ईश्वरे च दरिद्रे च मृत्योः सर्वत्र तुल्यता ॥१५१॥

भाषार्थ-पंडितमें और मूर्खमें, बलवान्‌में और दुर्जनमें, ऐश्वर्यवान्‌में और दरिद्रीमें मृत्युकी सर्वत्र तुल्यता है अर्थात् मृत्यु किसीको नहीं छोडती है ॥ १५१ ॥

विषस्य विषयाणां हि दृश्यते महदन्तरम् ॥
उपभुक्तं विषं हन्ति विषयाः स्मरणादपि ॥१५२॥

भाषार्थ-विष और विषय इन दोनौंमें बडा दूरका अन्तर है. क्योंकि, विषको खानेसे मनुष्य मरता है परन्तु विषयोंके स्मरणसेही प्रायः मनुष्य मर जाता है ॥ १५२ ॥

पुराणान्ते श्मशानान्ते मैथुनान्ते च या मतिः
सा मतिः सर्वदा चेत्स्यात्को न मुच्येत बन्धनात् ? १५३

भाषार्थ-पुराण सुनने उपरान्त, श्मशान जाने उपरान्त और मैथुन करने उपरान्त जो मति होती है, वही मति यदि सर्वदा बनी रहे तो कौन नहीं बन्धनसे छूट जावै अर्थात् पुराण सुनने और मुर्दोंके साथ श्मशान जाने उपरांत जो ज्ञान उत्पन्न होता है वह ज्ञान यदि बना रहे तो, मनुष्य अज्ञानी नहीं होवै और मैथुनके उपरान्त जो ग्लानि और निर्बलता आ जाती है, उसका ध्यान यदि रहे तो मनुष्य निर्बल नहीं होवै ॥ १५३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अकारेणैव चतुरास्तर्कयन्ति परेङ्गितम् ॥
गर्भस्थं केतकीपुष्पमामोदेन च षट्पदाः ॥ १५४ ॥

भाषार्थ–चतुर लोग आकृतिसेही दूसरोंके मनका भाव जान लेते हैं. जैसे, गर्भस्थ (पत्तोंमें बन्द हुये) केतकीके फूलको भ्रमर सुगन्धसेही जान लेते हैं ॥ १५४ ॥

दीपो भक्षयते ध्वान्तं कज्जलं च प्रसूयते ॥
यदन्नं भक्षयेन्नित्यं जायते तादृशी प्रजा ॥ १५५ ॥

भाषार्थ–दीपक अन्धकारको भक्षण करता है और काजलको उत्पन्न करता है अर्थात्, काला काला अन्धकार हर लेनेसे काला काला काजल उससे प्रगट होता है. इसी प्रकार जैसा अन्न नित्य भक्षण किया जाता है, वैसीही प्रजा (संतान) होती है अर्थात्, मनुष्य जैसा अन्न खाता है उसी अनुसार बुद्धि होती है, उसी अनुसार सबल अथवा निर्बल सन्तान होती है ॥ १५५ ॥

मौनं कालविलम्बश्च प्रयाणं भूमिदर्शनम् ॥
भ्रुकुट्यन्यमुखी वार्ता नकारः षड्विधः स्मृतः ॥ १५६ ॥

भाषार्थ–१ मौन (चुप) हो जाना, २ कालविलम्ब (उत्तर देनेमें देर करना), ३ प्रयाण (चल देना), ४ भूमिकी ओर देखने लगना, ५ भृकुटी अर्थात् त्यौरी चढा लेना, ६ दूसरेकी ओर मुख करके बात करने लगना ये छे प्रकारका नकार (इन्कार) अर्थात् “ नाहीं कर देना ” कहा है ॥ १५६ ॥

उत्तमं प्रणिपातेन शूरं भेदेन योजयेत् ॥
नीचमल्पप्रदानेन इष्टं धर्मेण योजयेत् ॥ १५७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-सज्जनको प्रणामकरके, शूरको भेदकरके, नीचको कुछ देकर और मित्रको धर्मकरके अपने अनुकूल करै, अर्थात् अपने काममें नियुक्त करै ॥ १५७ ॥

अकुले पतितो राजा मूर्खपुत्रो हि पण्डितः ॥
निर्धनस्य धनप्राप्तिस्तृणवन्मन्यते जगत् ॥ १५८ ॥

भाषार्थ-कुलहीन पुरुष यदि राजा हो जाता है और मूर्ख मनुष्यका पुत्र पंडित हो जाता है, निर्धनीको धन प्राप्त हो जाता है तो वह जगत्को तृणसमान मानता है ॥ १५८ ॥

आज्ञाभङ्गो नरेन्द्राणां विप्राणां मानखंडनम् ॥
पृथक् शय्या च नारीणामशस्त्रवध उच्यते ॥ १५९ ॥

भाषार्थ-राजावोंकी आज्ञाको भंग करना अर्थात् आज्ञा न मानना और ब्राह्मणोंकी मानखंडना करना अर्थात् अपमान करना, एवं स्त्रियोंको अपनी शय्यासे पृथक् कर देना अर्थात् अपनी खाटपर नहीं आने देना ये विना शस्त्रही वध कहा है. अर्थात् राजाका हुक्म न माना, ब्राह्मणका अपमान किया और स्त्रीको पास न आने दिया तो, मानों विना हथियारही मार डाला ॥ १५९ ॥

प्रस्तावसदृशं वाक्यं सद्भावसदृशं प्रियम्
आत्मशक्तिसमं कोपं कुर्वाणो न विनश्यति ॥ १६० ॥

भाषार्थ-प्रसंगके अनुसार भाषण, सद्भावके अनुसार प्रिय (प्यार) और अपनी शक्तिके अनुसार क्रोध करनेवालेका विनाश नहीं होता है ॥ १६० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पंडितैः सह सांगत्यं पण्डितैः सह संकथा ॥
पंडितैः सह मित्रत्वं कुर्वाणो नावसीदति ॥ १६१ ॥

भाषार्थ–पंडितोंके साथ संगति, पंडितोंके साथ वार्ता और पंडितोंके साथ मित्रता करनेवाला मनुष्य क्लेश नहीं पाता है ॥ १६१ ॥

मातृवत्परदाराणि परद्रव्याणि लोष्टवत् ॥
आत्मवत्सर्वभूतानि यः पश्यति स पश्यति ॥१६२॥

भाषार्थ–जो मनुष्य पराई स्त्रियोंको माताके समान, पराये धनको लोढाके समान और सबप्राणियोंको अपने समान देखता है, वही देखता है ॥ १६२ ॥

धर्मार्थकाममोक्षाणां यस्यैकोऽपि न विद्यते ॥
अजागलस्तनस्येव तस्य जन्म निरर्थकम् ॥ १६३ ॥

भाषार्थ–धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इनमेंसे जिसके एकभी नहीं है, उस मनुष्यका जन्म बकरीके गलेमेंके थनके समान निरर्थक जानना चाहिये ॥ १६३ ॥

स जीवति गुणा यस्य धर्मो यस्य स जीवति ॥
गुणधर्मविहीनो यो निष्फलं तस्य जीवितम् ॥१६४॥

भाषार्थ–जिसके समीप गुण हैं वही जीता है और जिसके हृदयमें धर्म है वही जीता है और जो गुणधर्मसे हीन है उस मनुष्यका जीना निष्फल है ॥ १६४ ॥

गुरुशुश्रूषया विद्या पुष्कलेन धनेन वा ॥
अथवा विद्यया विद्या चतुर्थो नोपलभ्यते ॥१६५॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-गुरुकी सेवासे विद्या प्राप्त होती है, अथवा बहुत धन देनेसे विद्या प्राप्त होती है, अथवा विद्यासे विद्या प्राप्त होती है. अर्थात् जो विद्या आप पढा हो उसको पढाकर उससे दूसरी विद्या पढै, ये तीन उपाय विद्या प्राप्त होनेके हैं; चौथे किसी उपायसे विद्या प्राप्त नहीं हो सकती है ॥ १६५ ॥

षट्पदः पुष्पमध्यस्थो यथा सारं समुद्धरेत् ।
तथा सर्वेषु शास्त्रेषु सारं गृह्णाति पंडिताः ॥ १६६ ॥

भाषार्थ-फूलोंके बीचमें स्थित भौंरा जैसे, पुष्पोंका सार ग्रहण करता है, उसी प्रकार पंडितलोग सब शास्त्रोंमेंसे सारको ग्रहण कर लेते हैं ॥ १६६ ॥

गुणान् भूषयते रूपं शीलं भूषयते कुलम् ।
सिद्धिर्भूषयते विद्यां भोगो भूषयते धनम् ॥१६७॥

भाषार्थ-गुण रूपको भूषित करता है, शील (उत्तम स्वभाव) कुलको भूषित करता है, सिद्धि विद्याको भूषित करती है और भोग धनको भूषित करता है. अर्थात् रूपकी शोभा गुणोंसे है. विना गुणोंके रूप वृथा है और कुलकी शोभा शीलसे है, विना उत्तम स्वभावके कुल वृथा है और विद्याकी शोभा सिद्धिसे है, विना सिद्धिके विद्या वृथा है और धनकी शोभा भोगसे है, विना भोग भोगे धन वृथा है ॥ १६७ ॥

दिवा पश्यति नोलूको काको नक्तं न पश्यति ।
अपूर्वः कोऽपि कामान्धो दिवा नक्तं न पश्यति॥१६८॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–उल्लू पक्षी दिनमें नहीं देखता है और कौवा पक्षी रातमें नहीं देखता है; परन्तु कोई कोई मनुष्य ऐसा अपूर्व कामान्ध होता है कि–वह न दिनको देखता है, न रातको देखता है ॥ १६८ ॥

यौवनं धनसम्पत्तिः प्रभुत्वमविवेकता ॥
एकैकमप्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम् ? ॥ १६९ ॥

भाषार्थ–यौवन, सम्पदा, प्रभुता और अज्ञानता इन चारोंमेंसे एक एकभी अनर्थके लिये है अर्थात् जहां इनमेंका एकभी हो, वहां अनर्थ होता है. फिर भला जहां चारौ इकट्ठे हों वहांका तो कहनाही क्या है अर्थात् वहां अनर्थ क्यों न होवै ? ॥ १६९ ॥

वचस्तत्रैव वक्तव्यं यत्रोक्तं सफलं भवेत् ॥
स्थायी भवति चात्यन्तं रागः शुक्लपटे यथा ॥ १७० ॥

भाषार्थ–वचन वहींपर बोलना चाहिये, जहां कहा हुवा वचन सफल होवै. जैसे, शुक्लपट (सपेद वस्त्र) परही रंग अत्यन्त स्थायी होता है, अर्थात् रंग सपेद कपडेपर बहुत अच्छीतरह चढता है॥१७०॥

पिंडे पिंडे मतिर्भिन्ना कुंडे कुंडे नवं पयः ॥
जातौ जातौ नवाचारा नवा वाणी मुखे मुखे ॥१७१॥

भाषार्थ–पिंडपिंड (देहदेह) में मति भिन्न भिन्न होती है, कुंडकुंडमें नवीन पय (जल) होता है, जातिजातिमें नवीन आचार होता है और मुखमुखमें नवीन वाणी होती है ॥ १७१ ॥

विद्यया सह मर्तव्यं कुशिष्याय न दापयेत् ॥
तथापि दीयते विद्या पश्चात्संजायते रिपुः ॥ १७२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–विद्याके सहित मर जाना चाहिये; परन्तु, कुशिष्यको न देवै. तोभी विद्वान् जन विद्यादान करतेही हैं, कुशिष्यको यदि विद्या दी जाती है तो वह विद्या पढकर पछिसे शत्रु हो जाता है ॥ १७२ ॥

पुस्तकस्था तु या विद्या परहस्तगतं धनम् ॥
उपस्थितेषु[1] कार्येषु न सा विद्या न तद्धनम् ॥१७३॥

भाषार्थ–पुस्तकके आधीन जो विद्या है और परायेके हाथमें जो धन है, कार्यके उपस्थित होनेपर न वह विद्या है, न वह धन है॥१७३॥

असावधाने पांडित्यं क्रयक्रीतं च मैथुनम् ॥
भोजनं च पराधीनं तिस्रः पुंसां विडम्बना ॥१७४॥

भाषार्थ–असावधानताके साथ पांडित्य (पंडिताई), खरीदके साथ मैथुन और पराये आधीन भोजन ये तीनौ मनुष्यके विडम्बनाके कारण हैं ॥ १७४ ॥

पादेन क्रम्यते पन्था मानहीनं च भोजनम् ॥
अविवेकिप्रभोः सेवा पातकं किमतःपरम् ?॥ १७५ ॥

भाषार्थ–पांवोंसे मार्ग चलना पडै, मानहीन अर्थात् अपमानसे भोजन मिलै, अविवेकी (विचारहीन) प्रभुकी सेवा करना पडै तो, इससे बढकर और पातक क्या है ॥ १७५ ॥

तुष्यन्ति भोजनैर्विप्रा मयूरा घनगर्जितैः ॥
साधवः परसन्तोषैः खलाः परविपत्तिषु ॥ १७६ ॥

भाषार्थ–ब्राह्मणलोग भोजनकरके संतुष्ट होते हैं, मोर मेघगर्जनासे

१ 'कार्यकाले समुत्पन्ने' इति पाठान्तरम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

प्रसन्न होते हैं, साधुजन दूसरोंके सन्तोषसे प्रसन्न होते हैं और दुष्टजन दूसरोंको विपत्तिमें जानकर आनन्दित होते हैं ॥ १७६ ॥

प्रत्यक्षे गुरवः स्तुत्याः परोक्षे मित्रबान्धवाः ॥
कर्मान्ते दासभृत्याश्च पुत्रा नैव तथा स्त्रियः ॥१७७॥

भावार्थ–गुरुजन प्रत्यक्षमें स्तुतियोग्य होते हैं और मित्र व बान्धवलोग परोक्षमें (पीछेसे) स्तुतियोग्य होते हैं और कर्मान्तमें अर्थात् अच्छा काम करनेउपरान्त दास और सेवक प्रशंसायोग्य होते हैं, पुत्र तथा स्त्रियां प्रशंसायोग्य नहीं होते हैं. कारण, यह कि–प्रशंसा करनेसे लडके और स्त्रियोंके बिगड जानेका भय रहता है. अतः लडके और स्त्रियोंकी प्रशंसा (तारिफ) कभी न करै ॥ १७७ ॥

विनयं राजपुत्रेभ्यः पण्डितेभ्यः सुभाषितम् ॥
अनृतं द्यूतकारेभ्यः स्त्रीभ्यः शिक्षेत कैतवम् ॥१७८॥

भावार्थ–राजपुत्रोंसे विनय, पंडितोंसे सुभाषित, जुवांरियोंसे झूंठ बोलना और स्त्रियोंसें छलकपट सीखै. सारांश यह कि–राजपुत्रोंमें विनयगुण स्वाभाविक होता है, पंडितोंमें सुभाषित (उत्तमतासे भाषण करना) गुण स्वाभाविक होता है, जुवाँरियोंमें झूँठ बोलना स्वाभाविक होता है, एवं स्त्रियोंमें छलकपट स्वाभाविक होता है ॥ १७८ ॥

धनधान्यप्रयोगेषु विद्यासंग्रहणेषु च ॥
आहारे व्यवहारे च त्यक्तलज्जः सुखी भवेत् १७९

भावार्थ–धनधान्यके प्रयोग (व्यापार) में, विद्याके ग्रहणमें, आहार और व्यवहारमें लाजका त्याग करनेवाला मनुष्य सुखी रहता है ॥ १७९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मुहूर्तमपि जीवेत नरः शुक्लेन कर्मणा ॥
न कल्पमपि कृष्णेन लोकद्वयविरोधिना ॥१८०॥

भाषार्थ–उत्तम कर्मकरके मनुष्य मुहूर्तभरभी जीवै तो अच्छा है. परंतु दोनौं लोकके विरुद्ध अर्थात् इसलोकमें और परलोकमें कल्याण न करनेवाले निकृष्ट कर्मकरके कल्पभरभी जीना नहीं अच्छा है १८०

गते शोको न कर्तव्यो भविष्यं नैव चिन्तया ॥
वर्तमानेन कालेन वर्तयन्ति विचक्षणाः ॥ १८१ ॥

भाषार्थ–गत अर्थात् भूतकालका शोक नहीं करना और भविष्यकी चिन्ताभी नहीं करना. बुद्धिमान् लोग वर्तमानकालके अनुसार वर्ताव करते हैं और जो व्यतीत हो गया अथवा आगे होना है उसके लिये कुछ चिन्ता नहीं करते हैं ॥ १८१ ॥

स्वभावेन हि तुष्यन्ति देवाः सत्पुरुषाः पिता ॥
ज्ञातयस्त्वन्नपानेन वाक्प्रदानेन पण्डिताः ॥ १८२ ॥

भाषार्थ–देवता लोग, सत्पुरुष और पिता ये उत्तम स्वभावसेही प्रसन्न रहते हैं और अपनी जातिके लोग अन्नपान (भोजन देने) से प्रसन्न होते हैं, तथा पण्डितलोग वाग्प्रदानसेही अर्थात् केवल बोलचालसेही प्रसन्न हो जाते हैं ॥ १८२ ॥

भ्रमन्संपूज्यते चक्रं भ्रमन्संपूज्यते द्विजः ॥
भ्रमन्संपूज्यते राजा स्त्री भ्रमन्ती विनश्यति ॥ १८३ ॥

भाषार्थ–भ्रमण करता हुवा चक्र पूजनीय होता है, भ्रमण करनेसेही द्विज़ पूजा जाता है, भ्रमण करनेसे राजाभी सन्मानपूर्वक पूजा जाता है, परन्तु स्त्री भ्रमण करनेसे विनष्ट हो जाती है ॥१८३॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न च पश्यति जन्मान्धः कामान्धो नैव पश्यति ॥
न पश्यति मदोन्मत्तो ह्यर्थी दोषं न पश्यति ॥१८४॥

भाषार्थ-जन्मका अन्धा मनुष्य नहीं देखता है और कामसे अन्धाभी नहीं देखता है, तथा मदोन्मत्त पुरुषभी नहीं देखता है और अर्थी पुरुष दोषको नहीं देखता है ॥ १८४ ॥

स्वयं कर्म करोत्यात्मा स्वयं तत्फलमश्नुते ॥
स्वयं भ्रमति संसारे स्वयं तस्माद्विमुच्यते ॥ १८५ ॥

भाषार्थ-आत्मा स्वयं कर्म करै है और स्वयं उस (कर्म) का फलभोग करै है, एवं स्वयं संसारमें भ्रमण करै है, स्वयं संसारसे विमुक्त हो जावै है ॥ १८५ ॥

ऋणकर्ता पिताशत्रुर्माता च व्यभिचारिणी ॥
अविनीता रिपुर्भार्या पुत्रः शत्रुरपण्डितः ॥ १८६ ॥

भाषार्थ-ऋणकर्ता पिता शत्रु है और माता व्यभिचारिणी शत्रु है, कठोर भाषण करनेवाली स्त्री शत्रु है और मूर्ख पुत्र शत्रु है ॥१८६॥

नास्ति कामसमो व्याधिर्नास्ति मोहसमो रिपुः ॥
नास्ति क्रोधसमो वह्निर्नास्ति ज्ञानात्परं सुखम्॥१८७॥

भाषार्थ-कामके समान व्याधि नहीं है, मोहके समान दूसरा शत्रु नहीं है, क्रोधके समान अग्नि नहीं है, ज्ञानसे बढकर और सुख नहीं है ॥ १८७ ॥

विद्या मित्रं प्रवासेषु भार्या मित्रं गृहेषु च ॥
व्याधितस्यौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च १८८

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–विदेशमें मित्र (सहायक) विद्या है, घरमें मित्र स्त्री है, रोगीको औषध मित्र है, मृतका धर्म मित्र है ॥ १८८ ॥

अधना धनमिच्छन्ति मानमिच्छन्ति पंडिताः ॥
मानवाः स्वर्गमिच्छन्ति मोक्षमिच्छन्ति देवताः॥१८९॥

भाषार्थ–धनहीन लोग धनकी इच्छा करते हैं, पंडित लोग मानकी इच्छा करते हैं, मानव (साधारण जन) स्वर्गकी इच्छा करते हैं, देवता लोग मोक्षकी इच्छा करते हैं ॥ १८९ ॥

सत्येन धार्यते पृथ्वी सत्येन तपते रविः ॥
सत्येन वायवो वान्ति सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम् ॥१९०॥

भाषार्थ–सत्यसे पृथ्वी जगत्को धारण करती है, सत्यसे सूर्य तपता है, सत्यसे वायु वहती है, यह सब सत्यकरके प्रतिष्ठित है अर्थात् सब संसार सत्यसेही ठहरा है ॥ १९० ॥

हस्तस्य भूषणं दानं सत्यं कण्ठस्य भूषणम् ॥
श्रोत्रस्य भूषणं शास्त्रं भूषणे किं प्रयोजनम्?॥१९१॥

भाषार्थ–हाथका भूषण (गहना) दान है और कंठका भूषण सत्य है, कानका भूषण शास्त्र है, ऐसे भूषणोंके विद्यमान होनेपर और भूषणसे क्या प्रयोजन है? ॥ १९१ ॥

युक्तमुक्तं पुरा विद्भिश्चिन्ताजूर्तिः सुदारुणा ॥
न भेषजैर्लंघनैर्वा न चान्यैरुपशाम्यति ॥ १९२ ॥

भाषार्थ–पूर्वविद्वानोंने ठीक कहा है कि–चिन्ता महादारुण ज्वर है. जो औषधियोंसे, लंघनोंसे और अन्य उपायोंसे शान्त नहीं हो सकता है ॥ १९२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ईर्ष्यी घृणी त्वसन्तुष्टः क्रोधनो नित्यशङ्कितः ॥
परभाग्योपजीवी च षडेते दुःखभागिनः ॥ १९३ ॥

भाषार्थ–ईर्षा करनेवाला, घृणा करनेवाला, असन्तोषी, क्रोधी, सदैव संदेहयुक्त, पराये भरोसे रहकर उसीकी कमाई खानेवाला और आप कुछ न कमानेवाला ये छे दुःखभागी हैं अर्थात् ये सदैव दुःखीहि रहते हैं ॥ १९३ ॥

नवं वस्त्रं नवं छत्रं नव्या स्त्री नूतनं गृहम् ॥
सर्वत्र नूतनं शस्तं सेवकान्ने पुरातने ॥ १९४ ॥

भाषार्थ–नवीन वस्त्र, नवीन छत्र, नई स्त्री, नवीन घर, सर्वत्र नवीन अच्छा है; परंतु सेवक और अन्न पुराना अच्छा है ॥ १९४ ॥

अपमानं पुरस्कृत्य मानं कृत्वा च पृष्ठतः ॥
स्वकार्यं[1] साधयेद्धीमान् कार्यभ्रंशो हि मूर्खता ॥१९५॥

भाषार्थ–अपमानको आगे कर, मानको पीछे करके बुद्धिवान् अपना कार्य साधै. क्योंकि–कामका बिगड जाना मूर्खता है. भावार्थ यह कि–कार्यविध्वंस न होने पावै ॥ १९५ ॥

नाकाले म्रियते जन्तुर्विद्धः शरशतैरपि ॥
कुशकण्टकविद्धोऽपि प्राप्तकालो न जीवति॥१९६॥

भाषार्थ–अकालमें जन्तु नहीं मरता है, चाहे सैकडों बाणोंसे देह विंध जाय और कुश–कांटोंसे विद्ध हो जानेपरभी नहीं मरता है, परन्तु काल आनेपर नहीं जीता रहता है ॥ १९६ ॥

कवयः किं न पश्यन्ति ? किं न भक्ष्यन्ति वायसाः ? ॥
मद्यपाः किं न जल्पन्ति ? किं न कुर्वन्ति योषितः ? १९७

१ ' स्वकार्यमुद्धरेत्प्राज्ञ ' इत्यपि पाठः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–कविलोग क्या नहीं देखते हैं? कौवे क्या नहीं खाते हैं? मदिरा पीनेवाले क्या नहीं बकते हैं? स्त्रियां क्या नहीं करती हैं? ॥१९७॥

ददाति प्रतिगृह्णाति गुह्यमाख्याति पृच्छति ॥
भुंक्ते भोजयते चैव षड्विधं प्रीतिलक्षणम् ॥ १९८ ॥

भाषार्थ–जो पुरुष देता है, लेता है, अपने मनकी बात प्रगट करता है और दूसरेके मनकी बात पूछता है. आप भोजन करता है और भोजन कराता है ये छे लक्षण प्रीतिके हैं. सारांश यह कि–जिसके साथ प्रीति करै, उसके साथ देनलेन रक्खै; अपनी बात कहै, उसकी सुनै; आप उसका खावै और अपना खिलावै. ऐसा होनेसेहि प्रीति बनी रहती है ॥ १९८ ॥

अस्थिरं जीवितं लोके अस्थिरे धनयौवने ॥
अस्थिरा पुत्रदाराश्च धर्मः कीर्तिर्द्वयं स्थिरम् ॥ १९९ ॥

भाषार्थ–संसारमें जीवन स्थिर नहीं है, धन और यौवनभी स्थिर नहीं है, तथा पुत्रभी स्थिर नहीं; धर्म और कीर्ति (यश) ये दोन मात्र स्थिर हैं ॥ १९९ ॥

लालयेत्पञ्च वर्षाणि दश वर्षाणि ताडयेत् ॥
प्राप्ते च षोडशे वर्षे पुत्रे मित्रवदाचरेत् ॥ २०० ॥

भाषार्थ–पांच वर्षपर्यन्त पुत्रका प्यार करै, पांच वर्षके उपरान्त दशवर्ष ताडना करै. क्योंकि–विना ताडना किये विद्यामें पूर्ण अभ्यास नहीं होता है. "लडकोंको खेलकूदसे रोकना, कुसंगतिमें नहीं जाने देना, नाचतमाशेसे बचाना, किसी प्रकारका व्यसन नहीं होने देना" यही

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ताडना है. सो यह पन्द्रह वर्षकी आयुपर्यन्त ध्यान रक्खै. परन्तु जब सोलह वर्षकी आयु होवै, तब पुत्रको मित्रसमान समझकर वर्ताव करे ॥ २०० ॥

पदे पदे च रत्नानि योजने रसकूपिका ॥
भाग्यहीना न पश्यन्ति बहुरत्ना वसुन्धरा ॥२०१॥

भाषार्थ–पदपदपर रत्न हैं, योजनपर रसकूपिका है, वसुन्धरा (पृथिवी) रत्नोंसे भरपूर है. परन्तु भाग्यहीन नर नहीं देखते हैं ॥२०१॥

'सबै सम्पदा हैं जगमाही । भाग्यहीन नर पावत नाहीं' ॥

मधुना सिञ्चयेन्निम्बं निम्बः किं मधुरायते ? ॥
जातिस्वभावदोषोऽयं कटुकत्वं न मुञ्चति ॥ २०२ ॥

भाषार्थ–मधुसे निंबवृक्ष सींचनेसे क्या निंबमें मीठापन आ जायगा ? यह जातिस्वभावका दोष है कि–कडुवापन नहीं छोडता है २०२

दोहा–निंब न मीठा हो सकै, अमृत देहु सिचवाय ।
मूरखको समझाइये, ज्ञान गांठको जाय ॥ १ ॥

कर्तव्यमेव कर्तव्यं प्राणैः कण्ठगतैरपि ॥
अकर्तव्यं न कर्तव्यं प्राणैः कण्ठगतैरपि ॥ २०३ ॥

भाषार्थ–प्राणसंकटमेंभी जो करने योग्य है वही करै और जो कर्म करने योग्य नहीं है, वह कभी नहीं करना चाहिये. चाहें प्राण कंठमेंही क्यों न आ जायँ. सारांश यह कि–अनुचित काम कभी न करना चाहिये ॥ २०३ ॥

क्रोधो मूलमनर्थानां क्रोधः संसारबन्धनम् ॥
धर्मक्षयकरः क्रोधस्तस्मात्क्रोधं विवर्जयेत् ॥ २०४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-क्रोध अनर्थोंका मूल है, अर्थात् क्रोधसे बडे बडे अनर्थ हो जाते हैं और क्रोधही संसारमें बन्धन है, धर्मका नाश करनेवालाभी क्रोधही है. इस कारण, क्रोधका त्याग करै अर्थात् क्रोध कभी न करै ॥ २०४ ॥

उत्तमं स्वार्जितं भुक्तं मध्यमं पितुरर्जितम् ॥
निकृष्टं भ्रातृवित्तं च स्त्रीवित्तमधमाधमम् ॥२०५॥

भाषार्थ-अपने उपार्जन किये धनको खाना उत्तम है, अर्थात् अपनी कमाई खाना अच्छा है और पिताका उपार्जित धन मध्यम है, भाईका धन निकृष्ट है और स्त्रीका धन अधमसेभी अधम है ॥ २०५ ॥

अलसस्य कुतो विद्या ? अविद्यस्य कुतो धनम् ? ॥
अधनस्य कुतो मित्रममित्रस्य कुतः सुखम् ? ॥२०६॥

भाषार्थ-आलस्य करनेवालेको विद्या कहां और विद्याहीनको धन कहांसे प्राप्त होगा ? तथा निर्धन पुरुषको मित्र कहाँ व कैसे मिलैं ? एवं मित्रहीनको सुख कहाँ अर्थात् विना मित्र सुख प्राप्त नहीं होता है ॥२०६॥

अभ्रच्छाया तृणाग्निश्च खले प्रीतिस्स्थले जलम् ॥
वेश्यासक्तिः कुमित्रं च षडेते बुद्बुदोपमाः ॥ २०७ ॥

भाषार्थ-वादलकी छाया, घासफूसकी आंच, दुर्जनकी प्रीति, स्थलमें भरा जल, वेश्यामें आसक्ति, (लीन होना) और दुष्ट मित्र ये छे बुदबुद (पानीके बुलबुला) के समान हैं. अर्थात् ये स्थायी नहीं हैं ॥ २०७ ॥

प्रमदा मदिरा लक्ष्मीर्विज्ञेया त्रिविधासुरा ॥
दृष्ट्वैवोन्मादयत्येका पीता चान्यातिसंचयात् ॥ २०८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-स्त्री, मदिरा और लक्ष्मी इन तीनोंकोभी एक प्रकारकी सुरा जानना. क्योंकि-एक देखनेसेही उन्मत्त करती है, दूसरी पीनेसे और तीसरी अतिसंचयसे उन्मत्त करती है ॥ २०८ ॥

राजपत्नी गुरोः पत्नी भ्रातृपत्नी तथैव च ॥
पत्नीमाता स्वमाता च पञ्चैता मातरः स्मृताः॥२०९॥

भाषार्थ-रानी, गुरुकी स्त्री, भाईकी स्त्री, अपनी स्त्रीकी माता (सास) और अपनी माता ये पांच मातायें कही हैं अर्थात् इन पांचौंको एकसमान माता समझै ॥ २०९ ॥

असंमाने तपोवृद्धिः संमानाच्च तपःक्षयः ॥
पूजया पुण्यहानिः स्यान्निन्दया सद्गतिर्भवेत् ॥ २१० ॥

भाषार्थ-सन्मान न होनेसे तपस्वीके तपकी वृद्धि होती है और सन्मान होनेसे, तपका क्षय हो जाता है. पूजासे पुण्यकी हानि होती है और निंद्रासे सद्गति होती है ॥ २१० ॥

पराधीनं वृथा जन्म परस्त्रीषु वृथा सुखम् ॥
परगेहे वृथा लक्ष्मीर्विद्या या पुस्तके वृथा ॥२११॥

भाषार्थ-दूसरेके आधीन जन्म वृथा है अर्थात् जो मनुष्य जन्मभर पराये आधीन रहता है, उसका जन्म वृथा है और पराई स्त्रियोंमें सुख वृथा है, तथा पराये घरमें जो लक्ष्मी है, वहभी वृथा है. क्योंकि-उससे अपना क्या प्रयोजन निकल सकता है? एवं पुस्तकके आधीन जो विद्या है, वहभी वृथा है ॥ २११ ॥

धातुः परीक्षा दुर्भिक्षे स्त्रीपरीक्षा च निर्धने ॥
युद्धे शूरपरीक्षा च मृत्योरत्यन्तमापदि ॥ २१२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-धातुकी परीक्षा दुर्भिक्षमें, स्त्रीकी परीक्षा निर्धन होनेपर, शूरकी परीक्षा युद्धमें और मनुष्यकी परीक्षा महाविपत्तिसमयमें हो जाती है ॥ २१२ ॥

अन्यमाश्रयते लक्ष्मीस्त्वन्यमन्यं च मेदिनी ॥
अनन्यगामिनी पुंसां कीर्तिरेका पतिव्रता ॥ २१३ ॥

भाषार्थ-लक्ष्मी अन्य (दूसरे) के आश्रय हो जाती है अर्थात् लक्ष्मी चंचला है, एकसे दूसरेके यहां चली जाती है. मेदिनी (पृथिवी) भी अन्य अन्य अर्थात् और और मनुष्योंको प्राप्त होती रहती है, परन्तु मनुष्योंकी कीर्ति एक ऐसी पतिव्रता है कि-वह अनन्यगामिनी है अर्थात् औरके समीप नहीं जाती है ॥ २१३ ॥

सद्भावेन जयेन्मित्रं सद्भावेन च बान्धवान् ॥
स्त्रीभृत्यान् दानमानाभ्यां दाक्षिण्येनेतरं जनम् ॥ २१४ ॥

भाषार्थ-उत्तम स्वभावसे मित्रको जीते, उत्तम भावसे बन्धुजनोंको जीते और दानमानसे स्त्री व सेवकोंको जीते, दक्षिणा देकर अन्यजनोंको अपने वशमें करै ॥ २१४ ॥

शुभाशुभाभ्यां मार्गाभ्यां वासनेयं विसर्पति ॥
अशुभाद्वै वर्जयित्वा योजनीया शुभे पथि ॥ २१५ ॥

भाषार्थ-शुभ और अशुभ इन दो मार्गोंसे वासना चलती है. मनुष्यको उचित है कि-अशुभ मार्गसे हटाकर शुभमार्गपर चलावै ॥ २१५ ॥

सन्तोषस्त्रिषु कर्तव्यः स्वदारे भोजने धने ॥
त्रिषु चैव न कर्तव्यो दाने तपसि पाठने ॥ २१६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–अपनी स्त्री, भोजन और अपने पास जो धन हो इन तीनोंमेंही सन्तोष करै. परन्तु दान, तप और पढना इन तीनोंमें सन्तोष न करै अर्थात् जबतक हो सकै दान देवै, तप करै और पढै ॥ २१६ ॥

सुकुले योजयेत्कन्यां पुत्रं विद्यासु योजयेत् ॥
व्यसने योजयेच्छत्रुमिष्टं धर्मेण योजयेत्॥ २१७ ॥

भाषार्थ–कन्याको उत्तमकुलमें विवाहै, पुत्रको विद्या (पढने) में लगावै, शत्रुको व्यसनमें लगावै और मित्रको धर्ममें लगावै ॥ २१७ ॥

न पुत्रात्परमो लाभो न भार्यायाः परं सुखम् ॥
न धर्मात्परमं मित्रं नानृतात्पातकं परम् ॥ २१८ ॥

भाषार्थ–पुत्रसे बढकर और उत्तम लाभ नहीं है, स्त्रीसे बढकर दूसरा सुख नहीं है, धर्मसे परे दूसरा परम मित्र नहीं है, झूँठसे बढकर और कोई पातक नहीं है ॥ २१८ ॥

लालने बहवो दोषास्ताडने बहवो गुणाः ॥
तस्मात्पुत्रं च शिष्यं च ताडयेन्न तु लालयेत् ॥२१९॥

भाषार्थ– प्यार करनेमें बहुत दोष है और ताडन करनेमें बहुत गुण हैं. इसकारण, पुत्रको और शिष्यको ताडना करै; लाड न करै ॥ २१९ ॥

ज्यायांसमपि शीलेन विहीनं नैव पूजयेत् ॥
अपि शूद्रं च धर्मज्ञं सद्वृत्तमभिपूजयेत् ॥२२०॥

भाषार्थ–शील (उत्तम स्वभाव) से रहित महान् पुरुषभी आदर

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

करने योग्य नहीं होता है और शूद्रभी यदि धर्मज्ञ और उत्तम आचरणवाला हो तो, उसका सत्कार करै ॥ २२० ॥

नक्षत्रभूषणं चन्द्रो नारीणां भूषणं पतिः ॥
पृथिवीभूषणं राजा विद्या सर्वस्य भूषणम् ॥२२१॥

भाषार्थ–नक्षत्रोंका भूषण चन्द्रमा है, स्त्रियोंका भूषण पति है, पृथिवीका भूषण राजा है और विद्या सबका भूषण है ॥ २२१ ॥

शत्रोरपि गुणा वाच्या दोषा वाच्या गुरोरपि ॥
सर्वदा सर्वयत्नेन पुत्रे शिष्यवदाचरेत् ॥ २२२ ॥

भाषार्थ–शत्रुकेभी गुण वखानना चाहिये और गुरुकेभी दोष प्रगट कर देना चाहिये. सब काल सर्व यत्नसे पुत्रमें शिष्यके समान आचरण (वर्ताव) करना चाहिये ॥ २२२ ॥

न कश्चित्कस्य चिन्मित्रं न कश्चित्कस्यचिद्रिपुः
कारणेन हि जायन्ते मित्राणि रिपवस्तथा ॥ २२३ ॥

भाषार्थ–न कोई किसीका मित्र है, न कोई किसीका शत्रु है, कारणसेही मित्र तथा शत्रु बन जाते हैं ॥२२३ ॥

दूरतः शोभते मूर्खो लम्बशाटपटावृतः ॥
तावच्च शोभते मूर्खो यावत्किञ्चिन्न भाषते ॥२२४॥

भाषार्थ–लम्बी धोती और वस्त्रोंकरके आच्छादित मूर्ख मनुष्य दूरसे अच्छा लगता है. मूर्ख तभीतक शोभा पाता है, जबतक कुछ बोलता नहीं है ॥ २२४ ॥

आपदर्थे धनं रक्षेद्दारान् रक्षेद्धनैरपि ॥
आत्मानं सततं रक्षेद्दारैरपि धनैरपि ॥ २२५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–आपत्कालके अर्थ धनकी रक्षा करै और धनसे स्त्रियोंकी रक्षा करै, तथा स्त्रियोंसे और धनसेभी अपनी सदैव रक्षा करै ॥२२५॥

हस्ती हस्तसहस्रेण शतहस्तेन वाजिनः ॥
शृंगिणो दशहस्तेन स्थानत्यागेन दुर्जनः ॥२२६॥

भावार्थ–हाथीका एक सहस्र (हजार) हाथपर, घोडेका सौ हाथपर, सींगवाले पशुओंका दश हाथपर त्याग करै और स्थानत्याग करके दुर्जनका परित्याग करै ॥ २२६ ॥

अप्रगल्भस्य या विद्या कृपणस्य च यद्धनम् ॥
यच्च बाहुबलं भीरोर्व्यर्थमेतत् त्रयं भुवि ॥ २२७॥

भावार्थ–जो अप्रगल्भ, अर्थात् दृढ नहीं है, उसकी जो विद्या और कृपण (सूम) का जो धन, तथा भीरु (डरपोक) का जो बाहुबल ये तीनौं पृथिवीपर व्यर्थ हैं ॥ २२७ ॥

परदारं परद्रव्यं परीवादं परस्य च ॥
परीहासं गुरोः स्थाने चापल्यं च विवर्जयेत् २२८

भावार्थ–पराई स्त्री, पराया धन, पराई निन्दा और गुरुजनके स्थानमें हंसी, मसखरी और चपलता इनका परित्याग करै ॥ २२८ ॥

शरीरनिरपेक्षस्य दक्षस्य व्यवसायिनः ॥
बुद्धिप्रारम्भकार्यस्य नास्ति किञ्चन दुष्करम् २२९

भावार्थ–शरीरकी अपेक्षा (पर्वाह) न करनेवाले, दक्ष और पुरुषार्थी तथा बुद्धिसे कार्यप्रारंभ करनेवाले पुरुषको कुछभी दुष्कर नहीं है अर्थात् ऐसा कोई काम नहीं है जो वह नहीं कर सकता है ॥२२९॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न स्वल्पस्य कृते भूरि नाशयेन्मतिमान्नरः ॥
एतदेवात्र पांडित्यं यत्स्वल्पाद्भूरिरक्षणम् ॥ २३० ॥

भाषार्थ-बुद्धिमान् मनुष्य थोडेके निमित्त बहुतको नष्ट न करै. इसमें यही चतुराई है कि-जो थोडेसे बहुतकी रक्षा करै ॥ २३० ॥

अतिदाक्षिण्ययुक्तानां शङ्कितानां पदे पदे ॥
परापवादभीरूणां दूरतो यान्ति सम्पदः ॥ २३१ ॥

भाषार्थ-अतिचातुर्यसे युक्त, पदपदपर शंकित और पराये अपवादसे डरनेवाले मनुष्योंको संपदायें दूरसेही छोड जाती हैं ॥ २३१ ॥

देहे पातिनि का रक्षा ? यशो रक्ष्यमपातवत् ॥
नरः पतितकायोऽपि यशःकायेन जीवति ॥ २३२ ॥

भाषार्थ-नष्ट होनेवाले देहकी क्या रक्षा करनी ? यशकी रक्षा करनी चाहिये जो कभी नष्ट नहीं होता. देहके नष्ट हो जानेपरभी मनुष्य यशरूपी देहसे जीवित रहता है ॥ २३२ ॥

किन्नु मेस्यादिदं कृत्वा किन्नु मे स्यादकुर्वतः ॥
इति संचिन्त्य मनसा प्राज्ञः कुर्वीत वा न वा ॥२३३॥

भाषार्थ-" इस कामको करनेसे मुझको क्या फल प्राप्त होगा और न करनेसे मुझको क्या हानि पहुँचेगी " यह मनसे विचार, बुद्धिमान् पुरुष काम करै वा न करै ॥ २३३ ॥

बुधाग्रे न गुणान् ब्रूयात् साधु वेत्ति यतः स्वयम् ॥
मूर्खाग्रेऽपि च न ब्रूयात् बुधप्रोक्तं न वेत्ति सः ॥२३४॥

भाषार्थ-बुधजनके आगे गुणोंको न कहै. क्योंकि-वह भलीभाँति

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जानता है अर्थात् गुणज्ञ है और मूर्खके आगेभी न कहै. क्योंकि–वह बुद्धिमान्के कहेको नहीं समझ सकता है ॥ २३४ ॥

निमेषमात्रमपि ते वयो गच्छन्न तिष्ठति ॥
तस्माद्देहेष्वनित्येषु कीर्तिमेकामुपार्जय ॥२३५॥

भाषार्थ–निमेषमात्रभी तुह्मारा आयुष्य चलता हुवा नहीं ठहरता अर्थात् नेत्रके पलक लगनेमें जितना समय लगता है, उतने समयभी आयुका भरोसा नहीं है. इसकारण, इस अनित्य (नाश होनेवाले) शरीरमें एक कीर्ति (यश) सार है. उसका उपार्जन (संचय) करै ॥ २३५ ॥

मनसा चिन्तितं कर्म वचसा न प्रकाशयेत् ॥
अन्यलक्षितकार्यस्य यतः सिद्धिर्न जायते ॥२३६॥

भाषार्थ–मनमें चिंतित कर्म अर्थात् जो काम मनसे विचारै, वह वाणीसे न कहै. क्योंकि–अन्यलक्षित कार्यकी सिद्धि नहीं होती है अर्थात् दूसरेको विदित हुए कार्यका प्रायः विध्वंस हो जाता है॥२३६॥

यावत्स्वस्थमिदं देहं यावन्मृत्युश्च दूरतः ॥
तावदात्महितं कुर्यात्प्राणान्ते किं करिष्यति ? २३७

भाषार्थ–यह शरीर जबतक स्वस्थ है और जबतक मृत्यु दूर है, तबतक अपना हित करै. प्राणान्तमें क्या कर सकेगा ? ॥ २३७ ॥

कुदेशं च कुवृत्तिं च कुभार्यां कुनदीं तथा ॥
कुद्रव्यं च कुभोज्यं च वर्जयेत्सुविचक्षणः ॥२३८॥

भाषार्थ–जो देश अच्छा नहीं, जो जीविका अच्छी नहीं, जो स्त्री

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अच्छी नहीं, जो नदी अच्छी नहीं, जो धन अच्छा नहीं और जो भोजन अच्छा नहीं इन सबोंका बुद्धिमान् जन परित्याग करै ॥२३८॥

माता यस्य गृहे नास्ति भार्या चाप्रियवादिनी ॥
अरण्यं तेन गन्तव्यं यथारण्यं तथा गृहम् ॥ २३९ ॥

भाषार्थ- जिसके घरमें माता नहीं है और स्त्री अप्रिय (कठोर) वचन बोलनेवाली है, उसको वनमें चले जाना उचित है. क्योंकि- उसके लिये जैसा वन है, वैसा घर है ॥ २३९ ॥

अस्ति पुत्रो वशे यस्य भृत्यो भार्या तथैव च ॥
अभावे सति सन्तोषः स्वर्गस्थोऽसौ महीतले २४०

भाषार्थ-जिसके पुत्र वशमें है, तथा सेवक और स्त्रीभी वशमें है, अभाव होनेपर सन्तोष है, अर्थात् पुत्र सेवक स्त्री नहीं हैं तोभी सन्तोष है तो, वह पुरुष संसारमें स्वर्गमें स्थित है. अर्थात् सुखपूर्वक रहता है (सुखी है) ॥ २४० ॥

कोकिलानां स्वरो रूपं नारीरूपं पतिव्रतम् ॥
विद्या रूपं कुरूपाणां क्षमा रूपं तपस्विनाम् २४१

भाषार्थ-कोकिलावोंका रूप स्वर है, स्त्रियोंका रूप पतिव्रत है, कुरूपोंका रूप विद्या है. तपस्वियोंका रूप क्षमा है ॥ २४१ ॥

अविद्यं जीवनं शून्यं दिक् शून्या चेदबान्धवा ॥
पुत्रहीनं गृहं शून्यं सर्वशून्या दरिद्रता ॥ २४२ ॥

भाषार्थ-विना विद्याके जीवन शून्य है, विना बन्धुजनोंके दिशा शून्य है अर्थात् जिस दिशामें अपना कोई बन्धु नहीं वह दिशा शून्य है, विना पुत्रके घर शून्य है, दरिद्रतासे सर्व शून्य हो जाता है अर्थात् निर्धनको सब संसार सूना है ॥ २४२

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कर्मायत्तं फलं पुंसां बुद्धिः कर्मानुसारिणी ॥
तथापि सुधिया भाव्यं सुविचार्यैव कुर्वता॥२४३॥

भाषार्थ—यद्यपि मनुष्योंको कर्मके अनुसार फल प्राप्त होता है और बुद्धि कर्मके अनुसार होती है तथापि, बुद्धिमान्‌को उचित है कि—उत्तम विचारपूर्वकही कर्म करना चाहिये. सारांश यह कि—शुभकर्म करै. जिससे शुभ फल प्राप्त हो और बुद्धिभी सुकर्म करनेमेंही प्रवृत्त करै ॥ २४३ ॥

अदाता वंशदोषेण कर्मदोषाद्दरिद्रता ॥
उन्मादो मातृदोषेण पितृदोषेण मूर्खता ॥ २४४ ॥

भाषार्थ—वंशके दोषसे अदाता, कर्मके दोषसे दरिद्रता, माताके दोषसे उन्मत्तता और पिताके दोषसे मूर्खता होवै है ॥ २४४ ॥

वस्त्रहीनस्त्वलंकारो घृतहीनं च भोजनम् ॥
स्तनहीना च या नारी विद्याहीनं च जीवनम्२४५

भाषार्थ—विना वस्त्र आभूषण और विना घीके भोजन, तथा विना स्तनकी जैसे स्त्री है वैसेही विना विद्याके जीवन है ॥ २४५ ॥

अतिदर्पे हता लंका अतिमाने च कौरवाः ॥
अतिदाने बलिर्बद्धः सर्वमत्यन्तगर्हितम् ॥२४६ ॥

भाषार्थ—अतिदर्प (अतिघमंड) से लंका नष्ट हो गई और अतिमान (अत्यंत अभिमान) से कौरव नष्ट हो गये, अतिदानसे राजा बलि बाँध गया. इसकारण, अत्यन्त सब वर्जित है ॥ २४६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दुर्लभं संस्कृतं वाक्यं दुर्लभः क्षेमकृत्सुतः ॥
दुर्लभा सदृशी भार्या दुर्लभः स्वजनः प्रियः २४७

भाषार्थ-संस्कृत वाक्य दुर्लभ है, कल्याणकारी पुत्र दुर्लभ है, अपने अनुकूल वर्त्ताव करनेवाली स्त्री दुर्लभ है और प्रिय स्वजनभी दुर्लभ है ॥ २४७ ॥

अविद्यः पुरुषः शोच्यः शोच्यं मैथुनमप्रजम् ॥
निराहाराः प्रजाः शोच्याः शोच्यं राज्यमराजकम् २४८

भाषार्थ-विना विद्याके पुरुष शोच करने योग्य है, विना संतान हुये मैथुनभी शोच करने योग्य है, विना आहारके अर्थात् भूखी प्रजा शोच करने योग्य है, तथा विना राजाके राज्य शोच करने योग्य है ॥ २४८ ॥

अशोच्यो निर्धनः प्राज्ञोऽशोच्यः पण्डितबान्धवः ॥
अशोच्या विधवा नारी पुत्रपौत्रप्रतिष्ठिता ॥ २४९ ॥

भाषार्थ-धनहीन प्राज्ञ (विद्वान्) शोच करने योग्य नहीं है, धनहीन पंडित बान्धवभी शोच करनेयोग्य नहीं है, पुत्रपौत्रवाली विधवा स्त्रीभी शोच करनेयोग्य नहीं है ॥ २४९ ॥

कुलीनैः सह सम्पर्कं पण्डितैः सह मित्रताम् ॥
ज्ञातिभिश्च समं मेलं कुर्वाणो न विनश्यति ॥२५०॥

भाषार्थ-कुलीन पुरुषोंके साथ संयोग, पंडितोंके साथ मित्रता और अपनी ज्ञातिवालोंसे मेल करता हुवा मनुष्य नष्ट नहीं होता है ॥ २५० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तस्करस्य कुतो धर्मो ? दुर्जनस्य कुतः क्षमा ? ॥
वेश्यानां च कुतः स्नेहः? कुतः सत्यं च कामिनाम्?२५१

भाषार्थ–चोरके धर्म कहाँ और दुर्जनके क्षमा कहाँ ? तथा वेश्यावोंके स्नेह कहाँ और कामी जनोंके सत्य कहाँ ? ॥ २५१ ॥

कष्टावृत्तिः पराधीना कष्टो वासो निराश्रयः ॥
निर्धनो व्यवसायश्च सर्वकष्टादरिद्रता ! ॥ २५२ ॥

भाषार्थ–पराये आधीन आजीविका कष्ट देनेवाली है, विना आश्रय वास करना कष्टदायक है, निर्धन व्यवसाय कष्टदायक है और दरिद्रता सबसे अधिक कष्टदात्री है ॥ २५२ ॥

दुर्बलस्य बलं राजा बालानां रोदनं बलम् ॥
बलं मूर्खस्य मौनित्वं चोराणामनृतं बलम्॥२५३॥

भाषार्थ–दुर्बलका बल राजा है, बालकोंका बल रोदन है, मूर्खका बल मौन हो जाता है, चोरोंका बल झूंठ है ॥ २५३ ॥

यो ध्रुवाणि परित्यज्य अध्रुवं परिषेवते ॥
ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति अध्रुवं नष्टमेव च ॥२५४॥

भाषार्थ–जो निश्चितको छोडकर अनिश्चितका सेवन करता है, उसके निश्चितोंका नाश हो जाता है और अनिश्चित तो नाश होतेही हैं ॥ २५४ ॥

कोऽतिभारः समर्थानां ? किं दूरं व्यवसायिनाम् ? ॥
को विदेशः सविद्यानां ? कः परः प्रिय वादिनाम् ?२५५

भाषार्थ–समर्थ जनोंको कौन अतिभार है ? पुरुषार्थी जनोंको

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

क्या दूर है ? विद्वान् जनोंको कौन विदेश है ? प्रियवचन बोलनेवालोंके कौन पराया है ? ॥ २५५ ॥

सिंहादेकं बकादेकं षट् शुनस्त्रीणि गर्दभात् ॥
वायसात्पञ्च शिक्षेच्च शिक्षेच्चत्वारि कुक्कुटात् ॥ २५६ ॥

भाषार्थ-सिंहसे एक, बगुलासे एक, कुत्तेसे छे, गर्दभसे तीन, कौवासे पांच और मुर्गासे चार शिक्षा ग्रहण करै ॥ २५६ ॥

प्रभूतमल्पकार्यं वा यो नरः कर्तुमिच्छति ॥
सर्वारम्भेण तत्कुर्यात्सिंहादेकं प्रकीर्तितम् ॥ २५७ ॥

भाषार्थ-मनुष्य बहुत वा थोडा जो कार्य करनेकी इच्छा करै, वह सर्वारंभसे अर्थात् भलीभांति आरम्भ करके करै. यह एक शिक्षा सिंहसे ग्रहण करनी चाहिये ऐसा कहा है ॥ २५७ ॥

सर्वेन्द्रियाणि संयम्य बकवत्पतितो जनः ॥
कालदेशोपपन्नानि सर्वकार्याणि साधयेत् ॥ २५८ ॥

भाषार्थ-मनुष्य सब इन्द्रियोंका संयम करके बगुलाके समान ध्यानपूर्वक काल और देशके अनुकूल सर्व कार्य साधै ॥ २५८ ॥

बह्वाशी स्वल्पसंतुष्टः सुनिद्रः शीघ्रचेतनः ॥
प्रभुभक्तश्च शूरश्च ज्ञातव्या षट् शुनो गुणाः ॥ २५९ ॥

भाषार्थ-बहुत भोजन कर जाना, थोडेमें भी सन्तुष्ट हो जाना, सुखपूर्वक नींद लेना, जल्दी जाग पडना और स्वामिभक्त होना, तथा शूरता ये छे गुण कुत्तेमें जानना. इन गुणोंकी शिक्षा कुत्तेसे ग्रहण करना चाहिये ॥ २५९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अविश्रामं वहेद्भारं शीतोष्णं च न विन्दति ॥
ससन्तोषस्तथा नित्यं त्रीणि शिक्षेत गर्दभात् ॥२६०॥

भाषार्थ–विश्राम नहीं लेना और भार (बोझा) ले चलना, और जाडा गरमीको न जानना, तथा सदैव सन्तोषी रहना ये तीन शिक्षा गर्दभसे ग्रहण करना चाहिये ॥ २६० ॥

गूढमैथुनधार्ष्ट्ये च काले चालयसंग्रहम् ॥
अप्रमादमनालस्यं पञ्च शिक्षेच्च वायसात् ॥२६१॥

भाषार्थ–छिपकर मैथुन करना, ढीठ होना, समयपर स्थानसंग्रह करना, अप्रमाद (भूल नहीं जाना) और आलसी नहीं होना ये पांच शिक्षा कौवासे ग्रहण करै ॥ २६१ ॥

युद्धं च प्रातरुत्थानं भोजनं सह बन्धुभिः ॥
स्त्रियमापद्गतां रक्षेच्चतुः शिक्षेत कुक्कुटात् ॥२६२॥

भाषार्थ–युद्ध, प्रातःकाल उठना, बन्धुओंसहित भोजन, विपत्तिसमय होनेपर स्त्रीकी रक्षा ये चार शिक्षा मुर्गासे ग्रहण करना ॥२६२॥

आपदां कथितः पन्था इन्द्रियाणामसंयमः ॥
तज्जयः सम्पदामार्गो येनेष्टं तेन गम्यताम् ॥२६३॥

भाषार्थ–" इन्द्रियोंको नहीं रोकना, आपदाओंका मार्ग है " ऐसा कहा है और इन्द्रियोंको जीत लेना सम्पदाओंका मार्ग है. दोनों मार्गोंमेंसे जो मार्ग अच्छा लगे उसपरसे चलना. भावार्थ यह कि–आपत्ति कोई नहीं चाहता; सम्पत्ति सब चाहते हैं. अतः इन्द्रियोंको अपने अपने वशमें करै ॥ २६३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

समुद्रावरणा भूमिः प्राकारावरणं गृहम् ॥
नरेन्द्रावरणा देशाश्चरित्रावरणास्त्रियः ॥ २६४ ॥

भाषार्थ–समुद्रोंसे घिरी भूमि है, प्राकार (घेरा) से घिरा घर है, राजावोंसे घिरे देश हैं और चरित्रोंसे घिरी हुई स्त्रियां होती हैं ॥ २६४ ॥

आहारो द्विगुणस्त्रीणां बुद्धिस्तासां चतुर्गुणा ॥
षड्गुणो व्यवसायश्च कामश्चाष्टगुणः स्मृतः ॥ २६५ ॥

भाषार्थ–पुरुषोंसे स्त्रियोंका आहार द्विगुणा होता है और बुद्धि उनकी चौगुणी होती है, तथा व्यवसाय छेगुणा होता है, काम अठगुणा होता है ॥ २६५ ॥

असंतुष्टा द्विजा नष्टाः संतुष्टाश्च महीभुजः ॥
सलज्जा गणिका नष्टा निर्लज्जाश्च कुलस्त्रियः ॥ २६६ ॥

भाषार्थ–जिन द्विजोंको सन्तोष नहीं, वे नष्ट हो जातें हैं, संतोषी राजालोग नष्ट हो जाते हैं, लज्जावाली . वेश्या नष्ट हो जाती है, लज्जा न करनेवाली कुलांगनायें नष्ट हो जाती हैं ॥ २६६ ॥

घृतकुम्भसमा नारी तप्ताङ्गारसमः पुमान् ॥
तस्माद्घृतं च वह्निं च नैकत्र स्थापयेद्बुधः ॥ २६७ ॥

भाषार्थ–स्त्री घीके घडेके समान है और पुरुष तपे हुये अंगारके समान है, इस कारण घी और अग्निको एकपास न रहने देवै. बुद्धिमान्को यही उचित है ॥ २६७ ॥

जीर्णमन्नं प्रशंसीयाद्भार्यां च गतयौवनाम् ॥
रणात्प्रत्यागतं शूरं सस्यं च गृहमागतम् ॥ २६८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जीर्ण (पचेहुये) अन्नकी प्रशंसा करै, गतयौवना (जिसका यौवन नहीं रहा ऐसी सदाचारिणी) स्त्रीकी प्रशंसा करै, रणसे जीतकर आये हुये शूरकी प्रशंसा करै और घरमें आईहुई सस्य (खेतीकी धान्य आदि रकम) की प्रशंसा करै ॥ २६८ ॥

पादपानां भयं वातात् पद्मानां शिशिराद्भयम् ॥
पर्वतानां भयं वज्रात् साधूनां दुर्जनाद्भयम् ॥ २६९ ॥

भाषार्थ–वृक्षोंको वायुसे भय रहता है, कमलोंको शिशिर (सरदी) से भय रहता है, पर्वतोंको बिजलीसे भय रहता है और साधुजनोंको दुर्जनसे भय रहता है ॥ २६९ ॥

शोकस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च ॥
दिवसे दिवसे मूढमाविशन्ति न पण्डितम् ॥२७०॥

भाषार्थ–मूर्ख मनुष्यको प्रतिदिन शोकके स्थान हजारों और भयके स्थान सेकडों आ पडते हैं; पंडितको नहीं ॥ २७० ॥

यस्य क्षेत्रं नदीतीरे भार्या वापि परप्रिया ॥
पुत्रस्य विनयो नास्ति मृत्युरेव न संशयः ॥२७१॥

भाषार्थ–जिसका स्थान नदीके तटपर है, जिसके स्त्रीको दूसरा पुरुष (जार) प्यारा है और जिसका पुत्र विनयभावसे युक्त नहीं है, निस्सन्देह उसकी मृत्युही है ॥ २७१ ॥

किं करिष्यति वक्तारः ? श्रोता यत्र न विद्यते ॥
नग्नक्षपणके देशे रजकः किं करिष्यंति ? ॥ २७२ ॥

भाषार्थ–वहां वक्ता (व्याख्यानदाता अथवा उपदेष्टा) क्या करेगा ?

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जहां श्रोता नहीं है. नग्नशरीरवाले जनोंके देशमें धोबी क्या करेगा ? ॥ २७२ ॥

प्राणा यथात्मनोऽभीष्टा भूतानामपि ते तथा ॥
आत्मौपम्येन भूतेषु दयां कुर्वन्ति साधवः ॥ २७३ ॥

भाषार्थ–जिसप्रकार अपने प्राण प्यारे हैं, उसीप्रकार अन्य प्राणियोंकोभी अपने प्राण प्यारे हैं. इसकारण, अपने प्राणोंके समान दूसरेके प्राण जानकर, साधुजन सब प्राणियोंपर दया करते हैं ॥२७३॥

उत्थायोत्थाय बोद्धव्यं महद्भयमुपस्थितम् ॥
मरणव्याधिशोकानां किमद्य निपतिष्यति ? ॥ २७४ ॥

भाषार्थ–प्रातःसमय उठकर प्रतिदिन यह जानै कि–बडा भय उपस्थित है, आज दिन मरण, व्याधि. शोक इनमेंसे क्या गिरेगा ? ऐसा जानकर धर्मानुष्ठान करै ॥ २७४ ॥

अनभ्यासे विषं विद्या अजीर्णे भोजनं विषम् ॥
विषं गोष्ठी दरिद्रस्य वृद्धस्य तरुणी विषम् ॥ २७५ ॥

भाषार्थ–अभ्यास न करनेपर विद्या विष हो जाती है, अजीर्णमें भोजन विष हो जाता है, दरिद्रको सभा विष है और वृद्धपुरुषको युवा स्त्री विष है ॥ २७५ ॥

अजरामरवत्प्राज्ञो विद्यामर्थं च चिन्तयेत् ॥
गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत् ॥ २७६ ॥

भाषार्थ–बुद्धिमान् जन अपनेको अजरामरके समान जानकर विद्या और धनका उपार्जन करै और " मृत्युने हमारे केश पकडे हैं,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अर्थात् हमारी मृत्यु होना चाहती है ऐसा जानकर धर्मका आचरण करै ॥ २७६ ॥

प्रथमे नार्जिता विद्या द्वितीये नार्जितं धनम् ॥
तृतीये नार्जितो धर्मश्चतुर्थे किं करिष्यति ? ॥२७७॥

भाषार्थ–प्रथमा (बाल्या) वस्थामें विद्या नहीं पढी, दूसरी यौवन) अवस्थामें धनसंग्रह नहीं किया, तीसरी (वृद्ध) अवस्थामें धर्मका संग्रह नहीं किया तो चौथी (मृत) अवस्थामें क्या करेगा ? २७७

सुभिक्षं कृषके नित्यं नित्यं सुखमरोगिणि ॥
भार्या भर्तुः प्रिया यस्य तस्य नित्योत्सवं गृहम् २७८

भाषार्थ–खेती करनेवालोंमें नित्य सुभिक्ष (सदा) रहता है और रोगहीन (आरोग्य) पुरुष नित्य सुखी रहता है. तथा जिसकी स्त्री पतिकी प्यारी है, उसके घरमें नित्य उत्सव रहता है ॥ २७८ ॥

प्रदोषे निहतः पन्था पतिता निहताः स्त्रियः ॥
अल्पबीजहतं क्षेत्रं भृत्यदोषाद्धतः प्रभुः ॥ २७९ ॥

भाषार्थ–प्रदोषसमय (सायंकाल) में मार्ग अन्धकारयुक्त हो जाता है, पतित स्त्रियाँ नष्ट हो जाती हैं, थोडा बीज डालनेसे खेत नष्ट हो जाता है, सेवकोंमें दोष उत्पन्न हो जानेसे प्रभु नष्ट हो जाता है॥२७९॥

नदीकूले च ये वृक्षाः परहस्तगतं धनम् ॥
कार्यं स्त्रीगोचरं यत्स्यात्सर्वं तद्विफलं भवेत्॥२८०॥

भाषार्थ–नदीके तटपर जो वृक्ष है, पराये हाथमें जो धन है, स्त्रीके आधीन जो कार्य है ये तीनौं निष्फल हैं. इस श्लोकके रचयिता कविने स्त्रीका अपमान कर डाला. सम्पूर्ण गृहकार्य स्त्रीके आधीन होने चा-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हिये, परन्तु यहां यह भाव प्रगट होता है कि-कदाचित् सब स्त्रियां गृहकार्यके योग्य नहीं हैं. प्रायः देखा जाता है कि-जिस घरमें मूर्खा स्त्री स्वामिनी होती है वह घर थोड़ेही दिनोंमें बिगड जाता है. यही समझकर कविने ऐसा लिख दिया होगा ॥ २८० ॥

नाद्रव्ये निहिता काचित् क्रिया फलवती भवेत् ॥
न व्यापारशतेनापि शुकवत्पाठ्यते बकः ॥ २८१ ॥

भाषार्थ-वस्तुपरही लगाई हुई क्रिया फलवती हो सकती है; अवस्तुपर नहीं. सैकडों व्यापार करनेपरभी बगुला तोताके समान नहीं पढ सकता है ॥ २८१ ॥

अनिष्टादिष्टलाभेऽपि न गतिर्जायते शुभा ॥
यत्रास्ते विषसंसर्गोऽमृतं तदपि मृत्यवे ॥ २८२ ॥

भाषार्थ-अनिष्टसे इष्टलाभभी चाहे हो जाय, तोभी उत्तम गति नहीं हो सकती. जहांपर विषका संसर्ग है, वहां अमृतभी मृत्युके निमित्तही है ॥ २८२ ॥

न संशयमनारुह्य नरो भद्राणि पश्यति ॥
संशयं पुनरारुह्य यदि जीवति पश्यति ॥ २८३ ॥

भाषार्थ-संशयोंपर आरूढ हुये विना मनुष्य कल्याणको प्राप्त नहीं होता है. फिर संशयोंपर आरूढ होकर यदि जीवता है तो, कल्याणको देखता है ॥ २८३ ॥

शंकाभिः सर्वमाक्रान्तमन्नं पानं च भूतले ॥
प्रवृत्तिः कुत्र कर्तव्या ? जीवितव्यं कथं नु वा ? ॥२८४॥

भाषार्थ-पृथिवीपर अन्न और पान सब कुछ शंकाओंसे आक्रान्त

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

है. फिर प्रवृत्ति कहां करनी चाहिये और जीना कैसे चाहिये ? सारांश यह कि–निःशंक एक परमात्माकी आराधना है. उसीसे सब आनन्द होता है ॥ २८४ ॥

प्रत्याख्याने च दाने च सुखदुःखे प्रियाप्रिये ॥
आत्मौपम्येन पुरुषः प्रमाणमधिगच्छति ॥ २८५ ॥

भाषार्थ–याचना करनेपर सूखा उत्तर पानेमें, दानमें और सुख–दुःखमें, प्रिय–अप्रियमें अपने उपमासे मनुष्य प्रमाणको प्राप्त होता है २८५

परमापद्गतेनापि न कार्यः स्तेयमल्पकः ॥
स्तेयादप्यधिकः कश्चिन्नास्त्यऽधर्म इति स्मृतः॥२८६

भाषार्थ–महा विपत्तिकालमेंभी थोडीभी चोरी नहीं करना चाहिये. क्योंकि–चोरीसे बढकर और अन्य कोईभी अधर्म नहीं कहा है॥२८६॥

षड् दोषाः पुरुषेणेह हातव्या भूतिमिच्छता ॥
निद्रा तंद्रा भयं क्रोध आलस्यं दीर्घसूत्रता ॥२८७॥

भाषार्थ–जो पुरुष ऐश्वर्यकी इच्छावाला हो, उसको उचित है कि–इन छह दोषोंका परित्याग करै. निद्रा (बहुत शयन करना), २ तन्द्रा (श्रम)–बहुत परिश्रम, ३ भय, ४ क्रोध, ५ आलस्य और ६ दीर्घसूत्रता (शिथिलता) (काममें विलंब करना) ॥ २८७ ॥

तृणानि भूमिरुदकं वाक् चतुर्थी च सूनृता ॥
एतान्यपि सतां गेहे नोच्छिद्यन्ते कदाचन ॥२८८॥

भाषार्थ–तृण, भूमि, जल, मधुरावाणी ये चार पदार्थ सत्पुरुषोंके घरमें सदा रहते हैं. कभी दूर नहीं होते हैं ॥ २८८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

माता मित्रं पिता चेति स्वभावात् त्रितयं हितम् ॥
कार्यकारणतश्चान्ये भवन्ति हितबुद्धयः ॥ २८९ ॥

भाषार्थ–माता, पिता और मित्र ये तीनौं स्वभावसेही हितैषी होते हैं. अन्यजन कार्य-कारणसे हितबुद्धि (हित चाहनेवाले) होते हैं ॥ २८९ ॥

आपत्सु मित्रं जानीयात् युद्धे शूरमृणे शुचिम् ॥
भार्यां क्षीणेषु वित्तेषु व्यसनेषु च बान्धवान् ॥ २९० ॥

भाषार्थ–आपत्तिसमयमें मित्रको जान लेवै, युद्धमें शूरको, ऋणमें पवित्रताको, धनहीन हो जानेपर स्त्रीको और दुःखमें भाइयोंकी परीक्षा कर लेवै ॥ २९० ॥

सुहृदां हितकामानां यः शृणोति न भाषितम् ॥
विपत्संनिहिता तस्य स नरः शत्रुनन्दनः ॥ २९१ ॥

भाषार्थ–जो मनुष्य अपने मित्र और हितैषियोंके कहे वचनको नहीं सुनता है, उसके विपत् समीप है और वह मनुष्य शत्रुनन्दन है ॥ २९१ ॥

यदशक्यं न तच्छक्यं यच्छक्यं शक्यमेव तत् ॥
नोदके शकटं याति न च नौर्गच्छति स्थले ॥ २९२ ॥

भाषार्थ–जो अशक्य है, अर्थात् जो काम हो नहीं सकता वह शक्य नहीं हो सकता, और जो शक्य है वह अवश्य शक्य है. जलपर गाडी नहीं चल सकती और न नौका स्थल (सूखे) में ही चल सकती है ॥ २९२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दीपनिर्वाणगन्धं च सुहृद्वाक्यमरुन्धतीम् ॥
न जिघ्रन्ति न शृण्वन्ति न पश्यन्ति गतायुषः ॥२९३॥

भाषार्थ-दीपकके बुझनेके गन्धको, सुहृद्वचनको और अरुन्धती ताराको नहीं सूँघते, सुनते और देखते, अर्थात् दीपककी गन्धको नहीं सूँघते, सुहृद्के उपदेशको नहीं सुनते और अरुन्धतीताराको नहीं देखते हैं, उनकी गतायु जानना. अर्थात् आयु समाप्त होगई ऐसा जानना ॥ २९३ ॥

सुखमापतितं सेव्यं दुःखमापतितं तथा ॥
चक्रवत्परिवर्तन्ते दुःखानि च सुखानि च ॥२९४॥

भाषार्थ-सुख आनेपर सुखी रहै तथा दुःख आ पडनेपर दुःख सहन करै. क्योंकि-सुख और दुःख ये दोनौं चक्रवत् घूमते रहते हैं ॥ २९४ ॥ ॥ दोहा—

युगल दास हैं देह, सुख दुख जिनको नाम।
एक रहत ठाढो सदा, एक करत विश्राम ॥ १ ॥

वृत्त्यर्थं नातिचेष्टेत सा हि धात्रैव निर्मिता ॥
गर्भादुत्पतिते जन्तौ मातुः प्रस्नवतः स्तनौ ॥२९५॥

भाषार्थ-आजीविकाके निमित्त अत्यंत चेष्टा न करै. क्योंकि-आजीविका तो विधाताने रचीही है. देखो, गर्भसे गिरतेही प्राणीके अर्थ माताके स्तनोंमेंसे दूध चूने लगता है ॥ २९५ ॥

नाप्राप्यमभिवाञ्छन्ति नष्टं नेच्छन्ति शोचितुम् ॥
आपत्स्वपि न मुह्यन्ति नराः पण्डितबुद्धयः ॥२९६॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जिन मनुष्योंकी बुद्धि पंडितोंकी बुद्धिके समान है, वे अप्राप्य (नहीं प्राप्त होनेवाली) वस्तुकी इच्छा नहीं करते हैं और नष्ट (खोई हुई) वस्तुका शोच नहीं करते हैं, तथा आपत्कालमें मोहको प्राप्त नहीं होते हैं ॥ २९६ ॥

येन शुक्लीकृता हंसा शुकाश्च हरितीकृताः ॥
मयूराश्चित्रिता येन स ते वृत्तिं विधास्यति ॥२९७॥

भाषार्थ–जिस (विधाता) ने हंस श्वेत (सपेद) किये हैं और तोते हरे रंगके बनाये हैं, तथा जिसने मोर चित्रित (रंगबिरंगे) रचे हैं, वही तुम्हारी वृत्ति (आजीविका) का विधान करेगा ॥ २९७ ॥

अधोऽधः पश्यतः कस्य महिमा नोपचीयते ? ॥
उपर्युपरि पश्यन्तः सर्व एव दरिद्रति ॥ २९८ ॥

भाषार्थ–नीची दृष्टि करके चलनेवाले कौनसे आदमीकी महिमा नहीं बढ जाती है और ऊपरको देखते हुये सब दरिद्रताको प्राप्त होते हैं २९८

लोकयात्रा भयं लज्जा दाक्षिण्यं त्यागशीलता ॥
पञ्च यत्र न विद्यन्ते न कुर्यात्तत्र संस्थितिम् ॥२९९॥

भाषार्थ–लोकयात्रा, भय, लज्जा, चातुर्य और दानशीलता ये पांच जहांपर नहीं हैं, वहां स्थिति नहीं करे ॥ २९९ ॥

जलमग्निर्विषं शस्त्रं क्षुद्व्याधिः पतनं गिरेः ॥
निमित्तं किञ्चिदासाद्य देही प्राणान् विमुञ्चति ॥३००॥

भाषार्थ–जल, अग्नि, विष, शस्त्र, भूख, रोग और पर्वतसे गिरना

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

इनमेंसे किसी निमित्तको प्राप्त होकरही प्राणी, देहसे प्राणोंका परित्याग करता है ॥ ३०० ॥

एतावज्जन्मसाफल्यं यदनायत्तवृत्तिता ॥
ये पराधीनतां यातास्ते वै जीवन्ति के मृताः ? ॥३०१॥

भावार्थ–मनुष्यजन्मकी इतनीही सफलता है कि–"जो स्वतंत्र आजीवन होता है." जो पराधीनताको प्राप्त हो गये हैं, यदि वे जीते हैं तो मृत कौन हैं ? ॥ ३०१ ॥

स्थान एव नियोज्यन्ते भृत्यश्चाभरणानि च ॥
नहि चूडामणिः पादे नूपुरं मूर्ध्नि धार्यते ॥ ३०२ ॥

भावार्थ–सेवकों और आभूषणोंको ठीक ठीक स्थानपर ही नियोजित करै. देखो, मस्तकपर धारण करनेका मणि चरणमें धारण नहीं किया जाता और नूपुर अर्थात् पायजेव मस्तकपर धारण नहीं किया जा सकता ॥ ३०२ ॥

पञ्चभिर्याति दासत्वं पुराणैः कोऽपि मानवः ॥
कोऽपि लक्षैः कृतो कोऽपि लक्षैरपि न लभ्यते॥३०३॥

भावार्थ–कोई पुरुष पुराने पांच रुपयोंकरके दासभावको प्राप्त हो जाते हैं, कोई लाख रुपयोंसे और कोई लाखोंसेभी दासभावको प्राप्त नहीं होते हैं ! ॥ ३०३ ॥

मुकुटे रोपितः काचश्चरणाभरणे मणिः ॥
नहि दोषो मणेरस्ति किन्तु साधोरविज्ञता ॥ ३०४ ॥

भावार्थ–यदि कोई मनुष्य मुकुटमें काँचको लगावै और चरणके

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

आभूषणमें मणिको धारण करै तो मणिका दोष नहीं है. किन्तु, साधुकी अविज्ञता है अर्थात् कांच और मणि लगानेवाले पुरुषका अज्ञानता है ॥ ३०४ ॥

यस्य यस्य हि यो भावस्तेन तेन हि तं नरम् ॥
अनुप्रविश्य मेधावी क्षिप्रमात्मवशं नयेत् ॥ ३०५ ॥

भाषार्थ-बुद्धिमान् पुरुषको उचित है कि-जिस पुरुषका जो जो स्वभाव है, प्रवेश होकर उसी उसी भावसे मनुष्यको शीघ्र अपने वशमें करै ॥ ३०५ ॥

बालादपि गृहीतव्यं युक्तयुक्तं मनीषिभिः ॥
रवेरविषये किं न प्रदीपस्य प्रकाशनम् ?॥ ३०६ ॥

भाषार्थ-बुद्धिमान् जन युक्त वचनको बालकसे भी ग्रहण कर लेवै. क्या सूर्यके अविषयमें अर्थात् सूर्यके अस्त होनेपर दीपकका प्रकाश ग्रहण नहीं किया जाता ? ॥ ३०६ ॥

अप्रियस्यापि कुर्वाणो यः प्रियः प्रिय एव सः ॥
दग्धमन्दिरसारेऽपि कस्य वह्नावनादरः ? ॥ ३०७ ॥

भाषार्थ-जो पुरुष प्रिय है, चाहे वह अप्रियभी कार्य क्यों न करै, वह प्रियही है. मन्दिरको जला देनेपरभी अग्निमें किसका अनादर होता है ? ॥ ३०७ ॥

अप्रियस्यापि पथ्यस्य परिणामः सुखावहः ॥
वक्ता श्रोता च यत्रास्ति रमन्ते तत्र सम्पदः ॥ ३०८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–अप्रिय, हितकाभी परिणाम सुखावह होता है. जहां वक्ता और श्रोता विद्यमान हैं, वहां सम्पदायें रमण करती हैं ॥ ३०८ ॥

बलवानपि निस्तेजाः कस्य नाभिभवास्पदम् ॥
निःशंकं दीयते लोकैः पश्य भस्मचये पदम् ॥३०९॥

भावार्थ–तेजरहित बलवान्भी किसको तिरस्कारका स्थान नहीं हो जाता ? अर्थात् निस्तेज बलवान् अपमान करा देता है. देखो, भस्मपर सबही लोग निःशंक होकर पांव रख देते हैं ॥ ३०९ ॥

परस्य बाह्यकर्माणि दृष्ट्वा मुह्यति यो नरः ॥
नाभ्यन्तरगुणान्वेषी सोऽत्रैव मूर्ख उच्यते ॥३१०॥

भावार्थ–दूसरेके बाह्य (बाहरी) कर्मोंको देखकर जो मनुष्य मोहित हो जाता है, अभ्यन्तर गुणोंको जो नहीं देखता है, वही यहां मूर्ख कहा जाता है ॥ ३१० ॥

तावद्भयाद्धि भेतव्यं यावद्भयमनागतम् ॥
आगतं तु भयं वीक्ष्य प्रहर्तव्यमभीतवत् ॥ ३११ ॥

भावार्थ–तभीतक भयसे डरना चाहिये, जबतक भय नहीं आता. आये हुये भयको देखकर, उसपर निडर होकर प्रहार करै. अर्थात् भयहरणार्थ उपाय करै ॥ ३११ ॥

बन्धुः को नाम दुष्टानां ? कुप्येत्को नातियाचकः ?॥
को न तृप्यति वित्तेन ? कुकृत्ये को न पंडितः ? ३१२

भावार्थ–दुष्टजनोंका कोईभी बन्धु नहीं बनता, अधिक याचना करनेपर कौन नहीं अप्रसन्न हो जाता है ? धनसे कौन नहीं तृप्त होता है ? कुकृत्य (खोटे काम) में कौन पंडित नहीं है ॥ ३१२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अम्भसा भिद्यते सेतुस्तथा मंत्रोऽप्यरक्षितः ॥
पैशुन्याद्भिद्यते स्नेहो वाचा भिद्येत कातरः ॥ ३१३ ॥

भाषार्थ—जिस प्रकार जलसे सेतु (पुल) टूट जाता है, उसीप्रकार अरक्षित मंत्रभी प्रकाशित हो जाता है. पैशुन्य (चुगुली) से स्नेह टूट जाता है और कातर (डरपोक) मनुष्य वाचा (बात पूछने)-सेही घबरा जाता है ॥ ३१३ ॥

सुपूरा स्यात्कुनदिका सुपूरो मूषकाञ्जलिः ॥
सुसन्तुष्टः कापुरुषः स्वल्पकेनापि तुष्यति ॥ ३१४ ॥

भाषार्थ—छोटी नदी शीघ्र भर जाती है, चूहाकी अंजली थोडेहीमें भर जाती है, डरपोक मनुष्य थोडेसेही सन्तुष्ट हो जाता है ॥ ३१४ ॥

अन्यप्रतापमासाद्य यो दृढत्वं न गच्छति ॥
जातुषाभरणस्येव रूपेणापि हि तस्य किम् ? ॥ ३१५ ॥

भाषार्थ—दूसरेके प्रतापको पाकर जो मनुष्य दृढताको प्राप्त नहीं होता है, लाखसे बने हुये आभूषणोंके समान उसके रूपसे क्या सिद्ध हो सकता है ? ॥ ३१५ ॥

अमृतं शिशिरे वह्निरमृतं प्रियदर्शनम् ॥
अमृतं राजसंमानममृतं क्षीरभोजनम् ॥ ३१६ ॥

भाषार्थ—शरदीमें अग्नि अमृत है, प्यारेका दर्शन अमृत है, राजमें आदर पाना अमृत है, दूधका भोजन अमृत है ॥ ३१६ ॥

भये वा यदि वा हर्षे संप्राप्ते यो विमर्शयेत् ॥
कृत्यं न कुरुते वेगान्न ससंतापमाप्नुयात् ॥ ३१७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–भय यदि वा हर्ष इनकी संप्राप्तिमें जो विचार नहीं करै और कार्य शीघ्र नहीं करै, वह सन्तापको प्राप्त नहीं होता है ॥ ३१७ ॥

सर्पाणां च खलानां च परद्रव्यापहारिणाम् ॥
अभिप्राया न सिद्ध्यन्ति तेनेदं वर्तते जगत् ॥ ३१८ ॥

भाषार्थ–सांप, दुष्टजन और पराया धन हरनेवालों (चोरों) के अभिप्राय सिद्ध नहीं होते, इसीसें यह जगत् वर्तमान (ठहरा) है ॥ ३१८

स सुहृद् व्यसने यः स्यात्स पुत्रो यस्तु भक्तिमान् ॥
स भृत्यो यो विधेयज्ञः सा भार्या यत्र निर्वृतिः ॥ ३१९ ॥

भाषार्थ–वही मित्र है, जो दुःखमें सहायक होता है; वही पुत्र है, जो भक्तिवाला होता है; वही सेवक है, जो करनेयोग्य कामको भली भांति जानता है; वही स्त्री है, जहां निवृत्ति है अर्थात् जो दुःख दूर कर सकती है ॥ ३१९ ॥

नष्टं मृतमतिक्रान्तं नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥
पण्डितानां च मूर्खाणां विशेषोऽयं यतः स्मृतः ॥ ३२० ॥

भाषार्थ–नष्ट (खोये पदार्थ) के विषे, मृत (मरे) के विषे, अतिक्रान्त (जिसका समय निकल गया उस) के विषे पंडित लोग, शोच नहीं करते हैं. पंडितों और मूर्खोंमें यही विशेष अन्तर कहा है ॥ ३२० ॥

यत्र देशेऽथवा स्थाने भोगान्भुक्त्वा स्ववीर्यतः ॥
तस्मिन् विभवहीनो यो वसेत्स पुरुषाधमः ॥ ३२१ ॥

भाषार्थ–जिस देशमें अथवा जिस स्थानमें, अपने बलसे भोगोंको

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भोगा वहीं जो पुरुष धनहीन हो जावे तो वहां फिर निवास करनेवाला पुरुष अधम है ॥ ३२१ ॥

औषधार्थसुमंत्राणां बुद्धेश्चैव महात्मनाम् ॥
असाध्यं नास्ति लोकेऽत्र यद्ब्रह्माण्डस्य मध्यगम् ३२२

भाषार्थ–औषधी, धन, उत्तममंत्र, महात्माओंकी बुद्धि इनसे इस लोकमें और कुछभी असाध्य नहीं है. जो कुछ ब्रह्मांडके अन्तर्गत है ३२२

मित्रद्रोही कृतघ्नश्च ये च विश्वासघातकाः ॥
ते नरा नरकं यान्ति यावच्चंद्रदिवाकरौ ३२३ ॥

भाषार्थ–मित्रद्रोही, कृतघ्न (किये उपकारको न मानना) और जो विश्वासघातक हैं वे मनुष्य नरकको जाते हैं अर्थात् दुःख भोगते हैं, जबतक चन्द्र–सूर्य हैं ॥ ३२३ ॥

न यस्य चेष्टितं विद्यान्न कुलं न पराक्रमम् ॥
न तस्य विश्वसेत्प्राज्ञो यदीच्छेच्छ्रेय आत्मनः ॥३२४॥

भाषार्थ–जिसकी चेष्टा (उद्योग) विद्या, कुल और जिसके पराक्रमको नहीं जानता हो, उसका बुद्धिमान् जन विश्वास नहीं करे. यदि अपने कल्याणकी चाहना हो ॥ ३२४ ॥

मित्रवान्साधयत्यर्थान् दुःसाध्यानपि वै यतः ॥
तस्मान्मित्राणि कुर्वीत सामान्यान्येव चात्मनः॥३२५॥

भाषार्थ–मित्रावाला पुरुष अपने दुःसाध्य प्रयोजनोंकोभी सिद्ध कर लेता है. इसकारण, अपने समान मित्र अवश्य बनाने चाहिये ॥३२५॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अशोच्यानीह भूतानि यो मूढस्तानि शोचति ॥
स दुःखे लभते दुःखं द्वावनर्थौं निषेवते ॥ ३२६ ॥

भाषार्थ–शोच करनेयोग्य नहीं ऐसे प्राणियोंके विषे जो मूढ शोच करता है, वह दुःखमें दुःख पाता है और दो अनर्थोंका निषेवण करता है ॥ ३२६ ॥

कारणान्मित्रतां याति कारणाद्याति शत्रुताम् ॥
तस्मान्मित्रत्वमेवात्र योज्यं वैरं न धीमता ॥ ३२७ ॥

भाषार्थ–कारणसेही मित्रता होती है और कारणसेही शत्रुता होती है. इसकारण, बुद्धिमान् पुरुष मित्रताही करै: वैरभाव कभी न करै ३२७

यस्य न ज्ञायते वीर्यं न कुलं न विचेष्टितम् ॥
न तेन संगतिं कुर्यादित्युवाच बृहस्पतिः ॥ ३२८ ॥

भाषार्थ–" जिसका बल, कुल और उद्योग, ज्ञात (जाना) नहीं है, उसके साथ संगति नहीं करै " ऐसा बृहस्पतिने कहा है ॥ ३२८ ॥

उपकाराच्च लोकानां निमित्तान्मृगपक्षिणाम् ॥
भयाल्लोभाच्च मूर्खाणां मैत्री स्याद्दर्शनात्सताम्॥ ३२९॥

भाषार्थ–उपकारसे लोगोंकी, निमित्तसे मृगपक्षियोंकी, भय और लोभसे मूर्खोंकी मैत्री होती है. सज्जनोंका मित्रभाव दर्शनसेही हो जाता है ॥ ३२९ ॥

गुरोः सुतां मित्रभार्यां स्वामिसेवकगेहिनीम् ॥
यो गच्छति पुमांल्लोके तमाहुर्ब्रह्मघातिनम् ॥ ३३० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जो पुरुष गुरुकी कन्यामें, मित्रकी स्त्रीमें, तथा जो स्वामी अपने सेवककी घरवालीमें रमण करता है, उसको ब्रह्मघाती कहा है ॥ ३३० ॥

आपन्नाशाय विबुधैः कर्तव्याः सुहृदोऽमलाः ॥
न तरत्यापदं कश्चिद्‍ यो‌ऽत्र मित्रविवर्जितः ॥ ३३१ ॥

भाषार्थ-विपत्तिका नाश करनेके अर्थ विद्वान् जनोंको उचित है कि-निष्कपट मित्र बनाने चाहिये· क्योंकि-जो कोई इस संसारमें मित्र· रहित है, वह आपदाओंको नहीं तरता है अर्थात् विपत्तियोंको दूर नहीं कर सकता है ॥ ३३१ ॥

अयशः प्राप्यते येन येन चापगतिर्भवेत् ॥
स्वर्गाच्च भ्रश्यते येन न तत्कर्म समाचरेत् ॥३३२॥

भाषार्थ-जिस कामसे अपयश हो और जिससे अपगति हो और जिस कर्मकरके स्वर्ग (सुख) से वंचित हो जावे उस कर्मको नहीं करै ॥ ३३२ ॥

जनिता चोपनेता च यश्च विद्यां प्रयच्छति ॥
अन्नदाता भयत्राता पञ्चैते पितरः स्मृताः ॥ ३३३ ॥

भाषार्थ-जन्मदाता, उपनयन करनेवाला और विद्यादान करनेवाला, अन्नदाता, भयसे रक्षा करनेवाला ये पांच पिता कहे हैं ॥ ३३३ ॥

राजपत्नी गुरोः पत्नी भ्रातृपत्नी तथैव च ॥
पत्नीमाता स्वमाता च पञ्चैता मातरः स्मृताः ॥३३४॥

भाषार्थ-रानी, गुरुकी स्त्री, भाईकी स्त्री, तथा अपनी स्त्रीकी माता (सास) और अपनी माता ये पांच मातायें कही हैं ॥ ३३४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

योऽत्ति यस्य यदा मांसमुभयोः पश्यतान्तरम् ॥
एकस्य क्षणिका तृप्तिरन्यः प्राणैर्वियुज्यते ॥ ३३५ ॥

भावार्थ–जो जिसका मांस खाता है, उन दोनोंका अन्तर देखना चाहिये. कि–'एककी तो क्षणमात्रके लिये तृप्ति हुई और दूसरा प्राणोंसे रहित हुवा अर्थात् खानेवाला थोडी देरके लिये तृप्त हुवा और जिसका मांस खाया गया वह प्राणोंसे गया.' यह विचारकर मांस नहीं खाना चाहिये ॥ ३३५ ॥

यः पृष्ट्वा कुरुते कार्यं प्रष्टव्यान् स्वान् हितान् गुरून् ॥
न तस्य जायते विघ्नः कस्मिंश्चिदपि कर्मणि ॥ ३३६ ॥

भावार्थ–जो मनुष्य अपने पूछने योग्य, हितैषी और गुरुजनोंसे पूछकर कार्य करता है, उसके किसी काममेंभी विघ्न नहीं होता है॥३३६

सर्वहिंसानिवृत्ता ये नराः सर्वसहाश्च ये ॥
सर्वस्याश्रयभूताश्च ते नराः स्वर्गगामिनः ॥ ३३७ ॥

भावार्थ–जिन मनुष्योंने सब प्रकारकी हिंसाका परित्याग किया है और जो पुरुष सबको सहते हैं तथा सबके आश्रयभूत हैं. वे मनुष्य स्वर्गगामी होते हैं अर्थात् सुखी रहते हैं ॥ ३३७ ॥

कृते प्रतिकृतिं कुर्यात् हिंसिते प्रतिहिंसितम् ॥
न तत्र दोषं पश्यामि दुष्टे दुष्टं समाचरेत् ॥ ३३८ ॥

भावार्थ–उपकार करनेवालेके साथ उपकार करै और हिंसा करनेवालेपर हिंसा करै. इसमें कुछ दोष नहीं देखता हूं कि–दुष्टके साथ दुष्टताका वर्ताव करै ॥ ३३८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मर्तव्यमिति यद्दुःखं पुरुषस्योपजायते ॥
शक्यते नानुमानेन परेण परिवर्णितुम् ॥ ३३९ ॥

भाषार्थ-' मरण होगा ' यह जो दुःख पुरुषको होता है, अनुमानसे दूसरा मनुष्य उसको वर्णन नहीं कर सकता ॥ ३३९ ॥

कृतघ्नस्य शिशुघ्नस्य स्त्रीघ्नस्य पिशुनस्य च ॥
चतुर्णामपि चैतेषां निष्कृतिं नैव शुश्रुमः ॥ ३४० ॥

भाषार्थ-कृतघ्न, बालहत्यारे, स्त्रीको मारनेवाले और चुगल इन चारौंका छुटकारा नहीं सुनते हैं ॥ ३४० ॥

क्षन्तव्यो मन्दबुद्धीनामपराधो मनीषिणा ॥
नहि सर्वत्र पाण्डित्यं सुलभं पुरुषे क्वचित् ॥ ३४१ ॥

भाषार्थ-मन्दबुद्धिवालोंके अपराधको विद्वान् जन क्षमा कर देवै. क्योंकि-पुरुषोंमें पांडित्यका होना कुछ सुलभ नहीं है ॥ ३४१ ॥

विद्यया विनयावाप्तिः सा चेदविनयावहा ॥
किं कुर्मः ? किं प्रतिब्रूमो ? गरदायां स्वमातरि॥३४२॥

भाषार्थ-विद्यासे विनयकी प्राप्ति हुवा करती है. यदि वही विद्या विनयभावको दूर कर देवै तो क्या किया जाय? यदि अपनी माता विष देवै तो किससे कहें ? ॥ ३४२ ॥

अचला कमला कस्य ? कस्य मित्रं महीपतिः ? ॥
शरीरं च स्थिरं कस्य ? कस्य वश्या वरांगना ?॥३४३॥

भाषार्थ-कमला (लक्ष्मी) किसके अचला है? राजा किसका मित्र है? शरीर किसका स्थिर है ? वेश्या किसके वशमें है ? ॥३४३॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न स्वप्नेन जयेन्निद्रां न कामेन स्त्रियं जयेत् ॥
नेन्धनेन जयेद्वह्निं न पानेन सुरां जयेत् ॥ ३४४ ॥

भाषार्थ–स्वप्नसे स्त्रीको नहीं जीतै, कामसे स्त्रीको नहीं जीतै, इन्धनसे अग्निको न जीतै, पान (पीने) से मद्यको नहीं जीतै ॥३४४॥

अव्यापारेषु व्यापारं यो नरः कर्तुमिच्छति ॥
स तत्र निधनं याति कीलोत्पाटीव वानरः ॥ ३४५ ॥

भाषार्थ–जहां व्यापार करना नहीं, वहां जो पुरुष व्यापार करनेकी इच्छा करता है, वह वहां अवश्यही मरण पाता है. जैसे, कीला उखाडनेवाला वानर[1] मृत्युको प्राप्त हुवा ॥ ३४५ ॥

विश्वासप्रतिपन्नानां वञ्चने का विदग्धता ? ॥
अङ्कमारुह्य सुप्तानां हन्तुः को नाम पौरुषम् ? ॥३४६॥

भाषार्थ–जो मनुष्य विश्वासयुक्त हैं, उनको ठगनेमें क्या चतुरता है ? जो अपनी गोदमें चढकर सो रहनेवाले हैं उनको मारा देनेमें कौन पौरुष है ? ॥ ३४६ ॥

हतं ज्ञानं क्रियाहीनं हताश्चाज्ञानिनो नराः ॥
हतं चानायकं सैन्यमभर्तारो हताः स्त्रियः ॥ ३४७ ॥

भाषार्थ–क्रियाहीन ज्ञान नष्ट हो जाता है, अज्ञानी जनभी नष्ट हो जाते हैं, विना नायकके सेना नष्ट हो जाती है और विना पतिकी स्त्रीभी नष्ट हो जाती है ॥ ३४७ ॥

शरणागतरक्षार्थं स्त्रीगोद्विजहिताय च ॥
स्वाम्यर्थं यस्त्यजेत्प्राणान् तस्य लोकाः सनातनाः ३४८

१ वानरकी कथा पंचतंत्रमें लिखा है ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-शरण आयेकी रक्षाके अर्थ और स्त्री, गौ, ब्राह्मण इनके हितार्थ, तथा अपने स्वामीके निमित्त जो पुरुष प्राणोंका त्याग करता है, उसको सब लोक सनातन हैं ॥ ३४८ ॥

कन्या निष्कासिता श्रेष्ठा वधूः श्रेष्ठा प्रवेशिता ॥
अन्नं संकलितं श्रेष्ठं धर्मः श्रेष्ठो दिने दिने ॥ ३४९ ॥

भाषार्थ-कन्या निष्कासिता (अर्थात् लडकीका विवाह कर घरसे निकाल देना) (बिदा कर देना) श्रेष्ठ है और वधूका घरमें प्रवेश होना श्रेष्ठ है और अन्न संस्कार किया हुवाही श्रेष्ठ है, तथा धर्मका अनुष्ठान प्रतिदिन श्रेष्ठ है ॥ ३४९ ॥

पानं दुर्जनसंसर्गः पत्या च विरहोऽटनम् ॥
स्वप्नोऽन्यगेहवासश्च नारीणां दूषणानि षट् ॥ ३५० ॥

भाषार्थ-भांग आदि मादकद्रव्योंका पान करना, दुर्जनोंका संसर्ग, पतिका वियोग, वृथा घूमना, बहुत शयन करना, दूसरेके घरमें रहना ये छे स्त्रियोंको दूषण कहे हैं ॥ ३५० ॥

यथा काष्ठमयो हस्ती यथा चर्ममयो मृगः ॥
तथा वेदं विना विप्रस्त्रयस्ते नामधारकाः ॥ ३५१ ॥

भाषार्थ-जैसे काठका हाथी, चामका हिरण, वैसेही विना वेद पढा ब्राह्मण ये तीनौं नामधारक हैं. अर्थात् काठका हाथी, चामका मृग, कुपढा ब्राह्मण कहने मात्र ये तीनौं हैं ॥ ३५१ ॥

वस्त्रं गां च बहुक्षीरां जलपात्रमुपानहौ ॥
औषधं बीजमाहारं संक्रीणीत यथाप्नुयात् ॥ ३५२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-वस्त्रको, बहुत दूधवाली गौको, जलपात्रको और जूतेको, औषध, बीज, आहार (भोजनपदार्थ) इनको जैसे मिलै खरीदकर लेवै ॥ ३५२ ॥

तृप्त्यर्थं भोजनं येषां सन्तानार्थं च मैथुनम् ॥
वाक् सत्यवचनार्थाय दुर्गाण्यतितरन्ति ते ॥ ३५३ ॥

भाषार्थ-जिनका भोजन तृप्तिनिमित्त है और मैथुन सन्तानके अर्थ है, वाणी सत्यभाषणनिमित्त है, वे दुःखसे पार हो जाते हैं अर्थात् वे मनुष्य दुःखी नहीं होते हैं ॥ ३५३ ॥

क्षमातुल्यं तपो नास्ति न संतोषात्परं सुखम् ॥
न च तृष्णापरो व्याधिर्न च धर्मो दयापरः ॥ ३५४ ॥

भाषार्थ-क्षमाके तुल्य दूसरा तप नहीं है, सन्तोषसे बढकर दूसरा सुख नहीं है और तृष्णासे परे दूसरी व्याधि नहीं है, दयासे परे धर्म नहीं है ॥ ३५४ ॥

बन्धूनां सुहृदां चैव भृत्यानां स्त्रीजनस्य च ॥
अव्यक्तेष्वपराधेषु चिरकारी प्रशस्यते ॥ ३५५ ॥

भाषार्थ-बन्धुजन, मित्रजन और सेवकजन तथा स्त्रीजन इनके अप्रगट अपराधोंमें शीघ्रता न करनेवाला पुरुष प्रशंसायोग्य माना जाता है ॥ ३५५ ॥

दानेन भोगी भवति मेधावी वृद्धसेवया ॥
अहिंसया च दीर्घायुरिति प्राहुर्मनीषिणः ॥ ३५६ ॥

भाषार्थ-दान करनेसे मनुष्य भोगी होता है, वृद्धजनोंकी सेवासे

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

बुद्धिमान् होता है, हिंसा न करनेसे मनुष्य दीर्घायु (बहुत काल जीने-वाला) होता है, यह विद्वान् जनोंने कहा है ॥ ३५६ ॥

नित्यं क्रोधाच्छ्रियं रक्षेत्तपो रक्षेच्च मत्सरात् ॥
विद्यां मानापमानाभ्यामात्मानं तु प्रमादतः ॥ ३५७॥

भाषार्थ–क्रोधसे नित्य लक्ष्मीकी रक्षा करै और मत्सर (ईर्षा) से तपकी रक्षा करै, मान–अपमानसे विद्याकी रक्षा करै, तथा प्रमाद (असावधानी) से आत्माकी रक्षा करै ॥ ३५७ ॥

दूरस्थोऽपि समीपस्थो यो यस्य हृदि वर्तते ॥
यो यस्य हृदये नास्ति समीपस्थोऽपि दूरतः ॥३५८॥

भाषार्थ–जो जिसके हृदयमें वर्तमान है, वह उससे दूर स्थित होनेपरभी समीपस्थ है और जो जिसके हृदयमें नहीं है, वह समीप-स्थभी दूर स्थित है ॥ ३५८ ॥

मद्यपाः किं न जल्पन्ति ? किं न भक्षन्ति वायसाः ? ॥
कवयः किं न पश्यन्ति ? किं न कुर्वन्ति योषितः ? ॥३५९॥

भाषार्थ–मदिरा पीनेवाले क्या नहीं बकते ? कौवे क्या नहीं खाते ? कविलोग क्या नहीं देखते हैं ? स्त्रियां क्या नहीं कर सकती हैं ? ॥ ३५९ ॥

न जातुः कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ॥
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते ॥ ३६० ॥

भाषार्थ–कामनाओंके उपभोगसे इच्छायें कभी शान्त नहीं हो सकती हैं. देखो, अग्निमें घी डाल देनेसे उसकी ज्वलनशक्ति औरभी वृद्धिको प्राप्त हो जाती है ॥ ३६० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यदैव भर्ता जानीयान्मन्त्रमूलपरां स्त्रियम् ॥
उद्विजेत तदैवास्याः सर्पाद्वेश्मगतादिव ॥ ३६१ ॥

भाषार्थ-जबहीं पति जान लेवै कि-"मेरी स्त्री दूसरोंसे गुप्त संभाषण किया करती है" तबहीं उस स्त्रीसे घरमें घुसे हुये सर्पके समान भय मानना उचित है ॥ ३६१ ॥

यद्यत्परवशं कर्म तत्तद्यत्नेन वर्जयेत् ॥
यद्यदात्मवशं तु स्यात्तत्तत्सेवेत यत्नतः ॥ ३६२ ॥

भाषार्थ-जो जो कर्म परवश है, उस उस कर्मको यत्नसे वर्जित करै और जो जो कर्म अपने आधीन है, उस उस कर्मका यत्नपूर्वक सेवन करै ॥ ३६२ ॥

यत्कर्म कुर्वतोऽस्य स्यात्परितोषोऽन्तरात्मनः ॥
तत्प्रयत्नेन कुर्वीत विपरीतं तु वर्जयेत् ॥ ३६३ ॥

भाषार्थ-जिस कर्मको करते हुये इस मनुष्यप्राणीके अन्तरात्माको प्रसन्नता हो, उस कर्मको श्रमसेभी करै और जिस कर्मके करनेसे अपने आत्माको क्लेश हो उसका परित्याग करै ॥ ३६३ ॥

न स्थातव्यं न गंतव्यं क्षणमप्यधमैः सह ॥
पयोऽपि शौण्डिकाहस्ते मदिरा मन्यते जनैः ॥ ३६४ ॥

भाषार्थ-अधम मनुष्योंके साथ क्षणभरभी नहीं बैठे, न चलै. मदिरा बेचनेवालीके हाथमें यदि दूधभी हो तो लोग उसको मदिराही मानते हैं ॥ ३६४ ॥

सर्वेषामेव शौचानामर्थशौचं परं स्मृतम् ॥
योऽर्थे शुचिः स हि शुचिर्न मृद्वारि शुचिः शुचिः ३६५

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-सब शौचोंमेंसे अर्थशौच सबसे श्रेष्ठ है. जो मनुष्य अर्थमें शुचि है, वही शुचि है; मिट्टी और जलसे शुचि नहीं है॥ ३६५॥

पित्रोर्नित्यं प्रियं कुर्यादाचार्यस्य च सर्वदा॥
तेषु हि त्रिषु तुष्टेषु तपः सर्वं समाप्यते॥ ३६६॥

भाषार्थ-माता-पिताका प्रिय कार्य सदा करै और आचार्यकाभी सदैव प्रिय करै. इन तीनौंके प्रसन्न रहनेसे मनुष्यका सब तप सफलतापूर्वक समाप्त हो जाता है॥ ३६६॥

यं मातापितरौ क्लेशं सहेते संभवे नृणाम्॥
न तस्य निष्कृतिः शक्या कर्तुं वर्षशतैरपि॥ ३६७॥

भाषार्थ-मनुष्योंके जन्मने और पालन करनेमें माता-पिता जो क्लेश सहते हैं, उसका बदला सैकडों वर्षोंमेंभी नहीं हो सकता है॥३६७॥

श्रद्दधानः शुभां विद्यामाददीत वरादपि॥
अन्त्यादपि परं धर्मं स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि॥३६८॥

भाषार्थ-उत्तमविद्याको अधम मनुष्यसेभी श्रद्धापूर्वक ग्रहण करै. चांडालभी यदि धर्मज्ञाता हो तो, उससे श्रेष्ठ धर्मका ग्रहण करै और स्त्रीरत्नका नीचकुलसेभी ग्रहण करै॥ ३६८॥

यथा खनन् खनित्रेण नरो वार्यधिगच्छति॥
तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रूषुरधिगच्छति॥ ३६९॥

भाषार्थ-जिसप्रकार मनुष्य फावडेसे खोदते खोदते जलके समीप पहुँच जाता है, इसीप्रकार शुश्रूषा करनेवाला शिष्यभी गुरुगत विद्याको प्राप्त हो जाता है॥ ३६९॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तृणं ब्रह्मविदः स्वर्गस्तृणं शूरस्य जीवितम् ॥
जितक्षस्य तृणं नारी निस्पृहस्य तृणं जगत् ३७०

भावार्थ-ब्रह्मवेत्ताको स्वर्ग (सुख) तृण है, शूरको जीवन तृण है, जितेन्द्रियको स्त्री तृण है और निराकांक्षको जगत् तृण है ॥ ३७० ॥

तत्र मित्र ! न वस्तव्यं यत्र नास्ति चतुष्टयम् ॥
ऋणदाता च वैद्यश्च श्रोत्रियः सजला नदी ॥ ३७१ ॥

भावार्थ-हे मित्र ! वहां नहीं वसना चाहिये, जहाँ ऋण देनेवाला, वैद्य, वेदज्ञ पंडित और जलवाली नदी ये चार नहीं हैं ॥ ३७१ ॥

गुरोरप्यवलिप्तस्य कार्याकार्यमजानतः ॥
उत्पथप्रतिपन्नस्य न्याय्यं भवति शासनम् ॥ ३७२ ॥

भावार्थ-जो गुरुभी अवलिप्त (अहंकारी), कार्य-अकार्यको नहीं जाननेवाला और उन्मार्गमें प्रवृत्त हो रहा हो तो, ऐसे गुरुकोभी दण्ड होना न्याययुक्त होता है ॥ ३७२ ॥

मक्षिका व्रणमिच्छन्ति धनमिच्छन्ति पार्थिवाः ॥
नीचाः कलहमिच्छन्ति शान्तिमिच्छन्ति साधवः ३७३

भावार्थ-मक्खियां व्रण (घाव) चाहती हैं, राजालोग धन चाहते हैं, नीचलोग कलह (लडाई) चाहते हैं और साधुजन शान्तिकी इच्छा करते हैं ॥ ३७३ ॥

वाग्वादमर्थसम्बन्धं परोक्षे दारदर्शनम् ॥
यदीच्छेद्विपुलां प्रीतिं त्रीणि तत्र न कारयेत् ॥ ३७४ ॥

भावार्थ-मनुष्य यदि अपने मित्रके साथ परम मैत्री चाहै तो,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

वाग्वाद अर्थात् विवाद, अर्थसम्बन्ध (देनलेन) और परोक्षमें दारदर्शन अर्थात् मित्रके पीछे (उसीके) स्त्रीका दर्शन इन तीन वर्तावोंको नहीं करै ॥ ३७४ ॥

देशानुत्सृज्य गच्छन्ति सिंहाः सत्पुरुषा गजाः ॥
तत्रैव निधनं यान्ति काकाः कापुरुषा मृगाः ॥३७५॥

भाषार्थ-देशोंको त्यागकरभी सिंह, सज्जन और हाथी चले जाते हैं और कौवे, खोटे मनुष्य, हिरण वहीं (जहां जन्मते हैं उसी देशमें) मर जाते हैं ॥ ३७५ ॥

अर्थानामर्जनं कार्यं वर्द्धनं रक्षणं तथा ॥
भक्ष्यमाणो निरादायः सुमेरुरपि हीयते ॥ ३७६ ॥

भाषार्थ-धनको एकत्र करै और एकत्र धनको बढावै तथा रक्षा करै. क्योंकि यदि एकत्र धनकी रक्षा न की जाय तो, एकदिन अवश्य नष्ट हो जाय. सुमेरुके समान ऊंचे ढेरवाला धनभी रक्षा न करनेसे घट जाता है और नष्ट हो जाता है ॥ ३७६ ॥

यस्य न ज्ञायते शीलं कुलं विद्या नरस्य च ॥
कस्तेन सह विश्वासं पुमान्कुर्याद्विचक्षणः ? ॥ ३७७॥

भाषार्थ-जिसका शील, कुल और विद्या ज्ञात न हो, उसका विश्वास कौन विद्वान् पुरुष करै ? ॥ ३७७ ॥

युध्यन्ति पशवः सर्वे पठन्ति शुकसारिकाः ॥
दातुं जानाति यो वित्तं स शूरः स च पंडितः ॥३७८॥

भाषार्थ-सब पशु युद्ध करना जानते हैं और तोता मैना भी

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पढते हैं. परन्तु, जो धन दान देना जानता है, वही शूर और वही पंडित है ॥ ३७८ ॥

धीराणां भूषणं विद्या मंत्रिणां भूषणं नृपः ॥
भूषणं च पतिः स्त्रीणां शीलं सर्वस्य भूषणम् ॥३७९॥

भाषार्थ–विद्वानोंका भूषण विद्या है, मंत्रियोंका भूषण राजा है, स्त्रियोंका भूषण पति है और शील (उत्तम स्वभाव) सबोंका भूषण है ॥ ३७९ ॥

परापकारनिरतैर्दुर्जनैः सह संगतिः ॥
वदामि भवतस्तत्वं न विधेया कदाचन ॥ ३८० ॥

भाषार्थ–आपसे एक तत्व वर्णन करता हूं कि–दूसरेका अपकार करनेवाले दुर्जनोंके साथ संगति कदापि नहीं करनी चाहिये ॥ ३८० ॥

महानदीप्रतरणं महापुरुषविग्रहम् ॥
महाजनविरोधं च दूरतः परिवर्जयेत् ॥ ३८१ ॥

भाषार्थ–बडी नदीको तैरना, श्रेष्ठ पुरुषसे विग्रह (लडाई) और महाजनसे विरोध ये दूरसेही त्याग देवैं ॥ ३८१ ॥

नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा ॥
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा ॥ ३८२ ॥

भाषार्थ–संसारमें प्रथम तो, मनुष्यजन्मही दुर्लभ है; यदि मनुष्य जन्म पाया तो, विद्या होना दुर्लभ है; यदि विद्वान्‌भी हो जाय तो कवि होना दुर्लभ है; यदि कवि होजाय तो, शक्तिवाला होना दुर्लभ है ॥ ३८२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

नारुहेद्विषमं वृक्षं जीर्णां नावं न चारुहेत् ॥
कूपे नालोकयेत्तोयं न वात्मानं विनाशयेत् ॥ ३८३ ॥

भाषार्थ–विषम (घने) वृक्षपर न चढै और पुरानी नावपरभी न चढै, कुवेंमें जलको न देखै, तथा अपनी आत्माका नाश न करै अर्थात् आत्मघात न करै; आत्माकी रक्षा करै ॥ ३८३ ॥

गुणं पृच्छस्व मा रूपं शीलं पृच्छस्व मा कुलम् ॥
सिद्धिं पृच्छस्व मा विद्यां भोगं पृच्छस्व मा धनम् ३८४

भाषार्थ–गुणको पूछो, रूपको मत पूछो; उत्तमस्वभावको पूछो, कुलको मत पूछो; सिद्धिको पूछो, विद्याको मत पूछो; भोगको पूछो, धनको मत पूछो ॥ ३८४ ॥

नदीतीरेषु ये वृक्षा यस्य नारी निरंकुशा ॥
मंत्रिहीनो भवेद्राजा तस्य राज्यं विनश्यति ॥ ३८५ ॥

भाषार्थ–नदीके तटपर जो वृक्ष हैं वे नष्ट हो जाते हैं, जिसकी स्त्री निरंकुशा (स्वेच्छाचारिणी) होती है, वह पुरुषभी नष्ट हो जाता है और जो राजा मंत्रीरहित होता है, उसका राज्य नष्ट हो जाता है ॥ ३८५ ॥

उपकर्तुं यथा स्वल्पः समर्थो न तथा महान् ॥
प्रायः कूपस्तृषां हन्ति सततं न तु वारिधिः ॥ ३८६ ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार छोटा मनुष्य उपकार करनेको समर्थ होता है, उसप्रकार बडा मनुष्य समर्थ नहीं होता. प्रायः कुवांही प्यासको निरंतर शान्त करते हैं; समुद्र नहीं करता ॥ ३८६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हस्ती चांकुशहस्तेन कशाहस्तेन वाजिनः ॥
शृंगी लगुडहस्तेन खड्गहस्तेन दुर्जनः ॥ ३८७ ॥

भाषार्थ–हाथमें अंकुश होनेसे हाथी वशमें रहता है, लगाम हाथमें होनेसे घोडे वशमें रहते हैं, लाठी हाथमें रहनेसे सींगवाले पशु वशमें रहते हैं, खड्ग हाथमें होनेसे दुष्टजन वशमें रहता है ॥ ३८७ ॥

जडे प्रभवति प्रायो दुःखं बिभ्रति साधवः ॥
शीतांशावुदिते पद्मं संकोचं याति वारिणि ॥ ३८८ ॥

भाषार्थ–जडमनुष्यके प्रभाववाले होनेपर साधुजन प्रायः दुःख पाते हैं, चन्द्रमाके उदय होनेपर कमल प्रायः जलमें संकोचको प्राप्त हो जाते हैं ॥ ३८८ ॥

प्रभूतवयसः पुंसो धियः पाकः प्रवर्तते ॥
जीर्णस्य चन्दनतरोरामोद उपजायते ॥ ३८९ ॥

भाषार्थ–बहुत अवस्थावाले (वृद्ध) पुरुषकी बुद्धि परिपक्व हो जाती है. पुराने चन्दनवृक्षसे अधिक गन्ध उत्पन्न होवे है ॥ ३८९ ॥

गुणानामन्तरं प्रायस्तज्ज्ञो जानाति नेतरः ॥
मालतीमल्लिकामोदं घ्राणं वेत्ति न लोचनम् ॥ ३९० ॥

भाषार्थ–गुणोंके अन्तरको गुणीही जानता है; दूसरा नहीं जान सकता है. मालतीके फूलकी गन्धको घ्राणही जानता है; नेत्र नहीं ३९०

कश्चित्कस्यचिदेव स्यात्सुहृद्विस्रम्भभाजनम् ॥
पद्मं विकाशयत्यर्कः संकोचयति कैरवम् ॥ ३९१ ॥

भाषार्थ–किसी विरलेही मनुष्यका कोई मित्र विश्वास करनेयोग्य

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

होता है. सूर्य कमलोंको खिलाता है और कुमुदको संकुचित कर देता है ॥ ३९१ ॥

व्यसनानन्तरं सौख्यं स्वल्पमप्यधिकं भवेत् ॥
काषायरसमास्वाद्य स्वाद्वतीवाम्बु विन्दते ॥ ३९२ ॥

भाषार्थ–दुःखके अनन्तर थोडा सुखभी अधिक माना जाता है. कषैले रसका स्वाद लेकर, जलपान करनेसे अतीव स्वाद लगता है ३९२

निन्दां यः कुरुते साधोस्तथा स्वं दूषयत्यसौ ॥
खे[1] धूलिं यस्त्यजेदुच्चैर्मूर्ध्नि[2] तस्यैव सा पतेत् ॥ ३९३॥

भाषार्थ–जो मनुष्य सज्जनकी निन्दा करता है, वह अपने आपको दूषित करता है. जो आकाशमें धूलि फेंकता है, वह धूलि उसीपर आकर गिरती है ॥ ३९३ ॥

किमाराध्यं ? सदा पुण्यं, कश्च सेव्यः ? सदागमः ॥
को ध्येयो ? भगवान् विष्णुः,किं काम्यं ? परमं पदम् ३९४

भाषार्थ–संसारमें आराध्य क्या है ? पुण्य सदा आराध्य है. सेवन करने योग्य क्या है ? आगम (शास्त्र) सदा सेव्य है. ध्येय (ध्यान करने योग्य) क्या है ? विष्णु भगवान् सदा ध्यान करने योग्य हैं. काम्य (कामना करने योग्य) क्या है ? परम पद (मोक्ष) सदा काम्य है ॥ ३९४ ॥

शुभं वाप्यशुभं कर्म फलकालमपेक्षते ॥
शरद्येव फलत्याशु शालिर्न सुरभी क्वचित् ॥ ३९५ ॥

---

१ आकाशे । २ शिरसि ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–शुभ वा अशुभ कर्म फलके समयकी अपेक्षा करता है. देखो, धान शरदृऋतुमेंही शीघ्र फलता है; वसन्तऋतुमें नहीं फलता ॥ ३९५ ॥

स्वभावसुन्दरं वस्तु न संस्कारमपेक्षते ॥
मुक्तारत्नस्य शाणाश्मघर्षणं नोपयुज्यते ॥ ३९६ ॥

भाषार्थ–जो वस्तु स्वभावसेही सुन्दर है, वह संस्कारकी अपेक्षा नहीं रखती. देखो, मौक्तिकरत्नको कोईभी मनुष्य शाण अथवा कसौटीपर घिसकर काममें नहीं लाता, अर्थात् विना शाण और कसौटीकेही परीक्षा हो जाती है ॥ ३९६ ॥

दुर्जनो जीयते युक्त्या विग्रहेण न धीमता ॥
निपात्यते महावृक्षस्तत्समीपक्षितिक्षयात् ॥ ३९७ ॥

भाषार्थ–बुद्धिमान् पुरुष दुर्जनको युक्तिसे अपने वशमें करै. विग्रह- (बिगाड) से नहीं. देखो, बडा वृक्षभी समीपकी भूमि खुद जानेसे गिर पडता है ॥ ३९७ ॥

असंभवगुणस्तुत्या जायते स्वात्मनस्त्रपा ॥
कर्णिकारं सुगन्धीति वदन् को नोपहस्यते? ॥३९८॥

भाषार्थ–असंभव गुणोंकी स्तुतिसे अपनेको लज्जा उत्पन्न होती है. कनेरको 'उत्तम गन्धवाला' बतानेवालेको कौन नहीं हँसता?॥३९८

मृत्तिकानां सहस्रैस्तु उदकुंभशतैरपि ॥
न शुद्ध्यन्ति दुरात्मानो येषां भावो न निर्मलः ३९९

भाषार्थ–सहस्रों (हजारों) मन मिट्टी और जलसे भरे सैकडों घडोंसे मंजन करनेपरभी दुष्टात्मा पुरुष शुद्ध नहीं होते हैं कि जिनका भाव निर्मल नहीं हैं ॥ ३९९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

आगच्छदुत्सवो भाति यथैव न तथागतः॥
हिमांशोरुदयः सायं चकास्ति च तथोषसि॥ ४०० ॥

भावार्थ–आये हुवे उत्सवकी शोभा जैसी होती है, वैसी गये हुवे-की नहीं होती. देखो, सायंकालमें आगत चन्द्रमाका उदय जैसा शोभावाला होता है, वैसा प्रातःकालमें गतचन्द्रमाका नहीं होता है॥ ४०० ॥

येनात्मा पण्यतां नीतः स एवान्विष्यते जनैः॥
हस्ती हेमसहस्रेण क्रीयते न मृगाधिपः॥ ४०१ ॥

भावार्थ–जिसने अपनेको बेच डाला है, उसीको लोग ढूँढते हैं. देखो, हजार मुहर देकर हाथी मोल लिया जाता है. परन्तु सिंहको कोई मोल नहीं लेता॥ ४०१ ॥

विक्रीतं निजमात्मानं वस्त्रैः संस्कुरुते जडः॥
परेभ्यः स्वशरीरस्य के वा भूषां वितन्वते?॥ ४०२ ॥

भावार्थ–जड, विकी हुई अपनी आत्माको वस्त्रोंसे संस्कारयुक्त करता है, दूसरोंसे अपने शरीरकी शोभा कौन बढाता है?॥ ४०२ ॥

बुद्धिमत्त्वाऽभिमानः को भवेत्प्राज्ञोपजीविनाम्?॥
अन्यदीयैरलङ्कारैर्नाहंकारो विभूषणे॥ ४०३ ॥

भावार्थ–बुद्धिद्वारा आजीविका करनेवाले मनुष्योंको अपनी बुद्धि-मत्ताका क्या अभिमान हो सकता है? दूसरोंके आभूषणोंसे क्या कोई यह अहंकार कर सकता है कि–'ये मेरे आभूषण हैं'॥ ४०३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गुरुं प्रयोजनोद्देशादर्चयन्ति न भक्तितः ॥
दुग्धदात्रीति गौर्गेहे पोष्यते न तु धर्मतः ॥ ४०४ ॥

भावार्थ–प्रयोजनके उद्देशसे लोग गुरूका सत्कार करते हैं भक्तिसे नहीं. घरमें रखकर गौका सत्कार लोग इसीसे करते हैं कि–'यह दूध देती है.' धर्मसे नहीं ॥ ४०४ ॥

सद्भिस्तु लीलया प्रोक्तं शिलालिखितमक्षरम् ॥
असद्भिः शपथेनापि जले लिखितमक्षरम् ॥ ४०५ ॥

भावार्थ–श्रेष्ठजनोंकी खेलमें कही हुई बातभी पत्थरकी लकीर होती है. दुर्जनोंकी शपथ (सौगन्द) खाकर कही हुई बातभी जलमें खींची हुई लकीरके समान होती है ॥ ४०५ ॥

उत्तमः क्लेशविक्षोभं सोढुं शक्तो नहीतरः ॥
मणिरेव महाशाणघर्षणं न तु मृत्कणः ॥ ४०६ ॥

भावार्थ–श्रेष्ठ जन क्लेश और क्षोभ सह सकते हैं; अधम मनुष्य नहीं सह सकते. मणिही कठोर शाणके घर्षणको सह सकै है; मिट्टीका ढेला नहीं सह सकता है ॥ ४०६ ॥

निर्गुणष्वपि सत्वेषु दयां कुर्वन्ति साधवः ॥
नहि संहरते ज्योत्स्नां चन्द्रश्चांडाल वेश्मनि ॥ ४०७ ॥

भावार्थ–गुणहीन श्रेष्ठजनोंपरभी सत्पुरुष कृपाही करते हैं. चन्द्रमा चांडालके घरसे अपनी किरण खींच नहीं लेता, अर्थात् उसकोभी अपना प्रकाश प्रदान करता है ॥ ४०७ ॥

पातितोऽपि कराघातैरुत्पतत्येव कन्दुकः
प्रायेण साधुवृत्तानामस्थायिन्यो विपत्तयः ॥ ४०८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-हाथसे गेंद पटके जानेपर फिर उछल जाती है. साधुजनोंकी विपत्तियां प्रायः नहीं ठहरती ॥ ४०८ ॥

पृथिव्यां त्रीणि रत्नानि जलमन्नं सुभाषितम् ॥
मूढैः पाषाणखंडेषु रत्नसंज्ञा विधीयते ॥ ४०९ ॥

भाषार्थ-पृथिवीपर जल, अन्न और सुभाषित ये तीन रत्न हैं परन्तु मूर्खजन पत्थरके टुकडोंको रत्न कहते हैं ॥ ४०९ ॥

यस्य नास्ति विवेकस्तु केवलं यो बहुश्रुतः ॥
न स जानाति शास्त्रार्थान् दर्वी पाकरसानिव ॥ ४१० ॥

भाषार्थ-जिसके विवेक (विचार) नहीं है, जो केवल बहुश्रुत है अर्थात् जिसने बहुत शास्त्रोंको केवल सुन लिया है, वह शास्त्रोंके मुख्य आशयोंको नहीं जानता है. जैसे करछी पाकरसको नहीं जानती है ॥ ४१० ॥

उपकारिषु यः साधुः साधुत्वे तस्य को गुणः ? ॥
अपकारिषु यः साधुः स साधुः सद्भिरुच्यते ॥ ४११ ॥

भाषार्थ-जो सज्जन उपकार करनेवालेके साथ भलाई करता है, उसकी सज्जनतामें क्या गुण है ? जो सज्जन अपकार करनेवालेके साथ भलाई करता है, सत्पुरुषोंने उसीको सज्जन बताया है ॥ ४११ ॥

स्वभावं नैव मुञ्चन्ति सन्तः संसर्गतोऽसताम् ॥
न त्यजन्ति रुतं मञ्जु काकसंपर्कतः पिकाः ॥ ४१२ ॥

भाषार्थ-सन्तजन, दुर्जनकी संगतिसेभी अपने उत्तमस्वभावको नहीं छोडते हैं. कौवोंकी संगति होनेपरभी कोयल अपने मधुर शब्दका त्याग नहीं करती ॥ ४१२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्वभावं न जहात्येव साधुरापद्गतोऽपि सन् ॥
कर्पूरः पावकस्पृष्टः सौरभं लभततेराम् ॥ ४१३ ॥

भाषार्थ–साधुजन, विपत्ति आनेपरभी अपने स्वभावको नहीं त्यागता है. जैसे, कपूर अग्निके स्पर्शसे अधिक सुगन्धताको प्राप्त होता है ॥ ४१३ ॥

यथा प्लवेनौपलेन निमज्जत्युदके तरन् ॥
तथा निमज्जतोऽधस्तादज्ञो दातृप्रतिच्छकौ ॥ ४१४ ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार, पत्थरकी नावपर बैठकर जलमें तरनेवाला मनुष्य डूब जाता है, उसीप्रकार अज्ञानी दाता और ग्रहीता दोनौं अधोगतिको प्राप्त होते हैं अर्थात् दुःख भोगते हैं ॥ ४१४ ॥

सत्यं दानं क्षमाशीलमानृशंस्यं तपो दया ॥
दृश्यन्ते यत्र राजेन्द्र ! स ब्राह्मण इति स्मृतः ॥ ४१५॥

भाषार्थ–सत्य, दान, क्षमा, शील, प्रशंसायोग्य वर्ताव, तप और दया ये गुण जिसमें देख पडैं, हे राजेन्द्र ! वही ब्राह्मण कहा है॥४१५॥

अनन्तं बत मे वित्तं यस्य मे नास्ति किंचन ॥
मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे किंचन दह्यते ॥ ४१६ ॥

भाषार्थ–मेरी सम्पदा अनन्त है, परन्तु मेरा कुछ नहीं है. आत्मज्ञानी महाराजा जनकजी कहते हैं कि–'मेरी राजधानी मिथिला यदि अग्निसे भस्म हो जाय तो मेरा कुछभी नहीं जल सकता है' ४१६

यं प्रशंसन्ति कितवा यं प्रशंसन्ति चारणाः ॥
यं प्रशंसन्ति बन्धक्यो न स जीवति मानवः ४१७

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-कपटी लोग जिसकी प्रशंसा करते हैं, भाट जिसकी प्रशंसा करते हैं और स्त्रियां जिसकी प्रशंसा करती हैं, वह मनुष्य नहीं जीता है अर्थात् नष्ट हो जाता है ॥ ४१७ ॥

फलं कतकवृक्षस्य यद्यप्यम्बुप्रसादकम् ॥
न नाम ग्रहणादेव तस्य वारि प्रसीदति ॥ ४१८ ॥

भाषार्थ-कतकवृक्षका फल (निर्मली) यद्यपि जलको निर्मल करै है, तथापि उसका नाम लेनेसे जल निर्मल नहीं होता है ॥ ४१८ ॥

या वेदबाह्याः स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः ॥
सर्वास्ता निष्फलाः प्रेत्य तमोनिष्ठा हि ताः स्मृताः ४१९

भाषार्थ-जो वेद और स्मृति (धर्मशास्त्र) से विरुद्ध वर्ताव करने वाले हैं और जो कुदृष्टिवाले हैं, उनके सब काम निष्फल हैं और वे तामसी निष्ठावाले कहाते हैं ॥ ४१९ ॥

अविधेयो भृत्यजनः शठानि मित्राण्यदायकः स्वामी ॥
अविनयवती च भार्या मस्तकशूलानि चत्वारि॥४२०॥

भाषार्थ-आज्ञा न माननेवाला सेवक, शठ मित्र और न देनेवाला स्वामी, तथा अशिक्षित भार्या ये चारौं मस्तकमें शूल उपजानेवाले हैं. सारांश यह कि-इन चारौंके संग मत्थापच्ची करनेसे शिर दुखने लगता है ॥ ४२० ॥

कटुकं वा मधुरं वा प्रस्तुतवाक्यं मनोहारि ॥
वामे गर्दभनादश्चित्तप्रीत्यै प्रयाणेषु ॥ ४२१ ॥

भाषार्थ-कडुवा वा मीठा प्रस्तुत वाक्य मनोहर होता है. यात्राके समय बाईं ओर गर्दभका शब्द चितको प्रसन्न करनेवाला होता है ४२१

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भूमिपतावर्थपतौ बाले वृद्धे तपोनिधौ विदुषि ॥
योषिति मूर्खे गुरुषु च विदुषा नैवोत्तरं देयम् ॥ ४२२ ॥

भाषार्थ– राजा, धनवान् , बालक, वृद्धजन, तपस्वी, पंडित, स्त्री, मूर्ख और गुरुजन इनके सामने होकर उत्तर नहीं देवै ॥ ४२२ ॥

अतिपरिचयादवज्ञा सन्ततगमनादनादरो भवति ॥
मलये भिल्लपुरन्ध्री चन्दनतरुमिन्धनं कुरुते ॥ ४२३ ॥

भाषार्थ–बहुत परिचयसे अनादर होता है और निरन्तर गमनसे अनादर होता है. देखो, भीलकी स्त्री चन्दन वृक्षको इन्धन बनाती है ॥ ४२३ ॥

अनुचितकर्मारम्भः स्वजनविरोधो बलीयसा स्पर्धा ॥
प्रमदाजनविश्वासो मृत्युद्वाराणि चत्वारि ॥ ४२४ ॥

भाषार्थ–अनुचित कर्मका आरम्भ, स्वजनोंसे विरोध, बलवान् जनसे द्वेषभाव और स्त्रीजनका विश्वास ये चार मृत्युके द्वार हैं. विना पढी हुई (मूर्खा) स्त्रीका विश्वास कदापि नहीं करना चाहिये, इसमें कहनाही क्या है ? ॥ ४२४ ॥

यत्र न फलितास्तरवो विकसितसरसीरुहाः सरस्यो वा ॥
न च सज्जनाः सदेशो गच्छतु निधनं श्मशानसमः ॥ ४२५ ॥

भाषार्थ–जहां फलवाले वृक्ष नहीं हैं और जहां खिले हुये कमल-पुष्पोंवाले सरोवर नहीं हैं, तथा जिस देशमें सत्पुरुष नहीं हैं, वह देश नष्ट हो. क्योंकि–वह श्मशानके तुल्य है ॥ ४२५ ॥

अबला यत्र प्रबला शिशुरविनीतो निरक्षरो मंत्री ॥
नहि नहि तत्र धनाशा जीवनाशापि दुर्लभा भवति ॥ ४२६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जहां स्त्रियां प्रबल हों, बालक अशिक्षित हों, मंत्री निरक्षर (मूर्ख) हो वहां धनकी आशा तो नहींहि है. प्रत्युत जीवनकी आशाभी दुर्लभ है ॥ ४२६ ॥

सुहृदि निरन्तरचित्ते गुणवति भृत्ये प्रियासु नारीषु ॥
स्वामिनि शक्तिसमेते निवेद्य दुःखं जनः सुखी भवति ४२७

भाषार्थ-निरन्तर चित्त मित्रमें, गुणी सेवकमें, प्यारी स्त्रियोंमें शक्तिवाले स्वामीमें अपना दुःख निवेदन करके मनुष्य सुखी होता है ॥ ४२७ ॥

प्राप्य चलानधिकारान् शत्रुषु मित्रेषु बन्धुवर्गेषु ॥
नापकृतं नोपकृतं सत्कृतं किं कृतं तेन ? ॥ ४२८ ॥

भाषार्थ-जो अधिकार चलायमान हैं, उनको पाकर शत्रुवोंपर अपकार, मित्रोंपर उपकार, बन्धुजनोंका सत्कार नहीं किया उसने अधिकार पाकर क्या किया ? अर्थात् कुछ नहीं ॥ ४२८ ॥

अप्रतिबुद्धे श्रोतरि वक्तुर्वाक्यं प्रयाति वैफल्यम् ॥
नयनविहीने भर्तरि लावण्यमिवेह खंजनाक्षीणाम् ४२९

भाषार्थ-बुद्धिहीन श्रोताके आगे वक्ताका उपदेश निष्फल हो जाता है. जैसे, अंधे पतिके होनेमें स्त्रीकी शोभा निष्फल होती है॥४२९

वित्तं परिमितमधिकव्ययशीलं पुरुषमाकुलीकुरुते ॥
ऊनांशुकमिव पीनस्तनजघनायाः कुलीनायाः॥४३०॥

भाषार्थ-परिमित धन अधिक व्यय करनेवालेको व्याकुल कर देता है अर्थात् थोडे धनवाला पुरुष यदि अधिक व्यय (खर्चे) करता

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

है तो, पीछेसे उसको क्लेश होता है. जिसप्रकार, ओछी चोली (अँगिया) मोटे स्तन और मोटी जंघावाली कुलीन स्त्रीको व्याकुल कर देती है ॥ ४३० ॥

राजनि विदुषां मध्ये वरसुरतानां समागमे स्त्रीणाम् ॥
साध्वसदूषितहृदयो वाक्पटुरपि कातरो भवति ॥४३१॥

भावार्थ–राजावों और पंडितोंके बीच और सुन्दरी स्त्रियोंके समागममें दूषित हृदयवाला वाग्मी (बहुत बोलनेवाला) पुरुषभी कातर (भीरु) हो जाता है ॥ ४३१ ॥

रमणीयः स हि पुरुषो रमणी यत्रैव रज्यति विदग्धा[1] ॥
श्लोकः स एव सुभगश्चित्तं सक्तं हि यत्र रसिकस्य४३२

भावार्थ–वही पुरुष रमणीय (सुन्दर) है, जिसपर चतुरा स्त्री अनुरागवती हो जाती है; वही श्लोक सुभग (उत्तम) है, जिसमें रसिकजनका चित्त मोहित हो जाता है ॥ ४३२ ॥

स्वधीनेऽपि कलत्रे नीचः परदारलम्पटो भवति ॥
सम्पूर्णेऽपि तडागे काकः कुंभोदकं पिबति ॥४३३॥

भावार्थ–अपनी स्त्री अपने आधीन होनेपरभी नीचजन पराई स्त्रीसे व्यभिचार करनेवाला होता है. जैसे, तडागके पूर्ण होनेपरभी अर्थात् तालाव भरे होनेपरभी कौवा घडेमेंका जल पीता है ॥ ४३३ ॥

अनुकूलां विमलाङ्गीं कुलजां कुशलां सुशीलसम्पन्नाम्॥
पञ्चलकारां भार्यां पुरुषः पुण्योदयाल्लभते ॥ ४३४ ॥

भावार्थ–अपने अनुकूल, विमल अंगोंवाली (सुन्दरी), उत्तम

[1] चतुरा ।



CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कुलमें उत्पन्न हुई, कर्ममें कुशल अर्थात् गृहकार्यमें दक्ष, सुशीलसम्पन्न अर्थात् उत्तमस्वभाववाली पंचलकारा (पांचलकारवाली) भार्या (स्त्री) पुरुषको भाग्योदय अर्थात् बडे भाग्यसे प्राप्त होती है ॥ ४३४ ॥

अनवसरे च यदुक्तं सुभाषितं तच्च भवति हास्याय ॥
रहसि प्रौढवधूनां रतिसमये वेदपाठ इव ॥ ४३५ ॥

भाषार्थ–विना अवसर जो सुभाषित (उत्तम वचन) का उच्चारण करता है, उसकी हँसी होती है. जैसे, एकांतमें स्त्रीसमागमके समय वेदपाठ हास्यजनक होता है ॥ ४३५ ॥

आपदि मित्रपरीक्षा शूरपरीक्षा रणाङ्गणे भवति ॥
विनये वंशपरीक्षा स्त्रियः परीक्षा तु निर्धने पुंसि ॥ ४३६॥

भाषार्थ–विपत्तिसमयमें मित्रकी परीक्षा हो जाती है, और शूरकी परीक्षा रणभूमिमें हो जाती है, विनय होनेपर वंशकी परीक्षा होती है और पुरुषके निर्धन हो जानेपर स्त्रीकी परीक्षा होजाती है ॥ ४३६ ॥

यः पठति लिखति पश्यति परिपृच्छति पंडितानुपाश्रयति॥
तस्य दिवाकरकिरणैर्नलिनीदलमिव विकास्यते बुद्धिः ४३७

भाषार्थ–जो मनुष्य पढता है, लिखता है, देखता है, पूछता है और पंडितोंके आश्रय रहता है, उसकी बुद्धि ऐसे खिल जाती है, जैसे सूर्यकी किरणोंसे कमल खिल जाते हैं ॥ ४३७ ॥

किं क्रूरं ! फणिहृदयं, पुनरपि किं क्रूरमङ्गनाहृदयम् ॥
क्रूरात्क्रूरतरं किं ? पतिसुतधनहीनकामिनीहृदयम् ॥४३८॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–क्रूर क्या है? सांपका हृदय. फिर क्रूर क्या है? स्त्रीका हृदय. क्रूरसे क्रूर क्या है? पतिसुतधनसे हीन स्त्रीका हृदय ॥ ४३८ ॥

आरोग्यं विद्वत्ता स्वजनमैत्री महत्कुले जन्म ॥
स्वाधीनता च पुंसां महदैश्वर्यं विनाप्यर्थैः ॥ ४३९ ॥

भाषार्थ–आरोग्यता, विद्वत्ता, स्वजनोंसे मित्रता, उत्तम कुलमें जन्म और स्वाधीनता ये मनुष्योंके विना धनकेही महदैश्वर्य हैं ॥४३९॥

अवसरपठिता वाणी गुणगणरहितापि शोभते पुंसाम् ॥
रतिसमये युवतीनां भूषाहानिर्विभूषणं भवति ॥ ४४० ॥

भाषार्थ–पुरुषोंकी अवसरपर कही हुई वाणी गुणोंसे रहित होने· परभी शोभाको प्राप्त होती है. जैसे, रतिसमय स्त्रियोंका आभूषण-रहित होनाभी अच्छा लगता है ॥ ४४० ॥

अव्याकरणमधीतं भिन्नद्रोण्या तरङ्गिणीतरणम् ॥
भेषजमपथ्यसहितं त्रयमिदमकृतं वरं न कृतम्॥४४१॥

भाषार्थ–विना व्याकरणके पढ़ना, टूटी नावसे नदी पार जाना, विना पथ्यके औषधी खाना ये तीन विना कियेके समान जानना. इससे तो न करना अच्छा ॥ ४४१ ॥

कोऽन्धो? योऽकार्यरतः, को बधिरो? यः शृणोति नैतानि॥
को मूको? यः काले प्रियाणि वक्तुं न जानाति ॥ ४४२ ॥

भाषार्थ–अन्धा कौन है? जो दूसरेके कार्यमें विघ्न करता है. बहिरा कौन है? जो नीतिवचन नहीं सुनता है. मूक (बौरा) कौन है? जो समयपर प्रियवचन बोलना नहीं जानता है ॥ ४४२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कुत्र विधेयो यत्नो ? विद्याभ्यासे महौषधे दाने ॥
अवधीरणा क्व कार्या ? खलपरयोषित्परधनेषु ॥ ४४३ ॥

भाषार्थ–मनुष्यको यत्न कहां करना उचित है ? विद्याभ्यासमें, औषधीमें, दानमें. और कहां यत्न नहीं करना चाहिये ? दुर्जनमें, पराई स्त्रीमें और पराये धनमें. अर्थात् दुष्टमनुष्योंके निमित्त और पराई स्त्रीके निमित्त, तथा पराये धनके निमित्त. कभी यत्न न करै ॥ ४४३ ॥

विरला जानन्ति गुणान् विरलाः कुर्वन्ति निर्धने स्नेहम् ॥
विरलाः परकार्यरताः परदुःखेनापि दुःखिता विरलाः ४४४

भाषार्थ–संसारमें विरलेही मनुष्य गुणोंको जानते हैं और विरलेही मनुष्य धनहीनसे स्नेह करते हैं, एवं विरलेही मनुष्य पराये कार्यमें रत रहते हैं अर्थात् परोपकार करनेवालेभी विरलेही मनुष्य हैं तथा दूसरोंके दुःखसे दुःखी रहनेवाले मनुष्य इस संसारमें विरलेही हैं ॥४४४

दधि मधुरं मधु मधुरं द्राक्षा मधुरा सुधापि मधुरैव ॥
तस्य तदेवहि मधुरं यस्य मनो यत्र संलग्नम् ॥ ४४५ ॥

भाषार्थ–दही मीठा है, शहद मीठा है, दाखभी मधुर है, अमृतभी मधुर है. उसको वही मधुर है जिसका मन जहां लगा होता है ॥४४५॥

रोगी चिरप्रवासी परान्नभोजी परावसथशायी ॥
यज्जीवति तन्मरणं यन्मरणं सोऽस्य विश्रामः ॥ ४४६ ॥

भाषार्थ–रोगी, बहुतसमयतक ठहरनेवाला अर्थात् पराये घर बहुत दिन पहुनाई खानेवाला, परान्नभोजी (दूसरेका अन्न खानेवाला) और दूसरेके अधिकारमें शयन करनेवाला मनुष्य जो जीता है, वह उसका मरण है और जो मरण है, वह उसका विश्राम है ॥ ४४६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दानं प्रियवाक्सहितं ज्ञानमगर्वं क्षमान्वितं शौर्यम् ॥
वित्तं त्यागनियुक्तं दुर्लभमेतच्चतुर्भद्रम् ॥ ४४७ ॥

भाषार्थ-प्रियवचनसहित दान, गर्व (अहंकार) रहित ज्ञान, क्षमायुक्त शौर्य, दानयुक्त धन, ये चार कल्याणकारी पदार्थ दुर्लभ हैं ॥ ४४७ ॥

अप्रकटीकृतशक्तिः शक्तोपि जनस्तिरस्क्रियां लभते ॥
निवसन्नन्तर्दारुणि लङ्घ्यो वह्निर्न तु ज्वलितः ॥४४८॥

भाषार्थ-जिसने अपनी सामर्थ्यको प्रगट नहीं किया है, ऐसा मनुष्यभी तिरस्कारको प्राप्त होता है. देखो, काठके भीतरकी अग्नि उल्लंघनको योग्य होवै है, परंतु प्रज्वलित अग्निका कोईभी उल्लंघन नहीं कर सकता है ॥ ४४८ ॥

निरतिशयं गरिमाणं तेन जनन्याः स्मरन्ति विद्वांसः ॥
यत्कमपि वहति गर्भं महतामपि यो गुरुर्भवति ॥ ४४९ ॥

भाषार्थ-विद्वान् जन जननीकी महिमाको इसी हेतु निरन्तर स्मरण करते हैं कि-वह जननी किसी ऐसे गर्भको धारण करती है कि जो बडोंकाभी गुरु होता है ॥ ४४९ ॥

दरिद्रता धीरतया विराजते कुरूपता शीलतया विराजते ।
कुभोजनं चोष्णतया विराजते कुवस्त्रता शुभ्रतया विराजते ॥

भाषार्थ-धीरज धारण करनेसे दरिद्रता शोभा पाती है, शील-(उत्तमस्वभाव) से कुरूपता शोभा देती है, कुभोजन उष्णता (गरम कर लेने) से अच्छा लगता है, कुवस्त्र उज्ज्वल करनेसे शोभा पाता है ॥ ४५० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पश्यति परस्य युवतिं सकाममपि तन्मनोरथं कुरुते ॥
ज्ञात्वैव तदप्राप्तिं व्यर्थं मनुजो हि पापभाग्भवति ॥४५१॥

भाषार्थ–कामी मनुष्य पराई स्त्रीको देखता है, कामनासहित उसके साथ समागमकी इच्छा करता है और उसकी अप्राप्ति जानकरकेभी पापभागी होता है ॥ ४५१ ॥

वितरति यावद्दाता तावत्सकलोऽपि भवति कलभाषी ॥
विरते पयसि घनेभ्यः शाम्यति शिखंडिनां ध्वनयः ४५२

भाषार्थ–जबतक दानी पुरुष दान करता है, तबतक सबही उसकी प्रशंसा करते हैं. देखो, जब बादलोंसे जलका गिरना बन्द हो जाता है तब मोरोंके शब्दभी शान्त हो जाते हैं ॥ ४५२ ॥

असती भवति सलज्जा क्षारं नीरं च शीतलं भवति ॥
दम्भी भवति विवेकी प्रियवक्ता भवति धूर्तजनः ४५३॥

भाषार्थ–जो स्त्री पतिव्रता नहीं है, वह लज्जावाली होती है, खारा जल शीतल होता है, दंभी मनुष्य विवेकी (विज्ञानी) होता है और धूर्त मनुष्य प्रियवक्ता होता है ॥ ४५३ ॥

वाप्यो भवन्ति विमलाः स्फुटन्ति कमलानि वापीषु ॥
कमलेषु पतन्त्यलयः करोति संगीतमलिषु पदम् ॥४५४॥

भाषार्थ–जो वावली निर्मल होती है उन्ही वावलियोंमें कमल खिलते हैं, उन कमलोंमें भ्रमर गिरते हैं और फिर उन भ्रमरोंमें संगीत अपना पद (अधिकार) जमाता है, अर्थात् भ्रमरगण गुंजारते हैं ॥ ४५४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

आसुरं कुलमनादरणीयं चित्तमेतदमलीकरणीयम् ॥
रामधाम शरणीकरणीयं लीलया भवजलं तरणीयम् ॥४५५

भाषार्थ—असुरकुलका अनादर करना चाहिये और इस चित्तको निर्मल करना चाहिये, सब जगत्में रमण करनेवाला जो रामरूप परमात्मा है, उसका जो धाम मोक्षपद है, उसकी शरण जाना चाहिये, लीला (उत्तमकर्म) से भवजल (संसारसागर) को तरना चाहिये ॥ ४५५ ॥

दुर्जनवचनाङ्गारैर्दग्धोऽपि न विप्रियं वदत्यार्यः ॥
अगुरुरपि दह्यमानः स्वभावगन्धं परित्यजति किं नु? ४५६

भाषार्थ—आर्य पुरुष (श्रेष्ठ जन) दुर्जनोंके कटुवचनरूप अंगारोंसे दग्ध होनेपरभी अप्रिय वचन नहीं बोलते. जैसे, चन्दन जलाये जानेसे क्या अपने स्वाभाविक सुगन्धको त्याग देता है? कदापि नहीं ॥ ४५६ ॥

काके शौचं द्यूतकारे च सत्यं सर्पे क्षान्तिः स्त्रीषु कामोपशान्तिः
क्लीबे धैर्यं मद्यपे तत्वचिंता राजा मित्रं केन दृष्टं श्रुतं वा? ॥

भाषार्थ—कौवार्में पवित्रता, जुवांरीमें सत्य, सांपमें क्षान्ति (सहनशीलता) और स्त्रियोंमें कामकी उपशान्ति, तथा क्लीब (नपुंसक)-में धैर्य, मदिरा पीनेवालेमें तत्वकी चिन्ता और राजा मित्र किसने देखा अथवा सुना है? ४५७ ॥

शाठ्यस्य चित्तं कृपणस्य वित्तं मनोरथं दुर्जनमानुषाणाम् ॥
स्त्रियश्चरित्रं पुरुषस्य भाग्यं देवो न जानाति कुतो मनुष्यः?

१ धर्मार्थकाममोक्षाख्येषु चतुर्विधेषु मोक्ष एव परमः पुरुषार्थ इति । २ 'लीलाविलास-क्रिययोः' इत्यमरः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-राजाका चित्त, कृपण (कंजूस) का धन, दुर्जनके मनकी बात, स्त्रियोंके चरित्र और पुरुषका भाग्य देवभी नहीं जानता है. मनुष्यका तो कहनाही क्या है ! ॥ ४५८ ॥

एको देवः केशवो वा शिवो वा एकं मित्रं भूपतिर्वा यतिर्वा ।
एका भार्या सुन्दरी वा दरी वा एको वासः पत्तने वा वने वा॥

भाषार्थ-एक देव केशव अथवा शिव, एकही मित्र राजा वा यती, एकही स्त्री सुन्दरी हो वा कुरूपा हो, तथा एकही स्थानमें वास अच्छा है, पत्तन (शहर) में वा वनमें ॥ ४५९ ॥

चित्तायत्तं धातुबद्धं शरीरं नष्टे चित्ते धातवो यान्ति नाशम्॥
तस्माच्चित्तं सर्वदारक्षणीयं स्वस्थे चित्ते बुद्धयः संभवन्ति४६०

भाषार्थ-चित्त सावधान होनेपर शरीरमें धातु बंधा रहता है, चित्तके असावधान होनेसे धातुवोंका नाश हो जाता है, इसकारण चित्तकी सर्वदा रक्षा करनी चाहिये. स्वस्थचित्त होनेसे बुद्धियाँ प्रगट होती हैं ॥ ४६० ॥

शुक्ले पक्षे शीतरश्मिर्बलाया-
न प्राधान्यं तारकायास्तु दृष्टम् ॥
शक्त्या युक्ते विद्यमानेऽपि कान्ते
न प्राधान्यं योषितां क्वापि दृष्टम् ॥ ४६१ ॥

भाषार्थ-शुक्लपक्षमें चंद्रमा बलवान् होता है, नक्षत्रोंकी प्रधानता नहीं देख पडती है. शक्तियुक्त पतिके विद्यमान होनेपर स्त्रियोंकी प्रधानता कहींभी नहीं देख पडती है ॥ ४६१ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मांसं मृगाणां दशनौ गजानां मृगेंद्विषां चर्म फलं द्रुमाणाम्॥
स्त्रीणां सुरूपं च नृणां हिरण्यमेते गुणा वैरकरा भवन्ति४६२

भाषार्थ–हिरणोंमें मांस, हाथियोंमें दोनौं दांत, सिंह व्याघ्र आदिमें चर्म (चमडा) वाघंबर आदि, वृक्षोंमें फल, स्त्रियोंमें सुरूप (सुन्दरता) और मनुष्योंमें धन ये गुण वैर करानेवाले होते हैं ॥४६२॥

शाठ्येन धर्मं कपटेन मित्रं परोपतापेन समृद्धिभावम् ।
सुखेन विद्यां परुषेण नारीं वाञ्छन्ति ये व्यक्तमपंडितास्ते॥

भाषार्थ–जो मनुष्य शठतासे धर्मको, कपटसे मित्रको, दूसरोंको सतानेसे ऐश्वर्यको, सुखसे विद्याको और कठोरतासे स्त्रीको चाहते हैं, वे प्रगट मूर्ख हैं ॥ ४६३ ॥

आरम्भगुर्वी क्षयिणी क्रमेण लघ्वी पुरा वृद्धिमती च पश्चात्॥
दिनस्य पूर्वार्धपरार्धभिन्ना छायेव मैत्री खलसज्जनानाम्४६४

भाषार्थ–दुर्जनोंकी मैत्री, आरम्भमें लंबी फिर थोडी, इस क्रमसे पूर्वार्द्ध (दोपहर) की छायाकी नाईं घटती जाती है और सज्जनोंकी मैत्री पहले थोडी फिर क्रमशः परार्द्ध (दोपहर) उपरान्तकी छायाकी नाईं क्षणक्षण बढती जाती है ॥ ४६४ ॥

मूर्खो द्विजातिः स्थविरो गृहस्थः कामी दरिद्रो धनवांस्तपस्वी
वेश्या कुरूपा नृपतिः कदर्यो लोके षडेतानि विडम्बितानि ॥

भाषार्थ–मूर्ख द्विजाति, बूढा गृहस्थ, दरिद्र कामी और धनवान् तपस्वी, कुरूपा वेश्या, कृपण राजा, संसारमें ये छे विडम्बनाके योग्य हैं ॥ ४६५ ॥

---

१ दन्तौ । २ सिंहव्याघ्रादीनाम् । ३ वृक्षाणाम् । ४ सुवर्णम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अर्थागमो नित्यमरोगिता च प्रिया च भार्या प्रियवादिनी च।
वश्यश्च पुत्रोऽर्थकरी चविद्याषड्जीवलोकस्यसुखानिराजन्!

भाषार्थ–हे राजन्! प्रतिदिन धनका आगम, आरोग्यता, प्यारी और प्रियवादिनी स्त्री, अपने आधीन पुत्र, धन प्राप्त करानेवाली विद्या ये छे जीवलोकके सुख हैं॥ ४६६॥

आरोग्यमानृण्यमविप्रयासः सप्रत्यया वृत्तिरभीतिवासः॥
सद्भिर्मनुष्यैः सह संप्रयोगः षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन्!

भाषार्थ–हे राजन्! आरोग्यता, ऋणी न होना, अपने देशमें निवास, विश्वासयोग्य आजीविका, निर्भय होकर रहना, श्रेष्ठमनुष्योंसे व्यवहार ये छे जीवलोकके सुख हैं॥ ४६७॥

भार्यावियोगः स्वजनापवादो ऋणस्य शेषः कृपणस्य सेवा।
दारिद्र्यकाले प्रियदर्शनं च विनाग्निना पंच दहंति कायम्॥

भाषार्थ–स्त्रीका वियोग, स्वजनोंमें निन्दा, ऋणी होना, कृपणकी सेवा, निर्धनी होनेके समय प्रियका दर्शन ये पांच विना अग्नि करकेही शरीरको जलाते हैं॥ ४६८॥

न कस्यचित्कस्यचिदिह स्वभावाद्भवत्युदारोऽभिमतः खलो वा।
लोके गुरुत्वं विपरीततां वा स्वचेष्टितान्येव नरं नयन्ति॥

भाषार्थ–स्वभावसे कोई उदार अथवा खल किसीकोभी अभिमत नहीं है. किन्तु अपने जो मनोभाव हैं, वेही इस संसारमें बडाई अथवा निचाईको प्राप्त कराते हैं॥ ४६९॥

किं पौरुषं? रक्षति यो न वार्तान्किंवा धनं नार्थिजनाययत्स्यात्
सा किं क्रिया? या न हितानुबद्धा किं जीवितं? साधुविरोधि यद्वै

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–वह पौरुष क्या है ? जो आर्त (दुःखित) जनोंकी रक्षा नहीं करता; वह धन क्या है ? जो अर्थीजनके निमित्त न हो अर्थात् परोपकारार्थ न हो; वह क्रिया (कर्म) क्या है ? जो हितसे युक्त न हो; वह जीवित क्या है ? जो साधुजनोंका विरोधी होवै ॥ ४७० ॥

दन्तस्य निर्घर्षणकेन राजन् ! कर्णस्य कंडूयनकेन वापि ॥
तृणेन कार्यं भवतीश्वराणां किमङ्गवाक्पाणिमतां नरेण ? ॥

भाषार्थ–हे राजन् ! दांतका निर्घर्षण (कुरोना), कानका खुजलाना जिससे होता है ऐसे तृणसेभी जब महत्पुरुषोंका काम निकलता है, तब क्या वाणी और हाथ आदि अंगवाले मनुष्यसे काम नहीं निकल सकता है ? ॥ ४७१ ॥

त्याज्यं न धैर्यं विधुरेपि काले
धैर्यात्कदाचित्स्थितिमाप्नुयात्सः ॥
यथा समुद्रेऽपि च पोतभङ्गे
सांयात्रिको वाञ्छति तर्तुरेव ॥ ४७२ ॥

भाषार्थ–समय विपरीत होनेपरभी धीरज न छोडे. क्योंकि धीरज धारण करनेसे मनुष्य कदाचित् स्थितिको प्राप्त हो जाता है. देखो, समुद्रमें पोतके भंग होनेपर (जहाज टूट जानेपर) भी व्यापारी पार जानेकीही इच्छा करता है ॥ ४७२ ॥

त्यजेत्क्षुधार्तो महिलां सपुत्रां
खादेत्क्षुधार्ता भुजगी स्वमण्डम् ॥
बुभुक्षितः किं न करोति पापं ?
क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति ॥ ४७३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–भूखसे पीडित मनुष्य अपनी स्त्रीकोभी पुत्रसहित त्याग देता है. भूखी सर्पिणी अपने अंडोंको खा लेती है. भूखा मनुष्य क्या पाप नहीं करता ? भूखसे क्षीण (निर्बल) मनुष्य दयाहीन हो जाते हैं ॥ ४७३ ॥

दानेन तुल्यो विधिरस्ति नान्यो
लोभाच्च नान्योऽस्ति परः पृथिव्याम् ॥
विभूषणं शीलसमं न चान्य-
स्सन्तोषतुल्यं धनमस्ति नान्यत् ॥४७४॥

भाषार्थ–दानके तुल्य कोई विधि नहीं है, पृथिवीमें लोभसे बढकर कोई शत्रु नहीं है, शीलसे बढकर कोई आभूषण नहीं है, सन्तोषके तुल्य अन्य कोई धन नहीं है ॥ ४७४ ॥

दारेषु किंचित्स्वजनेषु किंचित्
गोप्यं वयस्येषु सुतेषु किञ्चित् ॥
युक्तं न वा युक्तमिदं विचिन्त्य
वदेद्विपश्चिन्महतोऽनुरोधात् ॥ ४७५ ॥

भाषार्थ–कुछ स्त्रीजनोंमें, कुछ स्वजनोंमें, कुछ समान अवस्थावालोंमें, कुछ पुत्रोंमें छिपाने योग्य बात होती है. इस कारण बुद्धिमान् पुरुषको उचित है कि–'यह बात कहने योग्य है, अथवा अयोग्य' ऐसा विचार कर महाकार्यवश (बडा भारी काम आ पडनेपर) स्त्रीपुत्रादिके आगे गुप्त बातको प्रकाश करै ॥ ४७५ ॥

एकस्य दुःखस्य न यावदन्तं
गच्छाम्यहं पारमिवार्णवस्य ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तावद्द्वितीयं समुपस्थितं मे
छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति ॥ ४७६ ॥

भाषार्थ–एक दुःख जबतक दूर नहीं होता जैसे समुद्रके पार मैं जाता हूं, तबतक मेरेको दूसरा दुःख आ घेरता है. छिद्रोंमें अनर्थ बहुत हो जाते हैं ॥ ४७६ ॥

क्षते प्रहारा निपतन्त्यभीक्ष्णं
धनक्षये वर्धति जाठराग्निः ॥
आपत्सु वैराणि समुद्भवन्ति
छिद्रेष्वनर्था बहुलीभवन्ति ॥ ४७७ ॥

भाषार्थ–घावपरही वारवार चोट लग जाती है, धनहीन होनेपरही जठराग्नि बढती है अर्थात् भूख बढ जाती है, आपत्कालमेंही वैर प्रगट होते हैं, छिद्रोंमें अनर्थ बढ़ जाते हैं ॥ ४७७ ॥

विवाहकाले ऋतुसंप्रयोगे प्राणात्यये सर्वधनापहारे ॥
विप्रस्य चार्थेऽप्यनृतं वदेयुः पञ्चानृतान्याहुरपातकानि४७८

भाषार्थ–विवाहकालमें, ऋतुसंप्रयोगमें, प्राणसंकटमें, सब धन हर जानेमें, ब्राह्मणके निमित्त झूंठभी बोलना पडै तौ, इन पांच स्थानोंमें झूंठ कहनेपर पातक नहीं ऐसा कहा है ॥ ४७८ ॥

अर्थातुराणां न गुरुर्न बन्धुः कामातुराणां न भयं न लज्जा ॥
विद्यातुराणां न सुखं न निद्रा क्षुधातुराणां न रुचिर्न वेला७९

भाषार्थ–धनके लोभियोंको न कोई गुरु है, न बन्धु है; कामातुर मनुष्योंको न किसीका भय रहता है, न लज्जा रहती है; विद्यातुरोंको न सुख है, न नींद है; क्षुधातुर पुरुषोंका न रुचिपर ध्यान रहता है, न उनको समयका विचार रहता है ॥ ४७९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यत्रास्ति लक्ष्मीर्विनयो न तत्र ह्यभ्यागतो यत्र न तत्र लक्ष्मीः।
उभौ च तौ यत्र न तत्र विद्या नैकत्र सर्वो गुणसंनिपातः४८०

भाषार्थ—जहां लक्ष्मी है, वहां विनय नहीं; जहां अभ्यागत है, वहां लक्ष्मी नहीं; जहां दोनौं हैं वहां विद्या नहीं. सब गुण इकट्ठे नहीं होते हैं ॥ ४८० ॥

कुपात्रदानाच्च भवेद्दरिद्रो दारिद्र्यदोषेण करोति पापम् ॥
पापप्रभावान्नरकं प्रयाति पुनर्दरिद्रः पुनरेव पापी ॥४८१॥

भाषार्थ—कुपात्रको दान देनेसे मनुष्य दरिद्री हो जाता है और दरिद्री हो जानेसे पाप करता है. और पापके प्रभावसे नरकगामी होता है. फिर दरिद्री होता है और फिर पापी होता है ॥ ४८१ ॥

सुपात्रदानाच्च भवेद्धनाढ्यो धनप्रभावेण करोति पुण्यम् ॥
पुण्यप्रभावात्सुरलोकवासी पुनर्धनाढ्यः पुनरेव भोगी४८२

भाषार्थ—सुपात्रको दान देनेसे मनुष्य धनी होता है,धनके प्रभावसे पुण्य करता है, पुण्यके प्रभावसे देवलोकवासी होता है, फिर धनी और फिर भोगी होता है ॥ ४८२ ॥

प्रभुर्विवेकी धनवांश्च दाता विद्वान् विरागी प्रमदा सुशीला
तुरंगमो शस्त्रनिपातधीरो भूमण्डलस्याभरणानि पंच ४८३

भाषार्थ—विवेकी प्रभु, धनवान् दाता, विरागी विद्वान्, सुशीला स्त्री, शस्त्र लगनेपर सहन करनेमें प्रवीण घोडा ये पांच भूमंडल (जगत्) के भूषण हैं ॥ ४८३ ॥

स्वदेशस्य जातस्य नरस्य नूनं गुणाधिकस्यापि भवेदवज्ञा ॥
निजाङ्गना यद्यपि रूपराशिस्तथापि लोकःपरदारसक्तः४८४

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-यह बात अवश्य देखनेमें आती है कि अपने देशमें उत्पन्न मनुष्य चाहे जितना गुणी हो उसकी अवज्ञा होती है. यहां एक हिंदी मसल प्रसिद्ध है कि-'गांवका योगी आन गांवका सिद्ध यद्यपि ।' अपनी स्त्री सुन्दरी भी है तथापि लोग पराई स्त्रीपर आसक्त हो जाते हैं ॥ ४८४ ॥

गन्धः सुवर्णे फलमिक्षुदण्डे
नाकारि पुष्पं खलुचन्दनेषु ॥
विद्वान्धनाढ्यो न तु दीर्घजीवी
धातुः पुरा कोऽपि न बुद्धिदोऽभूत्॥४८५॥

भाषार्थ-सुवर्णमें गन्ध, इक्षुदंड (गन्ने) में फल, चन्दन वृक्षमें फूल प्रगट नहीं किया और विद्वान् पुरुषको धनवान् और दीर्घजीवी नहीं किया. विधाताको पहले कोईभी बुद्धि देनेवाला नहीं हुवा॥४८५॥

प्रागल्भ्यहीनस्य नरस्य विद्या शस्त्रं यथा कापुरुषस्य हस्ते ॥
न तृप्तिमुत्पादयते शरीरे वृद्धस्य दारा इव दर्शनीया॥४८६

भाषार्थ-साहसहीन मनुष्यकी विद्या और कायरके हाथमें शस्त्र (हथियार) तृप्तिको उत्पादन नहीं कर सकता. जैसे दर्शनीय, (सुन्दरी) स्त्री वृद्धपुरुषके शरीरमें तृप्तिको उत्पादन नहीं कर सकती है ॥४४६॥

सर्पस्य रत्ने कृपणस्य वित्ते सत्याः कुचे केसरिणश्च केशे॥
मानोन्नतानां शरणागते च मृतौ भवेदन्यकरप्रचारः॥४८७

भाषार्थ-सांपकी मणिपर, कृपणके धनपर, सती (पतिव्रता स्त्री) के कुचपर, सिंहके केशपर, मानसे उन्नत पुरुषोंको शरणागतपर,

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दूसरा मनुष्य इनके मर जानेपर हस्ताक्षेप कर सकता है, जीतेजी कोई अधिकार नहीं कर सकता है ॥ ४८७ ॥

निरक्षरे वीक्ष्य महाधनत्वं
विद्याऽनवद्या विदुषा न हेया ॥
रत्नाऽवतंसाः कुलटाः समीक्ष्य
किमार्यनार्यः कुलटा भवन्ति ? ॥ ४८८ ॥

भाषार्थ–मूर्खको महाधनवान् देखकर पंडितजन अपनी निर्दोष विद्याको न त्यागै. रत्न हैं शिरोभूषण जिनके ऐसी कुलटाओंको देखकर क्या आर्य (श्रेष्ठ) स्त्रियां व्यभिचारिणी हो सकती हैं ? ॥४८८॥

स्वर्गच्युतानामिह भूमिलोके चत्वारि चिह्नानि वसन्ति देहे ॥
दानप्रसङ्गो मधुरा च वाणी देवार्चनं ब्राह्मणतर्पणं च ४८९

भाषार्थ–इस भूमिलोकमें स्वर्गसे आये हुये मनुष्योंके देहमें चार चिन्ह रहते हैं. दान करना, मधुर वचन बोलना, देवतावोंका पूजन करना, ब्राह्मणोंको तृप्त करना ॥ ४८९ ॥

नरस्य चिह्नं नरकागतस्य विरोधिता बन्धुजनेषु नित्यम् ॥
सरोगता नीचगतेषु सेवा ह्यतीव दोषः कटुका च वाणी४९०

भाषार्थ–नरकसे आये मनुष्यके ये चिन्ह हैं कि बन्धुजनोंसे नित्य विरोध, रोगी होना, नीचकी सेवा, अतीव दोष और कटुका वाणी अर्थात् कठोर वचन बोलना ॥ ४९० ॥

देशाटनं पंडितमित्रता च वाराङ्गनाराजसभाप्रवेशः ॥
अनेकशास्त्रार्थविलोकनं च चातुर्यमूलानि भवंति पंच४९१

भाषार्थ–देशाटन, पंडितोंसे मित्रता, श्रेष्ठ स्त्री, राजसभामें प्रवेश, अनेक शास्त्रार्थ देखना ये पांच चतुरताकी जड हैं ॥ ४९१ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्थितो न खादामि हसन्न जल्पे
गतं न शोचामि कृतं न मन्ये ॥
द्वयोस्तृतीयो न भवामि राजन् !
केनास्मि मूर्खो वद कारणेन ॥ ४९२ ॥

भाषार्थ–बैठे बैठे नहीं खाता हूं, हँसते हुये बात नहीं करता हूं, नष्टहुयेको न शोचता हूं, और न कियेको मानता हूं अर्थात् जिसके साथ उपकार किया, उसको भूल जाता हूं, दोके बीच तीसरा. नहीं हुवा हूं तो किस कारण मैं मूर्ख हूं सो कहिये ॥ ४९२ ॥

अतिप्रचण्डा बहुदुःखभागिनी
विवादशीला परगेहगामिनी ॥
भर्तुः स्वयं निन्दति या च तस्करी
त्यजेत्स्वाभर्यां दशपुत्रपुत्रिणीम् ॥ ४९३ ॥

भाषार्थ–अति तीक्ष्ण स्वभाववाली, बहु दुःख देनेवाली, विवाद करनेवाली, पराये घर जानेवाली, अपने पतिकी निन्दा करनेवाली और चुट्टी ऐसी अपनी स्त्री दशपुत्रवाली हो तोभी उसका त्याग करै ॥ ४९३ ॥

कुग्रामवासः कुजनस्य सेवा कुभोजनं क्रोधमुखी च भार्या॥
मूर्खश्च पुत्रो विधवा च कन्या विनाग्निना संदहते शरीरम्॥

भाषार्थ–खोटे गांवमें वास, खोटे मनुष्यकी सेवा, कुभोजन (विना स्वादका भोजन), क्रोधमुखवाली स्त्री, मूर्ख पुत्र और विधवा कन्या ये विना अग्निकेही मनुष्यके शरीरको जलाते हैं ॥ ४९४ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पतिव्रतायाः कुचकुंभयुग्ममत्युग्रशार्दूलनखावलिश्च ॥
वीरस्य शस्त्रं कृपणस्य वित्तं लभ्यानि चत्वारि तदन्तकाले॥

भाषार्थ-पतिव्रताके दोनौं कुचकलश, बहुत ऊंचे व्याघ्रके नख, वीरपुरुषका शस्त्र, कृपण मनुष्यका धन ये चारौं उनके अन्तकालमें (मर जानेपर) मिल सकते हैं; जीतेपर नहीं ॥ ४९५ ॥

ये शान्तदान्ताः श्रुतिपूर्णकर्णा
जितेन्द्रियाः स्त्रीविषये निवृत्ताः ॥
प्रतिग्रहे संकुचिताग्रहस्ता-
स्ते ब्राह्मणास्तारयितुं समर्थाः ॥ ४९६ ॥

भाषार्थ-जो शान्त-चित्तवाले हैं, जो मनको रोके रहते हैं, जिनके कान वेदमंत्रोंसे परिपूर्ण हैं, जो जितेन्द्रिय हैं, स्त्रीविषयसे जो पृथक रहते हैं, जिनके हाथ दान लेनेमें सिकुडे रहते हैं अर्थात् जो दान नहीं लेते हैं ऐसे ब्राह्मण संसारसागरसे पार कर देनेको समर्थ हैं ॥ ४९६ ॥

शुष्केन्धने वह्निरुपैति वृद्धिं
बालेषु शोकश्च चलेषु कोपः ॥
कान्तासु कामो निपुणेषु वित्तं
धर्मो दयावत्सु महत्सु धैर्यम् ॥ ४९७ ॥

भाषार्थ-सूखे इंधनमें अग्नि बढ जाती है, बालकोंमें शोक और चपल (चंचल) मनुष्योंमें कोप वृद्धिको प्राप्त हो जाता है, तथा स्त्री-जनोंमें काम और प्रवीण मनुष्योंमें धन, दयावानोंमें धर्म और महात्माओंमें धैर्य वृद्धिको प्राप्त हो जाता है ॥ ४९७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

संपूर्णकुंभो न करोति शब्दमर्धो घटो घोषमुपैति नूनम् ॥
विद्वान्कुलीनो न करोति गर्वं गुणैर्विहीना बहु जल्पयंति ॥

भाषार्थ-जलसे भरा हुआ घडा शब्द नहीं करता, आधा घडा अवश्य शब्द करता है. कुलीन विद्वान् गर्व (अभिमान) नहीं करते और गुणहीन मनुष्य बहुत बातचीत किया करते हैं ॥ ४९८ ॥

अनन्तपारं किलं शब्दशास्त्रं स्वल्पं तथायुर्बहवश्च विघ्नाः ॥
सारं ततो ग्राह्यमपास्य फल्गु हंसैर्यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात् ॥

भाषार्थ-शब्दशास्त्र अनन्त है और अपार है, आयु अल्प (थोडी) है, विघ्न बहुत हैं. इस कारण, बुद्धिमान्को उचित है कि-निःसारका त्याग कर सारका ग्रहण करै. जैसे, हंस जलमेंसे दूधका ग्रहण कर लेते हैं ॥ ४९९ ॥

अनेकशास्त्रं बहु वेदितव्यमल्पश्च कालो बहवश्च विघ्नाः ॥
यत्सारभूतं तदुपासितव्यं हंसैर्यथा क्षीरमिवाम्बुमध्यात् ५००

भाषार्थ-बहुत जानने योग्य शास्त्र अनेक हैं, समय थोडा है और विघ्न बहुत हैं. इस कारण, बुद्धिमान्को उचित है कि-जो सारभूत है, उसकी उपासना करै. जैसे, हंस जलमेंसे दूधका ग्रहण कर लेते हैं ५००

यथा विहंगास्तरुमाश्रयन्ति नद्यो यथा सागरमाश्रयंति ॥
यथा तरुण्यः पतिमाश्रयन्ति सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ति ॥

भाषार्थ-जिस प्रकार पक्षीगण वृक्षका आश्रय लेते हैं, जैसे नदियां समुद्रका आश्रय लेती हैं और जैसे स्त्रियां पतिका आश्रय लेती हैं, इसीप्रकार सबगुण कांचन (धन) के आश्रयपर हैं ॥ ५०१ ॥

वरं सखे ! सत्पुरुषापमानितो न नीचसंसर्गगुणैरलंकृतः ॥
वराश्वपादेन हतो विराजते न रासभस्योपरि संस्थितो नरः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—हे सखे ! सत्पुरुषसे अपमानित पुरुष अच्छा, परन्तु नीचके संसर्गमें गुणोंसे अलंकृत पुरुष अच्छा नहीं. जैसे, घोडाके चरणघातसे मरना अच्छा है, परंतु गधेपर बैठा मनुष्य अच्छा नहीं ॥ ५०२ ॥

न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा
वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम् ॥
धर्मो न वै यत्र च नास्तिसत्यं
सत्यं न तद्यच्छलेनानुविद्धम् ॥ ५०३ ॥

भाषार्थ—वह सभा नहीं है, जिसमें वृद्ध जन नहीं हैं; वे वृद्ध नहीं हैं, जो धर्मोपदेश नहीं करते हैं; वह धर्म नहीं है, जिसमें सत्य न हो; और वह सत्य नहीं है, जो छलसे युक्त हो ॥ ५०२ ॥

निर्वाणदीपे किमु तैलदानं? चौरे गते वा किमु सावधानम् ? ॥
वयो गते किं वनिताविलासः ? पयो गते किं खलु सेतुबंधः?

भाषार्थ—दीपका शान्त हो जानेपर तैल डालनेसे क्या और चोर भाग जानेपर सावधान होनेसे क्या ? अवस्था गत हो जानेपर स्त्रीके विलाससे क्या और जल सूख जानेपर नदीमें पुल बांधनेसे क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है ? ॥ ५०४ ॥

यती व्रती चापि पतिव्रताश्च वीराश्च शूराश्च दयापराश्च ॥
त्यागी च भोगी च बहुश्रुतश्च सुसङ्गमात्रेण दहन्ति पापम् ॥

भाषार्थ—यती, व्रती, पतिव्रता, वीर, शूर, दयालु पुरुष, त्यागी, भोगी और पंडित ये सुसंगमात्रसे पापको दूर करते हैं ॥ ५०५ ॥

धनेन किं ? यो न ददाति याचके ।
बलेन किं ? यश्च रिपून्न बाधते ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्रुतेन किं ? यो न च धर्ममाचरे-।
त्किमात्मना ? यो न जितेन्द्रियो भवेत् ॥५०६॥

भाषार्थ-उस धनसे क्या ? जो याचकको नहीं देता है. उस बलसे क्या ? जो शत्रुवोंको बाधा नहीं पहुंचाता है. उस सुननेसे क्या ? जो धर्म नहीं करता है, उस आत्मासे क्या ? जो जितेन्द्रिय नहीं है ५०६

कुदेशमासाद्य कुतोऽर्थसंचयः ? ।
कुपुत्रमासाद्य कुतो जलाञ्जलिः ? ॥
कुगेहिनीं प्राप्य गृहे कुतः सुखं ? ।
कुशिष्यमध्यापयतः कुतो यशः ? ॥ ५०७ ॥

भाषार्थ-कुदेशमें रहकर धनसंचय कहां अर्थात् खोटे देशमें रहनेसे कोई धन इकट्ठा नहीं कर सकता है और कुपुत्र पाकर जलांजलि कहां ? दुष्टस्त्रीको प्राप्त होकर घरमें सुख कहां ? कुशिष्यको पढानेसे यश कहां ? ॥ ५०७ ॥

विना गोरसं को रसो भोजनानां ? ।
विना गोरसं को रसो भूपतीनाम् ? ॥
विना गोरसं को रसः कामिनीनां ? ॥
विना गोरसं को रसः पंडितानाम् ॥ ५०८ ॥

भाषार्थ-विना गोरस भोजनोंमें कौन रस और विना गोरस राजावोंमें कौन रस ? विना गोरस स्त्रियोंमें क्या रस ? तथा विना गोरस पंडितोंमें कौन रस ? ॥ ५०८ ॥

---

१ बहुतेरे लोग ऐसे हैं कि पहले पढते हैं, पीछेसे उसी गुरुकी निंदा करने लगते हैं ! हमने ऐसेभी कई लोगोंको पढाया है कि-जो हमारी निंदा करने लगते हैं !

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्रुतेन बुद्धिर्व्यसनेन मूर्खता मदेन नारी सलिलेन निम्नगा॥
निशा शशाङ्केन धृतिः समाधिना नयेन चालंक्रियते नरेन्द्रता

भाषार्थ-शास्त्र सुननेसे बुद्धि बढ जाती है, व्यसनसे मूर्खता बढ जाती है, मद (उन्मत्तता) से स्त्री, और जलसे नदियां अलंकृत हो जाती हैं, चंद्रमासे रात्रि और समाधिसे धृति सुशोभित हो जाती है. एवं नम्रतासे प्रभुत्व विभूषित हो जाता है ॥ ५०९ ॥

वैद्या वदन्ति कफपित्तमरुद्विकारा-
ञ्ज्योतिर्विदो ग्रहगतिं परिवर्तयन्ति ॥
भूताभिषङ्ग इति भूतविदो वदन्ति
प्राचीन कर्म बलवन्मुनयो वदन्ति ॥ ५१० ॥

भाषार्थ-वैद्यलोग कफ-पित्त-वात-विकारसे पीडा बतलाते हैं, ज्योतिषी पंडित ग्रहोंकी गतिको बतलाते हैं, भूतविद् लोग भूतबाधा बतलाते हैं, 'प्राचीन कर्म बलवान् है' ऐसा मुनिजन कथन करते हैं ॥ ५१० ॥

सतीमपि ज्ञातिकुलैकसंश्रयां जनोऽन्यथा भर्तृमतीं विशङ्कते
अतः समीपे परिणेतुरिष्यते प्रियाप्रिया वा प्रमदा स्वबंधुभिः

भाषार्थ-ज्ञाति और कुलकेही आश्रय रहनेवाली ऐसी पतिवाली पतिव्रतापरभी लोग अन्यथा शंका करने लगते हैं, इसकारण कन्याके बन्धुजन प्रिया अथवा अप्रिया उस कन्याके उसके पतिको समीप रहनेकी इच्छा करते हैं ॥ ५११ ॥

सुजीर्णमन्नं सुविचक्षणः सुतः
सुशासिता स्त्री नृपतिः सुसेवितः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सुचिन्त्य चोक्तं सुविचार्य यत्कृतं
सुदीर्घकालेऽपि न याति विक्रियाम् ५१२

भाषार्थ-पचाहुवा अन्न, परम विद्वान् पुत्र, सुशिक्षित स्त्री, भलीभांति सेवा किया हुवा राजा, बहुत सोचकर कहा हुवा वचन और विचारकर किया हुवा कार्य ये बहुत समय व्यतीत हो जानेपरभी विक्रिया (विकारभाव) को प्राप्त नहीं होते हैं॥ ५१२॥

निमित्तमुद्दिश्य हि यः प्रकुप्यति
ध्रुवं स तस्यापगमे प्रसीदति॥
अकारणद्वेषि मनस्तु यस्य वै
कथं जनस्तं परितोषयिष्यति ?॥ ५१३॥

भाषार्थ-जो मनुष्य किसी निमित्तको उद्देश्य बनाकर क्रोध करता है, वह उस निमित्तको दूर कर देनेसे अवश्य प्रसन्न हो सकता है. परन्तु जो मनुष्य विनाकारण द्वेष करने लगता है, उसको मनुष्य कैसे प्रसन्न कर सकता है ?॥ ५१३॥

वनेषु दोषाः प्रभवन्ति रागिणं
गृहेषु पंचेन्द्रियनिग्रहस्तपः॥
अकुत्सिते कर्मणि यः प्रवर्तते
निवृत्तरागस्य गृहं तपोवनम्॥ ५१४॥

भाषार्थ-जिनके हृदयमें सांसारिक पदार्थोंका अनुराग है, उन मनुष्योंको वनमेंभी दोष आ घेरते हैं. पांचौं कर्मइन्द्रियको रोकनेवाला घरमेंभी तप कर सकता है. जो अनिन्दित (शुभ) कर्ममें प्रवृत्त है, उस निवृत्तरागवाले पुरुषको घरही तपोवन है. सारांश यह कि

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सांसारिक विषयोंमें लगे हुयेको वनमेंभी वही दोष हैं और इन्द्रियोंको जिसने जीत लिया है वह घरमेंभी तप कर सकता है ॥ ५१४ ॥

मनीषिणः सन्ति न ते हितैषिणो
हितैषिणः सन्ति न ते मनीषिणः ॥
सुहृच्च विद्वानपि दुर्लभो नृणां
यथौषधं स्वादु हितं च दुर्लभम् ॥ ५१५ ॥

भाषार्थ–जो विद्वान् हैं वे हितैषी नहीं हैं और जो हितैषी हैं वे विद्वान् नहीं है, विद्वान् मित्रभी मनुष्योंको दुर्लभ है. जैसे, स्वादु और हितकारी औषध दुर्लभ है अर्थात् जो औषध स्वादु है वह हितकारी नहीं है और जो हितकारी है वह स्वादु नहीं है ॥ ५१५ ॥

तृणानि नोन्मूलयति प्रभञ्जनो
मृदूनि नीचैः प्रणतानि सर्वतः ॥
समुच्छ्रितानेव तरून्प्रबाधते
महान्महत्स्वेव करोति विक्रमम् ॥ ५१६ ॥

भाषार्थ–प्रबल वायु चारों ओरसे झुके हुये कोमल तृणोंको नहीं उखाडती. किन्तु ऊंचे वृक्षोंकोही उखाडती है. बडा बडोंपरही अपना बल प्रकाश करता है ॥ ५१६ ॥

यथा चतुर्भिः कनकं परीक्ष्यते निर्घर्षणाच्छेदनतापताडनैः ॥
तथा चतुर्भिः पुरुषः परीक्ष्यते श्रुतेन शीलेन कुलेन कर्मणा ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार कसौटीपर घिसने, छेनीद्वारा काटने, अग्निपर तपाने और हथौडोंसे पीटने इन चारसाधनोंसे सुवर्णकी परीक्षा की

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जाती है, इसी प्रकार शास्त्रश्रवण, उत्तमस्वभाव, कुल और सत्कर्म इन चार साधनोंसे पुरुषकी परीक्षा होती है ॥ ५१७ ॥

विवादशीलां स्वयमर्थचारिणीं ।
परानुकूलां बहुपाकपाकिनीम् ॥
सक्रोधिनीं चान्यगृहेषु वासिनीं ।
त्यजन्ति भार्य्यां दशपुत्रमातरम् ॥ ५१८ ॥

भावार्थ–विवाद करनेवाली, अपनाही धन चुरानेवाली, पराये अनुकूल रहनेवाली, बहुत पाक (भोजनपदार्थ) बनानेवाली, क्रोध करनेवाली, दूसरेके घरमें रहनेवाली स्त्रीका श्रेष्ठ पुरुष त्याग करते हैं, चाहे वह दशपुत्रोंकी माताही क्यों न हो ॥ ५१८ ॥

मात्रा समं नास्ति शरीरपोषणं ।
चिन्तासमं नास्ति शरीरशोषणम् ॥
भार्यासमं नास्ति शरीरतोषणं ।
विद्यासमं नास्ति शरीरभूषणम् ॥ ५१९ ॥

भावार्थ–माताके समान शरीरको पालनेवाला, चिन्ताके समान शरीरको सुखानेवाला, स्त्रीके समान शरीरको प्रसन्न करनेवाला दूसरा कोई नहीं है. तथा विद्याके समान शरीरका भूषण दूसरा नहीं है ॥५१९॥

स दीक्षितो यः सकलं सदीक्षते
स पंडितो यः करणैरखंडितः ॥
स तापसो यः परतापकर्षणः
स धार्मिको यः परमर्म न स्पृशेत् ॥ ५२० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–वही दीक्षित (दीक्षामंत्र देनेवाला) है, जो सबको उत्तम दृष्टिसे देखता है; वही पंडित है, जो जितेन्द्रिय है; वही तपस्वी है, जो पराये दुःखको दूर करनेवाला है; वही धर्मात्मा है जो पराये मर्म स्पर्श नहीं करता है ॥ ५२० ॥

गुणी गुणं वेत्ति न वेत्ति निर्गुणो
बली बलं वेत्ति न वेत्ति निर्बलः ॥
पिको वसन्तस्य गुणं न वायसः
करी च सिंहस्य बलं न मूषकः ॥ ५२१ ॥

भाषार्थ–गुणी पुरुष गुणको जानता है; गुणहीन नहीं जानता. बली पुरुष बलको जानता है; निर्बल नहीं जानता. कोयलही वसन्त-ऋतुके गुणको जानती है; कौवा नहीं जानता और हाथीही सिंहके बलको जानता है; मूषक (चूहा) नहीं जानता ॥ ५२१ ॥

शिशुरपि निपुणो गुरोर्गरीयान्न तु वपुषैव महान्महाप्रतिष्ठः ॥
मणिरणुरपि भूषणाय पुंसां न तु पृथुलैव शिला विलासहेतुः

भाषार्थ–निपुण बालकभी बडोंका बडा है- क्योंकि, शरीरसे कोईभी बडोंमें महान् प्रतिष्ठा नहीं पा सकता. देखो, छोटासा मणिभी मनुष्योंके भूषणार्थ होता है, परन्तु मोटी शिलाभी विलासका हेतु नहीं बन सकती है ॥ ५२२ ॥

कुले कलंकः कवले कदन्नता
सुतः कुबुद्धिर्भवने दरिद्रता ॥
रुजः शरीरे कलहप्रिया प्रिया
गृहागमे दुर्गतयः षडैते ॥ ५२३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-कुलमें कलंक, सूखे रूखे अन्नका ग्रास, दुष्टबुद्धिवाला पुत्र और घरमें दरिद्रता, शरीरमें रोग, कलहप्रिया (कलह करनेवाली) स्त्री ये छे गृहस्थआश्रममें दुर्गति हैं ॥ ५२३ ॥

जरा रूपं हरति हि धैर्यमाशा
मृत्युः प्राणान्धर्मचर्यामसूया ॥
कामो ह्रियं वृत्तिमनार्यसेवा
क्रोधः श्रियं सर्वमेवाभिमानः ॥ ५२४ ॥

भाषार्थ-जरा (वृद्धावस्था) रूपको हर लेती है, और आशा धीरजको हर लेती है, मृत्यु प्राणोंको हर लेती है और निन्दा धर्मचर्याको हर लेती है, तथा काम लज्जाको हर लेता है, नीचसेवा वृत्तिको हर लेती है, क्रोध धनको अथवा शोभाको हर लेता है; अभिमान सब कुछ हर लेता है ॥ ५२४ ॥

मतिरेव बलाद्गरीयसी यदभावे करिणामियं दशा ॥
इति घोषयतीव डिण्डिमः करिणे हस्तिपकाहतः क्वणन् ५२५

भाषार्थ-बुद्धिही बलसे बडी है, उसके अभावमें अर्थात् बुद्धि न होनेसेही हाथियोंकी यह दशा हो रही है. हाथीवान्से ताडन किया हुवा हाथीका घंटा मानों यह घोषण करता है ! ॥ ५२५ ॥

कनकभूषणसंग्रहणोचितो यदि मणिस्त्रपुणि प्रणिधीयते ॥
न स विरौति न चापि हि शोभते भवति योजयतुर्वचनीयता ॥

भाषार्थ-सुवर्णके आभूषणमें लगाने योग्य मणिको यदि कोई मनुष्य रांगके आभूषणमें लगावे तो वह मणि रोने नहीं लगती है और

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न अच्छी लगती है. किन्तु लगानेवालेको लोग कहने लगते हैं कि-' यह अच्छा नहीं किया ' ॥ ५२६ ॥

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम् ॥
वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः ५२७

भाषार्थ-किसी कामको सहसा नहीं करै. क्योंकि, अविवेक महाआपत्तियोंका स्थान है. विचार कर कार्य करनेवालेको गुणसे प्राप्त होनेवाली सम्पदायें स्वयंही वर लेती हैं. सारांश यह कि-विचार कर काम किया जाय तो सम्पदायें प्राप्त होती हैं और विना विचारे जो काम किया जाता है उसमें आपत्तिका भय रहता है ॥ ५२७ ॥

सुकुलजन्म विभूतिरनेकधा
प्रियसमागमसौख्यपरंपरा ॥
नृपकुले गुरुता विमलं यशो
भवति पुण्यतरोः फलमीदृशम् ॥ ५२८ ॥

भाषार्थ-उत्तमकुलमें जन्म, अनेक प्रकारका ऐश्वर्य, मित्रका समागम, नित्य सुख, राजकुलमें बडाई और निर्मल यश ये पुण्यरूपी वृक्षके फल हैं ॥ ५२८ ॥

महतस्तरसा विलंघयन्निजदोषेण कुधीर्विनश्यति ॥
कुरुते न खलु स्वयेच्छया शलभानिन्धनमिद्धदीधितिः ५२९

भाषार्थ-मन्दमति मनुष्य वेगसे बडोंका उल्लंघन करता हुवा अपनेही दोषसे नष्ट हो जाता है; देखो, दीपक अपनी इच्छासे टीडियोंको इन्धन नहीं करता ॥ ६२९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कृतिनामकृती कथं कथं वा तुलनां यातु कृतैर्वचःप्रपंचैः ॥
बहुभिर्विधृतैः कचैः कलापैर्विधवा किं सधवोपमानमेति? ३०

भाषार्थ–पापीजन अपनी वाणीके प्रपंचोंकरके पुण्यवानोंके समान कैसे हो सकते हैं ? बहुतसे बढाये हुये केशोंको धारण करके विधवा स्त्री क्या सौभाग्यवती स्त्रीकी उपमाको प्राप्त हो सकती है ? ॥ ९३०॥

स्तब्धस्य नश्यति यशो विषमस्य मैत्री
नष्टक्रियस्य कुलमर्थपरस्य धर्मः ॥
विद्याफलं व्यसनिनः कृपणस्य सौख्यं
राज्यं प्रमत्तसचिवस्य नराधिपस्य ॥५३१॥

भाषार्थ–मूर्ख मनुष्यका यश नष्ट हो जाता है, कठोर चित्तवाले पुरुषकी मैत्री नष्ट हो जाती है, दुष्टकर्म करनेवालेका कुल नष्ट हो जाता है, लोभीका धर्म नष्ट हो जाता है, व्यसनी पुरुषका विद्याफल नष्ट हो जाता है, कृपण (कंजूस) का सुख नष्ट हो जाता है, मदसे अन्धे मंत्रीवाले राजाका राज्य नष्ट हो जाता है ॥ ९३१ ॥

वित्तेन किं ? वितरणं यदि नास्ति दीने
किं सेवया ? यदि परोपकृतौ न यत्नः ॥
किं संगमेन ? तनयो यदि नेक्षणीयः
किं यौवनेन ? विरहो यदि वल्लभायाः ॥५३२॥

भाषार्थ–उस धनसे क्या? जो दीन जनोंको नहीं दिया गया. उस सेवासे क्या? जो परोपकारमें यत्न नहीं किया. उस स्त्रीसंगमसे क्या ? जो पुत्र देखनेमें नहीं आया. उस यौवनसे क्या ? जो प्यारी स्त्रीसे वियोग रहा. अर्थात् ये सब वृथा हैं. यदि उक्त कार्य इनसे न हुये ॥९३२॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दुर्मन्त्रिणं कमुपयान्ति न नीतिदोषाः ?
संतापयन्ति कमपथ्यभुजं न रोगाः ? ॥
कं श्रीर्न दर्पयति कं न निहन्ति मृत्युः ?
कं स्वीकृता न विषया ननु तापयन्ति ? ५३३

भाषार्थ-किस खोटे मंत्रीको नीतिदोष नहीं आ घेरते हैं ? रोग किस अपथ्यवाले रोगीको अति पीडित नहीं करते हैं ? धन किसको अभिमानी नहीं बनाता और मृत्यु किसको नहीं मारती ? अंगीकार किये हुये विषय किसको दुःख नहीं पहुंचाते हैं ॥ ५३३ ॥

शस्त्रैर्हतास्तु रिपवो न हता भवन्ति
प्रज्ञाहताश्च नितरां सुहता भवन्ति ॥
शस्त्रं निहन्ति पुरुषस्य शरीरमेकं
प्रज्ञा कुलं च विभवं च यशश्च हन्ति ॥५३४॥

भाषार्थ-शस्त्र (हथियार) से मरे हुये शत्रु नष्ट नहीं होते हैं, बुद्धिसे मरे हुये शत्रु अवश्यमेव नष्ट हो जाते हैं. शस्त्र मारनेसे शत्रु-वोंके केवल शरीरही नष्ट होते हैं और बुद्धिसे तो उनका कुल, विभव और यश ये सब नष्ट हो जाते हैं ॥ ५३४ ॥

आदौ न वा प्रणयिना प्रणयो विधेयो
दत्तोऽथवा प्रतिदिनं परिपोषणीयः ॥
उत्क्षिप्य यत्क्षिपति तत्प्रकरोति लज्जां
भूमौ स्थितस्य पतनाद्भयमेव नास्ति५३५॥

भाषार्थ-प्रथम तो प्रेमीको प्रेम करनाही न चाहिये, अथवा यदि

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

प्रेम हो जाय तो, प्रतिदिन उसका निर्वाह करै. जो उठाकर छोड देता है अर्थात् प्रेम करके त्याग कर देता है तो बडे लज्जाकी बात है. क्योंकि भूमिपर बैठे हुयेको गिरनेका भयही नहीं है ॥ ५३५ ॥

अर्था हसन्त्युचितदानविहीनलुब्धं
भूम्यो हसन्ति मम भूमिरिति ब्रुवाणम् ॥
जारा हसन्ति तनयानुपलालयन्तं
मृत्युर्हसन्त्यवनिपं रणरङ्गभीरुम् ॥५३६॥

भाषार्थ–धन, उचितसमयपर दान न देनेवालेको हँसता है, 'भूमि मेरी है' यह कहनेवालेको भूमि हँसती है, अपनी संतानको प्यार करते हुये देखकर जारलोग हँसते हैं, मृत्यु उस राजाको हँसती है, जो रणभूमिमें जानेसे अथवा युद्ध करनेसे डरता है ॥ ५३६ ॥

हंसो विभाति नलिनीदलपुञ्जमध्ये
सिंहो विभाति गिरिगह्वरकन्दरासु ॥
जात्यो विभाति तुरगो रणयुद्धमध्ये
विद्वान् विभाति पुरुषेषु विचक्षणेषु॥५३७॥

भाषार्थ–कमलके फूलोंके मध्यमें हंस शोभा पाता है और सिंह पर्वतोंकी गहरी गुफाओंमें शोभाको प्राप्त होता है तथा असली घोडा युद्धभूमिमें शोभा पाता है और विद्वान् पुरुष विद्वानोंमेंही शोभाको प्राप्त होता है ॥ ६३७ ॥

हंसो न भाति बलिभोजनवृन्दमध्ये
गोमायुमण्डलगतो न विभाति सिंहः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जात्यो न भाति तुरगः खरयूथमध्ये
विद्वान्न भाति पुरुषेषु निरक्षरेषु ॥५३८॥

भाषार्थ–कोवोंके बीचमें हंसकी शोभा नहीं है, और गीदडोंके बीच सिंहकी शोभा नहीं है, असली घोडा गदहोंके बीच शोभा नहीं पाता है, तथा विद्वान् पुरुष मूर्खमनुष्योंके बीच शोभाको प्राप्त नहीं होता है ॥ ५३८ ॥

शास्त्रं सुनिश्चलधिया परिचिन्तनीयं
सेव्यो नृपोऽपि सततं परिसेवनीयः ॥
अङ्के स्थिताऽपि युवतिः परिरक्षणीया
शास्त्रे नृपे च युवतौ च कुतः स्थिरत्वम्? ॥५३९॥

भाषार्थ–स्थिरबुद्धिसे शास्त्रको विचारै, सेवनयोग्य राजाकीभी निरन्तर सेवा करै, अंकमें स्थित स्त्रीकीभी रक्षा करनी चाहिये. क्योंकि-शास्त्रमें, राजामें और स्त्रीमें स्थिरता कहाँ है? ॥ ५३९ ॥

नीचं समृद्धमपि सेवति नीच एव
तं दूरतः परिहरन्ति पुनर्महान्तः ॥
शाखोटकं मधुरपक्कफलैरुपेतं
सेवन्ति वायसगणा न तु राजहंसाः ॥५४०॥

भाषार्थ–जो नीचजन समृद्धशाली होता है, उसकी नीचपुरुषही सेवा करते हैं. बडे मनुष्य उसका दूरसेही त्याग करते हैं. मीठे और पके फलोंसे युक्त वृक्षकी सेवा कौवेही करते हैं: राजहंस नहीं करते हैं ॥ ५४० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

किं कोकिलस्य विरुतेन गते वसन्ते ?
किं कातरस्य बहुशस्त्रपरिग्रहेण ? ॥
मित्रेण किं ? व्यसनकालपराङ्मुखेन
किं जीवितेन ? पुरुषस्य निरक्षरेण ॥ ५४१ ॥

भाषार्थ–वसन्तऋतुके व्यतीत हो जानेपर कोयलके शब्दसे क्या ? कायरमनुष्यके बहुत शस्त्र बांधनेसे क्या ? दुःखका समय जब जाता रहा तब आये हुये उस विमुख मित्रसे क्या ? तथा मूर्ख मनुष्यके जीवनसे क्या काम बन सकता है ? ॥ ५४१ ॥

विद्यातीर्थे जगति विबुधाः साधवः सत्यतीर्थे ।
गंगातीर्थे मलिनमनसो योगिनो ध्यानतीर्थे ॥
धारातीर्थे धरणिपतयो दानतीर्थे धनाढ्या ।
लज्जातीर्थे कुलयुवतयः पातकं क्षालयन्ति ॥५४२॥

भाषार्थ–संसारमें बुधजन विद्यातीर्थमें, साधुजन सत्यतीर्थमें, मलीनमनवाले मनुष्य गंगातीर्थमें, योगीजन ध्यानतीर्थमें, राजा लोग धारातीर्थमें, धनवान् लोग दानतीर्थमें, कुलवंती स्त्रियां लज्जातीर्थमें पातकको दूर करै हैं ॥ ५४२ ॥

वरं मौनं कार्यं न च वचनमुक्तं यदनृतं ।
वरं क्लैब्यं पुंसां न च परकलत्राभिगमनम् ॥
वरं प्राणत्यागो न च पिशुनवाक्येष्वभिरुचि- ।
र्वरं भिक्षाशित्वं न च परधनास्वादनसुखम् ॥५४३॥

भाषार्थ–मौन हो जाना अच्छा है, परन्तु ऐसा वचन न कहे जो

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

असत्य हो. नपुंसक होना अच्छा है, परंतु पराई स्त्रीसे रमण करना नहीं अच्छा. प्राणत्याग करना अच्छा है, परन्तु निन्दक पुरुषोंके वचनोंमें प्रीति करना नहीं अच्छा. भिक्षा मांगकर खाना अच्छा है, परन्तु पराये धनका स्वाद लेना नहीं अच्छा ॥ ५४३ ॥

यच्चिन्तितं तदिह दूरतरं प्रयाति
यच्चेतसाऽपि न कृतं तदिहाभ्युपैति ॥
इत्थं विधेर्विधिविपर्ययमाकलय्य
सन्तः सदा सुरसरित्तटमाश्रयन्ति ॥ ५४४ ॥

भाषार्थ–इस जगत्में जिसका चिन्तवन किया जाता है, वह बहुत दूर चला जाता है और जिसका विचार मनसेभी नहीं किया है, वह प्राप्त हो जाता है. इसप्रकार देवका विपरीत विधान समझकर, सन्तजन सदैव गंगातटका आश्रय लेते हैं ॥ ५४४ ॥

उचितमनुचितं वा कुर्वता कार्यमादौ
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन ॥
अतिरभसकृतानां कर्मणामाविपते-
र्भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः ॥५४५॥

भाषार्थ–उचित अथवा अनुचित कोईभी कार्य हो, पंडितजनको प्रथम उसका परिणाम यत्नपूर्वक जान लेना चाहिये और उसपर ध्यान रखना चाहिये. क्योंकि, जिन कार्योंके करनेमें अतिशीघ्रता की जाती है, उनका फल विपत्तिपर्यन्त शल्यके तुल्य हृदयदाही (हृदयको जलानेवाला) होता है ॥ ५४५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

प्राप्ताः श्रियः सकलकामदुघास्ततः किं ?
दत्तं पदं शिरसि विद्विषतां ततः किम् ? ॥
संप्रीणिताः प्रणयिनी विभवैस्ततः किं ?
कल्पं स्थितं तनुभृतां तनुभिस्ततः किम् ५४६

भावार्थ—सब कामनाओंको पूर्ण करनेवाली सम्पत्तियां प्राप्त हुईं तो क्या और शत्रुवोंके शिरपर पांव रक्खा तो क्या ? तथा अपने विभवसे प्रेमीलोगोंका सत्कार किया तो क्या और देहधारियोंका शरीर कल्पपर्यन्त रहा तो क्या ? सारांश यह कि—यदि परोपकार आदि सद्धर्म न किया तो, यह सब वृथा है ॥ ५४६ ॥

प्रथमदिवसचन्द्रः सर्वलोकैकवन्द्यः
स च सकलकलाभिः पूर्णचन्द्रो न वन्द्यः ॥
अतिपरिचयदोषात्कस्य नो मानहानि ?-
र्नवनवगुणरागी प्रायशः सर्वलोकः ॥५४७॥

भावार्थ—प्रथमदिन (शुक्लद्वितीया) के चन्द्र की वंदना सबलोग करते हैं और उसी संपूर्ण कलावोंसे पूर्ण (पूर्णिमाके दिन) चन्द्रमाकी वन्दना कोई नहीं करता. अतिपरिचय (अधिक पहचान) हो जानेके दोषसे किसकी मानहानि नहीं हो जाती है ? प्रायः देखा जाता है कि 'सबलोग नवीन नवीन गुणोंमें प्रेम करते हैं ' ॥ ५४७ ॥

कलारत्नं गीतं गगनतलरत्नं दिनमणिः
सभारत्नं विद्वान् श्रवणपुटरत्नं हरिकथा ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

निशारत्नं चन्द्रः शयनतलरत्नं शशिमुखी
महीरत्नं श्रीमान् जयति रघुनाथो नृपवरः ॥

भाषार्थ–कलावोंमें रत्न गीत (गानविद्या) है, आकाशका रत्न सूर्य है, सभाका रत्न विद्वान्, कानोंका रत्न हरिकथा, रात्रिका रत्न चन्द्रमा, शय्याका रत्न सुदरी स्त्री है, तथा पृथिवीका रत्न राजावोंमें श्रेष्ठ जयशील श्रीमान् रामचन्द्रजी हैं ॥ ५४८ ॥

वक्त्रे वल्गाप्रकर्षः समरभुवि तव प्राणरक्षाऽपि दैवात्
स्वेच्छाचारो न चास्ते न हि भवति तथा भारवाहो नितान्तम्
इत्युक्तोऽश्वः खरेण प्रहसितवदनो मूक एवावतस्थे
तस्माज्जात्या महान्तोऽधमजनविषये मौनमेवाश्रयन्ते ५४९

भाषार्थ–घोडेसे गदहेने कहा, कि–'आपके मुखमें तो खिंची हुई लगाम लगी है. समरभूमिमें प्राणरक्षाभी दैवयोगसेही होती है और अपनी इच्छाके अनुसार आप भ्रमणभी नहीं कर सकते हो तथा आपसे भलीभांति बोझाभी नहीं ढुलाया जाता है.' गदहेसे यह सुनकर घोडा हंसकर चुप हो रहा. इसकारण महापुरुष अधमजनके बकनेपर मौन धारण कर लेनाही उचित समझते हैं ॥ ५४९ ॥

दद्यात्साधुर्यदि निजपदे दुर्जनाय प्रवेशं
तन्नाशाय प्रभवति ततो वाञ्छमानः स्वयं सः ॥
तस्माद्देयो विमलमतिभिर्नाऽवकाशोऽधमानां
जारोऽपि स्याद्गृहपतिरिति श्रूयते वाक्यतोऽत्र ५०

भाषार्थ–साधुजन यदि अपने अधिकारमें दुर्जनको प्रविष्ट होने देगा तो वह दुर्जन स्वयं उस साधुकेहि नाशकी इच्छा करने लगता है. इसकारण

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्रेष्ठ बद्धिवालोंको उचित है कि–अधमजनोंको अपने देशमें नहीं रहने दें. क्योंकि, जारपुरुषभी घरका स्वामी बन जाता है, यह बात लोगोंसे यहां सुननेमें आई है ॥ ५५० ॥

शशी दिवसधूसरो गलितयौवना कामिनी
सरो विगतवारिजं मुखमनक्षरं स्वाकृतेः ॥
प्रभुर्धनपरायणः सततदुर्गतः सज्जनो
नृपाङ्गणगतः खलो मनसि सप्तशल्यानि मे॥५५१॥

भाषार्थ–दिनमें धुंधला चन्द्रमा, ढले यौवनवाली स्त्री, विना कमल फूलोंका सरोवर, सुन्दर आकृतिवाले मूर्खका मुख, धनवान् स्वामी और निर्धनी सज्जन तथा राजमन्दिरमें रहनेवाला दुर्जन ये सात मेरे मनमें बाण हैं ॥ ५५१ ॥

वरं शून्या शाला न च खलु वरो दुष्टवृषभो
वरं वेश्यापत्नी न पुनरविनीता कुलवधूः ॥
वरं वासोऽरण्ये न पुनरविवेकाधिपपुरे
वरं प्राणत्यागो न पुनरधमानामुपगमः ॥ ५५२ ॥

भाषार्थ–शून्य शाला (गोष्ठ) अच्छी, परन्तु दुष्ट बैल नहीं अच्छा. वेश्या पत्नी अच्छी, परन्तु अशिक्षित कुलवधू नहीं अच्छी. वनमें वास करना अच्छा, परन्तु अज्ञानी राजाके नगरमें रहना नहीं अच्छा. प्राणत्याग कर देना अच्छा, परंतु अधमजनोंका साथ नहीं अच्छा है ॥ ५५२ ॥

मौने मौनी गुणिनि गुणवान्पंडिते पंडितोऽसौ
दीने दीनः सुखिनि सुखवान्भोगिनि प्राप्तभोगः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मूर्खे मूर्खो युवतिषु युवा वाग्मिषु प्रौढवाग्मी
धन्यः कोऽपि त्रिभुवनजयी योऽवधूतेऽवधूतः ॥५५३॥

भाषार्थ–मौन रहनेवालोंमें मौन, गुणियोंमें गुणी, पंडितोंमें पंडित, दीनोंमें दीन, सुखियोंमें सुखी, भोगियोंमें भोगी, मूर्खोंमें मूर्ख, युवतियोंमें युवा, वक्तावोंमें वक्ता, अवधूतोंमें अवधूत ऐसा त्रिभुवनविजयी जो कोई पुरुष है वह धन्य है ॥ ५५३ ॥

कलासीमा काव्यं सकलगुणसीमा वितरणं
भये सीमा मृत्युः सकलसुखसीमा सुवदना ॥
तपःसीमा मुक्तिः सकलकृतिसीमाश्रितभृतिः
प्रिये सीमाह्लादः श्रवणसुखसीमा हरिकथा॥५५४॥

भाषार्थ–कलावोंकी सीमा काव्य है, संपूर्ण गुणोंकी सीमा दान है, भयकी सीमा मृत्यु है, सबसुखोंकी सीमा स्त्री है, तपकी सीमा मुक्ति और कर्तव्यकी सीमा अपने आश्रितजनोंका पालन, तथा प्यारकी सीमा अतिप्रसन्नता है, श्रवणसुखकी सीमा हरिकथा है ॥ ५५४ ॥

मित्रं स्वच्छतया रिपुं नयबलैर्लुब्धं धनैरीश्वरं
कार्येण द्विजमादरेण युवतिं प्रेम्णा शमैर्बान्धवान् ॥
अत्युग्रं स्तुतिभिर्गुरुं प्रणतिभिर्मूर्खं कथाभिर्बुधं
विद्याभी रसिकं रसेन सकलं शीलेन कुर्याद्वशम्॥५५५॥

भाषार्थ–मित्रको स्वच्छतासे, शत्रुको विनयभावसे, लोभीको धनसे, समर्थको उसका काम कर देनेसे, द्विज (ब्राह्मणादि) को आदरसे, स्त्रीको प्रेमसे, बन्धुजनोंको शान्तिसे, अतिकठिन स्वभाववालेको स्तुतिसे, गुरूको नम्रतासे, मूर्खको कथाओंसे, पंडितको विद्यासे, रसिक-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जनको रससे और शील (उत्तमस्वभाव) से सबको अपने वशमें करै ॥ ५५५ ॥

प्रायेणात्र कुलान्वितं कुकुलजाः श्रीवल्लभं दुर्भगा
दातारं कृपणा ऋजूननृजवो वित्तान्वितं निर्धनाः ॥
वैरूप्योपहताश्च कान्तवपुषं धर्माश्रयं पापिनो
नानाशास्त्रविचक्षणं च पुरुषं निन्दन्ति मूर्खा जनाः ५५६

भावार्थ–इस जगत्में अकुलीन जन कुलीन पुरुषकी निन्दा किया करते हैं और ऐश्वर्यवाले पुरुषोंकी मन्दभाग्यवाले लोग निन्दा किया करते हैं, तथा दाताकी कृपण लोग और सीधे स्वभाववालोंकी कुटिल जन निन्दा किया करते हैं, एवं धनवानोंकी निर्धनी लोग और सुन्दर रूपवालोंकी कुरूपवाले निन्दा किया करते हैं. धर्मात्माओंकी पापी लोग, अनेकशास्त्रोंमें प्रवीण पंडितोंकी मूर्खलोग निन्दा किया करते हैं ॥ ५५६ ॥

वृक्षं क्षीणफलं त्यजन्ति विहगाः शुष्कं सरः सारसाः
निर्द्रव्यं पुरुषं त्यजन्ति गणिका भ्रष्टं नृपं मंत्रिणः ॥
पुष्पं पर्युषितं त्यजन्ति मधुपा दग्धं वनान्तं मृगाः
सर्वे कार्यवशाज्जनोऽभिरमते तत्कस्य को वल्लभः ?५५७

भावार्थ–फलहीन वृक्षको पक्षीगण त्याग देते हैं, सूखे सरोवरको सारस पक्षी और धनहीन पुरुषको वेश्या, भ्रष्टराजाको मंत्री लोग त्याग देते हैं, सूखे और गन्धहीन फूलको भौंरे और दग्धवनको हिरण त्याग देते हैं. सब लोग अपने कार्यके लिये दूसरोंपर रममाण होते हैं. एसी स्थिथिमें कौन किसका प्यारा है ? ॥ ५५७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सिंहो व्याकरणस्य कर्तुरहरत्प्राणान्प्रियान्पाणिने-
र्मीमांसाकृतमुन्मनाथ सहसा हस्ती मुनिं जैमिनिम् ॥
छन्दोज्ञाननिधिं जघान मकरो वेलातटे पिङ्गल-
मज्ञानावृतचेतसामतिरुषां कोऽर्थस्तिरश्चां गुणैः? ५६८

भाषार्थ–व्याकरणके कर्ता पाणिनिजीके प्रिय प्राणोंको सिंहने हर लिया और मीमांसाके कर्ता जैमिनि मुनिके प्राणोंको हाथीने सहसा नष्ट कर दिया. तथा छन्दोज्ञाननिधि पिंगलके प्राणोंको खाडीके तटपर एक मगरने नष्ट कर डाला. तब अज्ञानसे ढके हुये मनवालोंसे और क्रोधसे युक्त पशुओंसे क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? ॥ ५५८ ॥

वैद्यं पानरतं नटं कुपठितं स्वाध्यायहीनं द्विजं
योधं कापुरुषं हयं गतरयं मूर्खं परिव्राजकम् ॥
राजानं च कुमंत्रिभिः परिवृतं देशं च सोपद्रवं
भार्यां यौवनगर्वितां पररतां मुञ्चन्ति ते पंडिताः ५५९

भाषार्थ–मद्यपान करनेवाले वैद्यको, विना पढे हुये नटको, अपने पठनपाठनसे रहित द्विजको, कायर योधाको, वेगहीन घोडाको, मूर्ख संन्यासीको, दुष्ट मंत्रीभीवाले राजाको, उपद्रववाले देशको, यौवनसे गर्ववाली और परपुरुषसे प्रेम करनेवाली स्त्रीको जो त्याग देते हैं, वे पण्डित हैं ॥ ५५९ ॥

लोभश्चेदगुणेन किं? पिशुनता यद्यस्ति किं पातकैः?
सत्यं चेत्तपसा च किं? शुचि मनो यद्यस्ति तीर्थेन किम्?
सौजन्यं यदि किं गुणैः? स्वमहिमा यद्यस्ति किं मंडनैः?
सद्विद्या यदि किं? धनैरपयशो यद्यस्ति किं मृत्युना? ५६०

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–यदि लोभ है, तो फिर अन्य अवगुण क्या चाहिये ? यदि कुटिलता है, तो फिर अन्यपाप करनेकी क्या आवश्यकता ? यदि सत्य भाषण है, तो फिर तप करनेकी क्या आवश्यकता ? यदि मन शुद्ध है, तो तीर्थ करनेसे क्या फल अधिक होगा ? यदि सज्जनता है, तो अन्य गुणोंसे क्या अधिक प्रसिद्धि होगी ? यदि अपनी महिमा विख्यात है, तो यशसे बढकर भूषण क्या होगा ? अन्य भूषणोंसे क्या अधिक शोभा होगी ? एवं यदि सद्विद्या प्राप्त है, तो दूसरे धनकी क्या अपेक्षा है ? यदि अपयश है, तो मृत्युसे क्या अधिक होगा ? ॥ ५६० ॥

किं चित्रं ? यदि राजनीतिकुशलो राजा भवेद्धार्मिकः
किं चित्रं ? यदि वेदशास्त्रनिपुणो विप्रो भवेत्पंडितः ॥
तच्चित्रं यदि रूपयौवनवती साध्वी भवेत्कामिनी
तच्चित्रं यदि निर्धनोऽपि पुरुषः पापं न कुर्यात्क्कचित् ॥

भाषार्थ–राजा यदि राजनीतिमें कुशल और धार्मिक हो तो क्या आश्चर्य है ? ब्राह्मण यदि वेदशास्त्रमें निपुण और पंडित हो तो क्या आश्चर्य है ? परंतु यदि रूप और यौवनवाली स्त्री साध्वी हो तो आश्चर्य है, तथा यदि कोई मनुष्य निर्धन होनेपरभी पाप न करै तो आश्चर्य है ॥ ५६१ ॥

यः स्निग्धोऽकुशलान्निवारयति यस्तत्कर्मयन्निर्मलं
सा स्त्री यानुविधायिनी स मतिमान् यः सद्भिरभ्यर्च्यते ॥
सा श्रीर्या न मदं करोति स सुखी यस्तृष्णया मुच्यते
तन्मित्रं यदकृत्रिमं स पुरुषो यः खिद्यते नेन्द्रियैः ५६२

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–वही पुरुष प्रेमी है, जो मूर्ख लोगोंका कुकर्मोंसे निवारण करता है. वही कर्म, है जो निर्मल है. वही स्त्री है, जो अपने अनुकूल है. वही बुद्धिमान् है, जिसका सज्जन सत्कार करते हैं. वही सम्पदा है जो मदको नहीं प्रगट करती. वही सुखी है, जो तृष्णासे रहित है. वही मित्र है, जो बनावटी नहीं है. वही पुरुष है, जो इन्द्रियोंसे पीडित नहीं होता ॥ ५६२ ॥

नीतिर्भूमिभुजां नतिर्गुणवतां ह्रीरङ्गनानां रति-
र्दम्पत्योः शिशवो गृहस्य कविता बुद्धेः प्रसादो गिराम्॥
लावण्यं वपुषः श्रुतं सुमनसः शान्तिर्द्विजस्य क्षमा
शक्तस्य द्रविणं गृहाश्रमवतां स्वास्थ्यं सतां मण्डनम् ६३

भाषार्थ–राजावोंका भूषण नीति है, गुणियोंका भूषण नम्रता है, स्त्रियोंका भूषण लज्जा है, स्त्रीपुरुषोंका भूषण रति है, घरके भूषण बालक हैं, बुद्धिका भूषण कविता है, वाणीका भूषण प्रसन्नता है, शरीरका भूषण लावण्य है, शुद्ध अन्तःकरणवालेका भूषण शास्त्रश्रवण है, द्विजका भूषण शान्ति है, सर्वजनोंका भूषण क्षमा है, गृहस्थजनोंका भूषण धन है, सत्पुरुषोंका भूषण स्वास्थ्य (आरोग्य) है ५६३

कार्पण्येन यशः क्रुधा गुणचयो दम्भेन सत्यं क्षुधा
मर्यादा व्यसनैर्धनं च विपदा स्थैर्यं प्रमादैर्द्विजः ॥
पैशून्येन कुलं मदेन विनयो दुश्चेष्टया पौरुषं
दारिद्र्येण जनादरो ममतया चात्मप्रकाशो हतः ॥५६४

भाषार्थ–कृपणतासे यश, क्रोधसे सब गुण, दम्भसे सत्य, क्षुधासे

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मर्यादा, व्यसनोंसे धन, विपत्तिसे स्थिरता, प्रमाद (नशा) से द्विज, चुगलीसे कुल, मदसे विनय, खोटी चेष्टासे पौरुष, दरिद्रतासे मनुष्योंमें आदर, ममतासे आत्माका प्रकाश नष्ट हो जाता है ॥ ९६४॥

का विद्या ? कवितां विनार्थिनि जने त्यागं विना श्रीश्च का ?
को धर्मः ? कृपया विना क्षितिपतिः को नाम नीतिं विना ॥
कः सूनुः ? विनयं विना कुलवधूः का ? स्वामिभक्तिं विना ।
भोग्यं किं ? रमणीं विना क्षितितले किं जन्म ? कीर्तिं विना॥

भावार्थ—कविताविना विद्या क्या है ? अर्थी जनोंमें दान विना धन क्या है ? दयाविना धर्म और नीतिके विना राजा कौन है ? एवं विनयके विना पुत्र, पतिकी भक्ति विना स्त्री, स्त्रीके विना भोग्य तथा पृथिवीपर कीर्तिके विना जन्म क्या है ? ॥ ९६५ ॥

विद्वान् संसदि पाक्षिकः परवशो मानी दरिद्रो गृही ।
द्रव्याढ्यः कृपणो यतिर्वसुमना वृद्धो विवाहोद्यतः ॥
राजा दुःसचिवप्रियः सुकुलजो मूर्खः पुमान्स्त्रीजितो ।
वेदान्ती हतसत्क्रियः किमपरं हास्यास्पदं भूतले॥९६६

भावार्थ—विद्वान् पुरुष सभामें यदि पक्षपाती हो, मानीपुरुष पराधीन हो, गृहस्थ पुरुष निर्धनी हो, धनी पुरुष कृपण हो, यती धनकी इच्छावाला हो, बूढा मनुष्य विवाह करनेको उद्यत हो, राजाको दुष्टमंत्री प्रिय हो, कुलीन पुरुष मूर्ख हो, पुरुष स्त्रीकरके जीत लिया गया हो अर्थात् स्त्रीके वशमें पुरुष हो, सत्कर्मोंको दूर कर देनेवाला वेदान्ती हो, तो इससे बढकर पृथिवीपर और क्या हास्यका स्थान हो सकता है ? अर्थात् संसारमें इनकी हँसी होती है ॥ ९६६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

को लाभो ? गुणिसंगमः किमसुखं ? प्राज्ञेतरैः संगतिः
का हानिः ? समयच्युतिर्निपुणता का ? धर्मतत्वे रतिः ॥
कः शूरो ? विजितेन्द्रियः प्रियतमा का?ऽनुव्रता किं धनं ?
विद्या किं ? सुखमप्रवासगमनं राज्यं किमाज्ञाफलम् ५६७

भाषार्थ–लाभ क्या है ? गुणीजनोंका समागम. दुःख क्या है ? मूर्खोंकी संगति और हानि क्या है ? समयका निकल जाना. अर्थात् समय व्यर्थ नष्ट हो जानेसेभी बडी हानि होती है. निपुणता क्या है ? धर्मतत्वमें प्रीति. शूर कौन है ? जितेन्द्रिय. प्यारी स्त्री कौन है ? जो पतिके अनुकूल रहे वही अपने पतिकी प्यारी होती है. धन क्या है ? विद्या. सुख क्या है ? अपने देशमें वास. राज्य क्या है ? आज्ञाफल (हुकूमत) अर्थात् जिस राजाकी आज्ञाके अनुसार सब प्रजा वर्ताव करे यही राजाका राज्य है ॥ ५६७ ॥

शास्त्राण्यधीत्यापि भवन्ति मूर्खा
यस्तु क्रियावान् पुरुषः स एव ॥
सुचिन्तितं चौषधमातुराणां
न नाममात्रेण करोत्यरोगम् ॥ ५६८ ॥

भाषार्थ–शास्त्र पढनेपरभी लोग मूर्ख होते हैं. जो क्रियावान् हैं, वही मनुष्य हैं. भलीभांति विचार की हुई औषधी रोगियोंको नाम लेनेहीसे निरोगी नहीं कर सकती है. अर्थात् शास्त्र पढकर शास्त्रानुसार वर्ताव किया जाय तबही शास्त्रोंका पढना शुभ फल देनेवाला होता है, केवल पढ लेनेहीसे नहीं. जैसे, औषधीका प्रयोग किया

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जाय तभी रोगी आरोग्य हो सकता है. औषधीका नाम लेनेसे रोग दूर नहीं हो सकता ॥ ५६८ ॥

सस्यानि स्वयमत्तिचेद्वसुमती माता सुतं हन्ति चेत् ।
वेलामम्बुनिधिर्विलंघयति चेद्भूमिं दहेत्पावकः ॥
आकाशं जनमस्तके पतति चेदन्नं विषं चेद्भवेत् ।
अन्यायं कुरुते यदि क्षितिपतिः कस्तं निरोद्धुं क्षमः ?

भाषार्थ–यदि पृथिवी धान्यकी खेतीको खा जाय, माता पुत्रको मार डाले, समुद्र अपनी मर्यादाका उल्लंघन करने लगे, अग्नि पृथिवीको जला देवै, आकाश मनुष्योंके मस्तकपर गिर पडे, अन्न विष हो जाय और यदि राजा अन्याय करने लगे तो इनको कौन रोक सकता है ? ॥ ५६९ ॥

मानुष्ये सति दुर्लभा पुरुषता पुंस्त्वे पुनर्विप्रता
विप्रत्वे बहुविद्यताऽतिगुणता विद्यावतोऽर्थज्ञता ॥
अर्थज्ञस्य विचित्रवाक्यपटुता तत्रापि लोकज्ञता
लोकज्ञस्य समस्तशास्त्रविदुषो धर्मे मतिर्दुर्लभा ७०

भाषार्थ–संसारमें प्रथम तो, मनुष्यजन्म दुर्लभ है और मनुष्यजन्मभी हुवा तो, पुरुषता दुर्लभ है. पुरुषता होनेपर विप्रता कठिन है. विप्रता होनेपर अधिक विद्यावाला होना दुर्लभ है. अधिक विद्यावाला होनेपर अतिगुणी होना दुर्लभ है. विद्वान्को अर्थज्ञता दुर्लभ है. अ-

---

१ यहां आकाशका गिरना असम्भव है इससे यहां आकाशस्थ पदार्थ तारा और घातका गिरना कविने कहा है । प्रायः जन आकाशसे गिरी हुई घातसे मर चुके हैं । 'जैसे मंचाः क्रोशांति ' 'मञ्च पुकारते हैं ' इससे मंचपर स्थित मनुष्योंका ग्रहण है ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

र्थज्ञ होनेपर विचित्रवाक्पटुता (वाणीमें विचित्रवक्तृत्वशक्ति होना दुर्लभ है. और विचित्रवाक्पटुता होनेपर लोकज्ञता दुर्लभ है, और लोकज्ञ (लोकव्यवहार जाननेवाले) सकलशास्त्रवेत्ता विद्वान्‌की धर्ममें उत्तम बुद्धि होना दुर्लभ है ॥ ५७० ॥

कुरङ्गमातङ्गपतङ्गभृङ्गमीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च ॥
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते? यः सेवते पञ्चभिरेव पञ्च ॥

भाषार्थ–मृग, हाथी, पतंग, भ्रमर और मछली, ये पांचौ पांच विषयोंको भिन्नभिन्न सेवनकरके नाशको प्राप्त होते हैं और जो एकही प्रमादी पुरुष तिन पांचौंका सेवन करता है, सो किस प्रकारसे नाशको प्राप्त नहीं होगा? अवश्य होगा. यहां हरिण एक श्रोत्रइन्द्रियका विषय जो शब्द है, उसके अर्थ वीणाका शब्द सुनकर व्याधके वशीभूत हो, मृत्युको प्राप्त होता है. हाथी लिंगइन्द्रियका विषय जो स्पर्श उसके अर्थ हस्तिनीके पीछे गर्तमें पतित होकर नष्ट हो जाता है: एवं पतंग चक्षुइन्द्रियका विषय जो रूप है, उसके अर्थ दीपकमें गिरकर मर जाता है और भ्रमर एक घ्राणइन्द्रियका विषय जो सुगन्ध है उसके अर्थ रात्रिमें कमलके बन्द हो जानेसे कांटोंसे विधकर नाश हो जाता है, तथा मछली एक जिव्हाइन्द्रियका विषय जो रस है उसके अर्थ लोहकुंडीको भक्षणकरके मृत्युको प्राप्त होती है ॥ ५७१ ॥

अप्रियवचनदरिद्रैः प्रियवचनाढ्यैः स्वदारपरितुष्टैः ॥
परपरिवादनिवृत्तैः क्वचित्क्वचिन्मण्डिता वसुधा ॥ ५७२ ॥

भाषार्थ–अप्रियवचनोंके दरिद्र अर्थात् कटुवचनोंसे रहित और

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

प्रियवचनोंसे युक्त, अपनी स्त्रीसे सन्तुष्ट, पराई निन्दासे निवृत्त ऐसे सत्पुरुषोंसे कहीं कहीं पृथिवी मण्डित (सुशोभित) है ॥ ५७२ ॥

न वै भिन्ना जातु चरन्ति धर्मं
न वै सुखं प्राप्नुवन्तीह भिन्नाः ॥
न वै भिन्नाः गौरवं प्राप्नुवन्ति
न वै भिन्ना प्रशमं रोचयन्ति ॥ ५७३ ॥

भाषार्थ–भेदन किये मनुष्य धर्म नहीं करते हैं, भेदन किये मनुष्य सुखी नहीं हो सकते हैं, भेदन किये मनुष्य गौरव (बडाई) को नहीं पाते हैं, भेदन किये मनुष्य शान्तिको प्राप्त नहीं होते हैं ॥५७३॥

तुङ्गात्मनां तुङ्गतराः समर्था
मनोरथान् पूरयितुं न नीचाः ॥
धाराधरा एव धराधराणां
निदाघदाहं शमितुं न नद्यः ॥ ५७४ ॥

भाषार्थ–महात्माओंके मनोरथोंको अच्छे महात्मालोग पूर्ण कर सकते हैं, नीच लोग नहीं कर सकते. पर्वतोंके ग्रीष्म ऋतु (ज्येष्ठ आषाढ) के तापको मेघही शांत कर सकते हैं; नदियां नहीं कर सकती ॥ ५७४ ॥

वातैर्विशोषय बिभीषय भीमघोषैः
संतर्जय त्वमथवा करकाभिघातैः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

त्वद्वारिबिन्दुपरिपालितजीवितस्य
नान्या गतिर्भवति वारिद! चातकस्य५७५

भाषार्थ-हे मेघ! चाहे तुम वायुसे पपीहाके कंठको सुखावो, चाहे भयंकर गर्जनासे डरावो अथवा ओले वर्षा कर सतावो, परन्तु तुमारे जलबिन्दुसे पले हुये पपीहाको तुमारे विना अन्य कोई शरण नहीं है ॥ ५७५ ॥

भवारण्यं भीमं तनुगृहमिदं छिद्रबहुलं
बली कालश्चौरो नियतमसिता मोहरजनी ॥
गृहीत्वा ज्ञानासिं विरतिफलकं शीलकवचं
समाधानं कृत्वा स्थिरतरदृशो जागृतजना:५७६

भाषार्थ-यह संसार घोर वन है और यह शरीररूप गृह बहुतसे छिद्रोंसे भरा है. कालरूप बलवान् चोर निरन्तर भ्रमण कर रहा है, मोहरूपी रात्रि है. अतः हे मनुष्यो! जागो और ज्ञानरूपी खड्ग, वैराग्यरूपी कटार, शीलरूपी कवच धारण करके सावधानतापूर्वक परम स्थिर दृष्टिसे देखो. सारांश यह कि-ज्ञान, वैराग्य और शीलको मुख्य समझकर संसारमें अपनी उन्नति करो ॥ ५७६ ॥

प्राणाघातान्निवृत्तिः परधनहरणे संयमः सत्यवाक्यं।
काले शक्त्या प्रदानं युवतिजनकथा मूकभावः परेषाम् ॥
तृष्णास्रोतो विभङ्गो गुरुषु च विनयः सर्वभूतानुकम्पा।
सामान्यः सर्वशास्त्रेष्वनुपहतविधिः श्रेयसामेष पन्थाः७७

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–प्राणियोंको मारनेसे निवृत्ति, परधनहरणमें संयम, सत्य-वाक्य, समयपर शक्तिअनुसार दान, दूसरोंकी स्त्रियोंकी कथाओंमें चुप हो जाना, तृष्णारूपी स्रोतका भंग, गुरुजनोंमें नम्रता और सब प्राणियोंपर दया, सब शास्त्रोंमें विना रोकवाली विधि इसप्रकार कल्याणनिमित्त यह एक साधारण मार्ग है ॥ ५७७ ॥

इति श्रीमदयोध्यामण्डलान्तर्वर्तिलखीमपुरखीरीनिवासि
ज्योतिर्वित्पण्डितनारायणप्रसादमिश्रकृत
भाषार्थसमन्विते सुभाषितरत्नाकरे
तृतीयः प्रकाशः समाप्तः ॥ ३ ॥



CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

॥ अथ सुभाषितरत्नाकरः ॥



॥ चतुर्थः प्रकाशः ॥



॥ समस्याख्यानम् ॥

१ समस्या—सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥
दलितश्चकितश्छन्नस्तव सैन्ये विसर्पति ॥ १ ॥

भाषार्थ—हजार शिर, हजार नेत्र और हजार चरणवाला पुरुष तुम्हारी सेनामें दलित, चकित और छन्न हुवा सरकता है ॥ १ ॥

२ समस्या—मृगात्सिंहः पलायते ? ।

तिष्ठार्जुनाद्य सङ्ग्रामे त्वां हनिष्याम्यहं शरैः ॥
तिष्ठामि कर्ण ! किं मूढ ! मृगात्सिंहः पलायते ? ॥२॥

भाषार्थ—भारतीय युद्धमें कर्णने अर्जुनसे कहा कि—' हे अर्जुन ! संग्राममें खडा रह. मैं तुमको बाणोंसे मारूंगा. ' यह सुनकर अर्जुनने उत्तर दिया—' हे कर्ण ! खडा हूं. हे मूढ ! क्या हरिणको देखकर सिंह कभी भागता है ? ॥ २ ॥

३ समस्या—सलिलादग्निरुत्थितः ।

विद्यायां दुर्मदो येषां कार्पण्यं विभवे सति ॥
तेषां दैवाभिशप्तानां सलिलादग्निरुत्थितः ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जिनको विद्यामें दुर्मद है, विभव (ऐश्वर्य) होनेपरभी कृपणता है, दैवसे अभिशप्त उन मनुष्योंको ऐसा जानो, जैसे जलसे अग्निका उत्पन्न हो जाना ॥ ३ ॥

४ समस्या–समुद्रादग्निरुत्थितः।

सीतासमागमोत्कण्ठाकर्णान्ताकृष्टधन्वनः॥
राघवस्य शराङ्गारैः समुद्रादग्निरुत्थितः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–सीताजीसे मिलनेकी इच्छावाले श्रीरामचन्द्रजीके कानों-तक खींचकर चढाये हुये धनुषसे निकले हुये बाणरूपी अंगारोंसे ऐसा जान पडा, मानों समुद्रसे अग्नि प्रगट हुई हो ॥ ४ ॥

५ समस्या–शतचन्द्रं नभस्तलम्।

दामोदरकराघातविह्वलीकृतचेतसा ॥
दृष्टं चाणूरमल्लेन शतचन्द्रं नभस्तलम् ॥ ५ ॥

भाषार्थ–श्रीकृष्णचन्द्रजीके घूंसेसे व्याकुलचित्त होकर, चाणूर मल्लने देखा कि–आकाशमें सौ चन्द्रमा हैं. अर्थात् घूंसेके लगनेसे उसे ऐसा चक्कर आया कि–आकाशमें उसको अनेको चंद्रमा दीख पडे ॥५॥

६ समस्या–तक्रं शक्रस्य दुर्लभम्।

घृतं न श्रूयते कर्णे दधि स्वप्नेऽपि दुर्लभम् ॥
मुग्धे दुग्धस्य का वार्ता ? तक्रं शक्रस्य दुर्लभम् ॥६॥

भाषार्थ–घी तो कानोंसे सुनाभी नहीं, दही स्वप्नमेंभी दुर्लभ है. हे मुग्धे ! दूधका क्या कहना ? मठा तो इन्द्रकोभी दुर्लभ है ॥६॥

---

१ शरा एवाङ्गाराः।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

७ समस्या—गुलुगुग्गुलुगुग्गुलू ।

जम्बूफलानि पक्वानि पतन्ति विमले जले ॥
कपिकम्पितशाखाभ्यो गुलुगुग्गुलुगुग्गुलू ॥ ७ ॥

भाषार्थ—पके हुये जामुनवृक्षके फल वानरके हिलाये शाखाओंसे टूटकर जलमें गिरनेसे 'गुलुगुग्गुलुगुग्गुलू' यह शब्द हुवा ॥ ७ ॥

८ समस्या—विप्रतिषेधे परं कार्यम् ।

निजपतिराद्यः प्रणयी हरिर्द्वितीयः करोमि किं? गोपि ! ॥
शृणु सखि ! पाणिनिसूत्रं विप्रतिषेधे परं कार्यम् ॥ ८ ॥

भाषार्थ—प्रथम अपने पतिकी प्यारी, दूसरे हरि (श्रीकृष्णजी) की. हे गोपी ! मैं क्या करूं, अथवा मैं क्या यह छिपकर करती हूं? हे सखि ! सुनो. पाणिनिके 'विप्रतिषेधे परं कार्यम्' इस सूत्रसे विप्रतिषेध (तुल्यबलविरोध) में परको कार्य हो ॥ ८ ॥

९ समस्या—ठंठंठंठंठठठंठंठः ।

रामाभिषेके मदविह्वलाया हस्ताच्च्युतो हेमघटस्तरुण्याः ॥
सोपानमासाद्य करोति शब्दं ठंठंठंठंठठठंठंठः ॥ ९ ॥

भाषार्थ—रामचन्द्रजीके अभिषेकसमयमें मदसे विह्वल तरुणी (स्त्री) के हाथसे सुवर्णका घडा छूटकर सीढियोंपरसे लुढ़कता हुवा, 'ठंठंठंठंठठठंठंठः' यह शब्द करता भया ॥ ९ ॥

१० समस्या—सूर्योदये रोदिति चक्रवाकी ।

विलोक्य बालामुखचन्द्रबिम्बं कंठे च मुक्तावलिहारताराः ॥
पुनर्निशाया भयभीतभीता सूर्योदये रोदिति चक्रवाकी १०

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–बाला (स्त्री) का मुख–रूप चन्दबिम्ब और कंठमें मोतियोंके हाररूप तारागण देखकर, फिर रात्रिके भयसे डरकर चकवी सूर्योदय समय रुदन करती है ॥ १० ॥

११–१२ समस्या–सिन्दूरबिन्दुर्विधवाललाटे।

रे पुत्र ! सत्संगमवाप्नुहि त्वमसत्प्रसंगं त्वरया विहाय ॥
धन्योऽपि निन्दां लभते कुसंगात्सिदूरबिन्दुर्विधवाललाटे ॥

भावार्थ–रे पुत्र ! सज्जनका संग करो और दुर्जनका संग शीघ्र छोड दोः धन्य पुरुषभी कुसंगसे निन्दाको प्राप्त होता है. जैसे, विधवा स्त्रीके मस्तकपर सिन्दूरका बिन्दु ॥ ११ ॥

अङ्गीकृतं कोटिमितं च शास्त्रं नाङ्गीकृतं व्याकरणस्य येन॥
न शोभते तस्य मुखारविन्दे सिन्दूरबिन्दुर्विधवाललाटे ॥ १२

भावार्थ–जिसने करोडसंख्यावाले शास्त्रका अंगीकार किया और व्याकरणका अंगीकार नहीं किया, उसके मुखारविन्दमें वह शास्त्र शोभाको प्राप्त नहीं होता है. जैसे, विधवाके मस्तकमें सिंदूरका बिन्दु ॥ १२ ॥

१३ समस्या–हुताशनश्चन्दनपंकशीतलः।

सुतं पतन्तं प्रसमीक्ष्य पावके न बोधयामास पतिं पतिव्रता
तदा ह्यसौ तद्व्रतशक्तिपीडितो हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतलः ॥

भावार्थ–पुत्रको अग्निमें गिरता हुवा देखकर, अपनी जंघापर सोते हुये पतिको पतिव्रता स्त्रीने नहीं जगाया. तब पतिव्रताके व्रतशक्तिसे पीडित अग्नि चन्दनकी कीचके समान शीतल हो गई ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

१४ समस्या—हूँहुँहूँहुहुहुँहूँहुहुहूँहूँ।

उन्नमय्य सकचग्रहमास्यं चुम्बति प्रियतमे हठवृत्त्या ॥
कूजितं जयति मानधनाया हूँहुहूँहुहुहुँहूँहुहुहूँहूँ ॥ १४ ॥

भाषार्थ—एक नायक अपने प्यारीके केश पकड मुखको अपनी ओर झुकाय उसके अधरोष्ठका बलात्कारपूर्वक चुम्बन करता है, तब उस मानिनीके कंठसे यह अप्रकट शब्द निकला कि—'हूँहुहूँहुहुहुँहू हुहुहूँहू' ॥ १४ ॥

१५ समस्या—राहुर्दिवा ग्रसति पर्व विना किलेन्दुम्।

कांचिद्दिनार्धसमये रविरश्मितप्तां
नीलांशुकांचलनिलीनमुखेन्दुबिम्बाम् ॥
तां तादृशीं समनुवीक्ष्य कविर्जगाद
राहुर्दिवा ग्रसति पर्व विना किलेन्दुम् ॥ १५ ॥

भाषार्थ—दोपहरके समय सूर्यकी किरणोंसे संतप्त नीलवस्त्रके अंचलसे युक्त मुखचन्द्रवाली कोई स्त्री थी. उसको चन्द्रपर्वोपमावाली देखकर कवि कहता है कि दिनके समय विना पर्वकेही चन्द्रमाको राहु ग्रसता है ॥ १५ ॥

१६ समस्या—'सर्वस्य द्वे-एको गोत्रे-वृद्धो यूना-स्त्री पुंवच्च' इति चत्वारि पाणिनेः सूत्राणि ॥

---

१ केशग्रहसहितम्। २ मुखम्। ३ चुंबनं कुर्वति सति। ४ कान्ते। ५ बलात्कारेण। ६ कंठेऽव्यक्तशब्दः। ७ मान एव धनं यस्याः। मानिन्या इत्यर्थः। ८ मध्याह्ने। ९ सूर्यकिरणसंतप्ताम्। १० नीलवस्त्रांचलपिहितमुखचंद्राम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सर्वस्य द्वे सुमतिकुमती संपदापत्तिहेतू
एको गोत्रे प्रभवति पुमान् यः कुटुम्बं बिभर्ति ॥
वृद्धो यूना सह परिचयात्त्यज्यते कामिनीभिः
स्त्री पुंवच्च प्रभवति यदा तद्धि गेहं विनष्टम् ॥१६॥

भाषार्थ–एक वैयाकरण पंडित ब्रह्मराक्षस होकर अपने शून्यमन्दिरमें रहा करता था. जब कोई विदेशी आकर उस मन्दिरमें ठहरता था तो रात्रिसमय वह पंडित ये चार प्रश्न करता था. जो नहीं बतला सकता था उसको भय दिखाता था. यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध हो गई थी. इसकारण कोईभी उस मन्दिरमें नहीं ठहरता था. एक दिन एक विदेशी पंडित अपनी स्त्री, पुत्र और पुत्रवधूसमेत वहां आये और जान बूझकर उस मन्दिरमें ठहरे और क्रमशः पंडित और पुत्र, स्त्री, पुत्रवधूने एक एक प्रहर जागनेका पण किया और जागते रहे. ब्रह्मराक्षसने इन चारोंसे चारों सूत्र पाणिनि व्याकरणके पूछे. तब चारोंने चारों सूत्रोंका पृथक् पृथक् उत्तर दिया. सो श्लोकार्थसे समझ लेना चाहिये. सबकी दो प्रकारकी मति होती है; सुमति और कुमति. सुमति संपदाका हेतु और कुमति आपत्तिका हेतु है. इस विषे तुलसी दासजीने रामायणमें लिखा है कि–'जहां सुमति तहं सम्पति नाना । जहां कुमति वहां विपति निदाना ॥ और एक गोत्रमें जो पुरुष सुयोग्य होता है, वह कुटुम्बका पालन करता है. तथा वृद्धपुरुष युवावस्थावाली स्त्रीसे परिचय करता है तो, स्त्रीकरके परित्याग कर दिया जाता है, और स्त्री जब पुरुषके समान होती है तब घरका विनाश हो जाता है ॥ १६ ॥

१७ समस्या–संमीलने नयनयोर्नहि किंचिदस्ति ।

चेतोहरा[1] युवतयः[2] स्वमनोऽनुकूला

१ मनोहारिण्यः । २ तरुण्यः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सद्बान्धवाः प्रणतिनम्रगिरश्च भृत्याः॥
गर्जन्ति दन्ति[1]निवहास्तर[2]लास्तुरङ्गाः
सं[3]मीलने नयनयोर्नहि किञ्चिदस्ति ॥ १७॥

भाषार्थ–मन हरण करनेवाली तरुण स्त्रियां, अपने मनके अनुकूल हैं, बान्धव लोग अच्छे हैं, आज्ञानुसार काम करनेवाले और प्रणामपूर्वक कोमल वाणी बोलनेवाले सेवक हैं, हाथी द्वारपर गर्ज रहे हैं, चंचल घोडे हैं, परन्तु दोनौं नेत्र बन्द हो जानेपर कुछ नहा है ॥१७॥

१८ समस्या–सूच्यग्रे कूपषट्कं तदुपरि नगरी तत्र गंगाप्रवाहः।

कश्चित्पांथस्तृषार्तः पथि तपनऋतौ गम्यमानोऽन्यपांथम्
पप्रच्छानन्दलीनो वद पथिक ! कुतो जन्हुकन्याप्रवाहः ?॥
तेनासौ शीघ्रवाचा प्रचलितमनसा विप्रवर्येण चोचे
सूच्यग्रे कूपषट्कं तदुपरि नगरी तत्र गंगाप्रवाहः॥ १८॥

भाषार्थ–कोई पथिक जन गरमीकी ऋतुमें प्यासके मारे व्याकुल, मार्गमें जाते हुये दूसरे पथिकसे पूछने लगा जो आनन्दमें लीन था–कि हे पथिक ! कहिये, जन्हुकन्या (श्रीगंगाजी) का प्रवाह कहां है ? अर्थात् गंगाजी कहां वह रही हैं ? यहांसे कितनी दूर हैं ? तब उस श्रेष्ठ ब्राह्मणने चंचल मनसे शीघ्रही उसको उत्तर दिया कि 'सूचीके अग्रभागमें छे कुवां हैं' उसपर नगरी है, वहां गंगाका प्रवाह है अर्थात् सूचीरूप मुखके ऊपर छे कुवां (दो छिद्र नासिका, दो नेत्र, दो कान) हैं. ऊपर कपालरूपी नगरी है. उसीमें गंगाका

१ गजसमूहाः। २ चंचला। ३ निमीलने।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

प्रवाह है. सारांश यह कि योगाभ्यास द्वारा चन्द्रनाडीसे प्यासको शान्त कर लो ॥ १८ ॥

अथ प्रहेलिका (पहेली)।

१ प्रहेलिका—लेखपत्र (चिठ्ठी)।

अपदो दूरगामी च साक्षरो न च पण्डितः ॥
अमुखः स्फुटवक्ता च यो जानाति स पण्डितः ॥ १ ॥

भावार्थ—चरण नहीं हैं, परंतु दूरगामी है. साक्षर है, परंतु पंडित नहीं है. मुख नहीं है, परंतु ठीक समाचार बतलानेवाला है. जो जानता है वह पंडित है ॥ १ ॥ इन श्लोकोंसे साहित्यवेत्ताओंको परम आनंद होता है ॥

२ प्रहेलिका—महोक्ष (बडा बैल)।

गोपालो नैवगोपालस्त्रिशूली नैव शंकरः ॥
चक्रपाणिः स नो विष्णुर्यो जानाति स पण्डितः ॥२॥

भावार्थ—गौवोंका पति है, परंतु गोपाल नहीं है. त्रिशूलसे युक्त है, परंतु शंकर नहीं हैं. चक्रधारी है, परंतु विष्णु नहीं है. इसको जो जानता है वह पण्डित है ॥ २ ॥

३ प्रहेलिका—नौका ।

वने जाता वने त्यक्ता वने तिष्ठति नित्यशः ॥
पण्यस्त्री न तु सा वेश्या यो जानाति स पण्डितः ॥३॥

---

१ धेनूनां पतित्वात्पालकः । २ तप्तत्रिशूलांकितत्वात्तच्चिह्नवान् । ३ बाहौ तप्तचक्रांकितत्वात्तच्चिह्नवान् । ४ अरण्ये काष्ठरूपेणोत्पन्ना । ५ जले । ६ मूल्यं दत्वा भोग्या स्त्री गणिका यथा द्रव्यादाने भोग्या तथेयमपीत्यर्थः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-वनमें (काष्ठसे) उत्पन्न, वन (जल) में उसको त्यागे अर्थात् जलके ऊपर, वन (जल) में सदा रहनेवाली, मोल देके प्राप्त होनेवाली स्त्री है, परंतु वेश्या नहीं है. इसको जो जानता है, वह पंडित है ॥ ३ ॥

४ प्रहेलिका-वल्मीक (बाँबी)।

अनेकसुषिरं वाद्यं कान्तं च ऋषिसंज्ञितम् ॥
चक्रिणा च सदाराध्यं यो जानाति स पण्डितः ॥ ४ ॥

भाषार्थ-अनेक छिद्र जिसमें और 'व' अक्षर आदिमें और 'क' अक्षर अन्तमें, ऋषिका नाम जिसका और सर्पसे सदा आराध्य ऐसी वस्तुको जो जानता है, वह पंडित है ॥ ४ ॥

५ प्रहेलिका-दुग्ध-गंगा-मधु पट्टांबर-पिप्पल।

उच्छिष्टं शिवनिर्माल्यं वमनं शवकर्पटम् ॥
काकविष्टासमुत्पन्नः पञ्चैतेतिपवित्रकाः ॥ ५ ॥

भाषार्थ-उच्छिष्ट (जूठा), शिवजीका निर्माल्य, वमन किया हुवा, मुर्दाका फटा कपडा, काकविष्टासे उत्पन्न ये पांच अति पवित्र माने गये हैं ॥ ५ ॥

६ प्रहेलिका-लेखनी ।

कृष्णामुखी न मार्जारी द्विजिह्वा न च सर्पिणी ॥
पंचभर्त्री न पांचाली यो जानाति स पण्डितः ॥ ६ ॥

भाषार्थ-काले मुखवाली है, परंतु बिल्ली नहीं है. दो जिव्हावाली है, परंतु सर्पिणी नहीं है. पांचभर्तावाली है, परंतु द्रौपदी नहीं है. इसको जो जानता है वह पंडित है ॥ ६ ॥

बिलम् । २ वकार आद्यो यस्य । ३ ककारोऽन्ते यस्य । ४ सर्पेण ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

७ प्रहेलिका–कुलालदोरक (कुम्हारका डोरा)।

वने वसति, को वीरो ? योऽस्थिमांसविवर्जितः ॥
असिवत्कुरुते कार्यं कार्यं कृत्वा वनं गतः ॥ ७ ॥

भावार्थ–वन (जल) में वास करता है. कौन वीर है ? जो हड्डी और मांससे रहित खड्गके तुल्य काम करता है और काम करके वन- (जल) में चला जाता है ॥ ७ ॥

८ प्रहेलिका–कुलालचक्र–दण्ड (कुम्हारका चाक और दंड) ।

पर्वताग्रे रथो याति भूमौ तिष्ठति सारथिः ॥
चलते वायुवेगेन पदमेकं न गच्छति ॥ ८ ॥

भावार्थ–पर्वतपर रथ जाता है, भूमिपर सारथी बैठता है, वायुके समान वेगसे चलता है, परन्तु एक पगभी कहीं नहीं जाता है ॥ ८ ॥

९ प्रहेलिका–कुंभकारस्य (कुम्हारकी) ।

पर्वताग्रे रथारूढो भूमौ तिष्ठति सारथिः ॥
चक्रवद्भ्रमते पृथ्वी तस्याहं कुलबालिका ॥ ९ ॥

भावार्थ–पर्वतके अग्रभागमें रथपर आरूढ, भूमिमें सारथी स्थित है, चक्रकी नाईं पृथ्वी घूमती है, उसकी मैं कुलबालिका हूं ॥ ९ ॥

१० प्रहेलिका–शालिग्राम ।

श्यामं च वर्तुलाकारं पुंनाम चतुरक्षरम् ॥
शकारादि मकारान्तं यो जानाति स पण्डितः॥१०॥

भावार्थ–श्यामवर्ण, वर्तुलाकार, पुरुषसंज्ञक, चार अक्षरका नाम, शकार आदिका अक्षर और मकार अन्तका अक्षर. इसको जो जानता है वह पण्डित है ॥ १० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

११ प्रहेलिका—अननस।

वृक्षस्याग्रे फलं दृष्टं फलाग्रे वृक्ष एव च ॥
अकारादि मकारान्तं यो जानाति स पण्डितः ११

भाषार्थ—वृक्षके अग्रभागमें फल है और फलके आगे वृक्ष है, अकार आदि और मकार अन्तका अक्षर है. इसको जो जानता है वह पंडित है ॥ ११ ॥

१२ प्रहेलिका—तक्र (छाछ)।

रविजा[1] शशिकुन्दाभा तापहारी जगत्प्रिया ॥
वर्धते वनसङ्गेन न तापी यमुनापि न ॥ १२ ॥

भाषार्थ—मन्थानदंडसे उत्पन्न शशि–कुन्द (चंद्रवत्श्वेतपुष्प) की कान्तिवाला, तापको हरनेवाला, जगत्को प्रिय, वन (जल) के संगमसे वृद्धिको प्राप्त होता है. न तापी है, यमुनाभी नहीं है. यहां रविजा ' यमुना ' और वनके संगसे बढनेवाली ' तापी ' इन दो नदियोंके होनेका भ्रम है. इसीसे कहा कि 'तापी, यमुना' नहीं है ॥१२॥

१३ प्रहेलिका—सूचिका (सुई)।

एकचक्षुर्न काकोयं बिलमिच्छन्न पन्नगः ॥
क्षीयते वर्धते चैव न समुद्रो न चन्द्रमाः ॥ १३ ॥

भाषार्थ—एक नेत्र है, परन्तु कौवा नहीं है. बिल ढूंढै है, परन्तु सर्प नहीं है. घटै है और बढै है, परन्तु न समुद्र है, न चन्द्रमा है ॥१३॥

१४ प्रहेलिका—पुंध्वज।

छत्रधारी न राजाऽसौ जटाधारी न चेश्वरः ॥
सृष्टिकर्ता न स ब्रह्मा छिद्रकर्ता न तस्करः ॥ १४ ॥

---

१ ' रवि ' इति महाराष्ट्रभाषायां मन्थानदंडस्य नाम।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-छत्रधारी है, परन्तु राजा नहीं है. जटाधारी है, परन्तु ईश्वर (महादेव) नहीं है. सृष्टिको उत्पन्न करनेवाला है, परन्तु ब्रह्मा नहीं है. छिद्रकर्ता है, परन्तु चोर नहीं है ॥ १४ ॥

१५ प्रहेलिका-विषयदण्ड ।

अस्थि नास्ति शिरो नास्ति बाहुरस्ति निरङ्गुलिः ॥
नास्ति पादद्वयं गाढमङ्गमालिङ्गति स्वयम् ॥ १५ ॥

भाषार्थ-हड्डी नहीं हैं, शिर नहीं है, बाहु हैं, अंगुली नहीं है, दोनौं चरण नहीं हैं, अंगको भलीभांति स्वयं आलिंगन करता है॥१५॥

१६ प्रहेलिका-कञ्चूक ।

अस्ति ग्रीवा शिरो नास्ति द्वौ भुजौ करवर्जितौ ॥
सीताहरणसामर्थ्यो न रामो न च रावणः ॥ १६ ॥

भाषार्थ-ग्रीवा है, शिर नहीं है, दोनौं भुजा हैं, हाथ नहीं हैं, सीताहरणमें अर्थात् सीत (ठंढ) को दूर करनेमें समर्थ है, परंतु न राम है और न रावण है ॥ १६ ॥

१७ प्रहेलिका-नयन (नेत्र) ।

न तस्यादिर्न तस्यान्तो मध्ये यस्तस्य तिष्ठति ॥
तवाप्यस्ति ममाप्यस्ति यदि जानासि तद्वद ॥ १७ ॥

भाषार्थ-' न ' उसका आदि अक्षर है, अन्त अक्षरभी उरुका ' न ' हि है, मध्य (बीच) में ' य ' उसका अक्षर है. तुम्हारेभी है, हमारेभी है. यदि जानते हो तो बताओ ॥ १७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

१८ प्रहेलिका–नारिकेरफल (नारियल)।

वृक्षाग्रवासी न च पक्षिराजस्त्रिनेत्रधारी न च शूलपाणिः ॥
त्वग्वस्त्रधारी न च सिद्धयोगी जलं च बिभ्रन्न घटो न मेघः

भावार्थ–वृक्षके अग्रभागमें रहता है, परंतु पक्षीराज नहीं है. तीन नेत्रवाला है, परंतु महादेव नहीं है. त्वचावस्त्र धारण करनेवाला है, परन्तु सिद्धयोगी नहीं है. जलको धारण करता है, परन्तु घट अथवा मेघ नहीं है ॥ १८ ॥

१९ प्रहेलिका–आम्र (आंबका फल)।

वृक्षाग्रवासी न च पक्षिजातिस्तृणं च शय्या न च राजयोगी
सुवर्णकायो न च हेमधातुः पुंमश्च नाम्ना न च राजपुत्रः ॥

भावार्थ–वृक्षके अग्रभागमें रहता है, परन्तु पक्षीजाति नहीं है. तृण उसकी शय्या है, परन्तु राजयोगी नहीं है. सुवर्णवत् उसकी काया है, परन्तु हेम धातु नहीं है. पुरुषवाची उसका नाम है, परन्तु राजपुत्र नहीं है ॥ १९ ॥

२० प्रहेलिका–वृषभ (सांड)।

चक्री त्रिशूली न हरिर्न शंभुर्महान् बलिष्ठो न च भीमसेनः ॥
स्वच्छन्दचारी नृपतिर्न योगी सीतावियोगी न च रामचन्द्रः

भावार्थ–चक्र और त्रिशूलधारी है, परंतु न हरि है, न शंभु है, महाबलवान् है, परंतु भीमसेन नहीं है. इच्छानुसार विचरनेवाला है, परंतु योगी नहीं है, सीता (भूमि) से उसका वियोग है, परंतु रामचन्द्र नहीं है ॥ २० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

२१ प्रहेलिका–सारिका ।

सदारिमध्यापि न वैरियुक्ता नितान्तरक्तापि सितैव युक्ता ॥
यथोक्तवादिन्यपि नैव दूती का नाम कान्तेति निवेदयाशु ॥

भाषार्थ–अरि (शत्रु) के मध्यमें होनेपरभी वैरीसे युक्त नहीं है, नितान्त रक्त होनेपरभी श्वेतही रहती है, यथोक्तवादिनी होनेपरभी दूती नहीं है. हे कान्ते ! क्या उसका नाम है यह शीघ्र बताओ. यहां श्लोकार्थ है, परन्तु प्रहेलिकाबोधक अर्थ यह है कि–सदा ' रि ' उसका बीचका अक्षर है. सकारसहित है और ' का ' उसका अन्तका अक्षर है. ' सारिका ' यह नाम हुवा ॥ २१ ॥

२२ प्रहेलिका–मत्कुण (मच्छर) ।

सर्वास्वपहरो न तस्करगणो रक्षो न रक्ताशनः
सर्पो नैव बिलेशयोऽखिलनिशाचारी न भूतोऽपि च ॥
अन्तर्धानपटुर्न सिद्धपुरुषो नाप्याशुगो मारुत–
स्तीक्ष्णास्यो न तु सायकस्तमिह ये जानन्ति ते पण्डिताः २२

भाषार्थ–सर्वस्व अपहरण करनेवाला है, परन्तु चोर नहीं है. रुधिरपान करता है, परंतु राक्षस नहीं है. बिलमें रहता है, परंतु सर्प नहीं है. समस्त रात्रिभ्रमण करता है, परंतु निशाचर भूत भी नहीं है. अन्तर्धानपटु (वस्त्रमें छिप जानेवाला) है, परन्तु सिद्ध पुरुष नहीं है. शीघ्र चलनेवाला है, परन्तु पवनभी नहीं है. तीक्ष्णमुखवाला है, परन्तु बाण नहीं है. ' यह कौन है ' यह जो जानते हैं, वे पण्डित हैं ॥ २२ ॥

---

१ रिकारो मध्ये यस्याः । २ सकारेणोपेता युक्ता । ३ ककारोऽन्ते स्ययाः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अपन्हुति (कहमुकरनी) ।

सीत्कारं शिक्षयति व्रणयत्यधरं तनोति रोमाञ्चम् ॥
नागरिकः किं मिलितो ? नहि नहि सखि! हैमनः पवनः १

भाषार्थ—सीत्कार सिखाता है, अधर (होंठ) को पीडित करता है, रोमांचको विस्तृत करता है. सखी पूछती है—'क्या नागरिक (रसिया) मिल गया ?' तो वह उत्तर देती है, कि—'हे सखी ! नागरिक नहीं मिला. यह 'सीसी' करानेवाली, होठ कंपानेवाली, रोमांच करानेवाली हेमन्तऋतुकी शीतल पवन है' ॥ १ ॥

काले पयोधराणामपतितया नैव शक्यते स्थातुम् ॥
उत्कण्ठितासि ? बाले!नहि नहि सखि! पिच्छिलः पन्थाः २

भाषार्थ—' वर्षाकालमें अपतितया (पतिविना) रहा नहीं जाता' यह सुनकर सखी पूछने लगी कि—'हे बाले ! क्या उत्कठावाली हो ?' तब वह उत्तर देती है कि—'हे सखी ! उत्कंठित नहीं हूं, यह मार्ग कीचडवाला है. वर्षासमय विना पतित (गिरे) नहीं रहा जाता अर्थात् इस कींचमें ठहरना कठिन है ॥ २ ॥

रागी भिनत्ति निद्रां तल्पं न जहाति निष्ठुरं दशति ॥
चतुरे ! किं प्राणेशः ? नहि नहि सखि ! मत्कुणव्रातः ॥३॥

भाषार्थ—' रागी है,; निद्राभंग करता है, शय्याको नहीं छोडता है, निष्ठुरतासे दशता है.' यह सुन सखी पूछती है—हे चतुरे ! क्या प्राणे-

१ हेमन्तसंबन्धी । २ पतिविनां (पक्षे) पतनाभावेन । ३ पङ्किलः । ४ अनुरक्तः (पक्षे) रक्तवर्णः । ५ शय्याम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्वर है, ? तब वह उत्तर देती है कि–'हे सखी ! प्राणपति नहीं है. ये रक्तवर्ण और नींदका भंग करनेवाले, खाटको नहीं छोडनेवाले, तथा जोरसे काट खानेवाले मस्से हैं ॥ ३ ॥

इह पुरोऽनिलकम्पितविग्रहा
मिलति का न वनस्पतिना लता ? ॥
स्मरसि किं सखि ! कान्तरतोत्सवं ?
नहि घनागमरीतिरुदाहृता ॥ ४ ॥

भावार्थ–'जिनके शरीर इस समय वायुने कम्पायमान करदिये हैं ऐसी कौन लतायें वृक्षोंसे नहीं लिपटती हैं ? ' यह सुन सखी पूछती है कि–'हे सखी ! क्या कान्तरतोत्सवका स्मरण करती हो ? ' तब वह उत्तर देती है कि–' हे सखी ! मैं कान्तरतोत्सवका स्मरण नहीं करती हूं. मैंने तो वर्षाकालकी रीति कही है. प्रायः वर्षाकालमें लतायें (वेलें) अपने समीपवाले वृक्षोंसे लिपट जाती हैं ॥ ४ ॥

आदौ गृहीतपाणिः पश्चादारूढजघनकटिभागा ॥
नखमुखलालनसुखदा सा किं रामास्ति? नैव !भो पामा॥५॥

भावार्थ–'प्रथम हाथको ग्रहण करनेवाली, पश्चात् जघन और कटिभागपर आरूढ, नख मुख लाल, न सुखदा. ' यह सुन सखी पूछती है कि–' हे सखि ! क्या राम (रमण करनेवाला पति) है अथवा क्या रामा (लक्ष्मी) है जो प्रथम हाथपर आती है. फिर जघनके ऊपर कमरमें रख ली जाती है, अनन्तर जब परखनेका समय आता है तब नखके मुख (अग्रभाग) पर रखकर बजानेसे ' टं ' शब्द बडा प्यारा लगता है. ऐसी सुख देनेवाली लक्ष्मीही है. सखीके इसप्रकार पूछ-

१ कण्डूः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

नेसे वह उत्तर देती है कि हे सखि ! राम अथवा रामा नहीं है. यह पामा (खाज) है. जो प्रथम हाथमें हो जाती है, फिर जंघावोंके बीच होकर, कमरमें होकर, शरीरभरमें फैल जाती है. नखोंसे खुजलानेपर बहुत सुख जान पडता है ॥ ५ ॥

इन उपरोक्त श्लोकोंका भाषानुवाद यद्यपि हमने लिख दिया है, तथापि ये श्लोक ऐसेही हैं कि जिनका भाषानुवाद इतना आनन्ददायक नहीं हो सकता कि जितना आनन्द संस्कृतवेत्ता लोग केवल श्लोकमात्रसे पाते हैं. संस्कृतके विशेष जाननेवाले केवल श्लोकमात्रसे जो आनन्द पाते हैं, वह आनन्द भाषा जाननेवाले नहीं पा सकते. इसकारण विना भाषानुवादके हम कुछ श्लोक लिखते हैं और उन श्लोकोंकी टिप्पणी लिख देते हैं, कि जिससे थोडा संस्कृत जाननेवाले लोग कठिन शब्दका अर्थ समझकर भावार्थ जान लेवैं ॥

नाथ ! विलोकय मेघं नहि नहि पापं तवातिपुण्यायाः ॥
नहि कथयामि पयोधरमपसारय कंचुकीमुरसः ॥ ६ ॥

वदन्ती जारवृत्तान्तं पत्यौ धूर्ता सखीधिया ॥
पतिं बुद्ध्वा सखि ! ततः प्रबुद्धास्मीत्यपूरयत् ॥ ७ ॥
प्रहरति न पञ्चबाणः केवलमबले निमेषोऽपि ॥
वर्षति परं न देवः क्षणदायी विप्रयोगं ते ॥ ८ ॥
रुचिरस्वरवर्णपदा रसभाववती जगन्मनो हरति ॥
तत्किं तरुणी ? नहि नहि वाणी बाणस्य मधुरशीलस्य ९

१ अम्बुदम् (पक्षे) मेऽघं पापम् । २ मेघं (पक्षे) स्तनम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मधुरस्वना घृतोर्णा गण्याभरणा सुशोभना सुदती॥
मत्स्कन्धोचितदण्डा भिक्षो! दयिताऽस्ति किं? न मे वाणी
पञ्चदशीरजनिसमा तारामणिभूषणापि कोकिलवाक् ॥
चन्द्रसमागतवसना हस्तगता स्त्री न मे वीणा ॥ ११ ॥
अक्षरमैत्रीभाजः सालंकारस्य चारुवृत्तस्य ॥
किं ब्रूमो सखि! यूनो? नहि नहि सखि! पद्यबन्धस्य १२
या पाणिग्रहलालिता सुसरला तन्वी सुवंशोद्भवा
गौरी स्पर्शसुखावहा गुणवती नित्यं मनोहारिणी ॥
सा केनापि हृता तया विरहितो गन्तुं न शक्तोऽस्म्यहं
रे भिक्षो! तव कामिनी? नहि नहि प्राणप्रिया यष्टिका॥
तन्वी चारुपयोधरा सुवदना श्यामा मनोहारिणी
नीता निष्करुणेन केनचिदहो! देशान्तरादागता ॥
उत्सङ्गोचितया तया रहितया किं जीवनं प्रेक्षसे?
भिक्षो! ते दयितास्ति किं? नहि नहि प्राणप्रिया तुम्बिका

आगे कूटश्लोक लिखेंगे. कूटश्लोकोंमें एक एक श्लोकके दो दो अर्थ हैं. उनके लिखनेमें अधिक विस्तार होगा, इसकारण केवल चार अनुष्टुप्श्लोकोंका भाषानुवाद लिखकर शेष श्लोकोंके नीचे कठिनशब्दज्ञानार्थ टिप्पणी लिख देंगे ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कूटश्लोकाः।

शंकरं पतितं दृष्ट्वा पार्वती हर्षनिर्भरा ॥
रुरुदुः पन्नगाः सर्वे हा हा शंकर शंकर ॥ १ ॥

भाषार्थ–'शंकर (महादेवजी) को गिरा देखकर, पार्वती बहुत प्रसन्न हुईं और सब पन्नग रोने लगे कि–हा शंकर! हा शंकर!' यह प्रगट अर्थ असंभव है. अतः दूसरा अर्थ यह है कि–परमसुगन्धित चन्दनको गिरते देखकर, पर्वतपर रहनेवाले भीलोंकी स्त्रियां (भिल्लिनी) बहुत प्रसन्न हुईं और सब सांप रोने लगे कि हा चंदन! हा चंदन!! ॥ १ ॥

के शैवं पतितं दृष्ट्वा द्रोणो हर्षमुपागतः ॥
रुदन्ति कौरवाः सर्वे हा केशव! कथं गतः? ॥ २ ॥

भाषार्थ–केशव (हरिभगवान्) को पतित (गिरता) देखकर, द्रोण (द्रोणाचार्यजी) प्रसन्न हुवे और सब कौरव (दुर्योधनादिक) रोने लगे कि–' हा केशव (हा कृष्ण) ! तुम कहां गये ? ' यह प्रगट अर्थ असंभव है, अतः दूसरा अर्थ यह है कि–जलमें मुर्दाको गिरते देखकर काला कौवा प्रसन्न हुवा और सब गीदड रोने लगे कि–हा जलमें मुर्दा कहां गया ? ॥ २ ॥

हनूमति हताराम वानरा हर्षनिर्भराः ॥
रुदन्ति राक्षसाः सर्वे हा हाऽऽराम हतो हतः ॥ ३ ॥

---

१ श्रेष्ठचन्दनम् । २ पर्वतवासिनी स्त्री भिल्लिनी । ३ सर्पाः । ४ जले । ५ मृतकम् । ६ कृष्णकाकः । ७ शृगालाः । ८ हते आरामे ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–' हनुमान्‌द्वारा रामके मारे जानेपर वानरगण प्रसन्न हुये और सब राक्षस रोने लगे कि–हाय हाय ! ! रामको मार डाला, मार डाला ' यह प्रगट अर्थ असंभव है. दूसरा अर्थ यह है–कि हनुमान्‌जीने रावणके बगीचाका विध्वंस किया तब वानरगण प्रसन्न हुये और सब राक्षस रोने लगे कि–' हायहाय ! ! बगीचाका विध्वंस कर डाला ! विध्वंस कर डाला ! ! ' ॥ ३ ॥

एकोना[1] विंशतिः स्त्रीणां स्नानार्थं सरयूं गता ॥
विंशतिः पुनरायाता एको व्याघ्रेण भक्षितः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–एक कमती वीस अर्थात् उन्नीस स्त्रियोंका समूह स्नाननिमित्त सरयूको गया. उनमेंसे वीस घरको लौट आई. एकको व्याघ्रने भक्षण कर लिया यह प्रगट अर्थ असंभव है. दूसरा अर्थ यह है कि-एक मनुष्य और वीस स्त्रियोंका समूह स्नाननिमित्त सरयूको गया. उन इकीसमेंसे वीसका समूह लौट आया. एकको व्याघ्रने भक्षण कर लिया ॥ ४ ॥

विषं भुङ्क्ष्व महाराज ! स्वजनैः परिवारितः
विना केन विना नाभ्यां कृष्णाजिनमकण्टकम् ॥ ५ ॥

टिप्पणी–(विषं) विगतः षकारो यस्मात् । (विना केन) ककारेण विना । (विना नाभ्यां) नकारद्वयरहितम् । ' कृष्णाजिनम् ' अत्र ककारषकारनकाराणां निष्कासने ' ऋआ जिअम् ' इति स्थिते संधौ कृते राज्यम् । अकण्टकम् (शत्रुरहितम्) ॥ ५ ॥

---

१ एकोना इति विंशतेर्विशेषेण विरोधः । एको ना (नरः) इति पदच्छेदेन परिहारः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पानीयं पातुमिच्छामि त्वत्तः कमललोचने !
यदि दास्यसि नेच्छामि नो दास्यसि पिबाम्यहम् ६

टिप्पणी–यदि दास्यसि (यदि दासी असि) तदा हे कमललोचने ! त्वत्तः पानीयं पातुं नेच्छामि (न इच्छामि) । नो दास्यसि (नो दासी असि) तदा अहं पिबामि ॥ ६ ॥

सुवर्णस्य सुवर्णस्य सुवर्णस्य च जानकि ! ॥
प्रेषिता तव रामेण सुवर्णस्य च मुद्रिका ॥ ७ ॥

टिप्पणी–(सुवर्णस्य) उज्ज्वलवर्णस्य [कान्तियुक्ता] (सुवर्णस्य) शोभना वर्णा नामाक्षराणि यस्य [रामनामांकिता] तस्य च (पुनः) (सुवर्णस्य) अशीतिरत्तिकापरिमितस्य (सुवर्णस्य) कांचनस्य ॥ ७ ॥

समरे हेमरेखाङ्कं बाणं मुञ्चति राघवे ॥
स रावणोऽपि मुमुचे मध्येरीतिधरं शरम् ॥ ८ ॥

टिप्पणी–(मध्येरीतिधरं शरम्) मध्यभागे रीतिः पित्तलं तद्विशिष्टम् । (पक्षे) मध्ये रीकारविशिष्टं शरम् । शरीरमित्यर्थः ॥ ८ ॥

विराजराजपुत्रारेर्यन्नाम चतुरक्षरम् ॥
पूर्वार्धं तव शत्रूणां परार्धं तव संगरे ॥ ९ ॥

टिप्पणी–वयः पक्षिण स्तेषां राजा गरुडस्तद्राजा विष्णुस्तत्पुत्रो मदनस्तदरिः शिवस्तस्य चतुरक्षरं नाम 'मृत्युंजयः' इति । तत्पूर्वार्धं मृत्युरिति संगरे तव शत्रूणाम् । उत्तरार्धं जय इति तव ॥ ९ ॥

सुवर्णालंकृता कन्या हेमालंकारवर्जिता ॥
सा कन्या विधवा जाता गृहे रोदिति तत्पतिः १० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी–(सुवर्णालंकृता) सुष्टुवर्णेन कान्त्यालंकृता । (विधवा) विविधा धवाः पतयो यस्याः सा । जारिणीत्यर्थः ॥ १० ॥

अर्जुनस्य इमे बाणा नेमे बाणाः शिखण्डिनः ॥
सीदन्ति मम गात्राणि माघमासे गवा इव ॥ ११ ॥

टिप्पणी–(माघमासे गवा) ' माघमा कर्कटी प्रोक्ता तदपत्यानि सेगवाः ' इत्युक्तेः कर्कट्या अपत्यानि यथा जन्मसमये तस्या अङ्गानि विदार्य बहिर्यान्ति तद्वदिमे बाणा ममाङ्गानि विदारयन्तीत्यर्थः ॥ ११ ॥

येनाकारि पराभूतिर्दिननायकसूनवे ॥
यद्गोत्रात्मभवाकान्तं तन्महः श्रेयसेऽस्तु वः ॥ १२ ॥

टिप्पणी–(पराभूतिः) पराजयः (पक्षे) परा उत्कृष्टा भूतिरैश्वर्यम् (दिननायकसूनवे) कर्णाय सुग्रीवाय यमाय च । (गोत्रात्मभवाकान्तं) गास्त्रायन्ते गोपास्तेषामात्मभवा गोपिकास्तासां कान्तं मनोहरम् । अथ च गोत्रायाः पृथ्व्या आत्मभवा सीता सा कान्ता यस्य तत् । अथ च गोत्रस्य हिमालयस्यात्मभवा पार्वती सा कांता यस्य तत् (तन्महः) कृष्णाख्यं रामाख्यं शिवाख्यं च ॥ १२ ॥

विजितात्मभवद्वेषिगुरुपादहतो जनः ॥
हिमापहामित्रधरैर्व्याप्तं व्योमाभिनन्दति ॥ १३ ॥

टिप्पणी–विना गरुडेनामृतहरणसमये जित इन्द्रस्तदात्मभवोऽर्जुनस्तद्द्वेषी कर्णस्तद्गुरुः पिता सूर्यस्तत्पादहतस्तत्किरणसंतप्तः । हिमापहोऽग्निस्तदमित्रं पानीयं तद्धरा मेघाः । सूर्यकिरणसंतप्तो जनो मेघाच्छन्नमाकाशमभिनन्दतीति तात्पर्यार्थः ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अट्टशूला जनपदा शिवशूलाश्चतुष्पथाः ॥
प्रमदा केशशूलिन्यो भविष्यन्ति कलौ युगे ॥१४॥

टिप्पणी-'अट्टमन्न शिवो वेदो ब्राह्मणश्च चतुष्पथः।
केशो भग इति प्रोक्तः शूलो विक्रय उच्यते' इति ॥१४॥

राजन्कमलपत्राक्ष ! तत्ते भवतु चाक्षयम् ॥
आसादयति यद्रूपं करेणुः करणैर्विना ॥ १५ ॥

टिप्पणी-(करेणुः) करणैर्विना ककार-रेफ-णकारैर्विना यद्रूपमासादयति प्राप्नोति तत्तेऽक्षयं भवत्वित्यन्वयः। उक्तव्यञ्जनत्रयरहितम् 'अ-ए-उः' इति स्वरत्रयम्। तत्र 'अ-ए' इत्यत्र वृद्धौ, 'ऐ-उः' इत्यत्र आयादेशे 'आयुः' इति सिद्धम् ॥ १५ ॥

अहं च त्वं च राजेन्द्र ! लोकनाथावुभावपि ॥
बहुव्रीहिरहं राजन्षष्ठीतत्पुरुषो भवान् ॥ १६ ॥

टिप्पणी-बहुव्रीहिपक्षे लोका (जना) नाथाः स्वामिनो यस्यैवंविधोऽहम्, याचकत्वात्। षष्ठीतत्पुरुषपक्षे लोकानां (जनानां) नाथ एवंविधस्त्वम्, राजत्वेन पालकत्वात् ॥ १६ ॥

अर्धरात्रे दिनस्यार्धे अर्धचन्द्रेऽर्धभास्करे ॥
रावणेन हृता सीता कृष्णपक्षे सिताष्टमी ॥१७॥

टिप्पणी-कृष्णपक्षे याऽष्टमी तस्य दिनस्यार्धे रावणेन सीता हृता। किं लक्षणाष्टमी ? अर्धरात्रे सिता। पुनः किंलक्षणाष्टमी? अर्धचन्द्रे। किंभूतेऽर्धचन्द्रे ? अर्धं भाः करोति अर्धभास्करस्तस्मिन् ॥ १७ ॥

शस्त्रं न खलु कर्तव्यमिति पित्रा नियोजितः ॥
तदेव शस्त्रं कृतवान् पितुराज्ञा न लंघिता ॥ १८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी–(नखलु) नखांल्लुनानीति नखलु नखच्छेदकम् ॥१८॥

कुमारसंभवं दृष्ट्वा रघुवंशे मनोऽदधत् ॥
राक्षसानां कुलश्रेष्ठो रामो राजीवलोचनः ॥ १९ ॥

टिप्पणी–रघुवंशे कुलश्रेष्ठो राजीवलोचनो रामो राक्षसानां कुं (पृथ्वीं) मारयति (पीडयति) इति कुमारः। पृथ्वीपीडकइति यावत्। तादृशं संभवमुद्भवं दृष्ट्वा तत्र तेषां नाशे मनोऽदधत्। निश्चिकायेत्यर्थः॥१९॥

कान्ते ! धावय मे पादाविति भर्त्रा निवेदिता ॥
नतया धावितौ पादौ भर्तुराज्ञा न लंघिता ॥२०॥

टिप्पणी–(नतया) नम्रीभूतया ॥ २० ॥

विहंगा वाहनं येषां त्रिकंचधरपाणयः ॥
पासालसहिता देवाः सदा तिष्ठन्तु ते गृहे ॥ २१ ॥

टिप्पणी–(विहंगा) विः 'गरुडः', हंसः, गौ 'वृषभः'। (त्रिकंच) त्रिशूलः, कंबुः (शङ्खः), चक्रम्। (पासाल) पार्वती, सावित्री, लक्ष्मीः ॥ २१ ॥

देवराजो मया दृष्टो वारिवारणमस्तके ॥
भक्षयित्वार्कपर्णानि विषं पीत्वा क्षयं गतः ॥ २२ ॥

टिप्पणी–(देवराजो) हे देवर ! अजच्छागः। (वारिवारणः) सेतुः। (विषं) पानीयम्। (क्षयं) वासः ॥ २२ ॥

विनायकपतेः शत्रुस्तस्य नाम षडक्षरम् ॥
पूर्वार्धं तव राजेन्द्र ! उत्तरार्धं तु वैरिणाम् ॥ २३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी–वीनां (पक्षिणां) नायको गरुडस्तस्य पतिर्विष्णुस्तस्य । षडक्षरं नाम 'हिरण्यकशिपुः'। हिरण्यं सुवर्णम् । कशिपुस्तल्पम् (शय्या) तत्र शत्रवो निद्रिस्ता भवन्त्विति भावः ॥ २३ ॥

रामरामेऽति रामेऽतिरमे रामे मनोरमे ॥
सहस्रनामतत्तुल्यं रामनाम वरानने ॥ २४ ॥

टिप्पणी–हे वरानने ! अहं रामे अतिरमे । कथंभूते रामे ? अतिरामे । अतिक्रान्ता रामा येनासौ तस्मिन् शुद्धे ब्रह्मणि । पुनः कथंभूते रामे ? मनोरमे । मनो रमयतीति तस्मिन् । कथंभूतः अहम् ? रामराः । राम एव रा (द्रव्यं) यस्य सः । यतः कारणान्मे (मम) सहस्रनामभिस्तुल्यं रामनाम अत (इति कारणात्) अथवा अहं रामे अतिरमे । कथंभूते रामे ? वरानने । वरमाननं यस्यासौ तस्मिन्, उत पार्वत्याः संबोधनं वा । कथंभूतं रामनाम । सहस्रनामतत् । सहस्रनाम तनोतीति सहस्रनामतत् । 'रमन्ते योगिनो यत्र परानन्दे चिदात्मनि । अतो रामपदेनासौ परं ब्रह्माभिधीयते' इति ॥ २४ ॥

तातेन कथितं पुत्र ! लेखं लिख ममाज्ञया ॥
नतेन लिखितो लेखः पितुराज्ञा न लोपिता ॥ २५ ॥

टिप्पणी–नतेन (नम्रीभूतेन) ॥ २५ ॥

यथा नयति कैलासं नगं गानसरस्वती ॥
तथा नयति कैलासं न गंगा न सरस्वती ॥ २६ ॥

टिप्पणी–गानसरस्वती यथा कैलासं नगं (पर्वतं) नयति तथा न गंगा, न सरस्वती प्रापयति ॥ २६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अम्बरमम्बुनि पत्रमरातिः पीतमहीनगणस्य ददाह ॥
यस्य वधूस्तनयं गृहमब्जा पातु स वो हरलोचनवह्निः॥२७

टिप्पणी–स कृष्णो वो युष्मान्पातु। यस्याम्बरं पीतम्। यस्य गृहमम्बुनि। यस्य पत्रं वाहनं अहीनगणस्यारातिर्गरुडः। यस्य वधूरब्जा (कमला)। यस्य तनयं हरलोचनवन्हिः ददाह ॥ २७ ॥ ॥

लम्बोदर ! तव चरणावादरतो यो न पूजयति॥
स भवति विश्वामित्रो दुर्वासा गौतमश्चेति॥ २८ ॥

टिप्पणी–(विश्वामित्रो) जगतः शत्रुः। (दुर्वासा) मलिनवस्त्रः (गौतमः) पशुः ॥ २८ ॥

अतनुज्वरपीडितासि बाले! तव सौख्याय मतो ममोपवासः
रसमर्पय वैद्यनाथ ! नाहं भवदावेदिलंघने समर्था ॥ २९ ॥

टिप्पणी–अतनु (महान्), (पक्षे) कामः। उपवासः (लंघनम्), (पक्षे) समीपस्थितिः। रसम् (भेषजम्), (पक्षे) प्रीतिम्। लंघने (उपवासे), (पक्षे) उल्लंघने ॥ २९ ॥

वायुमित्रसुतबन्धुवाहनारातिभूषणशिरोवलम्बिनी ॥
तज्जवैरिभगिनीपतेः सखा पातु मां कमललोचनो हरिः ॥३०

टिप्पणी–वायुमित्रमग्निस्तत्पुत्रः षण्मुखस्तद्बन्धुर्गजाननस्तद्वाहनं मूषकस्तदरातिः सर्पस्तद्भूषणः शिवस्तच्छिरोवलंबिनी गंगा तज्जो भीष्मस्तद्वैरी शिखण्डी तद्भगिनी द्रौपदी तस्याः पतिरर्जुनस्तत्सखा कृष्णः ॥ ३० ॥

नदीज ! लंकेशवनारिकेतुर्नगाह्वयो नाम नगारिसूनुः ॥
एषोऽङ्गनावेषधरः प्रमाथी जित्वा वयं नेष्यति चाद्य गावः ३१

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी–भो नदीज (गंगातनय भीष्म)! एष दृश्यमानः अङ्गनावेषधरः स्त्रीरूपधारी लंकेशवनारिकेतुः रावणवनभजकहनुमद्ध्वजः नगाह्वयोऽर्जुननामा। नगारिसूनुरिन्द्रपुत्रः। भो भोः कौरवाः! अयं प्रमाथी हन्ता। अद्य वो युष्माञ्जित्वा गाश्च नेष्यतीत्यर्थः ॥ ३१ ॥

गोगजवाहनभोजनभक्ष्योद्भूतपमित्रसपत्नजशत्रोः ॥
वाहनवैरिकृतासनतुष्टा मामिह पातु जगत्त्रयजुष्टा॥३२॥

टिप्पणी–गवा गच्छतीति गोगः शिवस्तज्जः कार्तिकेयस्तद्वाहनं मयूरस्तस्य भोजनं (भक्ष्यं) सर्पस्तस्य भक्ष्यं वायुस्तद्भूतो हनूमांस्तं पातीति सः तत्पः, सुग्रीवस्तस्य मित्रं रामस्तस्य सपत्नो रावणस्तज्ज इन्द्रजित्तस्य शत्रुरिन्द्रस्तस्य वाहनं ऐरावतस्तस्य वैरी सिंहस्तत्रोपविष्टा अत एव सर्वोपरि तुष्टा अम्बिका मां पातु (रक्षतु) ॥ ३२ ॥

रामं सीतां लक्ष्मणं जीविकार्थे
विक्रीणीते यो नरस्तं च धिग्धिक्!! ॥
अस्मिन्पद्ये योऽपशब्दान्न वेत्ति
व्यर्थप्रज्ञं पण्डितं तं च धिग्धिक्!! ॥ ३३ ॥

टिप्पणी–'जीविकार्थे चापण्ये' इत्यत्र आपण्ये इत्युक्तत्वाद्धस्तिकान्विक्रीणीते इत्यत्रेव रामकं सीतकां लक्ष्मणकं इति प्रयोगा एव साधवः ॥ ३३ ॥

अहिरिपुपतिकान्ता तातसंबद्धकान्ता-
हरतनयनिहन्तृप्राणदातृध्वजस्य ॥
सखि सुतसुतकान्तातातसम्पूज्यकान्ता
पितृशिरसि पतन्ती जाह्नवी नः पुनातु॥३४॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी—अहिः सर्पस्तद्रिपुर्गरुडस्तत्पतिर्विष्णुस्तत्कान्ता लक्ष्मीस्तत्तातः समुद्रः स सम्यग्बद्धो येन स रामस्तत्कान्ता जानकी, तस्या हरो हर्ता रावणस्तत्तनय इन्द्रजित्तन्निहन्ता लक्ष्मणस्तत्प्राणदाता हनूमान्स ध्वजे यस्यैतादृशोऽर्जुनस्तस्य सखा कृष्णस्तत्सुतो मदनस्तत्सुतोऽनिरुद्धस्तत्कान्ता उषा तत्तातो बाणासुरस्तस्य सम्यक् पूज्यः शिवस्तत्कान्ता पार्वती तत्पिता हिमालयस्तच्छिरसि पतन्ती जान्हवी (भागीरथी) नः (अस्माकम् , पुनातु (रक्षतु) ॥ ३४ ॥

कान्ता रुचिं मुनिजनस्तरुणाऽवियोगी
कामश्च रत्नमणिरुज्ज्वलकङ्कणेन ॥
धत्ते पयोधरयुगे कुचभूषणेन
हारे हरे हिमकरे मकरे करे च ॥ ३५ ॥

टिप्पणी—कान्ता हारे रुचिं धत्ते, मुनिजनो हरे रुचिं धत्ते, अवियोगी तरुणो हिमकरे रुचिं धत्ते, कामो मकरे निजचिन्हभूते रुचिं धत्ते, रत्नमणिरुज्ज्वलकंकणेन सह करे कुचभूषणेन सह पयोधरयुगे च रुचिं धत्ते ॥ ३५ ॥

सर्वज्ञः सन्वदसि बहुधा दीयते दीयते वै
दाधातूनां भवति सदृशं रूपमेषां चतुर्णाम् ॥
द्वौ दानार्थौ भवति च तथा पालने खण्डने वा
नो जानीमः कथयति भवान्कस्य धातोः प्रयोगम् ॥

टिप्पणी—त्वं सर्वज्ञः सन् बहुधा वारं वारं 'दीयते दीयते' इति वदसि । 'दीयते' इति रूपं चतुर्णामपि दाधातूनां सदृशं भवति । तन्मध्ये द्वौ दानार्थौ—'दाण्दाने, डुदाञ् दाने' इति । एकः पालने—'देङ् रक्षणे'

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

इति । एकः खण्डने–' दोऽवखण्डने ' इति । एतन्मध्ये भवान् कस्य धातोः प्रयोगं कृत्वा वदसि तं न जानीमः ॥ ३६ ॥

गौरीक्षणं भूधरजाऽहिनाथः पत्रं तृतीयं दयितोपवीतम् ॥
यस्यांबरं द्वादशलोचनाख्यः काष्ठासुतः पातु सदाशिवो वः

टिप्पणी–सः सदाशिवो वो युष्मान्पातु । सः कः ? यस्य गौः (वृषभः) पत्रं वाहनम्, तथा ईक्षणं तृतीयं यस्य । भूधरजा (पार्वती) दयिता यस्य । अहिनाथः (शेषः) उपवीतं यस्य । अंबरं (वस्त्रं) काष्ठाः (दिशो) यस्य । द्वादशलोचनाख्यः कुमारः (सुतो) यस्य इत्यन्वयः ॥ ३७ ॥

अब आगे उन श्लोकोंको लिखेंगे कि जिनमें क्रिया, कर्ता, कर्म, करण, संप्रदान, अपादान, संबन्ध, अधिकरणआदि गुप्त हैं. यदि नहीं समझमें आवै तो अर्थ नहीं समझमें आ सकता है, कि श्लोकका क्या आशय है. यहांभी केवल दो श्लोकोंका भाषाऽनुवाद, लिखकर शेष श्लोकोंका आशय समझनेके अर्थ संक्षिप्त टिप्पणी लिख देंगे. क्योंकि, केवल भाषा जाननेवालोंको इन श्लोकोंमें कुछ आनन्द नहीं होता है. और संस्कृतजाननेवालोंको केवल टिप्पणीही लिख देना उचित समझा है ॥

क्रियागुप्त–श्लोकाः ।

सन्ध्यावन्दनवेलायां तडागान्ते द्विजोत्तमैः ॥
अत्र क्रियापदं गुप्तं यो जानाति स पण्डितः ॥ १ ॥

टिप्पणी–हे द्विजोत्तम ! सन्ध्यावन्दनवेलायां तडागान्ते ' ऐः (आगच्छ) ॥ १ ॥

भाषार्थ–हे द्विजोत्तम ! सध्यावदनके समयमें तडाग (सरोवर) के तटपर आओ. यहां ' ऐः ' यह ' इ गतौ ' इस धातुका क्रियापद गुप्त है. इस श्लोकमें गुप्त क्रियापदको जो जानता है वह पंडित है ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विराट नगरे राजन् ! कीचकादुपकीचकम् ॥
अत्र क्रियापदं गुप्तं यो जानाति स पण्डितः ॥ २ ॥

टिप्पणी–विः पक्षी । कीचकाद्वेणोः । कीचकान्तरं आट (बभ्राम) ॥ २ ॥

भावार्थ–हे राजन् ! नगरमें एक पक्षी एक वांससे दूसरे वांसपर भ्रमण करता भया. इस श्लोकमें ' अट गतौ ' धातुका ' आट ' यह क्रियापद गुप्त है. इसको जो जानता है वह पंडित है ॥ २ ॥

आगतः पाण्डवाः सर्वेऽदुर्यो धनसमीहया ॥
तस्मै गां च सुवर्णं च रत्नानि विविधानि च ॥३॥

टिप्पणी–यः धनसमीहया (धनेच्छया) आगतस्तस्मै सर्वे पाण्डवाः गां च सुवर्णं च विविधानि रत्नानि च (अदुः) ददतिस्म ३

पम्पासरसि रामेण सस्नेहं सविलासया ॥
सीतया किं कृतं ? सार्धमत्रैवोत्तरमीक्ष्यताम् ॥ ४ ॥

टिप्पणी–' सस्ने ' इति ' ष्णा शौचे ' कर्मणि लिट् ॥ ४ ॥

दामोदराय पुण्यात्मन् ! पुष्पमूलफलान्यपि ॥
अत्र क्रियापदं गुप्तं यो जानाति स पण्डितः ॥ ५ ॥

टिप्पणी–हे दामोदर ! पुष्पमूलफलानि ' आय ' (आनय) । ' इटकिटकटी ' इत्यत्र प्रश्लिष्टस्य ईधातोराङ्पूर्वस्य लोटो रूपमिदम् । उपसर्गसमभिव्याहारेण आनयार्थकत्वम् ॥ ५ ॥

कान्तं विनानदीतीरं मदमालोक्य केकिनी ॥
अत्र क्रियापदं गुप्तं यो जानाति स पण्डितः ॥ ६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी–केकिनी (मयूरी)। इरं (मदं) मेघज्योतिः। विद्युतमिति यावत्। आलोक्य 'विनानदीति' विशेषण पुनःपुनर्वा शब्दं करोतीत्यर्थः ॥ ६ ॥

नार सिंहाकृतिं वीक्ष्य वने मत्तमतंगजः ॥
अत्र क्रियापदं गुप्तं यो जानाति स पण्डितः ॥ ७ ॥

टिप्पणी–मत्त गजः सिंहाकृतिं वीक्ष्य 'नार' (न जगाम)। ऋ गतौ, कर्तरि लिट् ॥ ७ ॥

बिम्बाकारं सुधाधारं कान्तावदनपङ्कजम् ॥
अत्र क्रियापदं गुप्तं मर्यादा दश वार्षिकी ॥ ८ ॥

टिप्पणी–कान्तावदनं 'दश' (चुम्बस्व) ॥ ८ ॥

पा मा रागाभिभूतस्य श्लेष्मव्याधिनिपीडित ! ॥
यदि ते जीवितस्येच्छा तदा भोः ! शीतलं जलम् ॥९॥

टिप्पणी–भो श्लेष्मव्याधिनिपीडित ! यदि जीवितस्येच्छा तर्हि शीतलं जलं 'मा पाः' (मा पिबेति) ॥ ९ ॥

राघव ! स्य शरैर्घोरैर्घोरंरावणमाहवे ॥
अत्र क्रियापदं गुप्तं यो जानाति स पण्डितः ॥१०॥

टिप्पणी–हे राघव ! त्वं रावणं आहवे शरैः 'स्य' (मारय) इति ॥ १० ॥

अम्लानपङ्कजा माला कण्ठे रामस्य सीतया ॥
मुधा बुधा भ्रमन्त्यत्र प्रत्यक्षेपि क्रियापदे ॥ ११ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी–' प्रत्यक्षेपि ' (क्षिप्ता) ॥ ११ ॥

कान्तया कान्तसंयोगे किमकारि नवोढया ? ॥
अत्रापि चोत्तरं वक्तुमवधिर्ब्रह्मणो वयः ॥ १२ ॥

टिप्पणी–' अत्रापि ' इति । त्रपूष् लज्जायाम् , कर्मणि लुङ् ॥१२॥

कर्तृगुप्त–श्लोकाः ।

राक्षसेभ्यः सुतां हृत्वा जनकस्य पुरीं ययौ ॥
अत्र कर्तृपदं गुप्तं मर्यादा दशवार्षिकी ॥ १३ ॥

टिप्प०–राक्षसानां ' इभ्यः ' स्वामी रावण जनकस्य सुतां सीतां हृत्वा पुरीं लंकां ययौ ॥ १३ ॥

व्या मोहं तव भिन्दन्तु छिन्दन्तु दुरितानि च ॥
कर्तृगुप्तमिमं श्लोकं ये जानन्ति विचक्षणाः ॥ १४ ॥

टिप्पणी–'उः' (शिवः), ' इः '(ब्रह्मा),' अः ' (विष्णुः) इत्यनेन ' व्यः ' इति जातम् । तस्य बहुवचने ' व्याः ' (हरविधिहरयः) तव मोहं भिन्दतु, दुरितानि छिन्दन्तु । ये कर्तृज्ञास्ते विचक्षणाः ॥ १४ ॥

अन्नवस्त्रसुवर्णानि रत्नानि विविधानि च ॥
ब्राह्मणेभ्यो नदीतीरे ददाति व्रज सत्वरम् ॥ १५ ॥

टिप्पणी–हे ब्राह्मण ! ' इभ्यः ' (समृद्धः) ॥ १५ ॥

शरदिन्दुकुन्दधवलं नगपतिनिलयं मनो हरं देवम् ॥
यैः सुकृतं कृतमनिशं तेषामेव प्रसादयति ॥ १६ ॥

टिप्पणी–यैरनिशं सुकृतं कृतं तेषामेव ' मनः ' शरदिन्दुकुन्दधवलं नगपतिनिलयं देवं हरं प्रसादयति ॥ १६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न करोति नाम रोषं न वदति परुषं न हन्त्ययं शत्रून् ॥
रञ्जयति महीमखिलां तथापि धीरस्य वीरस्य ॥ १७ ॥

टि०—अयं पुरुषो रोषं न करोति, परुषं कठोरं न वदति, शत्रून्न हन्ति। नामेति प्रसिद्धम्। तथापि अस्य वीरस्य 'धीः' अखिलां महीं रंजयति ॥ १७ ॥

कर्मगुप्त—श्लोक।

एहि हे रमणि! पश्य कौ तुकं धूलिधूसरतनुं दिगम्बरम् ॥
सापि तद्वदनपङ्कजं पपौ भ्रातरुक्तमपि किं न बुध्यते? १८

टिप्पणी—हे रमणि! एहि, कौ (पृथिव्यां) तुकं (बालकं) धूलिधूसरतनुं दिगम्बरं पश्य ॥ १८ ॥

करणगुप्त—श्लोक।

पूतिपङ्कमयेत्यर्थं कासारे दुःखिता अमी ॥
दुर्वारा मानसं हंसा गमिष्यन्ति धनागमे ॥ १९ ॥

टिप्पणी—दुष्टं वाः जलं दुर्वाः। तेन 'दुर्वारा' (कलुषितजलेन) ॥१९॥

संप्रदानगुप्त—श्लोक।

अम्भोरुहमये स्नात्वा वापीपयसि कामिनी ॥
ददाति भक्तिसंपन्ना पुत्रसौभाग्यकाम्यया ॥ २० ॥

टिप्पणी—'अम्भोरुहमये' इत्यत्र 'अये' इः कामः तस्मै ॥२०॥

अपादानगुप्त—श्लोक।

सरसीतो यमुद्धृत्य जनः कं दर्पकारकम् ॥
पिबत्यम्भोजसुरभि स्वच्छमेकान्तशीतलम् ॥२१॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी–' सरसीतः ' (सरोवरात्)। ' कं ' (जलम्) ॥ २१ ॥

संबन्धगुप्त–श्लोक ।

भा नुर्वै जायते लक्ष्म्या सरस्वत्याथवा मता ॥
अत्र षष्ठीपदं गुप्तं मर्यादा दशवार्षिकी ॥ २२ ॥

टिप्पणी–' भाः ' (कान्तिः)। ' नुः ' (नरस्य) ॥ २२ ॥

याकटाच्छच्छटापातैः पवित्रयति मानवम् ॥
ए कान्ते शेपितप्रीतिरस्ति सा कमलालया॥ २३ ॥

अधिकरणगुप्त–श्लोक ।

टिप्पणी–' ए ' (कृष्णे)। ' कान्ते ' (भर्तरि) ॥ २३ ॥

आमंत्रितगुप्त–श्लोक ।

वटवृक्ष महानेष मार्गमावृत्य तिष्ठति ॥
तावत्त्वया न गतव्यं यावन्नान्यत्र गच्छति ॥ २४ ॥

टिप्पणी–बवयौरैक्यात् हे ' बटो ' (ब्राह्मण) ! । ' ऋक्षः ' (भल्लूकः) ' आवृत्य ' (रुद्ध्वा) ॥ २४ ॥

पिबतस्ते शरावेण ! वारि कह्लारशीतलम् ॥
केनेमौ दुर्विदग्धेन हृदये संनिरोपितौ? ॥ २५ ॥

टिप्पणी–हे ' एण ' (मृग) ! कल्हारशीतलं वारि उदकं पिबतः ते हृदये केन दुर्विदग्धेन इमौ शरौ बाणौ संनिरोपितौ इत्यन्वयः ॥ २५ ॥

कर्तृक्रियागुप्त–श्लोक ।

घनघनाघनकान्तिघनोऽघनुद्दनुजपुञ्जमिनात्रिजगुर्विगः ॥
सकमलोऽपिनडर्धसमां क्रियामिहविलोकयितुं च सकर्तृकाम्

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी—घनः सान्द्रः स चासौ, घनाघनः पर्जन्यश्च । तस्य कान्तिस्तद्वत् घनः सुन्दरः । घनवत्सुन्दर इत्यर्थः । तथा अघनुत् अघहन्ता । इनः सूर्यः, अत्रिजश्चन्द्रः तावेव गावौ नेत्रयुग्मे यस्य सः तथा विना गरुडेन गच्छतीति 'विगः' । कमलया लक्ष्म्या सह वर्तते इति । अतः विष्णुः रामावतारे कृष्णावतारे च दनुजपुंजं दैत्यनिचयं 'अपिनट्' चूर्णितवान् । अत्र श्लोके सकर्तृकां कर्त्रा सह वर्तमानां क्रियां क्रियापदं विलोकयितुं अर्धसमां अर्धवर्षं ददामीति श्लोककर्ता प्रतिज्ञां करोति ॥ २६ ॥

कर्तृकर्मक्रियागुप्त-श्लोक ।

भवानिशं करोमेशं प्रति पूजापरायणः ॥
कर्तृकर्मक्रियागुप्तं यो जानाति स पण्डितः ॥ २७ ॥

टिप्प०—हे 'कर !' 'उमेशं' प्रति अनिशं पूजापरायणो भव ॥ २७ ॥

संधिगुप्त-श्लोक ।

न मयागोरसाभिज्ञं चेतः कस्मात्प्रकुप्यसि ? ॥
अस्थानरुदितैरेतैरलमालोहितेक्षणे ॥ २८ ॥

टिप्पणी न निषेधः । मे मम आगोरसाभिज्ञमिति पदच्छेदः । मे चेतः आगोरसाभिज्ञं अपराधरसाभिज्ञं नेत्यर्थः ॥ २८ ॥

समासगुप्त-श्लोक ।

नित्यमाराधिता देवैः कंसस्य द्विषतस्तनुः ॥
मण्डलाग्रे गदाशंखं चक्रं जयति बिभ्रती ॥ २९ ॥

टि०—नित्यं देवैः आराधिता । (पक्षे) नित्यं मा लक्ष्मीर्यस्यां सा नित्यमा । देवैः राधिता । बहुव्रीहिसमासः ॥ २९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लिङ्गगुप्त-श्लोक ।

नितान्तस्वच्छहृदयं सखि ! प्रेयान्समागतः ॥
त्वां चिराद्दर्शनप्रीत्या यः समालिङ्ग्य रंस्यते ॥ ३० ॥

टि०-अयं नितान्तमतिशयेन स्वच्छं निर्मलं हृत् हृदयं यस्य सः नितान्तस्वच्छहृत् प्रेयान् समागतः । पुलिङ्गनिर्देशः ॥ ३० ॥

सुप्वचनगुप्त-श्लोक ।

प्रमोदंजनयत्येव सदा रा गृहमेधिनः ॥
यदि धर्मश्च कामश्च भवेतां संगताविमौ ॥ ३१ ॥

टि०-'सदारा' इत्यत्र 'रा' इति प्रथमैकवचनं सुबन्तम् । 'गृहमेधिन' इति षष्ठी ॥ ३१ ॥

तिङ्वचनगुप्त-श्लोक ।

कस्मात्त्वं दुर्बलासीति सख्यस्तां परिपृच्छति ॥
त्वयि संनिहिते तासु दद्यात्कथय सोत्तरम् ॥ ३२ ॥

टि०-अतिशयेन पृच्छतीति परिपृच्छति । 'इति' यङ्लुगन्ते अन्तिपरतो रूपमस्ति । इदमेव रूपमेकवचनं ज्ञायते । न तु बहुवचनेन । इति तिङ्वचनगुप्तम् ॥ ३२ ॥

अन्तरालाप-श्लोकाः ।

सीमन्तिनीषु का शान्ता ? राजा कोऽभूद्गुणोत्तमः ? ॥
विद्वद्भिः का सदा वन्द्या ? अत्रैवोक्तं न बुध्यते ॥ १ ॥

भावार्थ-स्त्रियोंमें कौन शान्त है ? राजा कौन गुणोत्तम (उत्तमगुणवाला) हुवा ? विद्वानोंकरके कौन सदा वन्दना करने योग्य है ?

अन्तरालाप उसको कहते हैं जिसका उत्तर उसीमें होवै ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

इन तीनौंका उत्तर इसी श्लोकमें कहा है परन्तु जाननेमें नहीं आता. यहां श्लोकके चरणका आदि और अन्तका ऐसे दोनौं अक्षर मिलाकर उत्तर है. जैसे-सीता, राम, विद्या ॥ १ ॥

कः खे चरति ? का रम्या ? का जप्या ? किं विभूषणम् ? ॥
को वन्द्यः ? कीदृशी लंका ? वीरमर्कटकम्पिता ॥ २ ॥

भावार्थ-इस श्लोकमें तीन चरणोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा-खे कः चरति ? (आकाशमें कौन विचरता है)? विः (पक्षी)। रम्या का ? (रमणीय कौन है)? रमा (लक्ष्मी)। जप्या का ? (जपने योग्य क्या है)? ऋक् (ऋग्वेद)। विभूषणं किम् ? (आभूषण क्या है)? कटकम् (कंकण)। वन्द्यः कः ? पिता (जन्मदाता)। लंका कीदृशी ? (लंका कैसी है)? वीरमर्कटकम्पिता (हनुमदादिवीर वानरोंकरके नाश की गई) ॥ २ ॥

युधिष्ठिरः कस्य पुत्रो ? गंगा वहति कीदृशी ? ॥
हंसस्य शोभा का वास्ति ? धर्मस्य त्वरिता गतिः॥ ३॥

भावार्थ-इस श्लोकके भी तीन चरणोंके उत्तर चौथे चरणमें है. यथा-युधिष्ठिरः कस्य पुत्रः ? (युधिष्ठिर किसका पुत्र है)? धर्मस्य (धर्मराजका)। गंगा कीदृशी वहति ? (गंगा कैसी वहती है)? 'त्वरिता' (शीघ्रतापूर्वक)। हंसस्य शोभा का वास्ति (हंसकी शोभा क्या है)? गतिः (चाल) ॥ ३ ॥

भोजनान्ते च किं पेयं ? जयन्तः कस्य वै सुतः ? ॥
कथं विष्णुपदं प्रोक्तं ? तक्रं शक्रस्य दुर्लभम् ॥ ४ ॥

भावार्थ-यहांभी तीन चरणोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा-'तक्रं

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शक्रस्य दुर्लभम् ’। भोजनके अन्तमें क्या पीवै ? छाछ। जयन्त किसका पुत्र है ? इन्द्रका। विष्णुपद कैसा कहा है ? दुर्लभ ॥ ४ ॥

कस्तूरी जायते कस्मात्? को हन्ति करिणां कुलम् ?॥
किं कुर्यात्कातरो युद्धे ? मृगात्सिंहः पलायनम् ॥ ५ ॥

भावार्थ–तीनचरणोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा–कस्तूरी कस्माज्जायते ? मृगात्। (कस्तूरी किससे उत्पन्न होती है ? हरिणसे) करिणां कुलं को हन्ति ? सिंहः। (हाथियोंके कुलको कौन मारता है ? सिंह) कातरो युद्धे किं कुर्यात् ? पलायनम्। (कायर मनुष्य युद्धमें क्या करता है ? पलायन) ॥ ५ ॥

कं संजघान कृष्णः ? का शीतलवाहिनी गंगा ? ॥
के दारपोषणरताः ? कं बलवन्तं न बाधते शीतम् ?॥६॥

भावार्थ–इस श्लोकमें प्रतिचरणका उत्तर उसी चरणमें है. यथा–कृष्णः कं संजघान ? (कृष्णने किसको मारा) ? कंसम् (कंसको)। शीतलवाहिनी गंगा का ? (कहांकी गंगा शीतल वहनेवाली है) ? काशीतलवाहिनी (काशीके नीचे वहनेवाली)। दारपोषणरताः के ? (दारपोषणमें रत कौन हैं) ? केदारपोषणरताः (केदार पोषणमें रत हैं)। शीतं कं बलवन्तं न बाधते ? (शीत, किस बलवान् को नहीं सताता है ?) कंबलवतम् (कंबलवालेको) अर्थात् जो कंबल ओढे है उसको शीत नहीं सताता ॥ ६ ॥

का लोकमाता?किमु देहमुख्यं?रतेः किमादौ कुरुते मनुष्यः?
को दैत्यहन्ता ? वद वैक्रमेण गौरीमुखं चुम्बति वासुदेवः॥७॥

१ ‘का काली ? का मधुरः ?’ इति पाठान्तरम्। काली का? काकअली। काली काली वस्तु क्या है ? कौवा और बीछी तथा काली। मधुरः का ? कामधुरः। मधुर क्या है ? कामदेव।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-तीनचरणोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा-(गौरीमुखं चुंबति वासुदेवः)। लोकमाता का ? गौरी। (लोककी माता कौन है ? गौरी अर्थात् पार्वती)। देहमुख्यं किमु ? मुखम्। (देहमें मुख्य क्या है ? मुख)। रतेरादौ मनुष्यः किं कुरुते ? चुंबनम्। (रतिके आदिमें मनुष्य क्या करता है ? चुम्बन)। वैक्रमेण दैत्यहन्ता को वद। वासुदेवः (अपने पराक्रमसे दैत्योंको मारनेवाला कौन है सो कहो. वासुदेव हरि भगवान्) ॥ ७ ॥

का शैलपुत्री ? किमु नेत्ररम्यं ? शुभार्भकः किं कुरुते फलानि ?
मोक्षस्य दाता स्मरणेन को वा ? गौरीमुखं चुम्बति वासुदेवः॥

भाषार्थ-इस श्लोककेभी तीन चरणोंमेंके चार प्रश्नोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा-शैलपुत्री का ? (हिमाचलकी पुत्री कौन है) ? गौरी (पार्वती)। नेत्ररम्यं किमु ? (नेत्रोंकी शोभाका स्थान कौनसा है) ? मुखम् (मुख)। शुभार्भकः फलानि किं कुरुते ? (सुन्दर बालकको गोदमें लेकर मनुष्य क्या करता है) ? चुम्बति (चुम्बन करता है)। स्मरणेन मोक्षस्य दाता कः ? (स्मरण करनेसे मोक्ष देनेवाला कौन है) ? वासुदेवः (हरि भगवान्) ॥ ८ ॥

का शंभुकान्ता ? किमु चन्द्रकांतं ?
कान्तामुखं किं कुरुते मनुष्यः ? ॥
कः श्रीपतिः ? का विषमा समस्या ?
गौरीमुखं चुम्बति वासुदेवः ॥ ९ ॥

भाषार्थ-इस श्लोकमेंभी पांच प्रश्नोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा-शम्भुकान्ता का (शिवजीकी स्त्री कौन है) ? गौरी (पार्वती)। किमु

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

चन्दकान्तम्? (चन्द्रमाके समान शोभावाला क्या है)? मुखम् (मुख)। मनुष्यः कान्तामुखं किं कुरुते? (स्त्रीके मुखकोमनुष्य क्या करता है)? चुंबति (चुम्बन करता है)। कः श्रीपतिः? (लक्ष्मीपति कौन हैं)? वासुदेवः (वासुदेव)। विषमा समस्या का? (कठिन समस्या कौनसी है)? गौरीमुखं चुंबति वासुदेवः (गौरीके मुखको वासुदेव चुबन करता है) ९

के भूषयन्ति स्तनमण्डलानि कीदृश्युमा चन्द्रमसः कुतः श्रीः किमाह सीता दशकंठनीता हा राम हादेवरतातमातः १०

भावार्थ—इस श्लोकके तीनचरणोंमेंके चार प्रश्नोंका उत्तर चौथे चरणमें कहा है यथा—" १ हारा, २ महादेवरता, ३ तमातः (रात्रितः), ४ हा-राम! हा देवरतातमातः!" स्तनमण्डलानि के भूषयन्ति? (स्तनमंडल-पर कौन सुशोभित होते हैं)? हाराः (मोतियोंके हार, रत्नोंके हार अथवा फूलोंके हार)। कीदृश्युमा? (कैसी है पार्वती)? महादेवरता (महादेवजीमें रत)। चन्द्रमसः कुतः श्रीः? (चन्द्रमाकी शोभा किससे है)? तमातः (रात्रितः) (रात्रिसे)। दशकंठनीता सीता किमाह? (रावणसे हरण की हुई सीता क्या कहती हुई)? हाराम! हा देवरतातमातः! (हाराम! हा देवर! हा पिता! हा मातः इसप्रकार विलाप करती भई)॥ १०॥

व्रजन्ति पद्मानि कदा विकासं? प्रियागते भर्तरि किं करोति? रात्रौ च नित्यं विरहाकुला का? सूर्योदये रोदिति चक्रवाकी

भावार्थ—इस श्लोकमें तीन चरणोंमेंके तीन प्रश्नोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथाकमल किस समय प्रफुल्लित होते हैं? सूर्यके उदयमें। पतिके चले जानेपर प्यारी क्या करती है? रोती है। रात्रिमें प्रतिदिन विरहसे आकुल कौन है? चकवी। (रातमें चकवाचकवीका वियोग हो जाता है॥ ११॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

रवेः कवेः किं समरस्य सारं कृषेर्भयं किं किमुशंति भृंगाः
खलाद्भयं विष्णुपदं च केषां भागीरथीतीरसमाश्रितानाम्॥

भावार्थ-इस श्लोकके तीनचरणोंमेंके सात प्रश्नोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा-"१ भाः (कांतिः), २ गीः (वाणी), ३ रथी (योद्धा), ४ ईतिः (अनावृष्ट्यादिः), ५ रसम् (पुष्परसम्), ६ आश्रितानाम्, ७ भागीरथीतीरसमाश्रितानाम्।" सूर्यका सार क्या है? कान्ति। कविका सार क्या है? वाणी। समरका सार क्या है? योद्धा। कृषि (खेती) को भय क्या है? अनावृष्टि आदि। भ्रमर क्या चाहते हैं? रस। खल (दुर्जन) से भय किनको है? आश्रितोंको, अर्थात् जो मनुष्य दुर्जनके आश्रय रहते हैं उनको। विष्णुपद (स्वर्ग) किनको प्राप्त होता है? भागीरथीतीरआश्रयवालोंको, अर्थात् गंगाजीके तटपर वास करनेवालोंको॥ १२॥

सन्तश्च लुब्धाश्च महर्षिसंघा विप्राः कृषिष्ठा खलु माननीयाः।
किं किं समिच्छन्ति तथैव सर्वे नेच्छन्ति किं? माधवदाघयानम्

भावार्थ-इस श्लोकमेंके सात प्रश्नोंका उत्तर श्लोकांतके सात अक्षरोंमें दिया है. तहां प्रथम छे प्रश्नोंके उत्तर क्रमसे छे अक्षरोंमें 'नम्' यह मिलाकर दिये हैं. और सातवें प्रश्नका उत्तर सातौ अक्षर मिलकर दिया है. यथा-१ मानम्, २ धनम्, ३ वनम्, ४ दानम्, ५ घनम्, (मेघम्), ६ यानम्, ७ माधवदाघयानम्। माधवे (वैशाखे) दाघः (ऊष्मा) तस्मिन् (यानम्) गमनम्। १ सन्तः, २ लुब्धाः, ३ महर्षिसंघाः, ४ विप्राः, ५ कृषिष्ठाः, ६ माननीयाः किं किं समिच्छन्ति? ७ तथैव सर्वे किं नेच्छन्ति? "माधवदाघयानम्"। सन्तजन क्या चाहते हैं? मान। लोभीजन क्या चाहते हैं? धन। महर्षिगण क्या

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

चाहते हैं ? वन । विप्रलोग क्या चाहते हैं ? दान । खेती करनेवाले लोग क्या चाहते हैं ? घन (मेघ) । माननीय पुरुष क्या चाहते हैं ? यान (सवारी) । तथा सब क्या नहीं चाहते हैं ? वैशाखमासमें गरमीके समय गमन ॥ १३ ॥

किं भूषणं सुंदरसुंदरीणां ?
किं दूषणं पांथजनस्य नित्यम् ? ॥
कस्मिन्विधात्रा लिखितं जनानां ?
सिन्दूरबिन्दुर्विधवाललाटे ॥ १४ ॥

भावार्थ–इस श्लोकके तीन चरणोंमें तीन प्रश्न कर उनका उत्तर चौथे चरणमें दिया है. यथा–" १ सिन्दूरबिन्दुः, २ विधवा, ३ ललाटे " । सौभाग्यवती स्त्रियोंका सुन्दर आभूषण क्या है ? सिन्दूरबिन्दुः । पथिकजनको सदा दूषण क्या है ? विधवा । विधाताने मनुष्योंके किस अंगमें लेख किया है ? ललाटमें ॥ १४ ॥

का पाण्डुपत्नी ? गृहभूषणं किं ?
को रामशत्रुः ? किमगस्त्यजन्म ? ॥
कः सूर्यपुत्रो ? विपरीतपृच्छा
कुन्तीसुतोरावणकुंभकर्णाः ॥ १५ ॥

भावार्थ–इस श्लोकमें छे प्रश्न किये हैं और उनके उत्तर चौथे चरणमें दिये हैं. यथा–" १ कुंती, २ सुतो, ३ रावण, ४ कुंभ, ५ कर्ण, ६ कुंतीसुतोरावणकुंभकर्णाः " । पांडुकी स्त्री कौन है ? कुंती । घरका भूषण कौन है ? सुत (पुत्र) । रामका शत्रु कौन है ? रावण, अगस्त्यमु-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

निका जन्मस्थान कौन कहा जाता है ? कुंभ (घट)। सूर्यपुत्र कौन है ? कर्ण। विपरीत प्रश्न कौन है ? कुन्तीसुत रावणकुंभकर्ण १५

क्व वसति लघुजन्तुः किं निदानं हि वान्ते-
र्झटिति वद पशुं कं लंबकंठं वदन्ति ॥
प्रसवसमयदुःखं वेत्ति का कामिनीनां ?
तिलतुषपुटकोणे मक्षिकोष्ट्रं प्रसूता ॥ १६ ॥

भाषार्थ–इस श्लोकके तीनचरणोंमेंके चार प्रश्नोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा–' १ तिलतुषपुटकोणे, २ मक्षिका, ३ उष्ट्रम्, ४ प्रसूता '। छोटा जीव कहां वसता है ? तिलकी भूमीके कौनेके मिलावमें. वान्ति (वमन)में क्या निदान (कारण) है ? मक्खी. अर्थात् मक्खी खानेसे वमन होने लगता है। वह कौन पशु है, जिसको लंबकंठवाला कहते हैं, सो शीघ्र बताओ. ऊँट। स्त्रियोंमें कौन स्त्री प्रसव (जन्म) समयके दुःखको जानती है ? प्रसूता ॥ १६ ॥

कः कान्तारमगात्पितुर्वचनतः संश्लिष्य कंठस्थलीम् ?
कामी किं कुरुते ? च गृध्रहठतश्छिन्नं प्ररूढं च किम् ? ॥
का रक्षःकुलकालरात्रिरभवच्चन्द्रातपं द्वेष्टि को ?
रामश्चुम्बति रावणस्य वदनं सीतावियोगातुरः ॥ १७ ॥

भाषार्थ–इस श्लोकके तीनचरणोंमेंके पांच प्रश्नोंका उत्तर चौथे चरणमें है. यथा–" १ रामः, २ चुम्बति, ३ रावणस्य वदनम्, ४ सीता, ५ वियोगातुरः। " पिताके वचनसे वनको कौन गया ? राम। कंठमें लगाकर कामीजन क्या करता है ? चुम्बन। गीध (जटायु) ने हठसे किसको छिन्न भिन्न किया ? रावणके वदनको। राक्षसकुलकी

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कालरात्रि कौन हुई ? सीता । चन्द्रमाकी चाँदनी किसको अच्छी नहीं लगती ? वियोगसे आतुरको, अर्थात् विरहीजनको ॥ १७ ॥

लंकाभूपनिशाचरो रघुपतिं युद्धे कथं दृष्टवान् ?
दीनं पाति पितेव यः पशुपतिः कस्तस्य वाहः प्रियः ? ॥
केनापूर्वफलं नरैः सुकृतिभिः कस्मिँस्थले भुज्यते ?
जारा ये भुवि तान्प्रशास्ति कतमो ? ह्येषामिहैवोत्तरम् १८

भावार्थ–इस श्लोकके चारौ चरणोंमें चार प्रश्न हैं. जिस चणरमें जो प्रश्न किया है उसी चरणमें उसका उत्तर है. परन्तु चरणके आदिके दो अक्षरोंको विलोम करके उत्तर निकलता है. जैसे–लंका–कालम् । दीनं–नंदी । केना–नाके (स्वर्गे) । जारा–राजा । १ लंकाका निशाचर राजा (रावण) युद्धमें रामचन्द्रजीको किस प्रकार देखता भया ? कालरूप । २ जो पशुपति (महादेव) दीनजनको पिताकी भांति पालता है, उसका प्यारा वाहन कौन है ? नंदी वृषभ । ३ मनुष्य अपने अच्छे कर्मोंका अपूर्व फल किस स्थानमें भोगता है ? नाके अर्थात् स्वर्गमें । ४ पृथ्वीपर जो जार लोग (व्यभिचारी) हैं उनको कौन दंड देता है ? राजा । इसप्रकार इनका उत्तर इसी श्लोकमें है १८

बहिरालाप–श्लोकाः ।

किमिच्छति नरः काश्यां ? भूपानां को रणे हितः ? ॥
को वन्द्यः सर्वदेवानां ? दीयतामेकमुत्तरम् ॥ १ ॥

भावार्थ–मनुष्य काशीमें क्या चाहता है, राजावोंको रणमें क्या हित है, सब देवतावोंमें कौन वन्दना करने योग्य है इन तीनौ प्रश्नोंका एक उत्तर दीजिये ‘ मृत्युंजयः ’ यथा–१ मृत्युम् , २ जयः, ३ मृत्युं-

---

१ बहिरालाप उसको कहते हैं जिसका उत्तर बाहरसे दिया जाय. श्लोकमें न हो ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जयः (महादेवः) । मनुष्य काशीमें मृत्यु चाहता है. राजा रणमें जय चाहता है. देवतावोंमें वन्दना करने योग्य महादेवजी हैं ॥ १ ॥

बुधः कीदृग्वचो ब्रूते? को रोगी ? कश्च नास्तिकः ? ॥
कीदृक्चन्द्रं नमस्यन्ति? किं सूत्रं पाणिनेर्वद ॥ २ ॥

भाषार्थ–इस श्लोकमें पांच प्रश्न हैं. १ पंडित कैसा वचन बोलता है ? २ रोगी कौन है ? ३ नास्तिक कौन है ? ४ लोग कौनसे चन्द्रमाको नमस्कार करते हैं ? ५ पाणिनिका सूत्र कौन है सो इनके उत्तरमें कहो. 'अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम्' । १ अर्थवत्, २ अधातुः, ३ अप्रत्ययः, ४ प्रातिपदिकम्, ५ अर्थवदधातुरप्रत्ययप्रातिपदिकम् । पंडित अर्थवत् (अर्थवाला) वचन बोलता है. विना अर्थ नहीं बोलता. रोगी वही है, जो अधातु (बिगडे हुये धातुवाला)- अर्थात् शरीरका सार जिसका बिगड जाता है, वही रोगी हो जाता है । नास्तिक वही है, जो अप्रत्यय (विश्वास, श्रद्धा, ज्ञान इनसे हीन)- अर्थात् ईश्वरादिमें जिसका विश्वास नहीं, श्रद्धा नहीं, ज्ञान नहीं है । उसी चन्द्रमाको लोग नमते हैं, जो प्रातिपदिक है अर्थात् प्रतिपदाके दिन द्वितीया तिथिसम्बधी चन्द्रमाको लोग नमस्कार करते हैं. जब कब चन्द्रदर्शनके समय द्वितीया नहीं होती है, तब दूसरे दिन लोग चन्द्रदर्शन करते हैं. परन्तु इस चन्द्रमाकी प्रातिपदिक संज्ञा है, अर्थात् इसको प्रातिपदिक कहते हैं. पाणिनीय व्याकरण (अष्टाध्यायी) का , अर्थवदधातुरप्रत्ययः प्रातिपदिकम् , यह सूत्र है ॥ २ ॥

भागीरथी कथंभूता ? कामिनी प्राह किं प्रियम् ? ॥
एकमेवोत्तरं देहि शास्त्रलौकिकभाषया ॥ ३ ॥

भाषार्थ–भागीरथी (गंगा) कैसी है ? कामिनी (स्त्री) प्रियको

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

क्या कहती है ? इन दोनौ प्रश्नोंका एकही उत्तर शास्त्र और लौकिक (महाराष्ट्र) भाषासे दीजिये. (मलापहा) । गंगा मलको दूर करती है. स्त्री अपने प्रियको महाराष्ट्रभाषामें ' मला पहा ' (मुझे देखो) कहती है ॥ ३ ॥

कस्मिन्स्वपिति कंसारिः ? का वृत्तिरधमा नृणाम् ? ॥
किं ब्रूते पितरं बालः ? किं दृष्ट्वा रमते मनः ? ॥ ४ ॥

भाषार्थ–इस श्लोकमें चार प्रश्न हैं. कंसारि (कंसके शत्रु ' विष्णुभगवान् ' नारायण) किसपर शयन करते हैं ? २ अधम मनुष्योंकी वृत्ति (जीविका) क्या है ? ३ बालक पिताको क्या कहता है ? ४ क्या देखकर मन रमता है ? उत्तर–शेषे सेवा वा पररूपम् । १ शेषे, २ सेवा, ३ वा, ४ पररूपम् । नारायण शेषशय्यापर शयन करते हैं. अधमजनकी जीविका सेवा है. पालक पिताको ' बा बा ' कहता है. पराया रूप देखकर मन रमता है ॥ ४ ॥

नीचेषु यावनी वाणी का ? कः स्याच्छुभदो जने ? ॥
शंभोरावरणं किं ? किं भजन्ते व्याधयो जनम् ? ॥ ५ ॥

भाषार्थ–इस श्लोकमेंभी चार प्रश्न हैं. नीचजनोंमें यावनी वाणी (मुसलमानी भाषा) क्या है ? २ मनुष्योंमें शुभदायक क्या है ? ३ शंभुजीका आवरण क्या है ? ४ किस मनुष्यको रोग घेरते हैं ? उत्तर–' अवेलाभोजिनम् ' । १ अबे, २ लाभः, ३ अजिनम्, ४ अवेलाभोजिनम् । नीचजनोंमें मुसलमानी भाषा ' अबे ' है. मनुष्योंमें शुभदायक ' लाभ ' है. शिवजीका आवरण ' अजिन ' (मृग छाला) है. रोग उसी मनुष्यको घेरते हैं, जो वेला (समय) पर भोजन नहीं करता है. कुसमय भोजन करनेसे मनुष्य रोगी हो जाता है ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

आनन्दयति कोऽत्यर्थं सज्जनानेव भूतले ॥ ?
प्रबोधयति पद्मानि ? तमांसि च निहन्ति कः ? ॥६॥

भाषार्थ-इस श्लोकमें तीन प्रश्न हैं. १ सज्जनोंको पृथिवीमें परम आनन्द क्या है ? २ कमलोंको कौन प्रफुल्लित करता है ? ३ अन्धकारको कौन दूर करता है ? उत्तर-'मित्रोदयः'। मित्रोंके आगमनसे अथवा मित्रोंकी बुद्धिसे सज्जन परम आनन्दित होते हैं. कमलोंको प्रफुल्लित करनेवाला और अन्धकारको दूर करनेवाला मित्रोदय है. (मित्र नाम सूर्यका है) अर्थात्, सूर्यका उदय होनेसे कमल खिल जाते हैं और अन्धकार नष्ट हो जाता है ॥ ६ ॥

को दुराढ्यस्य मोहाय ? का प्रिया मुरविद्विषः ? ॥
पदं प्रश्नवितर्के किं ? को दन्तच्छदभूषणम् ? ॥ ७ ॥

भाषार्थ-इस श्लोकमेंभी चार प्रश्न हैं. १ नीचतासे युक्त जनके मोहनिमित्त कौन वस्तु है अथवा कठिनतासे युक्त वस्तुको प्राप्त करानेवाला कौन है ? २ मुरारि (हरिभगवान्) की प्रिया कौन है ? ३ वितर्कमें कौन पद पूछा जाता है ? ४ दन्तच्छद (होठ) का भूषण क्या है ? उत्तर-'रामानुरागः'। राः (धनम्), मा (लक्ष्मी), नु (इति वितर्के), रागः (आरक्तत्वम्) । नीचजनको मोहनेवाला धन है. कठिनवस्तु धनसे प्राप्त हो जाती है. हरिभगवान्की प्रिया लक्ष्मी है. वितर्कमें 'नु' यह शब्द कहा जाता है. होठोंकी शोभा आरक्तत्व है ॥ ७ ॥

किं मुंचंति पयोवाहाः ? कीदृशी हरिवल्लभा ? ॥
पूजायां किं पदं ? कोऽग्निः ? कः कृष्णेन हतो जनः ? ८

भाषार्थ-इस श्लोकमेंभी पांच प्रश्न हैं. १ मेघ क्या छोडते हैं ?

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

१ हरिकी प्यारी कैसी है ? ३ पूजामें कौन पद उच्चारण होता है ? ४ अग्निका पद कौन है ? ५ कृष्णचन्द्रने किस जनको मारा ? उत्तर 'कंसासुरः'। कं (जलम्), सा (एव) कृष्णेन सह वर्तमाना 'लक्ष्मी' सुः (पूजायाम्), रः (अग्निः), 'कंसासुर' एतन्नामा दैत्यः। मेघ जल छोडते हैं. हरिकी प्यारी लक्ष्मी है. पूजामें 'सुः' पद उच्चारण होता है 'रः' यह अग्निबीज है. कृष्णचन्द्रजीने कंसासुरको मारा ॥ ८ ॥

को विख्यातावहेः शत्रू ? शोकं वदति किं पदम् ? ॥
कोऽभीष्टोऽतिदरिद्रस्य ? सेव्यते कं च भिक्षुभिः ? ॥ ९ ॥

भाषार्थ—इस श्लोकमें चार प्रश्न हैं. १ सांपके शत्रु कौन दो पक्षी हैं ? २ शोकके समय कौन पद उच्चारण किया जाता है ? ३ अतिदरिद्रको क्या अभीष्ट है ? ४ भिक्षुकजनोंकरके कौन सेवनीय है ? उत्तर— 'वीहाराः'। विश्व विश्व वी (गरुडमयूरौ), 'हा' इति खेदे, राः (द्रव्यम्) वीहाराः (तीर्थभूमयः)। सांपके शत्रु गरुड और मोर ये दो पक्षी हैं। शोकमें 'हा' कहते हैं। 'हा' यह पद शोक होनेपर उच्चारण किया जाता है। अतिदरिद्री द्रव्य चाहता है। भिक्षुकजन तीर्थभूमिसेवन करते हैं ॥ ९ ॥

सानुजः काननं गत्वा नैषकेयाञ्जघान कः ? ॥
मध्ये वर्णत्रयं दत्त्वा रावणः कीदृशो वद ? ॥ १० ॥

भाषार्थ—अनुजसमेत वनको जाकर राक्षसोंको मारा सो कौन है ? इसके मध्यमें तीन अक्षर देकर, रावण किसप्रकार है सो बताओ. उत्तर—'राक्षसोत्तमः' (राक्षसोंमें उत्तम रावण) 'राक्षसोत्तमः' इसके बीचमेंके तीन अक्षर 'रामः' के मध्यमें मिला देनेसे 'राक्षसोत्तमः' यह शब्द बन गया ॥ १० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

को नयति जगदशेषं ? क्षयमथ बिभरांबभूव कं विष्णुः ? ॥
नीचः कुत्र सगर्वः ? पाणिनिसूत्रं च कीदृक्षम् ॥ ११ ॥

भाषार्थ—इस श्लोकमें चार प्रश्न हैं. १ अशेष (समस्त) जगत्को कौन क्षय (दंडित) करता है ? २ विष्णुने किसको धारण किया था ? ३ नीचजन कहां गर्ववाला हो जाता है ? ४ इनके उत्तरमें पाणिनिसूत्र कौनसा है ? उत्तर—' यमोऽगन्धने ' । यमः, अंग (गोवर्धनम्), धने । यमोऽगन्धने । समस्त जगत्को दंडित करनेवाला ' यम ' है. श्रीकृष्णचन्द्रजीने गोवर्धनपर्वतको धारण किया था. नीचजन धन पानेपर अभिमानी हो जाता है. पाणिनीयव्याकरणमें " यमोऽगन्धने " यह सूत्र इनके उत्तरमें है ॥ ११ ॥

राज्ञः संबोधनं किं स्यात् ? सुग्रीवस्य तु का प्रिया ? ॥
अधनास्तु किमिच्छन्ति ? आर्तैः किं क्रियते वद ॥१२

भाषार्थ—राजाका संबोधन क्या है ? सुग्रीवकी प्रिया कौन है ? धनहीन पुरुष क्या चाहते हैं ? आर्तजनोंकरके क्या किया जाता है ? उत्तर—" देवताराधन " चार प्रश्नोंका उत्तर इस प्रकार है कि—' १ देव, २ तारा, ३ धन, ४ देवताराधन।' राजाका संबोधन ' देव ' है. सुग्रीवकी प्रिया ' तारा ' है. धनहीन पुरुष ' धन ' चाहते हैं. पीडितजन ' देवताराधन ' करते हैं ॥ १२ ॥

मेघात्यये भवति किं सुभगावगाहं
का वा विडम्बयति वारणमल्लवेश्याः ।
दुर्वारवीर्यविभवस्य भवेद्रणे कः
काः स्मेरवक्त्रसुभगास्तरणिः प्रभाभिः ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-मेघद्वारा पूर्णजलप्रवाहसे सुशोभित कौन होता है ? कौन सुन्दरी वेश्या कब विडम्बनाको प्राप्त होती है ? रणमें महाबली पुरुष कौनसे विभवको प्राप्त होता है ? सूर्यकी प्रभाओंसे कौन खिलकर शोभाको प्राप्त होता है ? इन चार प्रश्नोंका उत्तर 'सरोजराजयः' यह है । १ सरस्तडागम्, २ जरा (वयोहानिः) ३, जयः, ४ सरोजराजयः (कमलश्रेणयः) । मेघद्वारा तडाग जलसे पूर्ण होकर शोभाको प्राप्त होता है. सुन्दरी वेश्या अवस्था क्षीण होनेपर विडम्बनाको प्राप्त होती है. रणमें महाबली पुरुष जयको प्राप्त होता है. सूर्यकी किरणोंसे कमलपंक्तियां खिलकर शोभाको प्राप्त होती हैं ॥ १३ ॥

आगे चार श्लोक केवल टिप्पणीमात्रसे लिखते हैं ।[1]

कल्याणवाक् त्वमिव किं पदमत्र कान्तं ?
मद्भूपते त्वमिव कः परितोषकारी ? ॥
कः सर्वदा वृषगतिस्त्वमिवार्तिमात्रं ?
भूत्याश्रितः कथय पालितसर्वभूतः ॥ १४ ॥

टिप्पणी-शंकरः । १ शं (सुखम्), २ करो (राजभागः), ३ शंकरो (महादेवः) ॥ १४ ॥

इस श्लोकमें तीन प्रश्न हैं. तीनोंका उत्तर टिप्पणीमें अंकानुसार जानो ॥ १४ ॥

सूर्यस्य का तिमिरकुंजरवृन्दसिंही ?
सत्यस्य का सुकृतवारिधिचन्द्रलेखा ? ॥
पार्थश्च कीदृगरिदावहुताशनोऽभूत् ।
का मालती कुसुमदामहरस्य मूर्ध्नि ? ॥ १५ ॥

---

१ इससे आगे चार श्लोकोंकी टीका विस्तारभयसे नहीं लिखी. और इनके भाषान्तरसे इतना आनन्द नहीं कि-जितना केवल टिप्पणीमात्रसे है ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी–'भागीरथी'। १ भाः (कान्तिः), २ गीः (वाणी), ३ रथी (रथो विद्यते यस्य सः रथी), ४ भागीरथी (गंगा) ॥१५॥

इस श्लोकमें चार प्रश्न हैं. चारौ प्रश्नोंका उत्तर टिप्पणीमें अंकानुसार जानौ ॥ १५ ॥

कः खे भाति हतो निशाचरपतिः केनाम्बुधौ मज्जतिः।
कः कीदृग्तरुणी विलासगमनं को नाम राज्ञां प्रियः॥
पत्रं किं नृपतेः किमप्सु ललितं को रामरामाहरो।
मत्प्रश्नोत्तरमध्यमाक्षरपदं यत्तत्तवाशीर्वचः ॥ १६ ॥

टिप्पणी–१ ग्रहेशः, २ रामेण, ३ मैनाकः, ४ मंथरं, ५ सचिवः ६ तुरंगः, ७ राजीवं, ८ रावणः। एतन्मध्यमाक्षरघटितं वाक्यं 'हे मे नाथ! चिरंजीव!' इति राजानं प्रति आशीर्वचनम् ॥ १६ ॥

इस श्लोकमें आठ प्रश्न हैं. आठौ प्रश्नोंके उत्तरोंको अंकानुसार जानौ. उनके मध्यके अक्षर लेके राजाके प्रति आशीर्वादवचन है ॥ १६ ॥

क्षोणी कंसहते करोति दिवि का नृत्यं शिवायाः पति-।
र्भूतानां कमयुंक्त जीवहरणे का रामशत्रोः पुरी॥
कं रक्षन्ति च साधवः पशुपतेः किं वाहनं प्रोच्यता-।
मालोमप्रतिलोमशास्त्रचतुरैरेकं द्वयोरुत्तरम् ॥ १७ ॥

टिप्पणी–१ भारं, २ रंभा, ३ कालं, ४ लंका, ५ दीनं, ६ नंदी १७

इस श्लोकमें छे प्रश्न हैं. सबका उत्तर अंकानुसार जानै. आलोमप्रतिलोम करके दो दो अक्षरोंका उत्तर है ॥ १७ ॥

प्रश्नोत्तरश्लोकाः।

कियन्मात्रं जलं? विप्र! जानुदघ्नं नराधिप!॥
तथापीयमवस्था ते नहि सर्वे भवादृशाः॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

टिप्पणी—प्रथमपादस्तृतीयपादश्च नदीमुत्तितीर्षोर्भोजस्योक्तिः । द्वितीयपादश्चतुर्थपादश्च राजदर्शनार्थं छद्मना काष्ठभारवाहपण्डितस्य प्रत्युक्तिः ॥ १ ॥

इस श्लोकमें राजा भोजका प्रश्न है और राजदर्शनार्थ लकडेहरेके रूपमें एक पंडितका उत्तर है. पहले तीसरे पादमें राजाने प्रश्न किया और दूसरे व चौथे चरणमें पंडितने उत्तर दिया ॥ १ ॥

भवित्री रंभोरु त्रिदशवदनग्लानिरधुना ॥
स रामो मे स्थाता न युधि पुरतो लक्ष्मणसखः ॥
इयं यास्यत्युच्चैर्विपदमधुना वानरचमू-
र्लघिष्ठेदं षष्ठाक्षरपरविलोपात्पठ पुनः ॥ २ ॥

टिप्पणी—प्रतिचरणसप्तमाक्षरविलोपाद्द्वितीयोऽर्थ उद्भवति । पूर्वचरणत्रयं रावणस्य सीतां प्रति उक्तिः । चतुर्थचरणस्तु तस्याः प्रत्युत्तरम् ॥२॥

इस श्लोकमें तीन चरण रावणके प्रश्नरूप हैं. चौथे चरणमें सीताजीने उत्तर दियां है. यह श्लोक हनुमन्नाटकमेंका है ॥ २ ॥

भाषाचित्र—श्लोक ।

हरनयनहुताशज्वालया जो जलाया ।
रतिनयनजलौघैः खाक वाकी बहाया ॥
तदपि दहति चित्तं माक क्या मैं करोंगी ।
मदनसरसि भूयः क्या बला आग लागी ॥ १ ॥

दृष्ट्वा तत्र विचित्रतां सुमनसा मैं था गया बागमें ।
काचित्तत्र कुरंगशावनयनी गुल तोडती थी खडी ॥
उन्नद्भ्रूधनुषा कटाक्षविशिखैः घायल किया था मुझे ।
तत्रासीन्महती विमोहजलधौ है दिलगुजारी शुकर ॥ २ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

उपरोक्त दोनौं श्लोकोंका अर्थ बहुत सरल है, इससे नहीं लिखा १२

संस्कृतचित्र—श्लोक।

रसासार रसासार सायताक्ष क्षतायसा।
सातावात तवातासा रक्षतस्त्वस्त्वतक्षर॥ १॥
नमामि मामनो नुन्नमानं मुनिममानिनम्।
नानाननममानाममों नामानमुमेनमुम्॥ २॥
तंभूतामुक्तिमुदारहासं वंदे यतो भव्यभवं दयाश्री।
श्रीयादवं भव्यमतो यदेवं संहारदामुक्तिमुतासुभूतम्॥३॥
चिरं विरंचिर्न चिरं विरंचि साकारता सत्यसतारका सा।
साकारतासत्यसतारकासा चिरं विरंचिर्नचिरं विरंचि॥४

उपरोक्त चार श्लोकोंमेंसे पहला श्लोक चन्द्रदेवकृत है. इस श्लोकमें राजाको आशीर्वाद दिया है और उपदेशभी किया है। दूसरा श्लोक शार्ङ्गधरकृत है. इसमें हरिहर भगवान्को नमस्कार किया है. तीसरा और चौथा श्लोक रामकृष्णविलोमकाव्यका पहला दूसरा श्लोक है. आधे श्लोकोंमें रामचरित्र है, आधे श्लोकमें कृष्णचरित्र है. इन श्लोकोंमें संस्कृतवेत्ताओंको परम आनन्द आता है. भाषा जाननेवालेको नहीं आता।

अथ नवरसवर्णनम्।

शृंगारवीरकरुणाद्भुतहास्यभयानकाः।
बीभत्सरौद्रशांताश्च नवधा कीर्तिता रसाः॥ १॥

१ रामकृष्णविलोमकाव्यका भाषानुवाद करके हमने हरिप्रसादभगीरथजीको छापनेनिमित दिया है. बहुतही उत्तम काव्य सूर्यकविकृत है।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—१ शृंगार, २ वीर, ३ करुण, ४ अद्भुत, ५ हास्य, ६ भयानक, ७ बीभत्स, ८ रौद्र, ९ शान्त ये नवरस कहे हैं ॥ १ ॥

तत्रादौ शृंगाररसनिर्देशे कामदेवप्रशंसा ।

एकं वस्तु द्विधा कर्तुं बहवः सन्ति धन्विनः ।
धन्वी स मार एवैको द्वयोरैक्यं करोति यः ॥ १ ॥

भाषार्थ—एक वस्तुके दो खंड करनेको बहुतसे धनुर्धारी हैं. परन्तु यह कामदेव ऐसा धनुर्धर है कि जो दो वस्तुओंको एक कर देता है, अर्थात् स्त्रीपुरुषरूप जोडाको एकमनवाला कर देता है ॥ १ ॥

स्त्रीप्रशंसा ।

न हयैर्नच मातङ्गैर्न रथैर्न च पत्तिभिः
स्त्रीणामपांगदृष्टचैव जीयते जगतां त्रयम् ॥ २ ॥

भाषार्थ—यह जगत् न घोडोंसे, न हाथियोंसे, न रथीजनोंसे और न पैदलोंसे इसप्रकार जीता गया, जैसा कि स्त्रियोंके केवल दृष्टिसेही तीनौं लोक जीत लिये गये हैं ॥ २ ॥

स्त्रियः पवित्रमतुलं नैता दुष्यन्ति कर्हिचित् ।
मासि मासि रजो यासां दुष्कृतान्यपकर्षति ॥ ३ ॥

भाषार्थ—स्त्रियां परम पवित्र हैं. इनको कोईभी दोषयुक्त नहीं समझते हैं. क्योंकि, महीना महीनामें उनका पाप रजद्वारा निकल जाता है ॥ ३ ॥

दृशा दग्धं मनसिजं जीवयन्ति दृशैव याः ।
विरूपाक्षस्य जयिनीस्तां स्तुवे वामलोचनाः ॥ ४ ॥

भाषार्थ—भगवान् शंकरने अपनी दृष्टिसे दग्ध किये हुए कामदेवको

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्त्रियां अपनी दृष्टिसेही फिर जिवित करती हैं। इसप्रकार शंकरको जीतनेवाली स्त्रियोंकी मैं स्तुति करता हू॥ ४॥

सोमः शौचं ददौ तासां गन्धर्वाश्च शुभां गिरम्।
अग्निः सर्वांगकान्तित्वं तस्मान्निष्कसमाः स्त्रियः॥ ५॥

भाषार्थ–स्त्रियोंको सोमदेव शौचप्रदान करता भया, गन्धर्व उत्तम वाणी और अग्निदेव सब अंगोंमें कान्तिप्रदान करता भया. इसकारण स्त्रियां निष्कसमान (सुवर्णसदृश) हैं॥ ५॥

प्राणानां च प्रिया याश्च मूढाः सादृश्यकारिणः।
प्रिया कंठगता रत्यै प्राणा मरणहेतवः॥ ६ ॥

भाषार्थ–मूढलोग प्राण और प्रियाको समानभावसे मानते हैं, अर्थात् प्राण और प्रियाकी एक तुलना करते हैं. प्रिया रतिकरके कंठगत होती है, अर्थात् कण्ठगत होनेसे प्रिया प्रीतिको बढाती है और प्राण कंठगत होनेसे मरणका हेतु है. अर्थात् कंठगत प्राण होनेसे मनुष्य मृत्युको प्राप्त होता है॥ ६॥

यासामञ्चलवातेन दीपो निर्वाणतां गतः।
तासामालिङ्गने पुंसां नरके पतनं कुतः?॥ ७॥

भाषार्थ–जिनके अंचलकी वायुसे दीपक निर्वाण (शान्ति)को प्राप्त होता है, तो उनके आलिंगनमें पुरुषोंको नरकमें गिरना कैसा?॥ ७॥

नामृतं न विषं किंचिदेकां भुक्त्वा नितम्बिनीम्॥
यस्याः संगेन जीव्येत म्रियत च वियोगतः॥ ८॥

भाषार्थ–एक स्त्रीको छोडकर और कोई न अमृत है, न विष है. क्योंकि–जिसके संगसे मनुष्य जी जावै और वियोगसे मर जावै॥ ८॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अमृतस्येव कुण्डानि रत्नानामिव राशयः ।
रतेरिव निधानानि योषितः केन निर्मिताः ? ॥९॥

भाषार्थ–अमृतके मानों कुंड, रत्नोंकी मानों राशियां, रतिके मानों निधान (कुबेरके भंडार) ऐसी स्त्रियां किसने बनाई ? ॥ ९ ॥

हरिणप्रेक्षणा यत्र गृहिणी न विलोक्यते ।
सेवितं सर्वसम्पद्भिरपि तद्भवनं वनम् ॥ १० ॥

भाषार्थ–जहां (जिस घरमें) मृगनयनी स्त्री नहीं है, सम्पूर्ण सम्पदाओंसे युक्त होनेपरभी वह घर वन है ॥ १० ॥

यावद्दृष्टिर्मृगाक्षीणां नो नरीनर्ति भङ्गुरा ।
तावज्ज्ञानवतां चित्ते विवेकः कुरुते पदम् ॥ ११ ॥

भाषार्थ–जबतक मृगनयनी स्त्रियोंकी बाँकी चितवन सामने नहीं नाचती, तभीतक ज्ञानियोंके चित्तमें विवेक स्थान पाता है ॥ ११ ॥

यासां नाम्नापि कामः स्यात्संगमं दर्शनं विना ॥
तासां दृक्संगमं प्राप्य यन्न द्रवति कौतुकम् ! ॥ १२ ॥

भाषार्थ–जिनके नामसेही काम प्रगट हो जाता है और विना दर्शन कियेही संगम हो जाता है, उनके नेत्रसंगमको प्राप्त होकर अर्थात् उनको देखकर, जो नहीं द्रवै तो आश्चर्यकी बात है ! ॥ १२ ॥

प्रभवति मनसि विवेको विदुषामपि शास्त्रसंभवस्तावत् ।
निपतन्ति दृष्टिविशिखा यावन्नेन्दीवराक्षीणाम् ॥१३॥

भाषार्थ–पंडितोंकेभी मनमें शास्त्रोंसे उत्पन्न ज्ञान तबतक होता है, जबतक कमलसमान नेत्रोंवाली स्त्रियोंके कटाक्षरूपी बाण नहीं गिरते हैं, अर्थात् जबतक सुन्दरी स्त्रियोंके कटाक्ष बाणोंकी बौछार नहीं होती तभीतक पंडितोंके मनमें शास्त्रज्ञान ठहरता है ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तावदेव कृतिनां हृदि स्फुरत्येष निर्मलविवेकदीपकः ।
यावदेव न कुरंगचक्षुषां ताड्यते चपललोचनाञ्चलैः १४

भाषार्थ–साधुजनोंके हृदयमेंभी निर्मल ज्ञानदीपक तभीतक प्रकाश करता है, जबतक मृगनयनियोंके कटाक्ष (तिरछी चितवन) की मार नहीं पडती है ॥ १४ ॥

तावदेव विदुषां विवेकिनी बुद्धिरस्ति भवबन्धभेदिनी ।
यावदिन्दुवदना न कामिनी वीक्षिता रहसि हंसगामिनी १५

भाषार्थ–पंडितोंकी बुद्धि तभीतक ज्ञान और विचारवाली तथा संसारके बन्धनोंको छेदन करनेवाली है. जबतक चन्द्रमुखी हंसगामिनी स्त्री एकान्तमें नहीं देखी ॥ १५ ॥

उडुराजमुखी मृगराजकटिर्गजराजविराजितमन्दगतिः ।
यदि सा वनिता हृदयेनिहिता क्वजपः क्व तपः क्वसमाधिविधिः

भाषार्थ–चन्द्रमाके समान मुखवाली अर्थात् चन्द्रवदना और मृगराज (सिंह) के समान कटिवाली अर्थात् पतली कमरवाली, तथा गजराजकी भांति मन्दगतिसे शोभावाली अर्थात् मन्दमन्द गमन करनेसे परमशोभावाली चाल जिसकी ऐसी स्त्री, यदि हृदयमें वस गई तब कहां जप, कहां तप और कहां समाधिविधि ? ॥ १६ ॥

आस्यं सहास्यं नयनं सलास्यं
सिन्दूरबिन्दूदयशोभि भालम् ।

1 'रतिः' इत्यपि पाठः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

नवा च वाणी हरिणीदृशश्चे-
दन्यैरगण्यैरपि भूषणैः किम् ? ॥ १७ ॥

भावार्थ–हास्ययुक्तमुख अर्थात् मन्द मुसक्यानवाला मुखारविन्द, शीलयुक्त अथवा रसीले और लाजभरे नयन, तथा बाँकी चितवन, मस्तकपर सिन्दूरके बिन्दुकी शोभा, अर्थात् सिन्दूरके बिन्दुसे शोभावाला मस्तक, शिरपर नवीन वेणी (चोटी), हरिणीके समान नेत्र अर्थात् कटाक्षवाली ऐसी शोभा यदि स्त्रीमें हो तो, उसके निमित्त अन्य अनेक आभूषणोंकी क्या आवश्यकता है ? ॥ १७ ॥

उपनिषदः परिपीता गीतापि च हन्त ! मतिपथं नीता ॥
तदपि न हा ! विधुवदना मानससदनाद्बहिर्याति ॥ १८ ॥

भावार्थ–उपनिषद्विद्याको भलीभांति पान कर लिया और गीताकोभी बुद्धिद्वारा भलीभांति विचारा, तोभी हा ! बडे खेदकी बात है कि–चन्द्रमुखी स्त्री मनरूपी घरसे बाहर नहीं निकलती है ॥ १८ ॥

मात्सर्यमुत्सार्य विचार्य कार्यमार्याः समर्यादमिदं वदन्तु ॥
सेव्या नितंबा किमु भूधराणामुत स्मरस्मेरविलासिनीनाम्

भावार्थ–हे श्रेष्ठपुरुषो ! द्वेषभावको त्यागकर और कार्यको विचारकर, मर्यादसहित यह बताओ कि–पर्वतोंके नितम्ब सेव्य हैं, अथवा स्त्रीजनोंके नितम्ब सेव्य हैं ॥ १९ ॥

अदर्शने दर्शनमात्रकामा दृष्ट्वा परिष्वंगरसैकलोलाः ॥
आलिङ्गितायां पुनरायताक्ष्यामाशास्महे विग्रहयोरभेदम् २०

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जबतक दर्शन नहीं होता तबतक दर्शनमात्रकी इच्छा होती है, कि-हमको दर्शन हो जाय. जब दर्शन हो जाता है तब आलिंगनरसकी इच्छा होती है और जब आलिंगनरस प्राप्त हो जाता है, तब हम यह चाहते हैं कि-यह विशालनेत्रोंवाली अब हमारे शरीरसे विलग न होवै ॥ २० ॥

नूनं हि ते कविवरा विपरीतबोधा
ये नित्यमाहुरबला इति कामिनीस्ताः ॥
याभिर्विलोलतरतारकदृष्टिपातैः
शक्रादयोऽपि विजितास्त्वबलाः कथं ताः २१

भाषार्थ-निश्चयकरके वे कविवर विपरीतबोधवाले हैं, जो सर्वदा उन स्त्रियोंको 'अबला (बलहीन)' कहते हैं. जिन स्त्रियोंने अतिचंचल दृष्टि डालकरके इन्द्रादिक देवताओंकोभी जीत लिया है, वे अबला कैसे हो सकती हैं ? उनको तो 'सबला' हि कहना चाहिये २१

विश्वामित्रपराशरप्रभृतयो वाताम्बुपर्णाशना-
स्तेऽपि स्त्रीमुखपङ्कजं सुललितं दृष्ट्वैव मोहं गताः ॥
शाल्यन्नं सघृतं पयोदधियुतं ये भुञ्जते मानवा-
स्तेषामिन्द्रियनिग्रहो यदि भवेद्विन्ध्यस्तरेत्सागरम् २२

भाषार्थ-विश्वामित्रपराशर आदि मुनिजन-जो वायु, जल और वृक्षोंके पत्ते खाकर रहनेवाले वेभी-स्त्रीके सुन्दर मुखकमलको देखतेही मोहको प्राप्त हो गये. तब जो चावलोंमें घी-दूध मिलाकर खाते हैं और दहीसहित चावल भोजन करते हैं, उन मनुष्योंसे यदि इन्द्रियनिग्रह होवै, अर्थात् ऐसे मनुष्य यदि इन्द्रियोंको रोक लेवैं, तो ऐसा मानों

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कि–विन्ध्याचल समुद्रको तर गया ! सारांश यह कि–इन्द्रियोंको रोकना महाकठिन काम है ॥ २२ ॥

न देवकन्यका नापि गन्धर्वकुलसंभवा ॥
तथाप्येषा तपोभङ्गं विधातुं वेधसोऽप्यलम् ॥२३॥

भाषार्थ–न देवकन्या है, न गन्धर्वकुलमें उत्पन्न है. तोभी यह स्त्री विधिकेभी तपका भङ्ग करनेको समर्थ है ॥ २३ ॥

मन्दमन्दगमना करिणी किं ? वा विशालनयना हरिणी किम्?
पूर्णचन्द्रमदना रजनी किं?पश्य गच्छति सखे!तरुणीकिम्२४

भाषार्थ–मन्दमन्द गमन करनेवाली क्या करिणी है, अथवा विशालनेत्रोंवाली क्या हरिणी है, किंवा पूर्णचन्द्रमावाली क्या रजनी है ? हे सखे ! देख, क्या तरुणी जा रही है ? ॥ २४ ॥

स्त्रीस्वभावनिन्दा ।

अनृतं साहसं माया मूर्खत्वमतिलोभता ॥
अशौचं निर्दयत्वं च स्त्रीणां दोषाः स्वभावजाः२५॥

भाषार्थ–१ अनृत (झूंठ), २ साहस (सहसा काम कर बैठना), ३ माया (छल), ४ मूर्खता, ५ अधिक लोभ करना, ६ अपवित्रता, ७ दयाहीन होना स्त्रियोंके ये दोष स्वाभाविक हैं ॥ २५ ॥ तुलसीकृतरामायणमेंभी लिखा है कि–

नारिस्वभाव सत्य कवि कहहीं । औगुण आठ सदा उर रहहीं ॥

स्त्रीके स्वभावका वर्णन इस कारण यहां किया है कि–जिससे सज्जन स्वभावकी खोटी स्त्रियोंसे बचे रहें और अपनी स्त्रियोंके स्वभावको ठीक करें ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सहसा, अनृत, चपलता, माया, । भय, अविवेक, अशौच, अदाया ॥
परंतु ये स्वभाव खोटी स्त्रियोंके हैं।

कामनाम्ना किरातेन वितता मूढचेतसाम् ॥
नार्यो नरविहंगानामङ्गबन्धनवागुराः ॥ २६ ॥

भाषार्थ–कामनामवाले भीलने मूढचित्तवाले मनुष्यरूप पक्षियोंका अंग बांधनेको स्त्रीरूपी पाश (जाल) फैला रक्खा है. अर्थात् मनुष्योंके बांधनेको स्त्रीरूपी जाल कामदेवने फैलाया है ॥ २६ ॥

यो मोहान्मन्यते मूढो रक्तेयं मम कामिनी ॥
स तस्या वशगो नित्यं भवेत्क्रीडाशकुन्तवत् ॥ २७ ॥

भाषार्थ–जो मूढ मनुष्य, मोहसे ऐसा मानता है कि–'यह कामिनी (स्त्री) मुझपर आसक्त है' वह मनुष्य इसप्रकार सदैव उसके वशीभूत हो जाता है. जिस प्रकार क्रीडा (खेल) वाला पक्षी वशमें हो जाता है ॥ २७ ॥

दर्शनाद्धरते चित्तं स्पर्शनाद्धरते धनम् ॥
संगमाद्धरते सत्वं नारी प्रत्यक्षराक्षसी ॥ २८ ॥

भाषार्थ–दर्शनसे चित्तको ग्रसती है, अर्थात् दर्शनमात्रसेही मनको मोह लेती है और स्पर्श (छूने) से धनको हर लेती है, तथा संगमसे बलको हर लेती है. नारी (स्त्री) प्रत्यक्ष राक्षसी है ॥ २८ ॥

नासां कश्चिदगम्योऽस्ति नासां च वयसि स्थितिः ॥
विरूपं रूपवन्तं च पुमानित्येव भुञ्जते ॥ २९ ॥

भाषार्थ–स्त्रियोंको कोईभी अगम्य नहीं है और न अवस्थाकी

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्थिति है. कुरूप हो अथवा रूपवान् हो, स्त्रियोंको तो भोगनेके निमित्त पुरुष चाहिये ॥ २९ ॥

सुन्दरं पुरुषं दृष्ट्वा भ्रातरं यदि वा सुतम् ॥
योनिः क्लिद्यति नारीणामामपात्रमिवाम्भसा ॥ ३०

भावार्थ–इस श्लोकका अर्थ संस्कृतज्ञ जन मनमेंही समझ लेवैं. स्त्रीका खोटापन दूर करनेके लिये ऐसे श्लोक शिक्षारूपसे लिख देना उचित समझा है. जिसका खोटा स्वभाव प्रगट कर दिया जाता है, वह मनमें लज्जित होकर उस स्वभावको बदलकर उत्तमस्वभाव करनेका प्रयत्न करता है ऐसाभी देखनेमें आता है ॥ ३० ॥

न स्त्रीणामप्रियः कश्चित्प्रियो वापि न विद्यते ॥
गावस्तृणमिवारण्ये प्रार्थयन्ति नवं नवम् ॥ ३१ ॥

भावार्थ–स्त्रियोंको कोई अप्रिय नहीं है, अथवा कोई प्रियभी नहीं है. वे प्रतिदिन, नवीन पुरुषकी इच्छा करती हैं. जैसे, गौवें वनमें नवीन नवीन घास चाहती हैं ॥ ३१ ॥

माद्यति प्रमदां दृष्ट्वा सुरां पीत्वा न माद्यति ॥
यस्माद्दृष्टिमदा नारी तस्मात्तां परिवर्जयेत् ॥ ३२ ॥

भावार्थ–स्त्रीको देखकर मनुष्यको मद (नशा) आ जाता है. सुरा (मदिरा) पीकर इतना मद नहीं आता है. नारी दृष्टिसेही मद (नशा) की उत्पत्ति करती है. इसकारण उसका त्याग करै ॥ ३२ ॥

यस्य स्त्री तस्य भोगेच्छा निःस्त्रीकस्य क्व भोगभूः? ॥
स्त्रियं त्यक्त्वा जगत्त्यक्तं जगत्त्यक्त्वा सुखी भवेत्

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जिसके स्त्री है, उसको भोगकी इच्छा होती है. जिसके स्त्री नहीं है, उसको भोग कहां ? स्त्रीको त्यागकर जगत्का त्याग है और जगत्को त्यागकर सुखी हो जावै ॥ ३३ ॥

या भार्या दुष्टचरिता सततं कलहप्रिया ॥
भार्यारूपेण सा ज्ञेया विदग्धैर्दारुणा जरा ॥ ३४ ॥

भाषार्थ–जो स्त्री खोटे आचरणवाली और निरन्तर कलह करने-वाली है, विद्वान्‌जनोंको वह स्त्री भार्यारूपसे दारुण जरा जानना चाहिये ॥ ३४ ॥

स्त्रीणां द्विगुण आहारो लज्जा चापि चतुर्गुणा ॥
साहसं षड्गुणं चैव कामश्चाष्टगुणः स्मृतः॥३५॥

भाषार्थ–स्त्रियोंका आहार पुरुषसे दूना होता है और लज्जा चौ-गुणी होती है. एवं साहस छेगुणा होता है और काम अठगुणा कहा है ॥ ३५ ॥

जल्पन्ति सार्धमन्येन पश्यन्त्यन्यं सविभ्रमम् ॥
हृदये चिन्तयन्त्यन्यं प्रियः को नाम योषिताम् ?

भाषार्थ–अन्यपुरुषके साथ बात करती हैं और विभ्रमसहित दूसरेको देखती हैं तथा हृदयमें किसी अन्यपुरुषका चिन्तन करती हैं. स्त्रियोंको कौन प्रिय है ? ॥ ३६ ॥

स्त्रियो हि मूलं निधनस्य पुंसः
स्त्रियो हि मूलं व्यसनस्य पुंसः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्त्रियो हि मूलं नरकस्य पुंसः
स्त्रियो हि मूलं कलहस्य पुंसः ॥ ३७ ॥
अपण्डितास्ते पुरुषा मता मे
ये स्त्रीषु च श्रीषु च विश्वसन्ति ॥

भावार्थ–स्त्रियां पुरुषके मृत्युकी जड हैं. स्त्रियां मनुष्यके दुःखकी जड हैं. स्त्रियां मनुष्यके नरककी जड हैं. एवं स्त्रियां मनुष्यके निमित्त कलहकी जड हैं ॥ ३७ ॥

मेरा मत है कि–वे पुरुष पंडित नहीं है अर्थात् वे मनुष्य मूर्ख हैं जो स्त्रियोंमें और लक्ष्मीमें विश्वास करते हैं ।

आवर्तः संशयानामविनयभवनं पत्तनं साहसानां
दोषाणां संनिधानं कपटशतमयं क्षेत्रमप्रत्ययानाम् ॥
दुर्ग्राह्यं यन्महद्भिर्नरवरवृषभैः सर्वमायाकरण्डं
स्त्रीरत्नं केन लोके विषममृतमयं धर्मनाशाय सृष्टम् ३८

भावार्थ–संशयों (सन्देहों) का आवर्त (घुमाव अथवा घेरा) और अविनय (ढिठाई) का घर, साहसोंका नगर, दोषों (औगुणों) का निधान (खजाना), सैकडों कपटोंका स्थान, तथा अप्रत्ययों- (अविश्वासों) का क्षेत्र, महाराजाओंकरके अगम्य, सर्वमायाका पिटारा ऐसा विष और अमृतमय स्त्रीयंत्र इस संसारमें धर्मनाशके अर्थ किसने रचा ? ॥ ३८ ॥

भर्ता यद्यपि नीतिशास्त्रनिपुणो विद्वान् कुलीनो युवा ।
दाता कर्णसमः प्रसिद्धविभवः श्रृंगारदीक्षागुरुः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्वप्राणाधिककल्पिता स्ववनिता स्नेहेन संलालिता।
तं कान्तं प्रविहाय सैव युवती जारं पतिं वाञ्छति॥३९॥

भावार्थ–यद्यपि पति नीतिशास्त्रमें निपुण हो, विद्वान् हो, कुलीन हो, युवाअवस्थावाला हो, राजा कर्णके समान दानी हो, प्रसिद्ध ऐ-श्वर्यवाला हो, शृंगारदीक्षामें गुरु हो, अपनी स्त्रीको अपने प्राणोंसेभी अधिक मानता हो, स्नेहपूर्वक प्यार करता हो, तथापि वही स्त्री अपने पतिको छोडकर, दूसरे पुरुषकी इच्छा करती है ! ॥ ३९ ॥

सतीवर्णन।

नित्यं स्नाता सुगन्धा च नित्यं च प्रियवादिनी॥
अल्पभुङ् मितवक्त्री च देवता सा न मानुषी॥४०॥

भावार्थ–जो स्त्री नित्य स्नान करनेवाली, सुगन्ध लगानेवाली और नित्य प्रियवचन बोलनेवाली, थोडा भोजन करनेवाली, तथा मितभाषिणी अर्थात् प्रयोजनानुसार बात करनेवाली है, वह स्त्री देवता है. मानुषी नहीं है ॥ ४० ॥

यस्य भार्या शुचिर्दक्षा भर्तारमनुगामिनी॥
नित्यं मधुरवक्त्री च सा रमा न रमा रमा॥ ४१॥

भावार्थ–जिस पुरुषकी स्त्री पवित्रा, चतुरा, अपने पतिकी आ-ज्ञाके अनुसार चलनेवाली, तथा सदैव प्रिय वचन बोलनेवाली वही रमा (लक्ष्मी) है. रमा 'रमा' नहीं है ॥ ४१ ॥

रूप[1]सम्पन्नमग्रा[2]म्यं प्रेम[3]प्रायं प्रियं[4]वदम्॥
कुलीनमनुकूलं च कलत्रं कुत्र लभ्यते ?॥ ४२॥

---

१ सौन्दर्यपूर्णम्। २ सद्व्यवहारचतुरम्। ३ प्रेमबहुलम्। ४ मधुरभाषिणी।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ–परमसुन्दरी, सद्व्यवहारमें चतुरा, अधिक प्रेम करनेवाली, प्रियवचन बोलनेवाली, कुलीन, पतिके अनुकूल रहनेवाली ऐसी स्त्री कहां प्राप्त होती है? अर्थात् ऐसी सुलक्षणा भार्या मिलना कठिन है ॥ ४२ ॥

कार्ये दासी रतौ रम्भा भोजने जननीसमा ॥
विपत्तौ बुद्धिदात्री च सा भार्या सर्वदुर्लभा ॥ ४३ ॥

भावार्थ–घरका काम करनेमें दासीके समान, रतिसमयमें रम्भाके समान, भोजनके समयमें जननीके समान वर्ताव करनेवाली और विपत्तिकालमें बुद्धि देनेवाली ऐसी भार्या सबोंको दुर्लभ है ॥ ४३ ॥

असारभूते संसारे सारभूता नितम्बिनी ॥
इति संचिन्त्य वै शंभुरर्धाङ्गे पार्वतीं दधौ ॥ ४४ ॥

भावार्थ–'इस असार संसारमें सारभूत स्त्री है' ऐसा विचार कर शिवजीने अपने आधे अंगमें पार्वतीजीको धारण किया ॥ ४४ ॥

न गृहं गृहमित्याहुर्गृहिणी गृहमुच्यते ॥
गृहं तु गृहिणीहीनं कान्तारादतिरिच्यते ॥ ४५ ॥

भावार्थ–गृह (घर) को गृह नहीं कहा है. गृहिणी (स्त्री) को गृह कहा है. गृहिणीसे हीन गृहको वनके अतिरिक्त और क्या कहना चाहिये? ॥ ४५ ॥

न कार्येषु न भोगेषु नैश्वर्ये न सुखे तथा ॥
स्पृहा स्याच्च यथा भर्तुः सा नारी सुखभागिनी ४६

भावार्थ–जिस स्त्रीकी इच्छा न कार्योंमें, न भोगोंमें, न ऐश्वर्यमें, तथा न सुखमें उतनी होवै कि जितनी अपने पतिमें हो वही स्त्री सुखी रहती है ॥ ४६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्वश्रुश्वशुरयोः पादौ तोषयन्ती पतिव्रता ॥
मातापितृपरा नित्यं या नारी सा पतिव्रता ॥४७॥

भाषार्थ—जो स्त्री अपनी सास और श्वशुरके चरणोंमें वन्दना करती हुई, उनको प्रसन्न रखती है और जो पतिकी सेवामें तत्पर और मातापितामें सदा भक्ति रखती है वही पतिव्रता है ॥ ४७ ॥

कार्येषु मंत्री करणेषु दासी भोज्येषु माता शयनेषु रम्भा ॥
धर्मानुकूला क्षमया धरित्री भार्या च षाड्गुण्यवतीह दुर्लभा ॥

भाषार्थ—कार्योंमें मंत्री (सम्मति देनेवाली) और गृहकार्य करनेमें दासी, भोजन करानेमें माता और शयनमें रम्भाके समान वर्ताव करनेवाली और धर्मके अनुकूल आचरणवाली, तथा क्षमाकरके पृथ्वीके समान ऐसी छे गुणोंसे युक्त भार्या इस संसारमें दुर्लभ है ॥ ४८ ॥

भक्तिः प्रेयसि[1] संश्रितेषु[2] करुणा श्वश्रूषु नम्रं शिरः
प्रीतिर्यातृषु गौरवं गुरुजने क्षान्तिः[3] कृतागस्यपि[4] ॥
अम्लाना[5] कुलयोषितां व्रतविधिः सोऽयं विधेयः पुन-
र्भर्तुर्दयिता इति प्रियसखी बुद्धिः सपत्नीष्वपि ॥४९॥

भाषार्थ—अपने पतिमें भक्ति, अपने आश्रित जनोंमें दया, अपनी सासुओंमें नम्रशिर, यातृजनोंमें प्रीति, गुरुजनोंमें गौरव, अपराधी जनोंमें क्षमा, सदा प्रफुल्लवदना, कुलवती स्त्रियोंको यह व्रतविधि करनेके योग्य है. अर्थात् इन लक्षणोंवाली स्त्री कुलवती कहाती है. इन लक्षणोंसे पृथक् एक यह शुभलक्षण ग्रहण करना चाहिये कि—अपनी

---

१ भर्तरि । २ आश्रितेषु । ३ क्षमा । ४ अपराधिनि । ५ प्रफुल्लवदना ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सौतों अर्थात् अपने पतिकी दूसरी स्त्रियोंको अपनी प्यारी सखीके समान समझै और यह विचार करै कि येभी हमारे पतिकी प्यारी हैं ऐसी निर्मल बुद्धि श्रेष्ठ स्त्रियोंकी होती है ॥ ४९ ॥

असतीचरित ।

पर्यङ्कः स्वास्तरणः पतिरनुकूलो मनोहरं सदनम् ॥
तृणमिव लघु मन्यन्ते कामिन्यश्चौर्यरतिलुब्धाः॥५०॥

भावार्थ–चोरीसे रति करनेवाली अर्थात् व्यभिचारिणी स्त्रियां, सुख देनेवाली शय्या, अनुकूल पति, मनोहर निवासमन्दिर इनको तृणके समान लघु मानती हैं ॥ ५० ॥

दुर्दिवसे[1] घनतिमिरे दुःसंचारासु नगरवीथीषु ॥
पत्युर्विदेशगमने परमसुखं जघनचपलायाः ॥ ५१ ॥

भावार्थ–दुर्दिनमें अर्थात् जिस दिन किसी प्रकारका उत्पात हो ऐसे खोटे दिनमें, मेघोंद्वारा अन्धकार हो जानेपर, नगरकी बहुत घनी गलियोंमें और पतिके विदेश जानेपर व्यभिचारिणी स्त्रीको बहुत सुख होता है ॥ ५१ ॥

यस्य भार्या विरूपा च कश्मला[2] कलहप्रिया ॥
अधिकाधिकभक्षा च सा जरा[3] न जरा जरा ॥ ५२ ॥

भावार्थ–जिसकी स्त्री कुरूपा, अमंगला और कलहप्रिया, तथा अधिकसे अधिक अर्थात् बहुत भोजन करनेवाली है, वही बुढापा है. बुढापा बुढापा नहीं है ॥ ५२ ॥

---

१ दुर्दिने । २ अमङ्गला । ३ वृद्धत्वम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कुलपतनं जनगर्हां[2] बन्धनमपि जीवितस्य संदेहम् ॥
अङ्गीकरोति सकलं वनिता परपुरुषसंसक्ता ॥ ५३॥

भाषार्थ–कुलके पतन (भ्रष्टता) को, मनुष्योंमें अपनी निन्दाको, बन्धनकोभी और जीवनके सन्देहको, पराये पुरुषमें रत हुई स्त्री अंगीकार करती है. अर्थात् व्यभिचारिणी स्त्री सब कुछ अंगीकार कर लेती है ॥ ५३ ॥

यदि भवति दैवयोगात्पुमान् विरूपोऽपि बन्धकी रहसि ॥
न तु कृच्छ्रादपि भद्रं निजकान्तं सा भजत्येव ॥ ५४ ॥

भाषार्थ–व्यभिचारिणी स्त्रीको यदि दैवयोगसे एकान्तमें कुरूप पुरुषभी प्राप्त हो जाय तो फिर वह स्त्री उसके संगसे कष्ट होनेपरभी अपने श्रेष्ठ पतिकी सेवा नहीं करती है ॥ ५४ ॥

जन्मैव मास्तु यदि वा न नितम्बिनीषु
तत्रापि चेदहह ! नैव कुलाङ्गनासु ॥
हा धिग् विधे ! कुलवधूरथ चेद्भवेयं
नैवास्तु च क्वचन मे मनसोऽनुबन्धः ॥ ५५ ॥

भाषार्थ–कोई व्यभिचारिणी स्त्री व्यभिचारसे अप्रसन्न होकर कहती है कि–संसारमें मेरा जन्मही न हो. अथवा यदि जन्म होभी जाय तो स्त्री जनोंमें कदापि न हो. अहह ! यदि स्त्रीजनोंमें जन्म होभी जाय तो कुलांगनाओंमें मेरा जन्म न हो. हा ! विधिको धिक्कार है अर्थात् यदि विधिकी प्रेरणासे कुलवधूही होऊं तो फिर मेरा मन कभी किसी दूसरे पुरुषमें न फँसै अर्थात् अपनेही पतिमें मेरा मन रहै ॥ ५५ ॥

---

१ भ्रष्टाम् । २ निन्दाम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भोः पान्थ ! त्वरितोऽसि तिष्ठ निमिषं किंचिद्वदामो वयम् ।
मार्गोऽयं पुरतो द्विधा खलु भवेद्वामेन नो गम्यताम् ॥
तत्रास्ते सहकारकोमलतरोर्मूले प्रपापालिका ।
तस्या लोचनवागुरानिपतितो न त्वं पुनर्यास्यसि ॥ ५६ ॥

भावार्थ—हे पथिक ! तुम शीघ्रतापूर्वक मार्गपर चले जा रहे हो, क्षणभर ठहर जाओ. हम कुछ कहना चाहते हैं. यह मार्ग आगेसे दो ओरको चला गया है. सो तुम बाईं ओरसे होकर न जाना. क्योंकि-वहां कोमल आम्रवृक्षकी जडमें एक प्याऊपर जल पिलानेवाली रहती है. उसके नेत्रोंके जालमें पडकर तुम आगे नहीं जा सकोगे ५६

पतिरतीव धनी सुभगो[1] युवा परविलासवतीषु पराङ्मुखः॥
शिशुरलंकुरुते भवनं सदा तदपि सा सुदती रुदती कुतः५७

भावार्थ—पति महाधनी, सुन्दर, युवाअवस्थावाला, दूसरेकी स्त्रीसे विमुख और बालक सदा घरकी शोभाको बढा रहे, तोभी वह स्त्री क्यों रुदन किया करती है ?॥५७ ॥

कार्ये सत्यपि जातु[2] याति न बहिर्नाप्यन्यमालोकते ।
साध्वीरप्यनुकुर्वता[3] गुरुजनं श्वश्रूं च शुश्रूषते ॥
विस्रम्भं[4] कुरुते च पत्युरधिकं प्राप्ते निशीथे पुन-।
र्निद्राणे[5] सकले जने शशिमुखी निर्याति रन्तुं[6] विटैः[7] ५८

भावार्थ—कार्य होनेपरभी कभी बाहर नहीं निकलती है, न किसी दूसरे पुरुषको देखती है और साध्वी स्त्रियोंके समान अपना चालच-

१ सुन्दरः (अथ च) सुष्ठु भं नक्षत्रं तस्मिन् गच्छति कुयोगं त्यक्त्वा भार्यां व्रजति । इदमेव रोदनकारणम् । २ कदाचित् । ३ अनुकरणं कुर्वाणा । ४ विश्वासम् । ५ शयाने । ६ क्रीडितुम् । ७ जारैः ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लन ठीक रखती है अर्थात् अच्छी स्त्रियोंकासा वर्ताव करती है, तथा अपने गुरुजनकी और सासूकी सेवा करती है, पतिभी उसपर अधिक विश्वास करता है, फिर इससे अधिक और कौनसा विश्वास है? तोभी वह चन्द्रमुखी स्त्री आधी रातके समय सब मनुष्योंके सो जानेपर, जारोंके रमण करनेको बाहर निकल जाती है ! ॥ ५८॥

आः पाकं न करोषि पापिणि ! कथं ? पापी त्वदीयः पिता
रण्डे ! जल्पसि किं ? तवैव जननी रण्डा त्वदीया स्वसा
निर्गच्छ त्वरितं गृहाद्बहिरितो नेदं त्वदीयं गृहं
हा हा नाथ ! ममाद्य देहि मरणं जारस्य भाग्योदयः ॥५९॥

भाषार्थ–एक व्यभिचारिणी स्त्रीके पतिने घर आकर पूछा–'आः हे पापिणि ! तूने रसोई क्यों नहीं बनाई ?' तब उस स्त्रीने उत्तर दिया 'पापी तुह्मारा पिता.' यह सुन झुंझलाकर पतिने कहा–'रण्डे ! क्या कहती है ?' तब उसने उत्तर दिया–'तुम्हारी माता रण्डा, तुह्मारी बहिन रण्डा.' सुनतेही क्रोध करके पतिने कहा–'अभी घरसे बाहर निकल जा.' तब उसने तुरन्त उत्तर दिया कि–'यह घर तुह्मारा नहीं है.' यह उत्तर सुनकर पतिने विलाप किया कि–हा नाथ ! आजही हमको मरण (मौत) दो. तब उसने कहा–'बहुत अच्छा, जारका भाग्योदय होगा !' ॥ ५९ ॥

वेश्यागर्हण।

वेश्यासौ मदनज्वाला रूपेन्धनसमेधिता ॥
कामिभिर्यत्र हूयन्ते यौवनानि धनानि च ॥ ६० ॥

---

१ भल्निनी।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ—यह वेश्या, रूपके ईंधनसे धधकती हुई, कामदेवकी ज्वाला है. कामीजन उसमें अपने यौवन और धनकी आहुति दे रहे हैं. अर्थात् वेश्यारूपी अग्निमें कामीलोग अपना यौवन और धन भस्म करते हैं ॥ ६० ॥

एता हसन्ति च रुदन्ति च वित्तहेतो-
र्विश्वासयन्ति पुरुषं न च विश्वसन्ति ॥
तस्मान्नरेण कुलशीलसमन्वितेन ।
वेश्याः श्मशानघटिका इव वर्जनीयाः ॥ ६१ ॥

भावार्थ—ये वेश्यायें धनके निमित्त हंसती हैं, रोती हैं और विश्वास कराती हैं, परन्तु पुरुषका स्वयं विश्वास नहीं करती हैं. इस कारण कुलीन और शीलवान् अर्थात् उत्तम स्वभाववाले पुरुषोंको उचित है कि—वेश्याओंको श्मशानकी घटिकाके समान तुच्छ जानकर, उनका परित्याग करै अर्थात् जैसे श्मशानकी घरी छूनेके योग्य नहीं होती इसीप्रकार वेश्याओंको महाभ्रष्ट समझकर उनका त्याग करै ॥ ६१ ॥

आगे पान्थसंकेतके कुछ श्लोक मूलमात्र लिखते हैं. उनका भाषानुवाद लिखना ठीक नहीं समझा.

पान्थसंकेत ।

पान्थ मन्दमते ! किं वा सन्तापमनुविन्दसि ?॥
पयोधरं समाशास्व येन शान्तिमवाप्नुयात् ॥ ६२ ॥

---

२ मेघम् (पक्षे) स्तनम् । २ सम्यक्प्रार्थनां कुरु ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ग्रामेऽस्मिन्प्रस्तरप्राये न किंचित्[2] पान्थ ! विद्यते ॥
पयोधरोन्नतिं[3] दृष्ट्वा वस्तुमिच्छसि चेद्वद ॥ ६३ ॥
वीक्षितुं न क्षमा श्वश्रूः स्वामी दूरतरं गतः ॥
अहमेकाकिनी बाला तवेह वसतिः कुतः ? ॥६४॥
किमिति कृशासि कृशोदरि किं तव परकीयवृत्तान्तैः ॥
कथय तथापि मुदे मम कथयिष्यति पान्थ ! तव जाया ६५
त्वमिव पथिक ! प्रियो[4] मे विटपिस्तोमेषु[5] गमयति क्लेशान् ॥
किमितोऽन्यत्कुशलं ? मे संप्रति यत्पान्थ ! जीवामि ॥ ६६ ॥
यदि गन्तासि दिगन्तं पथिक ! पतिस्तत्र संबोध्यः ॥
नयनश्रवणविहीना कथमुपचर्या ? मयैकया जननी ॥६७॥

एकाकिनी यदबला तरुणी तथाह-।
मस्मिन्गृहे गृहपतिश्च गतो विदेशे ॥
कं याचसे ? तदिह वासमियं वराकी ।
श्वश्रूर्ममान्धबधिरा ननु मूढ पान्थ ! ॥ ६८ ॥
भवनमिव मदीयं निर्जनः पान्थ ! पन्थाः
कुसुमशर इवास्मिंस्तस्करा दुर्निवाराः ॥
गृहप[6] ! इव पतङ्गोप्येष[7] यातो दिगन्ता-
न्मदनसुभगभूयो नैव गन्तुं समीहे ॥ ६९ ॥

---

१ पाषाणबहुले (पक्षे) पाषाणतुल्ये । २ आस्तरणादिकम् (पक्षे) समागमप्रतिबन्धकम् ।
३ मेघानामुन्नतिः (पक्षे) स्तनयोरुन्नतिः ४ कान्तः । ५ वृक्षसमूहेषु । ६ गृहस्वामी ।
७ सूर्यः !

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

यामिन्येषा वहलजलदैर्बद्धभीमान्धकारा ।
निद्रां यातो मम पतिरसौ क्लेशितः कर्मदुःखैः ॥
बाला चाहं मनसिजभयात्प्राप्तगाढप्रकम्पा ।
ग्रामश्चोरैरयमुपहतः पान्थ ! निद्रां जहीहि ॥७०॥
अहमिव दिनलक्ष्मीः प्रोषितप्राणनाथा ।
त्वमिव पथिक ! पन्था मुक्तपान्थानुबन्धः ॥
अयमपि परदेशः सोऽपि यत्रासि गन्ता ।
मदनमधुरमूर्ते ! किं वृथा सत्वरोऽसि ? ॥ ७१ ॥
रथ्यारजोरुणितधूसरिताङ्गयष्टेः
कच्चित्पितुः स्मरसि पुत्रक ! निर्घृणस्य ॥
उक्त्वैवमङ्कगतया यतमायताक्ष्या
पान्थस्त्रिया प्ररुदितं करुणं दिनान्ते ॥७२॥
इयं सुरतरङ्गिणी न पुनरत्र नौसंगमो
भवेत्तरणिमज्जनं पथिक ! नैव पान्थागमः ॥
निधाय हृदये सदा विपुलचारुकुम्भद्वयं
सखे ! घनघनागमे घनैरसस्य पारं व्रज७३
रे रे पान्थ ! कुतो भवान्नगरतो वार्ता न चापि श्रुता ।
बाढं ब्रूहि युवा पयोदसमये हित्वा प्रियां जीवति ॥
सत्वं जीवति जीवतीति कथिता वार्ता मयापि श्रुता ।

१ रात्रिः । २ भयंकर गाढाअन्धकारा । ३ नदी । ४ उदकस्य । ५ सत्यम् । ६ वर्षाकाले ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विस्तीर्णा पृथिवी जनोऽपि विविधः किं किं न संभाव्यते
वाणिज्येन[1] गतः स मे गृहपति[2]र्वार्तापि न श्रूयते ।
प्रातस्तज्जननी प्रसूततनया जामातृगेहं गता ॥
बालाहं नवयौवना निशि कथं स्थातव्यमस्मिन्गृहे ।
सायं संप्रति वर्तते पथिक ! हे स्थानान्तरं गम्यताम् ७५
नाथो मे विपणिं[3] गतो न गणयत्येषा सपत्नी च माम् ।
त्यक्त्वा मामिह पुष्पिणी[4]ति गुरवः प्राप्ता गृहाभ्यन्तरम् ॥
शय्यामात्रसहायिनीं परिजनः श्रान्तो न मां सेवते ।
स्वामिन्नागमलालनीय[5]रजनीं[6] लक्ष्मीपते ! रक्ष माम् ॥ ७६ ॥

भो पान्थ ! पुस्तकधर क्षणमत्र तिष्ठ
वैद्योऽसि ? किं गणितशास्त्रविशारदोऽसि ?॥
केनौषधेन[7] मम पश्यति भर्तुरम्बा ।
किंवागमिष्यति पतिः सुचिरप्रवासी[8] ? ॥ ७७ ॥

शून्यं वेश्म चिरं शयितो गृहपतिर्जाताधुना शर्वरी
स्थातुं नोचितमत्र गच्छ निभृतं लोकैरनालक्षितः ॥
इत्थं लोलदृशा ह्यसावभिहितो दासीमुखेनाध्वगः
स्थित्वा किंचिदिव क्व यामि रजनी प्राप्ते ह्युदीर्य[10] स्थितः ।

१ वाणिज्यार्थं पर देशं गतः । २ भर्ता । ३ पण्यवीथिका । ४ रजस्वला । ५ आगमेन 'वेदेन' लालनीयः (पक्षे) आगमनेन लालनीयः । ६ रजनीं व्याप्येत्यर्थः । ७ औषध-प्रश्नेन श्वश्र्वा अन्धत्वं सूचितम् । प्रोषितस्य पत्युः कदागमनं भविष्यतीति प्रश्नेन सोऽपि गृहे नास्तीति सूचितम् । इयं कक्षे पुस्तकधारिणं पांथं प्रतिकस्याश्चित्कामिन्याः स्वाभिप्रायसूचिकोक्तिः । ८ चिरकालं दूरं गतः । ९ अदृष्टः । १० उक्त्वा ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भ्रातः पान्थ ! पथि त्वया न पथिकः कश्चित्समादितो ? ।
बाले ! नैकशतानि कीदृशस्तव प्रख्यायतां वल्लभः ॥
यं दृष्ट्वा प्रमदाजनस्य भवतः स्फारे मुदा लोचने ।
स ज्ञेयो दयितो ममेति पथिकायावेद्य मोहं गता ॥ ७९ ॥

वीररसनिर्देश ।

प्रायेण सुकरं दानं प्रायेण सुकरं तपः ॥
प्राणानपेक्षी व्यापारः पुनर्वीरस्य दुःकरः ॥ १ ॥

भावार्थ–प्रायः दान सुकर है, अर्थात् दान सब कोई कर सकता है, तप प्रायः सब कोई कर सकता है- परन्तु प्राणोंकी अपेक्षा न करनेवाला अर्थात् परोपकार निमित्त प्राणत्यागरूप वीरका कर्म करना दुष्कर है अर्थात् सब कोई प्राण न्यौछावर नहीं कर सकता है ॥ १ ॥

हतेऽभिमन्यौ क्रुद्धेन तत्र पार्थेन संयुगे ॥
अक्षौहिणीः सप्त हत्वा हतो राजा जयद्रथः ॥२॥

भावार्थ–अभिमन्युके मारे जानेपर संग्राममें अर्जुनने क्रोधकरके सात अक्षौहिणी सेना मारकर राजा जयद्रथको मारा ॥ २ ॥

लोहितायति चादित्ये त्वरमाणो धनंजयः ॥
पञ्चविंशतिसाहस्रान्निजघान महारथान् ॥ ३ ॥

भावार्थ–सूर्यको अस्त होते देखकर, शीघ्रतापूर्वक अर्जुनने पचीस हजार महारथियोंको मार गिराया ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न कालस्य न शक्रस्य न विष्णोर्वित्तदस्य च ॥
श्रूयन्ते तानि कर्माणि यानि युद्धे हनूमतः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–न कालके, न इन्द्रके, न विष्णुके और न कुबेरके इतने कर्म सुननेमें आये कि–जितने कर्म युद्धमें हनुमानजीके सुने जाते हैं. अर्थात् हनुमान्‌जीने युद्धमें ऐसे अलौकिक कर्म किये कि–जिनकी प्रशंसा रामजीने स्वयं अपने मुखसे कथन करी है ॥ ४ ॥

ब्राह्मणानां यथा धर्मो दानमध्ययनं तपः
क्षत्रियाणां तथा कृष्ण ! समरे देहपातनम् ॥ ५ ॥

भाषार्थ–भीष्मजीका वचन है कि– हे कृष्ण ! जैसे, ब्राह्मणोंका धर्म दान, अध्ययन और तप है, वैसेही क्षत्रियोंका एक यहभी धर्म है कि–समरभूमिमें वीरतापूर्वक युद्ध करके देह त्यागना ॥ ५॥

अविक्षतेन देहेन प्रलयं योऽधिगच्छति ॥
क्षत्रियो नास्य तत्कर्म प्रशंसन्ति पुराविदः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–विना घाव लगेही जो क्षत्रिय शरीरत्याग करता है, उसको पहलेके लोग क्षत्रिय नहीं कहते. उसके इस कर्मकी प्रशंसा नहीं करते हैं ॥ ६ ॥

यथाहि रश्मयोऽश्वस्य द्विरदस्याङ्कुशो यथा ॥
नरेन्द्रधर्मो लोकस्य तथा प्रग्रहणं स्मृतम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–जैसे चंचल घोडेको, दोनों ओरकी रस्सी स्थिर रखती है और जिसप्रकार हाथीको अंकुश वशमें रखता है, उसीप्रकार नरेन्द्र (क्षात्र) धर्मकी मर्यादाको स्थिर रखता है ॥ ७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जीवन्नेव मृतोऽसौ यस्य जनो वीक्ष्यमन्योन्यम् ॥
कृतमुखभंगो दूरात् करोति निर्देशमङ्गुल्या ॥ ८ ॥

भावार्थ-वह पुरुष जीताही मरा हुवा है. जिसका मुख देखकर लोग परस्पर मुख बिगाडकर दूरसेही अंगुली उठाकर संकेत करते हैं, कि-देखो, यह कायर अथवा कुकर्मी आ रहा है. सारांश यह कि-वीरोंके समान पराक्रम करनेवालेके सन्मुख कोई अंगुली नहीं उठा सकता है ॥ ८॥

ललाटदेशे रुधिरं स्रवत्तु शूरस्य यस्य प्रविशेच्च वक्त्रे ॥
तत्सोमपानेन समं भवेच्च संग्रामयज्ञे विधिवत्प्रदिष्टम्॥ ९ ॥

भावार्थ-जिस वीरपुरुषके ललाटदेशमेंसे रुधिर निकलकर मुखमें प्रविष्ट होता है, वह रुधिरपान संग्रामयज्ञमें सोमपानके तुल्य कहा गया है ॥ ९ ॥

हा तात तातेति सवेदनार्तः
क्कणच्छकृन्मूत्रकफानुलिप्तः ॥
वरं मृतः किं भवने ? किमाजौ ?
सन्दष्टदन्तच्छदभीमवक्त्रः ॥ १० ॥

भावार्थ-वेदनाके साथ आर्तपुरुष, हा तात ! हा तात !! कहता हुआ विष्टा, मूत्र और कफसे लिप्त होकर घरमें मरनेवाला अच्छा किंवा शत्रुके सन्मुख होठोंको चवाता हुवा भयंकर मुखवाला वीर संग्राममें परोपकार निमित्त मरै तो अच्छा है ?॥ १० ॥

मथ्नामि कौरवशतं समरे न कोपात् ।
दुःशासनस्य रुधिरं न पिबाम्युरस्तः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

संचूर्णयामि गदया न सुयोधनोरू ।
सन्धिं करोतु भवतां नृपतिः पणेन ॥ ११ ॥

भाषार्थ–भीमसेनजी कहते हैं कि–समरभूमिमें कोपकरके सौ कौरवोंको न मारूं और दुःशासनकी छातीसे रुधिर निकालकर पान न करूं, तथा गदाकरके सुयोधनकी ऊरू (जंघा) को चूर्ण न करूं तो 'भीमसेन' न कहाऊँ. अन्तमें भीमसेनजी कहते हैं कि–आपके महाराज युधिष्ठिरजी, चाहे पणसे सन्धि कर लेवें परन्तु मैं अपनी प्रतिज्ञा अवश्य पूरी करूंगा ॥ ११ ॥

करुणरसनिर्देश ।

मितं ददाति हि पिता मितं भ्राता मितं सुतः ॥
अमितस्य हि दातारं भर्तारं का न शोचति ? ॥ १ ॥

भाषार्थ–पिता मित (परिमित) देता है अर्थात् उतनाही देता है जितनेमें काम बन जावे और भाई तथा पुत्रभी परिमितही देता है. परंतु अपरिमित देनेवाले पतिको कौन नहीं शोच करै ? ॥ १ ॥

अस्याः कुसुमशय्यापि कोमलाङ्ग्या रुजाकरी ॥
साधिशेते कथं देवी ज्वलन्तीमधुना चिताम् ॥ २ ॥

भाषार्थ–इस कोमलअंगवालीको देवी फूलोंकी शय्याभी रोगकरनेवाली थी अर्थात् फूलोंकी शय्यापर जिस कोमलांगीको भलीभांति नींद नहीं आती थी, वह देवी इस समय जलती हुई चितापर कैसे शयन करेगी ? ॥ २ ॥

देशे देशे कलत्राणि देशे देशे च बान्धवाः ॥
तं देशं नैव पश्यामि यत्र भ्राता सहोदरः ॥ ३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-देशदेशमें स्त्रियां मिलती हैं और देशदेशमें बन्धूजनभी मिलते हैं. परन्तु उस देशको नहीं देखता हूं जहां सहोदर (सगा) भाई मिलै ॥ ३ ॥

मदेकपुत्रा जननी जरातुरा नवप्रसूतिर्वरटा तपस्विनी ॥
गतिस्तयोरेष जनस्तमर्दयन्नहो ! विधे ! त्वां करुणा रुणद्धि न

भाषार्थ-एक पुत्रवाली बूढी माता और नवप्रसूता वरटा तपस्विनी अर्थात् पतिव्रता स्त्रीके हालमेंही बालक उत्पन्न हुवा है. उन दोनौंकी गति अर्थात् माता और स्त्रीकी पालना करनेवाला यह जन (मनुष्य) इसको पीडित करते हुये हे विधाता ! तुझको दया नहीं आती है ॥४॥

अस्तंगते शशिनि सैव कुमुद्वती मे ।
दृष्टिं न नन्दयति संस्मरणीयशोभा ॥
इष्टप्रवासजनितान्यबलाजनस्य ।
दुःखानि नूनमतिमात्रसुदुःसहानि ॥ ५ ॥

भाषार्थ-भलीभांति स्मरण करने योग्य शोभावाली वही कामलिनी चन्द्रमाके अस्त होनेपर हमारी दृष्टिको आनन्द नहीं देती है. स्त्रीजनको इष्ट (प्यारे) के परदेश जानेसे उत्पन्न हुये दुःख निश्चय करके बडी कठिनाईसे सहन करने योग्य होतें हैं ॥ ५ ॥

अद्भुतरसनिर्देश ।

न केनापि श्रुतं दृष्टं वारिणा वारि शुष्यति ॥
अहो ! गोदावरीवारां भवसिन्धुर्विशुष्यति ॥ १ ॥

---

१ जलेन ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—किसीनेभी न सुना, न देखा कि—जलसे जल सूख जाता है. अहो ! अद्भुत बात है कि—गोदावरीके जलसे भवसिन्धु सूख जाता है. अर्थात् गोदावरीमें स्नान करनेसे मनुष्य भवसागरसे पार हो जाता है ॥ १ ॥

एष वन्ध्यासुतो याति खपुष्पकृतशेखरः ॥
मृगतृष्णाम्भसि स्नातः शशशृङ्गधनुर्धरः ॥ २ ॥

भाषार्थ—यह वन्ध्याका पुत्र जा रहा है. जिसने आकाशका फूल मस्तकपर धारण किया है, मृगतृष्णाके जलमें स्नान किया है और शश-(खरगोश) के सींगका धनुष हाथमें लिया है ॥ २॥

तस्मिन्युद्धे क्षणेनैव त्वरितो वानरध्वजः ॥
सरथं सध्वजं साश्वं भीष्ममन्तर्दधे शरैः ॥ ३ ॥

भाषार्थ—उस युद्धमें अतिशीघ्रतापूर्वक, हनुमान् हैं ध्वजारूप रथमें जिसके ऐसे अर्जुनने रथ, ध्वजा और घोडोंसमेत भीष्मजीको बाणोंसे एक क्षणमात्रमें आच्छादित कर दिया ॥ ३ ॥

कस्मै किं कथनीयं कस्य मनः प्रत्ययो भवति ॥
रमयति गोपवधूटी कुञ्जकुटीरे परं ब्रह्म ॥ ४ ॥

भाषार्थ—किसको क्या कहा जाय? किसके मनका विश्वास किया जाय? यह अद्भुत बात है कि—गोपवधूटी कुंजकुटीरमें परंब्रह्मको रमण करती है. अर्थात् गोपिका कुंजगलीमें श्रीकृष्णजीके साथ विहार कर रही है ॥ ४ ॥

अम्बुजमम्बुनि जातं न हि दृष्टं जातमम्बुजादंबु ॥
अधुना तद्विपरीतं चरणसरोजाद्विनिर्गता गङ्गा॥५॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—जलसे कमल उत्पन्न होता है, परन्तु कमलसे जल उत्पन्न होते नहीं देखा. इस समय यह विपरीत बात देखी कि—चरणकमलसे गंगा निकलकर प्रगट हुई ॥ ५ ॥

चित्रं कनकलतायां पल्लव एवामृतं सूते ॥
कुसुमसमुद्गमभावे नो जाने किं परं भावि ॥ ६ ॥

भाषार्थ—आश्चर्य है कि—कनकलताओंमें पत्तेही अमृतसमान स्वादवाले उत्पन्न हुए हैं. फूल उत्पन्न होनेपर न जाने कौनसा अमृतफल प्राप्त होवेगा. अर्थात् कनकलतासमान अंगवाली स्त्रीके अधरामृतमें इतना आनन्द है तो आलिंगनादिमें कितना आनन्द प्राप्त होगा? ॥ ६ ॥

जाता लता हि शैले जातु लतायां न जायते शैलः ॥
अधुना तद्विपरीतं कनकलतायां गिरिद्वयं जातम् ७

भाषार्थ—पर्वतपर लतायें उत्पन्न होती हैं, परंतु लताओंमें पर्वत नहीं प्रगट होता. परन्तु यहां इस समय वह विपरीत बात देखी कि—कनकलतामें दो पर्वत प्रगट हुये हैं! ॥ ७ ॥

चित्रं कनकलतायां शरदिन्दुस्तत्र खंजनद्वितयम् ॥
तत्रजमनोजधनुषी तदुपरि गाढान्धकाराणि ॥८॥

भाषार्थ—आश्चर्यकी बात है कि—कनकलतामें पूर्ण चन्द्रमा और दो खंजन, वहीं धनुर्धारी मनोज प्रगट हुवा है. उसपर गाढ अन्धकार है ॥ ८ ॥

मूकारब्धं कमपि बधिराः श्लोकमाकर्णयंति ।
श्रद्धालुस्तं विलिखति कुणिः श्लाघया वीक्षितेऽन्धः॥

१ सुवर्णचम्पकल्यां तत्तुल्यायामङ्गयष्ट्याम् । २ पर्वततुल्यं स्तनद्वयम् ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अभ्यारोहत्यहह ! सहसा पङ्गुरप्यद्रिशृङ्गं ।
सान्द्रालस्याः शिशुभरणतो मन्दमायान्ति वन्ध्याः

भावार्थ–गूंगे किन्हीं बहिरोंको श्लोक सुना रहे हैं, विकल हाथवाला श्रद्धावान् पुरुष उन (श्लोकों) को लिख रहा है और श्लाघापूर्वक अर्थात् प्रशंसा करता हुआ अन्धा देख रहा है ! अहह ! आश्चर्यकी बात है कि–पंगु (लंगडा) पर्वतके शिखरपर चढ रहा है और बालकके भरण (पोषण) से नितान्त आलस्यवाली वन्ध्या स्त्रियां मन्दमन्द चालसे चली आ रही हैं ! ! ॥ ९ ॥

स्थाणुः स्वयं मूलविहीन एव पुत्रो विशाखो रमणी त्वपर्णा॥
परोपनीतैः कुसुमैरजस्रं फलत्यभीष्टं किमिदं विचित्रम् ! १०

भावार्थ–"स्वयं स्थाणु (ठूंठ) है और जड नहीं है, पुत्र विशाख (शाखाहीन) है, रमणी अपर्णा (विना पत्तोंवाली) है, तथा दूसरेके लाये हुये फूलोंसे निरन्तर अभीष्ट (इच्छानुसार) फल देता है" यह कैसी विचित्र (अद्भुत) बात है ॥ १० ॥

हास्यरसनिर्देश ।

सामगायनपूतं मे नोच्छिष्टमधरं कुरु ॥
उत्कण्ठितासि चेद्भद्रे ! वामं कर्णं दशस्व मे ॥ १ ॥

भावार्थ–सामगायनसे पवित्र मेरे होठको उच्छिष्ट (जूठा) न करो. हे कल्याणि ! यदि उत्कण्ठावाली हो तो मेरे बायें कानको काट लो ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विना मद्यं विना मांसं परस्वहरणं विना ॥
विना परापकारेण दिविरो दिवि रोदिति ॥ २ ॥

भावार्थ-विना मदिरा, विना मांस, विना परधनहरण और विना अपकार के, कायस्थ स्वर्गमें रुदन करता है ॥ २ ॥

परान्नं प्राप्य दुर्बुद्धे ! मा प्राणेषु दयां कुरु ॥
दुर्लभानि परान्नानि प्राणा जन्मनि जन्मनि ॥ ३ ॥

भावार्थ-पराये अन्नको पाकर, हे दुर्बुद्धे ! प्राणोंकी दया न कर' क्योंकि-पराया अन्न दुर्लभ है और प्राण तो जन्मजन्ममें प्राप्त हो जाते हैं ॥ ३ ॥

कमले कमला शेते हरः शेते हिमालये ॥
क्षीराब्धौ च हरिः शेते मन्ये मत्कुणशङ्कया ॥ ४ ॥

भावार्थ- कमला (लक्ष्मी) कमलमें शयन करती है, महादेव हिमालयमें शयन करते हैं और क्षीरसागरमें नारायण शयन करते है. मैं तो यही मानता हूं कि-'मच्छरोंकी शंकासे लक्ष्मी आदि अन्यत्र शयन करे हैं' ॥ ४ ॥

असारे खलु संसारे सारं श्वशुरमन्दिरम् ॥
हरो हिमालये शेते हरिः शेते महोदधौ ॥ ५ ॥

भावार्थ-इस असार संसारमें श्वशुरका मन्दिर (ससुरार) सार है. देखो, कि-महादेव हिमालयमें रहते हैं और नारायण क्षीरसागरमें शयन करते हैं. दोनों अपनी ससुरारमें रहते हैं ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

नादस्तु पंचमो वेदः पुत्रो वै सप्तमो रसः ॥
दाता पञ्चदशो रत्नः जामाता दशमो ग्रहः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–वेद चार हैं, परंतु नाद (गानविद्या) पाञ्चवां वेद है. रस छे होते हैं, परंतु पुत्र सातवां रस है. रत्न चौदह होते हैं, परन्तु दाता (दानी पुरुष) पन्द्रहवां रत्न है. ग्रह (सूर्य आदि) नव हैं, परन्तु जामाता (दामाद) दशवां ग्रह है ॥ ६ ॥

सदा वक्रः सदा क्रूरः सदा पूजामपेक्षते ॥
कन्याराशिस्थितो नित्यं जामाता दशमो ग्रहः॥७॥

भाषार्थ–सदा वक्र (टेढा), सदा क्रूर और सदा पूजा चाहनेवाला, तथा सदा कन्याराशिपर स्थित जामाता (दामाद) दशवां ग्रह है ॥ ७ ॥

बिलाद्बहिर्बिलस्यान्तः स्थितमार्जारसर्पयोः ॥
मध्ये चाखुरिवाभाति पत्नीद्वययुतो नरः ॥ ८ ॥

भाषार्थ–बिलके बाहर मार्जार और बिलके भीतर सर्प इन दोनोंके बीचमेंके मूसेकी दो तरह स्त्रियोंवाला मनुष्य उन दोनों स्त्रियोंके बीचमें शोभित होता है ॥ ८ ॥

उदरद्वयभरणभयादर्धाङ्गाहितदारः ॥
यदि नैवं तस्य सुतः कथमद्यापि कुमारः ॥ ९ ॥

भाषार्थ–दो उदरभरणभयसे अर्थात् 'दो पेट भरने होंगे' इस भयसे महादेवजी अपनी स्त्री पार्वतीजीको आधे अंगमें धारण करते भये. यदि ऐसा नहीं है, तो महादेवजीका पुत्र अबतक कुमार कैसे है ?

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अर्थात् उसका विवाह क्यों नहीं हुआ ? सारांश यह कि-जो दो उदरभी नहीं भर सकता उसके घर विवाह कौन करै ? ॥ ९ ॥

स्वयं पंचमुखः पुत्रौ गजाननषडाननौ ॥
दिगम्बरः कथं जीवेदन्नपूर्णा न चेद्गृहे ? ॥ १० ॥

भाषार्थ-स्वयं पंचमुखवाले और गजानन षडानन दो पुत्र, ऐसा दिगम्बर कैसे जीवै ? यदि गृहमें अन्नपूर्णा देवी न होवै ॥ १० ॥

वाचयति नान्यलिखितं लिखितमनेनापि वाचयति नान्यः ॥
अयमपरोऽस्य विशेषः स्वयमपि लिखितं स्वयं न वाचयति

भाषार्थ-दूसरेका लिखा नहीं बांच सकता है और इसके हाथका लिखा दूसरा कोई नहीं वांच सकता, परन्तु औरभी इसमें विशेष यह है कि-अपने हाथका लिखा स्वयं (अपने आपही) नहीं वांच सकता है ! ॥ ११ ॥

आपाण्डुरा शिरसि जातिवली कपोले
दन्तावली विगलिता न च मे विषादः ॥
एणीदृशो युवतयः पथि मां विलोक्य
तातेति भाषणपराः खलु वज्रपातः ॥ १२ ॥

भाषार्थ-शिरके केश श्वेत हो गये, कपोलोंमें गढे पड गये दांत गिर गये सो इनका मुझको विषाद नहीं है. परन्तु मृगनयनी स्त्रियां मार्गमें मुझको देखकर, " हे तात ! " कहने लगती हैं, तब मानों वज्रपात हो जाता है. ऐसा मेरा मन आतुर हो जाता है ॥ १२ ॥

एकान्तसंज्ञे सुरतप्रसङ्गे यच्छर्दितं मण्डनमिश्रपत्न्या ॥
तद्गन्धमाघ्राय न किञ्चिदूचे हूंहूंहुंहूंहूंहुंहुंहूंहुंहूं ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—एक विद्वान् मंडनमिश्र, कवि कालिदासजीकी प्रशंसा सुनकर, धारानगरीके निकट आकर ठहरे. वृक्षोंके नीचे भोजन कर रहे थे. इतनेमें मंडनमिश्रका आगमन सुनकर कालिदासजी अपनेको छिपाकर वहां आये और मंडनमिश्रके अभिप्रायको जानकर, कुशल क्षेम पूछने लगे. मंडनमिश्र मौन होकर भोजन करते थे. उत्तरमें 'हुँहूँहुँहूँहुंहु हु हूँहुँहूंहूं' कहा. अर्थात् ठहर जाओ, भोजनोपरान्त बात करना. परन्तु कालिदासजीको धैर्य न था. बोले कि—'इसका उत्तर सुन लीजिये' यह कहकर ऊपर लिखा श्लोक पढकर सुना दिया. श्लोकका अर्थ यह है कि—एकान्तमें मैथुन प्रसंगके समय मण्डनमिश्रकी स्त्री-ने जो अपशब्द किया उसकी गन्धको सूंघकर मिश्रजी कुछ नहीं बोले. 'हूंहूं हुंहूं हूंहुं हुं हूं हुं हूं हूं' इसप्रकार कहकर चुप हो गये ॥ १३ ॥

इसीप्रकार प्रहसनग्रन्थोंमें हास्यरस प्रधान है. बहुतसे फुटकर श्लोक ऐसे हैं जो कंठस्थ रहनेके योग्य हैं. पुस्तकोंमें लिखनेके योग्य नहीं हैं. और बहुतसे श्लोक ऐसेभी हैं कि—जो पुस्तकोंमें लिखे जा सकते हैं, परन्तु उनका अनुवाद लिखना ठीक नहीं. क्योंकि—संस्कृतज्ञ जन बुद्धिमान् होनेसे, उनका तात्पर्य ठीक समझकर परिणाममें विपरीत फल नहीं होने देते और असंस्कृतज्ञ जन उनको ठीक न समझनेसे परिणाममें विपरीत फलके भागी होकर हास्यके योग्य हो जाते हैं. अतः यहां केवल मूलमात्र कुछ श्लोक लिखकर हास्यरसको पूर्ण कर देंगे ॥

जिव्हायाश्छेदनं नास्ति न तालुपतनाद्भयम् ॥
निर्विशेषेण वक्तव्यं निर्लज्जः को न पण्डितः?॥१४॥
पूर्वं चेटी ततो वेटी पश्चाद्भवति कुट्टिनी ॥
सर्वोपायपरिभ्रष्टा वेश्या भवति तापसी ॥ १५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

आदौ वेश्या पुनर्दासी पश्च द्भवति कुट्टिनी ॥
सर्वोपायपरिक्षीणा वृद्धा नारी पतिव्रता ॥ १६ ॥
भस्माङ्गुलिर्बकोड्डायी बालशौचो तथाहिही ॥
धारावर्ती चक्रवर्ती षडेते पुरुषाधमाः ॥ १७ ॥
प्रेषकः प्रैष्यकः काण्डः क्रिमेकः स्तम्भलीनकः ॥
योगी तत्कालरोगी च षडेते सेवकाधमाः ॥ १८ ॥
मुण्डो नग्नो जटिलश्छत्री दण्डी कषायचीरी वा ॥
भस्मस्मेरशरीरो दिशि दिशि भोगी विजृम्भते दम्भः १९
अंगुलिभङ्गविकल्पनविविधविवादप्रवृत्तपाण्डित्यः ॥
जपचपलोष्ठः सजने ध्यानपरो नगररथ्यासु ॥ २० ॥
भ्रुकुटीकुटिलललाटः कण्टकिताङ्गः कटाक्षविकटाक्षः ॥
कवलयति पृथुलकवलैस्तण्डुलमचलं द्विजः क्रुद्धः २१
आख्यायिकानुरागी व्रजति सदा पुण्यपुस्तकं श्रोतुम् ॥
इष्ट इव कृष्ण ग्रैः पलायते दानधर्मेभ्यः ॥ २२ ॥
क्रयविक्रयकूटतुला लाघवनिक्षेपरक्षणव्याजैः ॥
एते हि दिवसचौरा मुष्णन्ति महाजनं वणिजः॥ २३ ॥
दत्वा दिशि दिशि दृष्टिं याचकचकितोऽवगुण्ठनं कृत्वा॥
चौर इव कुटिलचारी पलायते कुटिलरथ्याभिः ॥२४॥
आमंत्रणजयशब्दैः प्रतिपदहुंकारघर्घरारावैः ॥
स्वयमुक्तसाधुवादैरन्तरयति गायनो गीतम् ॥ २५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शृणु सखि ! कौतुकमेकं ग्राम्येण कुकामिना यदद्य कृतम्
सुरतसुखमीलिताक्षी मृतेति भीतेन मुक्तास्मि ॥ २६ ॥

मेरुः स्थितोऽतिदूरे मनुष्यभूमिं परां परित्यज्य ॥
भीतो भयेन चौर्याद्धोराणां हेमकाराणाम् ॥ २७ ॥

तस्मान्महीपतीनामसंभवे दस्युचौराणाम् ॥
एकः सुवर्णकारो निग्राह्यः सर्वथा नित्यम् ॥ २८ ॥

विनापि तातेन विना जनन्या गजाननः शंभुसुताभिधानः ॥
विनैव शास्त्रेण विनैव वेदैर्माध्यंदिनानामिव पाठकोऽभूत् २९

अयं पटो मे पितुरंगभूषणं पितामहाद्यैरुपभुक्तयौवनः ॥
अलंकरिष्यत्यथ पुत्रपौत्रकान्मयाधुना पुष्पवदेव धार्यते ३०

खट्वा नितान्तलघुका शिथिलप्रताना
द्वेष्यः पतिः स च निरन्तरचाटुकारी ॥
तत्रापि दैवहतिकाः खलु माघरात्र्यो
हा ! सह्यतां कथमयं व्यसनप्रपञ्चः ॥ ३१ ॥

कटी मुष्टिग्राह्या द्विपुरुषभुजग्राह्यमुदरं
स्तनौ घण्टालोलौ जघनमधिगन्तुं व्यवसितौ ॥
स्मितं भेरीनादो मुखमपि च यत्तद्भयकरं
तथाप्येषा रण्डा परिभवति सन्तापयति च ॥ ३२ ॥

---

१ वस्त्रम्।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

गौरी तनुर्नयनमायतमुन्नता च
नासा कृशा कटितटी च पटी विचित्रा ॥
अङ्गानि रोमरहितानि सुखाय भर्तुः
पुच्छं च तुच्छमिति कुत्र समस्तवस्तु॥३३॥

धान्याकनागरनिशार्द्रकदाडिमत्व-
क्कुस्तुम्बरीलवणतैलसुसंस्कृतान्नः ॥
मत्स्यान्सुशीतसितभक्ततले ददाति ।
स ब्रह्मलोकमधिगच्छति पुण्यकर्मा ॥ ३४ ॥

पाणौ ताम्रघटी कुशः करतले धौतः सिते वाससी ।
भाले मृत्तिलकः सचन्दनरसो न्यस्तैकपुष्पं शिरः ॥
दूरात्क्षिप्तपदा गतिर्दृढतरव्याश्लिष्टदन्ता गिरः ।
सोऽयं वञ्चयितुं जगद्भगवतो दम्भस्य देहक्रमः ३५

गत्वा द्वारवतीं नयामि दिवसानाराधयन्ती हरिम् ।
त्यक्त्वा वानशनेन जीवितमिदं मुञ्चामि भागीरथीम्
प्रातः प्रातरिति प्रवर्तितकथा निर्वेदमातन्वती ।
रण्डा नक्तमनन्तजारसुरतप्रीता सुखायास्तु वः ॥३६

दृष्टिं देहि पुनर्बाले ! कमलायतलोचने ॥
श्रुतं ताहि पुरा लोके विषस्य विषमौषधम् ॥३७॥

उपानहौ मया दत्ते जीर्णे कर्णविवर्जिते ॥
तेनाहं गजमारूढो न दत्तं तद्गतं गतम् ॥ ३८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

चपलं तुरगं परिनर्तयतः परिपान्थजनं परिमर्दयतः ॥
नहि ते खलु भाग्यभवोविभवः भगिनीभगभाग्यभवोविभवः ॥

अजायुद्धं वणिक्श्राद्धं प्रभाते मेघडंबरम् ॥
दम्पत्योः कलहश्चैव तथा गंजरवंजरम् ॥ ४० ॥

केचिद्वदन्त्यमृतमस्ति पुरे सुराणां
केचिद्वदन्ति वनिताधरपल्लवेषु ॥
ब्रूमो वयं सकल शास्त्रविचारदक्षा
जंभीरनीरपरिपूरितमत्स्यखंडे ॥ ४१ ॥

भयानकरसनिर्देश ।

महाप्रलयमारुतः क्षुभितपुष्करावर्तकः ।
प्रचण्डघनगर्जितप्रतिरवानुकारी मुहुः ॥
रवः श्रवणभैरवः स्थगितरोदसीकन्दरः
कुतोऽद्य समरोदधेरयमभूतपूर्वः पुरः ॥ १ ॥

भाषार्थ—महाप्रलय पवन भय कराती और आकाशमें भँवर डालती हुई अर्थात् महाप्रलयके समान पवन आकाशमें धूल उडाती हुई और भय उपजाती हुई वह रही है, प्रचण्ड मेघोंमें बिजली वारवार कडक रही है, कानोंको भय देनेवाला शब्द हो रहा है, वृक्षोंकी कन्दराओंमेंभी भय लग रहा है. आजका दिन कैसा समरसमुद्रका यह अग्रेसर हुवा है ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अशक्नुवन्सोढुमधीरलोचनः सहस्ररश्मेरिव यस्य दर्शनम् ॥
प्रविश्य हेमाद्रिगुहागृहान्तरं निनायबिभ्यद्दिवसानिकौशिकः

भावार्थ–सूर्यके समान तेजधारी चंचल नेत्रोंवाले श्रीविश्वामित्रजी हिमालयपर्वतकी कन्दराको गृह (निवासस्थान) बनाय, उसमें बैठकर भयपूर्वक दिन व्यतीत करते भये ॥ २ ॥

बीभत्सरसनिर्देश ।

रक्तं नक्तंचरौघः पिबति वमति च ग्रस्तकुन्तः सकुन्तः ।
क्रव्यं नव्यं गृहीत्वा प्रणदति मुदितो मत्तवेतालबालः ॥
क्रीडत्यव्रीडमस्मिन् रुधिरमदवशात्पूतना नूतनाङ्गी ।
योगिन्यो मांसमेदःप्रमुदितमनसः शूरशक्तिं स्तुवन्ति ॥१॥

भावार्थ–इस रणभूमिमें निशाचर रुधिरपान कर रहे हैं और उगिल रहे हैं, मत्त वेतालबाल नोकदार भालासे नवीन मांस तोडकर प्रसन्नतापूर्वक खा रहे हैं, नूतन अङ्गवाली पूतना रुधिरपानसे मत्त होकर निर्लज्ज क्रीडा कर रही है और अनेक योगिनियां मांसमेदोंकरके प्रसन्नमन होकर शूरोंके शक्तिकी स्तुति कर रही हैं ॥ १ ॥

प्रस्वेदमलदिग्धेन वहता मूत्रशोणितम् ॥
व्रणेन विकृतेनेदं सर्वमन्धीकृतं जगत् ॥ २ ॥

भावार्थ–प्रस्वेद (पसीना) के मलसे युक्त, मूत्र और रुधिर जिसमेंसे वह रहा है ऐसे विकारवाले इस व्रण (फोडे) ने सब जगत्को अन्धा कर रक्खा है ॥ २ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

रौद्ररसनिर्देश।

पातालतः किमु सुधारसमानयामि
निष्पीड्य चन्द्रममृतं किमु वा हरामि॥
उद्यन्तमद्य तपनं किमु वारयामि
कीनाशपाशमथवा किमु चूर्णयामि॥ १॥

भाषार्थ--पातालसे क्या अमृत ले आऊं, अथवा चन्द्रमाको निचोडकर अमृत निकाल लाऊँ, अथवा आज उदय होते हुए सूर्यको रोक दूं, अथवा यमराजके पाशको क्या चूर्णकर डालूं? ॥ १॥

स्पृष्टा येन शिरोरुहे नृपशुना पाञ्चालराजात्मजा।
येनास्याः परिधानमप्यपहृतं राज्ञां कुरूणां पुरः॥
यस्योरःस्थलशोणितासवमहं पातुं प्रतिज्ञातवान्।
सोऽयं मद्भुजपञ्जरे निपतितः संरक्ष्यतां कौरवाः!॥२॥

भाषार्थ--जिस नृपशु (मनुष्योंमें पशुसमान आचरणवाला) दुःशासनने द्रौपदीके केश गहे, जिसने कुरुवंशी राजाओंके सन्मुख द्रौपदीका चीर खींचा, जिसकी छातीका रुधिरासवपान करनेकी मैंने प्रतिज्ञा करी, वही यह दुःशासन मेरे भुजपञ्जरमें दबा है. कौरवलोग (दुर्योधनादिक)! तुम इसका रक्षण करो॥ २॥

शान्तरसनिर्देश।

विपत्प्रशान्त्यै सेव्यन्ते यदि कष्टेन भूभृतः॥
तत्करिष्यति कष्टापि विपत्किमधिकं ततः॥ १॥

भाषार्थ--आपदाओंको शान्त करनेके निमित्त कष्टसे यदि पर्वत

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सेवन किये जायँ, अर्थात् पहाडपर जाकर निवास करै और वहीं एकान्तमें भगवद्भजन करै, तो इससे अधिक और क्या कष्ट विपत्तियोंसे हो सकेगा ? ॥ १ ॥

पुत्रमित्रकलत्रेषु सक्ताः सीदन्ति जन्तवः ॥
सरः पङ्कार्णवे मग्ना जीर्णा वनगजा इव ॥ २ ॥

भावार्थ–पुत्र, मित्र और स्त्रीमें जो प्राणी आसक्त हैं, वे ऐसे हैं. जैसे सरोवरकी कींचमें वनका बूढा हाथी फँसकर उसीमें पडा समाप्त हो जाता है ॥ २ ॥

निःस्नेहो याति निर्वाणं स्नेहोऽनर्थस्य कारणम् ॥
निःस्नेहेन प्रदीपेन पदे तत्प्रकटीकृतम् ॥ ३ ॥

भावार्थ–स्नेहरहित पुरुष निर्वाणको प्राप्त हो जाता है अर्थात् शान्त हो जाता है. क्योंकि–अधिक स्नेह अनर्थका हेतु है, अर्थात् अधिक स्नेहसे अनेक अनर्थ प्रगट हो जाते हैं. स्नेह (तेल आदि) रहित दीपकने इस बातको प्रगट दर्शा दिया है ॥ ३ ॥

प्रचण्डवासनावातैरुद्भूता नौर्मनोमयी ॥
वैराग्यकर्णधारेण विना रोद्धुं न शक्यते ॥ ४ ॥

भावार्थ–प्रचण्ड वासनारूपी पवनसे डगमगाती हुई मनरूपी नाव वैराग्यरूप मल्लाहके विना रोकी नहीं जा सकती है ॥ ४ ॥

पुत्रदारादिसंसारः पुंसां संमूढचेतसाम् ॥
विदुषां शास्त्रसंसारः सद्योगाभ्यासविघ्नहृत् ॥ ५ ॥

भावार्थ–मूढबुद्धिवाले पुरुषोंको पुत्र स्त्री आदि संसार है और

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पण्डितोंको शास्त्र संसार है, जो श्रेष्ठ योगाभ्यासमें विघ्नोंको हरने-
वाला है ॥ ५ ॥

पूरयित्वार्थिनामाशां प्रियं कृत्वा द्विषामपि ॥
पारं गत्वा श्रुतौघस्य धन्या वनमुपासते ॥ ६ ॥

भाषार्थ–याचकोंकी आशाको पूर्ण करके और शत्रुओंकाभी भला करके वेदादिशास्त्र श्रवण कर, जो उसके पार जाकर वनमें वास करते हैं वे धन्य हैं ॥ ६ ॥

गतः काममथोन्मादो गलितो यौवनज्वरः ॥
गतो मोहश्च्युता तृष्णा कृतं पुण्याश्रमे मनः ॥७॥

भाषार्थ–कामकथाओंका उन्माद दूर हो गया, यौवनज्वरभी उतर गया और मोहमयी तृष्णाभी हट गई. क्योंकि–अब हमने पुण्याश्रम (संन्यास–आश्रम) में मन लगा लिया है ॥ ७ ॥

वनान्यमूनि न गृहाण्येता नद्यो न योषितः ॥
द्रुमा इमे न दायादास्तन्मे नन्दति मानसम् ॥ ८ ॥

भाषार्थ–" ये वन हैं, गृह नहीं हैं. ये नदियां हैं, स्त्रियां नहीं हैं. ये वृक्ष हैं, बान्धव नहीं हैं. " यह सिद्धान्त मेरे मनको आनन्दित करता है ॥ ८ ॥

उद्घाटितनवद्वारे पञ्जरे विहगोऽनिलः ॥
यत्तिष्ठति तदाश्चर्यं प्रयाणे विस्मयः कुतः ?॥ ९ ॥

भाषार्थ–नव द्वार जिसके खुले हैं ऐसे देहरूप–पिंजरेमें वायुरूपी पक्षी (प्राण) जो स्थित है, अर्थात् ठहरा हुआ है यही आश्चर्य है. निकल जानेसे कौन विस्मय है ? ॥ ९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दिनमेकं शशी पूर्णः क्षीणस्तु बहुवासरान्।
सुखाद्दुःखं सुराणामप्यधिकं का कथा नृणाम्? १०

भाषार्थ—चन्द्रमा एक दिन केवल पूर्णिमाको पूर्ण होता है और क्षीण बहुत दिन रहता है. देवताओंकोभी सुखसे दुःख अधिक है, तो मनुष्योंकी क्या कथा है? ॥ १० ॥

निर्विवेकतया बाल्यं कामोन्मादेन यौवनम्।
वृद्धत्वं विकलत्वेन सदा सोपद्रवं नृणाम् ॥ ११ ॥

भाषार्थ—मनुष्योंकी बाल्यावस्था विचारशून्य होनेसे अर्थात् अज्ञानतासे, यौवनावस्था कामके उन्मादसे और वृद्धावस्था व्याकुलतासे सदा उपद्रवयुक्त है ॥ ११ ॥

पाषाणखण्डेष्वपि रत्नबुद्धिः कान्तेतिधीः शोणितमांसपिण्डे
पञ्चात्मके वर्ष्मणि चात्मभावो जयत्यसौ काचन मोहलीला

भाषार्थ—"पाषाणके खंडोंमें रत्नबुद्धि और रुधिर मांसके पिण्डमें स्त्रीबुद्धि और पांच तत्वोंसे बने हुये शरीरमें आत्मभाव" यह अद्भुत मोहलीला हो रही है. धन्य है! ॥ १२ ॥

कुटुम्बचिन्ताकुलितस्य पुंसः कुलं च शीलं च गुणाश्च सर्वे।
अपक्वकुम्भे निहिता इवापः प्रयान्ति देहेन समं विनाशम् १३

भाषार्थ—कुटुम्बकी चिन्तासे व्याकुल मनुष्यका कुल, शील और सम्पूर्ण गुण ये कच्चे घडेमें डाले हुये जलके समान देहके साथही विनाश हो जाते हैं ॥ १३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सुरमन्दिरतरुमूलनिवासः शय्याभूतलमजिनं वासः ॥
सर्वपरिग्रहभोगत्यागः कस्य सुखं न करोति विरागः॥१४॥

भाषार्थ—देवमन्दिरमें या वृक्षके नीचे निवास, पृथ्वीही शय्या, मृगछाला वस्त्र, सबप्रकार दान और भोगोंका त्याग इस तरह विराग किसको सुख नहीं करता है ? ॥ १४ ॥

इतो न किंचित्परतो न किंचिद्यतो यतो यामि ततोनकिंचित् ॥
विचार्यपश्यामिजगन्नकिंचित्स्वात्मावबोधादधिकंनकिंचित्॥

भाषार्थ—इधर कुछ नहीं और उधरभी कुछ नहीं. जहां जहां जाता हूं वहांभी कुछ नहीं. विचार कर देखता हूं तो, जगत् कुछ नहीं. अपने आत्माके बोधसे बढकर कुछ नहीं है ॥ १५ ॥

व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती
रोगाश्च शत्रव इव प्रहरन्ति देहम् ॥
आयुः परिस्रवति भिन्नघटादिवाम्भो ।
लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम् ॥ १६ ॥

भाषार्थ—व्याघ्रीके समान बुढापा आगे खडा झिडकी बता रहा है, रोग शत्रुके समान शरीरपर प्रहार कर रहे हैं, आयु दिनदिन घट रही है, जैसे छिद्रवाले घडेमेंसे बूंद बूंद जल टपकता है, तथापि लोग अहित (जिससे कल्याण न हो ऐसा) कर्म करते हैं यह आश्चर्य है ॥ १६ ॥

दधति तावदमी विषयाः सुखं स्फुरति यावदियं हृदि मूढता ॥
मनसि तत्वविदां तु विवेचके क्व विषयाः क्व सुखं क्व परिग्रहाः

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ—जबतक यह मूर्खता हृदयमें फरकती है, तबतक इन विषयोंके सुखको मनुष्य धारण करता है. परंतु तत्वज्ञानियोंके विचारी मनमें कहां विषय, कहां सुख और कहां परिग्रह हैं ? ॥ १७ ॥

तडिन्मालालोलं प्रतिदिवसदत्तान्धतमसं ।
भवे सौख्यं हित्वा शमसुखमुपादेयमनघम् ॥
इति व्यक्तोद्गारं चटुलवचसः शून्यमनसो ।
वयं वीतव्रीडा शुक इव पठामः परममी ॥ १८ ॥

भावार्थ—ये विषयसुख विजलीकी रेखाके समान चंचल हैं. जैसे बिजली चमकने उपरान्त अंधेरा हो जाता है, उसीप्रकार विषयसुखके पीछे मनमें ग्लानि उत्पन्न होती है. इसकारण, विषयसुखको त्यागकर कल्याण करनेवाले सुख (निर्मल शांतिसुख) का उपाय करै. यह सदुपदेश हमने विना सोचे समझे स्पष्टस्वरसे शून्यमन होकर निर्लज्जतापूर्वक शुककी भांति पढे हैं ॥ १८ ॥

आस्तामकण्टकमिदं वसुधाधिपत्यम् ।
त्रैलोक्यराज्यमपि नैव तृणाय मन्ये ॥
निःशङ्कसुप्तहरिणीकुलसंकुलासु ।
चेतः परं चलति शैलवनस्थलीषु ॥ १९ ॥

भावार्थ—समस्त पृथ्वीमंडलका निष्कण्टक राज्य एक ओर रहा, त्रिलोकीके राज्यकोभी मैं तृणसमानभी नहीं मानता हूं. क्योंकि—मेरा मन तो वेखटक शयन करनेवाली हरिणियोंके समूहसे भरी हुई पर्वतोंकी वनस्थलियोंकी ओर दौडता है ॥ १९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अवश्यं यातारश्चिरतरमुषित्वापि विषया।
वियोगे को भेदस्त्यजति न जनो यत्स्वयममून्॥
व्रजन्तः स्वातन्त्र्यादतुलपरितापाय मनसः।
स्वयं त्यक्तास्त्वेते शमसुखमनन्तं विदधति ॥२०॥

भाषार्थ–अतिकालपर्यन्त अर्थात् बहुत समयतक भोगनेके उपरान्त ये विषय अवश्य हमसे पृथक् हो जायँगे. फिर उनके वियोगमें सन्देहही क्या है? जो कि अपने आप ही मनुष्य इनको नहीं त्याग करता. यदि कोई यह कहे कि–ये विषय एक दिन आपही हमसे पृथक् हो जायँगे तो हम इनका स्वयं क्यों त्याग करैं? तो इसका उत्तर यह है कि–' स्वतन्त्रतासे चलते हुये ये विषय अपनेआप छुटनेसे मनको बहुत क्लेश होगा और यदि इन विषयोंको विष, भोगोंको रोगकी जड जानकर, स्वयं परित्याग करे तो अनन्त शान्तिसुख प्राप्त होता है ॥ २० ॥

गतः कालो यत्र द्विचरणपशूनां क्षितिभुजाम्।
पुरः स्वस्तीत्युक्त्वा विषयसुखमास्वादितमभूत्॥
इदानीमस्माकं तृणमिव समस्तं कलयता–।
मपेक्षा भिक्षायामपि किमपि चेतस्त्रपयति ॥ २१ ॥

भाषार्थ–अब वह समय बीत गया जब हम, दो चरणवाले पशु राजाओंके सन्मुख ' स्वस्ति (कल्याण हो) ' ऐसा वचन कहते हुये विषयसुखका स्वाद लेते थे. अब हम सब वस्तुओंको तृणसमान समझते हैं और भिक्षाकी अपेक्षा करनेमें भी हमारा मन सकुचाता है ॥२१॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पूर्वं तावत् कुवलयदृशां लोललोलैरपाङ्गै-
राकर्षद्भिः किमपि हृदयं पूजिता यौवनश्रीः ॥
सम्प्रत्यन्तर्निहितसदसद्भावलब्धप्रबोध- ।
प्रत्याहारैर्विशदहृदये वर्तते कोऽपि भावः ॥ २२ ॥

भाषार्थ-जो हृदय पहले मृगनयनियोंके अति चंचल नेत्रोंकरके खिंचा हुआ था और जो युवा अवस्थाकी सुन्दरताकोही पूजता था, अब उसी अन्तःकरणमें अच्छे बुरे भावोंके संघर्षणसे ज्ञान उत्पन्न हो गया है और समस्त इन्द्रियोंका अपने अपने विषयोंसे प्रत्याहार हो गया है अर्थात् इन्द्रियोंने मानों समाधि ले ली, यह क्याही एक उत्तम भाव हृदयमें प्रगट हो गया है ॥ २२ ॥

गङ्गातीरे हिमगिरिशिलाबद्धपद्मासनस्य ।
ब्रह्मज्ञानाभ्यसनविधिना योगनिद्रां गतस्य ॥
किं तैर्भाव्यं मम सुदिवसैर्यत्र ते निर्विशङ्काः ।
सम्प्राप्स्यन्ते जरठहरिणा गात्रकण्डूविनोदम् ॥ २३ ॥

भाषार्थ-गंगाजीके तीरमें हिमालयकी शिलापर पद्मासन बांधे हुये ब्रह्मज्ञानके अभ्यासकी विधिसे योगनिद्रामें स्थित हमारे शरीरमें बूढे मृग वेखटके अपनी देह खुजलाकर खुजलानेका सुख पावेंगे. क्या हमारे ऐसे सुदिन कभी होंगे ॥ २३ ॥

आशानामनदी मनोरथजला तृष्णातरङ्गाकुला ।
रागग्राहवती वितर्कविहगा धैर्यद्रुमध्वंसिनी ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मोहावर्तसुदुस्तरातिगहना प्रोत्तुङ्गचिन्तातटी ।
तस्याः पारगता विशुद्धमनसो नन्दन्ति योगीश्वराः २४

भाषार्थ–आशानामवाली नदी है. मनोरथ उसका जल है, तृष्णा उसकी लहरैं हैं, विषयके भोगही उसमें ग्राहआदि जलजन्तु हैं, वितर्क रूपी पक्षी उड रहे हैं, धीरजरूप वृक्षोंको उखाडनेवाली और मोहरूपी भँवरोंके कारण अतिदुस्तर और गहरी तथा बडी बडी ऊंची चिन्ता-रूपी करारैं तटपर हैं. उसके पार जाकर शुद्ध अन्तःकरणवाले योगी-श्वरही आनन्दको प्राप्त होते हैं ॥ २४ ॥

गतः कालो यत्र प्रणयिनि मयि प्रेमकुटिलः ।
कटाक्षः कालिन्दी लघुलहरिवृत्तिः प्रभवति ॥
इदानीमस्माकं जरठकमठीपृष्ठकठिना ।
मनोवृत्तिस्तत्किं व्यसनिनि मृषैव क्षपयति ॥ २५ ॥

भाषार्थ–अब वह समय व्यतीत हो गया, जब कि–प्रेमके कुटि-लकटाक्ष यमुनाकी छोटी लहरोंकी भांति चलाकर उसके द्वारा मुझको मारती थीं अब हमारी मनोवृत्ति बूढी कछुईकी पीठकी नाईं कठोर हो गई है. हे व्यसनवति ! अब क्यों वृथा कटाक्ष चला रही हो ॥२५॥

भोगे रोगभयं कुले च्युतिभयं वित्ते नृपालाद्भयम् ।
माने दैन्यभयं बले रिपुभयं रूपे जराया भयम् ।
शास्त्रे वादभय गुणे खलभयं काये कृतान्ताद्भयम् ॥
सर्वं वस्तुभयान्वितं भुवि नृणां वैराग्यमेवाभयम् ॥२६॥

भाषार्थ–भोगमें रोगका भय, कुलमें दोष लग जानेका भय, धनमें राजाका भय, मानमें दीनताका भय, बलमें शत्रुका भय, रूपमें बुढा-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पेका भय, शास्त्रमें वादका भय, गुणमें दुष्टमनुष्यका भय, शरीरमें मृत्युका भय लगा रहता है. पृथिवीपर सब वस्तुओंमें मनुष्योंको भय लगा रहता है. केवल वैराग्यही अभय है, जिसमें कुछभी भय नहीं है ॥ २६ ॥

यत्क्षान्तिः समये श्रुतिः शिवशिवेत्युक्तिर्मनोनिर्वृति-।
र्भैक्षे चाभिरुचिर्गृहेषु विरतिः शश्वत् समाधौ रतिः ॥
एकान्ते वसतिर्गुरून् प्रति नतिः सद्भिः समं सङ्गतिः।
सत्वे प्रीतिरनङ्गनिर्जितिरसौ सन्मुक्तिमार्गे स्थितिः ॥२७॥

भावार्थ—शान्तिपूर्वक रहना, समयानुसार वेदपाठ करना, शिवशिव कहना, मनकी निर्वृत्ति, भिक्षामें रुचि, घरसे विराग, निरन्तर समाधिमें प्रीति, एकान्तमें वास, गुरुओंको प्रणाम, साधुजनोंकी संगति, सतोगुणमें प्रीति, कामको जीतना, मुक्तिमार्गमें स्थित होनेके ये लक्षण हैं ॥ २७ ॥

सूक्तिं कर्णसुधां व्यनक्तु सुजनस्तस्मिन्न मोदामहे ।
ब्रूतां वाचमसूयको विषमुचं तस्मिन्न खिद्यामहे ॥
या यस्या प्रकृतिः स तां वितनुतां किं नस्तथा चिन्तया ।
कुर्मस्तत्खलु कर्म जन्मनिगडच्छेदाय यज्जायते ॥ २८ ॥

भावार्थ—श्रेष्ठ जन कानोंको अमृतसमान मधुर वाणी हमको सुनावै, इससे हम प्रसन्न नहीं होते हैं. और दुष्ट जन विष उगलनेवाली वाणी हमको सुनावै तो हम खिन्न नहीं होते हैं. जो जिसकी प्रकृति है, वह उसको प्रकाश करै. उसकी हमको चिन्ताही क्या है?

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हम तो वह कर्म करते हैं कि—जिससे जन्ममरणरूपी साकल टूट जाय अर्थात् आवागमनसे हम छूट जायँ ॥ २८ ॥

जिह्वे लोचननासिके श्रवण हे त्वक् चापि नो वार्यसे ।
सर्वेभ्योऽस्तु नमः कृताञ्जलिरहं संप्रश्रयं प्रार्थये ॥
युष्माकं यदि सम्मतं तदधुना नात्मानमिच्छाम्यहम् ।
होतुं भूमिभुजां निकारदहनज्वालाकराले गृहे ॥ २९ ॥

भाषार्थ—हे जीभ ! हे नेत्र ! हे नासिका ! हे कान ! हे खाल ! तुम सबको हम निवारण नहीं करते. सबके अर्थ नमस्कार है. हाथ जोडकर मैं सविनय प्रार्थना करता हूं, कि—यदि तुम लोगोंकी सम्मति हो, तो मैं अब राजाओंके तीक्ष्णज्वालामय कराल गृहमें अपनेको हवन करना नहीं चाहता हूं ॥ २९ ॥

बीभत्सा विषया जुगुप्सिततमः कायो वयो गत्वरम् ।
प्रायो बन्धुभिरध्वनीव पथिकैर्योगो वियोगावहः ॥
हातव्योऽयमसार एष विरसः संसार इत्यादिकम् ।
सर्वस्यैव हि वाचि चेतसि पुनः कस्यापि पुण्यात्मनः ३०

भाषार्थ—सब विषय घृणित हैं, शरीर मांसमज्जाआदिसे बना हुवा महाघृणित है, आयु घट जानेवाली है, मार्गमें आनेजानेवाले पथिकोंकी भांति बन्धुजनोंका संयोगभी प्रायः वियोगका कारण है. अतः ये सब असार वस्तुयें हैं. इनको और इस असार संसार आदिको छोड देना चाहिये. परन्तु इसप्रकार सबही बातें बनाते हैं. छोडनेवाले विरलेही पुण्यात्मा जन हैं जिनके चित्तमें ये बातें समाती हैं ॥ ३० ॥

सत्यं वक्तुमशेषमस्ति सुलभा वाणी मनोहारिणी ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

दातुं दानवरं शरण्यमभयं स्वच्छं पितृभ्यो जलम् ॥
पूजार्थं परमेश्वरस्य विमलः स्वाध्याययज्ञः परम् ।
क्षुद्व्याधेः फलमूलमस्ति शमनं क्लेशात्मकैः किं धनैः ३१

भाषार्थ–सत्य बोलनेके अर्थ सुलभ और दूसरेके मनको हरण करनेवाली सुन्दर वाणी है, शरणागतको दान देनेके अर्थ दानोंमें श्रेष्ठ दान अभयदान है, पितरोंके अर्थ निर्मल जल है, परमेश्वरकी पूजाके अर्थ विमल स्वाध्याय यज्ञ है, अर्थात् वेदपाठ और अग्निहोत्रादि यज्ञ है, क्षुधाव्याधिको मिटानेके अर्थ फलमूल हैं, फिर क्लेश देनेवाले धनोंसे हमारा क्या प्रयोजन है ? ॥ ३१ ॥

धैर्यं यस्य पिता क्षमा च जननी शान्तिश्चिरं गेहिनी ।
सत्यं सूनुरयं दया च भगिनी भ्राता मनःसंयमः ॥
शय्या भूमितलं दिशोऽपि वसनं ज्ञानामृतं भोजनम् ।
एते यस्य कुटुम्बिनो वद सखे ! कस्माद्भयं योगिनः ? ३२

भाषार्थ–धीरज जिसका पिता है, क्षमा माता है और शान्ति सदैव स्त्री है, सत्य पुत्र है, दया बहिन है, मनःसंयम भ्राता है, पृथ्वी शय्या है, दिशा वस्त्र हैं, ज्ञानामृत भोजन है, इतने जिसके कुटुम्बवाले हैं, हे सखे ! बताओ, ऐसे योगीजनोंको किससे भय है ? ॥ ३२ ॥

मातर्लक्ष्मि ! भजस्व कंचिदपरं मत्कांक्षिणीमात्मभू–।
र्भोगेभ्यः स्पृहयालवो नहि वयं का निस्पृहाणामसि ॥
सद्यः शीर्णपलाशपत्रपुटिका पात्रे पवित्रीकृते ।
भिक्षासक्तुभिरेव सम्प्रति वयं वृत्तिं समीहामहे ॥ ३३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–हे मातः लक्ष्मि ! तुम और किसीकी सेवा करो, हमारी चाहना मत करो. तुह्मारे वशमें वेही हैं, जो भोगविलासकी इच्छावाले हैं, हम तुह्मारे वशमें नहा हैं. अतः निर्लोभियोंको तुम क्या हो ! अब तुरन्त तोडे हुये ढांकके पत्तोंका पवित्र दोना बनाकर उसमें भिक्षासे मिला हुवा सत्तु रक्खेंगे. अब हम ऐसी वृत्ति अर्थात् आजीविकाकी इच्छा करते हैं ॥ ३३ ॥

विषयोपहास।

रक्तमांसमयः कायः स्त्रीणां स्पर्शसुखायनः ॥
तमेवाश्नन्ति सिंहाद्या रम्यं नास्तीह वस्तुतः॥ १ ॥

भाषार्थ–स्त्रियोंका रुधिरमांसमय शरीर हमारे स्पर्शसुखके निमित्त है, उसीको सिंहआदि जीव खा लेते हैं. वस्तुतः यह रमणीय नहीं है ॥ १ ॥

सर्वाशुचिनिधानस्य कृतघ्नस्य विनाशिनः ॥
शरीरकस्यापि कृते मूढाः पापानि कुर्वते ॥ २ ॥

भाषार्थ–सम्पूर्ण अपवित्रताओंका स्थान, कृतघ्न अर्थात् उत्तम अन्न पानादि पदार्थोंके उपकारको न मानकर, उनको भ्रष्ट बनानेवाला और नाश हो जानेवाले ऐसे शरीरके अर्थभी मूढ मनुष्य पाप करते हैं ॥ २ ॥

अन्यत्र भीष्माद्गाङ्गेयादन्यत्र च हनूमतः ॥
हरिणीखुरमात्रेण चर्मणा मोहितं जगत् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–गंगासुत बालब्रह्मचारी श्रीभीष्मजी और हनुमान्‌जीके

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

विना अर्थात् इन दोनौं महात्माओंको छोडकर, सम्पूर्ण जगत् हरिणीके खुरके बराबर चमडेसे मोहित्त हो रहा है ॥ ३ ॥

दाराः परिभवकारा बन्धुजनो बन्धनं विषं विषयाः ॥
कोऽयं जनस्य मोहो ये रिपवस्तेषु सुहृदाशा ॥ ४ ॥

भाषार्थ–स्त्रियां निरादर करानेवाली हैं, बन्धुजन बन्धन हैं, विषय विष हैं. मनुष्योंका यह कैसा मोह है कि–जे शत्रु हैं उनमें उनकी मित्र–आशा है ॥ ४ ॥

समाश्लिष्यत्युच्चैर्घनपिशितपिण्डं स्तनधिया ।
मुखं लालाक्लिन्नं पिबति चषकं सासवमिव ॥
अमेध्ये क्लेदार्द्रे पथि च रमते स्पर्शरसिको ।
महामोहान्धानां किमिव रमणीयं न भवति ? ॥ ५ ॥

भाषार्थ–घने मांसपिंडको स्तन जानकर लोग बलपूर्वक आलिंगन करते हैं और लारसे भरे हुये मुखको अहंकारसे आसव (मदिरा) की नाई पान करते हैं, तथा स्पर्शरसिक जन अपवित्र मवादसे गीले मार्गमें रमण करते हैं. महामोहसे अन्धे पुरुषोंको कौन वस्तु रमणीय नहीं हो जाती है ? ॥ ५ ॥

अनित्यतानिरूपण ।

पृथिवी दह्यते यत्र मेरुश्चापि विशीर्यते ॥
सुशोषं सागरजलं शरीरे तत्र का कथा ? ॥ १ ॥

भाषार्थ–जिसमें पृथिवी भस्म हो जाती है, मेरुभी विशीर्ण हो जाता है अर्थात् सीझ जाता है और समुद्रका जल सूख जाता है, उसमें शरीरका क्या कहना, अर्थात् वहां शरीर क्या वस्तु है ? ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः ॥
संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं हि जीवितम् ॥२॥

भाषार्थ-सम्पूर्ण समूह नाशपर्यन्त हैं. उँचाई पतनपर्यन्त है. संयोग वियोगपर्यन्त हैं और जीवन मरणपर्यन्त है ॥ २ ॥

मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च ॥
तवानन्तानि यातानि कस्य ते कस्य वा भवान् ॥३॥

भाषार्थ-तुम्हारे हजारों मातापिता और सैकडों पुत्र हुये, सैकडों स्त्रियां हो चुकी हैं. तुम किसके हो और कौन तुम्हारे हैं ? ॥ ३ ॥

येषां निमेषोन्मेषाभ्यां जगतां प्रलयोदयौ ॥
तादृशाः पुरुषा जाता मादृशां गणनैव का ? ॥ ४ ॥

भाषार्थ-जिनके पलक उघारने और बन्द कर लेनेसे जगत्का प्रलय और उदय था, ऐसे पुरुष जब चले गये तब हम सरीखे मनुष्योंकी गणनाही क्या है ? ॥ ४ ॥

नन्दन्ति मन्दाः श्रियमाप्य नित्यं परं विषीदन्तिविपद्गृहीताः॥
विवेकदृष्ट्याचरतां नराणां श्रियो न किंचिद्विपदो न किंचित् ५

भाषार्थ-मन्दमतिवाले मनुष्य लक्ष्मी पाय नित्य फूले नहीं समाते और विपत्ति आ जानेपर बहुत दुःखी हो जाते हैं. विचारदृष्टिसे आचरण करनेवाले पुरुषोंको न लक्ष्मी कुछ है, न विपत्ति कुछ है ॥५॥

अमीषां जन्तूनां कतिपयनिमेषस्थितिजुषाम् ।
वियोगे धीराणां क इह परितापस्य विषयः ? ॥
क्षणादुत्पद्यन्ते विलयमपि यान्ति क्षणममी ।
न केऽपि स्थातारः सुरगिरिपयोधिप्रभृतयः ॥ ६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-कुछ थोडे पलोंतक ठहरनेवाले इन जन्तुओंके वियोग होनेपर बुद्धिमानोंको सोच करनेकी बातही क्या है? क्षणभरमें ये जन्मते और क्षणभरमेंही नाश हो जाते हैं. देवता, पर्वत, समुद्र आदि कोई भी यहां ठहरनेवाले नहीं हैं ॥ ६ ॥

यदस्माभिर्दृष्टं क्षणिकमभवत्स्वप्नमिव तत् ।
कियन्तो भावाः स्युः स्मरणविषयादप्यवगताः ॥
अहो ! पश्यन्पश्यन्स्वजनमखिलं यान्तमनिशं ।
हतव्रीडं चेतस्तदपि न भवेत्सङ्गरहितम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ-जो हमने देखा, सो स्वप्नकी नाईं शीघ्र नष्ट हुवा. कितने ऐसे हुये जो स्मरणमात्र रह गये अर्थात् उनका नाम मात्र शेष रह गया. अहो ! (खेदकी बात है) हमारे देखते देखते सब स्वजन दिन-रात नष्ट होते चले जाते हैं, तोभी हमारा निर्लज्ज मन संगरहित नहीं होता है. अर्थात् संग नहीं छोडता है ॥ ७ ॥

वयं येभ्यो याताश्चिरतरगता एव खलु ते ।
समं यैः संवृद्धाः स्मरणपदवीं तेऽपि गमिताः ॥
इदानीमेते स्मः प्रतिदिवसमासन्नपतना ।
गतास्तुल्यावस्थां सिकतिलनदीतीरतरुभिः ॥ ८ ॥

भाषार्थ-हम जिनसे उत्पन्न हुये वे थोडेही दिनोंसे चले गये. बहुत समय बीत गया और जिनके संग खेलते हुये हम बढे थे, वेभी स्मरणपदवीको प्राप्त हुये अर्थात् उनका केवल नामस्मरण रह गया. अब जो हम हैं, सो मृत्यु समीप होनेके कारण दिनदिन गिरते जाते हैं. अर्थात्

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हमारा शरीर दिनदिन क्षीण होता जाता है. अब हमारी अवस्था नदीतटपरके वृक्षोंके समान है ॥ ८ ॥

आयुर्वर्षशतं नृणां परिमितं रात्रौ तदर्धं गतम्।
तस्यार्धस्य परस्य चार्धमपरं बालत्ववृद्धत्वयोः ॥
शेषं व्याधिवियोगदुःखसहितं सेवादिभिर्नीयते।
जीवे वारितरङ्गबुद्बुदसमे सौख्यं कुतः प्राणिनाम्? ॥९॥

भाषार्थ–मनुष्योंकी आयु सौ वर्षकी नियत है. उसका आधा भाग अर्थात् आधी आयु रात्रिमें व्यतीत हो जाती है और आधी आयुका पहला और पिछला भाग बालपन और बुढापेमें बीत जाता है. शेष आयु रोग, वियोग और दुःखके साथ सेवा (नौकरी) आदि जगत्के कामोंमें कट जाती है. जलतरंगमें बुलबुलेकी नाईं जीवनमें प्राणियोंको सुख कहां है ? ॥ ९ ॥

कालचरित।

अप्सु प्लवन्ति पाषाणा मानुषा घ्नन्ति राक्षसान् ॥
कपयः कर्म कुर्वन्ति कालस्य कुटिला गतिः ॥ १ ॥

भाषार्थ–जलमें पत्थर तिरते हैं, मनुष्य राक्षसोंको मारते हैं, बन्दर काम करते हैं. कालकी कुटिल गति है ॥ १ ॥

मातुलो यस्य गोविन्दः पिता यस्य धनंजयः ॥
सोऽपि कालवशं प्राप्तः कालो हि दुरतिक्रमः ॥२॥

भाषार्थ–मामा जिसके श्रीकृष्णजी और पिता जिसके अर्जुनजी ऐसे अभिमन्युभी कालवश हुये. कालकी अपारगति है, जिसे कोई रोक नहीं सकता ॥ २ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अद्यैव हसितं गीतं पठितं यैः शरीरिभिः ॥
अद्यैव ते न दृश्यन्ते कष्टं कालस्य चेष्टितम् ॥ ३ ॥

भाषार्थ–आजही जो हंस रहे थे, गीत गा रहे थे और पढ रहे थे वे आजही नहीं दीख पडते हैं. कालकी चेष्टा कठिन है ॥ ३ ॥

कालः पचति भूतानि कालः संहरते प्रजाः ॥
कालः सुप्तेषु जागर्ति कालो हि दुरतिक्रमः ॥ ४ ॥

भाषार्थ–काल प्राणियोंको खा जाता है. कालही प्रजाका संहार करता है. लय हो जानेपर कालही जागता रहता है. कालकी अपार गति है जिसको कोई नहीं रोक सकता ॥ ४ ॥

ये रम्या ये शुभारम्भाः सुमेरुगुरवोऽपि ये ॥
कालेन विनिगीर्णास्ते गरुडेनेव पन्नगाः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–जो रमणीय थे और जो सत्कर्म करनेवाले थे और जो सुमेरुकी नाईं बडे थे, उन सबको कालने निगल लिया. जैसे, गरुड पक्षी सांपोंको निगल जाता है ॥ ५ ॥

हा कान्ते ! हा धनं ! पुत्राः ! क्रन्दमानः सुदारुणम् ॥
मण्डूक इव सर्पेण मृत्युना गीर्यते नरः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–'हा कान्ते ! हा धन ! हा पुत्र !' इस प्रकार ऊँचे स्वरसे चिल्लाते हुये मनुष्यको मृत्यु निगल जाती है. जैसे, मेंडकको सांप निगल जाता है ॥ ६ ॥

श्वः कार्यमद्य कुर्वीत पूर्वाह्णे चापराह्णिकम् ॥
नहि प्रतीक्षते मृत्युः कृतमस्य न वा कृतम् ॥ ७ ॥

भाषार्थ–दूसरे दिन करनेवाला काम आजही कर लेवै और दोपहर

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

उपरान्त करनेका काम सबेरेही कर लेना चाहिये. क्योंकि-मृत्यु यह प्रतीक्षा नहीं करती कि-इसका काम अभी नहीं पूरा हुवा है. अर्थात् इसने अपना काम पूरा नहीं किया है ॥ ७ ॥

गृहे पर्यन्तस्थे द्रविणकणमोषं श्रुतवता।
स्ववेश्मन्यारक्षा क्रियत इति मार्गोऽयमुचितः ॥
नरान् गेहाद्देहात्प्रतिदिवसमाकृष्य नयतः।
कृतान्तात् किं शङ्का नहि भवति रे जागृत जनाः ! ८

भावार्थ-अपने घरके परोसमें धनकी चोरी थोडीसीभी हो जाय तो सुनतेहीं लोग अपने घरकी रक्षा करने लगते हैं यह उचितभी है. परन्तु यमराज मनुष्योंके घरसे देहसे प्रतिदिन प्राणधन खींच कर ले जाता है, इस बातकी क्या शंका नहीं होती है ? हे मनुष्यो ! जागो, अर्थात् सावधान हो जाओ ॥ ८ ॥

भगीरथाद्याः सगरः ककुत्स्थो दशाननो राघवलक्ष्मणौ च।
युधिष्ठिराद्याश्च बभूवुरेते सत्यं क्व याता बत ते नरेन्द्राः॥९॥

भावार्थ-भगीरथआदि और सगर, ककुत्स्थ, रावण, रामचन्द्र, लक्ष्मण, तथा युधिष्ठिर आदि पाण्डव ये जो बडे बडे राजा हुये, सत्य कहो, ये सब राजा कहां चले गये ? ॥ ९ ॥

यत्रानेके क्वचिदपि गृहे तत्र तिष्ठत्यथैको।
यत्राप्येकस्तदनु बहवस्तत्र नैकोऽपि चान्ते ॥
इत्थं चेमौ रजनिदिवसौ दोलयन् द्वाविवाक्षौ।
कालः काल्या भुवनफलके क्रीडति प्राणिसारैः॥ १० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–जहां पूर्व अनेक प्राणी रहते थे, वहांहि कई दिन बीत जानेपर एक प्राणी रहता है और जहां एक रहता था, वहां कई दि-नोंके बाद अनेक रहते हैं, अन्तमें एकभी नहीं रहेगा. इसप्रकार काल अपनी स्त्री काली (सृष्टि) के साथ इस जगत्‌रूप चौसरको बिछाय उसमें दो पांसोंको लौटाता हुवा क्रीडा कर रहा है, अर्थात् खेल रहा है ॥ १० ॥

आराध्य भूपतिमवाप्य ततो धनानि ।
भुंजामहे वयमिह प्रसभं सुखानि ॥
इत्याशया बत विमोहितमानसानां ।
कालो जगाम मरणावधिरेव पुंसाम् ॥ ११ ॥

भाषार्थ–" राजाको प्राप्त होकर अर्थात् राजाका आश्रय लेकर उसके द्वारा धन पाकर सांसारिक सुख भोगेंगे " इसी आशासे विमोहित मनवाले पुरुषोंका समय मरणपर्यन्त इसीप्रकार व्यतीत हो जाता है ११

पश्चात्ताप ।

धनवानिति हि मदो मे किं गतविभवो विषादमुपयामि ।
करनिहतकन्दुकसमाः पातोत्पाता मनुष्याणाम् ॥ १ ॥

भाषार्थ–' मैं धनवान् हूं ' यह मुझको मद है, तो विभव नष्ट होनेपर क्या विषादको प्राप्त होऊं ? हाथसे ताडित किया हुआ गेंद जैसे गिरता है, उछलता है, इसीप्रकार मनुष्योंका विभव है ॥ १ ॥

जन्मैव व्यर्थतां नीतं भवभोगप्रलोभिना ।
काचमूल्येन विक्रीतो हन्त ! चिन्तामणिर्मया ॥ २ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–सांसारिक भोगोंके मुझ लोभीने अपना जन्म व्यर्थही खो दिया. खेद है कि–चिन्तामणिको मैंने काचके मोल बेच डाला २

पुनः प्रभातं पुनरेव शर्वरी पुनः शशाङ्कः पुनरुद्यते रविः ॥
कालस्यकिंगच्छतियातियौवनंतथापिलोकःकथितंनबुध्यते।

भाषार्थ–फिर प्रातःसमय, फिर रात्रि, फिर चन्द्रमाका प्रकाश, फिर सूर्यका उदय. काल (समय) का क्या जाता है ? यौवन व्यतीत होता चला जा रहा है, तोभी लोग इस कथनको नहीं समझते ॥३॥

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्तास्तपो न तप्तं वयमेव तप्ताः ॥
कालो न यातो वयमेव यातास्तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः

भाषार्थ–हमने भोग नहीं भोगे, हमही भोगे गये. तप नहीं तपा, हमही सन्तप्त हुये. काल नहीं व्यतीत हुआ, हमही व्यतीत हो गये. तृष्णा जीर्ण नहीं हुई, हमही जीर्ण हो गये ॥ ४ ॥

क्षान्तं न क्षमया गृहोचितसुखं त्यक्तं न संतोषतः ।
सोढा दुस्सहशीतवाततपनक्लेशा न तप्तं तपः ॥
ध्यातं वित्तमहर्निशं न च पुनर्विष्णोः पदं शाश्वतम् ।
यद्यत्कर्म कृतं तदेव मुनिभिस्तैस्तैः फलैर्वञ्चितम्॥ ५ ॥

भाषार्थ–हमने क्षमासे क्षमा नहीं की अर्थात् क्षमाधर्मका विचारकरके क्षमा नहीं की. जब कुछ वश नहीं चला, तब मौन हो रहे और गृहका उचित सुख तो त्यागा परन्तु सन्तोषसे नहीं त्यागा. नहीं सहने योग्य शीत, वायु और सूर्यकी तपनके क्लेश सहन किये परन्तु तप नहीं तपा. दिनरात हम धनकाही ध्यान करते रहे, परन्तु निरन्तर विष्णुपदका ध्यान नहीं किया. जो जो कर्म हमने किये वेही कर्म मुनिजनभी करते रहे, परन्तु हम कर्मोंके फलसे वञ्चित रहे ५

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

कृत्वा शस्त्रविभीषिकां कतिपयग्रामेषु दीनाः प्रजा ।
मथ्नन्तो विटजल्पितैरुपहताः क्षौणीभुजस्ते किल ॥
विद्वांसोपि वयं किल त्रिजगतां स्वर्गस्थितिव्यापदा-
मीशस्तत्परिचर्यया न गणितो यैरेष नारायणः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–शस्त्रसे भय उत्पन्न करके ग्रामोंमें कितनीही दीन प्रजाको क्लेश देते हैं और धूर्त सभासदोंके मुखसे सारहीन वचन सुनकर भेट आदिसे पूजे जाते हैं, ऐसे तो राजाजी हैं. उसी राजाकी सेवा करते हुये हम विद्वान् (पंडित) ऐसे हैं कि त्रिलोकीकी उत्पत्ति, स्थिति और संहार करनेवाले नारायणको हमने कुछ नहीं गिना॥६॥

विद्या नाधिगता कलङ्करहिता वित्तं च नोपार्जितम् ।
शुश्रूषापि समाहितेन मनसा पित्रोर्न सम्पादिता ॥
आलोलायतलोचना युवतयो स्वप्नेऽपि नालिङ्गिताः ।
कालोऽयं परपिण्डलोलुपतया काकैरिव प्रेरितः ॥ ७ ॥

भाषार्थ–कलंकरहित विद्या नहीं पढी और धनकाभी संचय नहीं किया, सावधानमनसे मातापिताकीभी सेवा नहीं की, चंचल और विशालनेत्रोंवाली सुन्दरी स्त्रियोंका स्वप्नमेंभी आलिंगन नहीं किया. हमने तो अपना यह अमूल्य समय दूसरोंके आश्रयकी लालसासे कौवाकी भांति व्यतीत किया है ॥ ७ ॥

विचार ।

आदरेण यथा स्तौति धनवन्तं धनेच्छया ॥
तथा चेद्विश्वकर्तारं को न मुच्येत बन्धनात् ?॥१॥

भाषार्थ–आदरपूर्वक धनकी इच्छासे जिसप्रकार धनवान्की स्तुति

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

की जाती है, यदि उसीप्रकार जगदीश्वरकी स्तुति की जाय तो कौन नहीं बन्धनसे छूट जावै ? ॥ १ ॥

मृत्योर्बिभेषि किं मूढ ! भीतं मुञ्चति किं यमः ? ॥
अजातं नैव गृह्णाति कुरु यत्नमजन्मनि ॥ २ ॥

भाषार्थ–हे मूढ ! मृत्युसे क्यों डरता है ? क्या डर जानेसे यम छोड देगा ? विना जन्मवालेको कोई नहीं पकडता है. क्योंकि–जो जन्मता है, वह अवश्य मरता है. इसकारण ऐसा यत्न कर कि जन्मही न लेना पडै अर्थात् आवागमनसे रहित होनेका यत्न करै ॥२॥

मृत्योर्बिभेषि किं वीर ! न स भीतं विमुञ्चति ॥
अद्य वाब्दशतान्ते वा मृत्युर्वै प्राणिनां ध्रुवः ॥ ३ ॥

भाषार्थ–हे वीर ! तुम मृत्युसे क्यों डरते हो ? क्या डरनेवालेको मृत्यु छोड देती है ? आज वा सौ वर्षोंके अन्तमें प्राणियोंकी मृत्यु अवश्य होती है ॥ ३ ॥

स्वमस्तकसमारूढमृत्युं पश्येज्जनो यदि ॥
आहारोऽपि न रोचेत किमुतान्या विभूतयः ? ॥४॥

भाषार्थ–अपने मस्तकपर आरूढ मृत्युको मनुष्य यदि देख लेवै तो, आहारभी नहीं अच्छा लगै. अन्य विभूतियोंका तो कहनाही क्या है ? ॥ ४ ॥

केचिद्वदन्ति धनहीनजनो जघन्यः
केचिद्वदन्ति गुणहीनजनो जघन्यः ॥
व्यासो वदत्यखिलवेदविशेषविज्ञो
नारायणस्मरणहीनजनो जघन्यः ॥ ५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-कोई आचार्य कहते हैं कि-धनहीन पुरुष अधम है, और कोई आचार्य गुणहीन जनको अधम कहते हैं. चारौ वेदके विशेष जाननेवाले व्यासदेवजी कहते हैं कि-नारायणके स्मरणसे हीन जन अधम है ॥ ५ ॥

धर्मं प्रसङ्गादपि नाचरन्ति पापं प्रयत्नेन समाचरन्ति ॥
आश्चर्यमेतद्धि मनुष्यलोकेऽमृतं परित्यज्य विषं पिबन्ति

भाषार्थ-सांसारिकजन प्रसंगसेभी धर्मका आचरण नहीं करते हैं और पापको बडे यत्नसे करते हैं. मनुष्यलोकमें यही आश्चर्य है कि-लोग अमृतको छोडकर विष पीते हैं ॥ ६ ॥

यस्मिन् वस्तुनि ममता मम तापस्तत्र तत्रैव ॥
यत्रैवाहमुदासे तत्र मुदासे स्वभावसन्तुष्टः ॥ ७ ॥

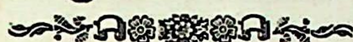
भाषार्थ-जिस वस्तुमें हमारी ममता है, वहां वहां मेरेको ताप है और जहांही मैं उदासीन होता हूं वहां आनन्दपूर्वक सन्तुष्ट रहता हूं ॥ ७ ॥

इतिश्रीमदयोध्यामण्डलान्तर्वर्तिलखीमपुरखीरीनिवासि-
ज्योतिर्वित्पंडितनारायणप्रसादमिश्रविलिखिते
भाषार्थसमन्विते सुभाषितरत्नाकरे
चतुर्थः प्रकाशः समाप्तः ॥ ४ ॥



CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

॥ अथ सुभाषितरत्नाकरः ॥



॥ पंचमः प्रकाशः ॥



अथ धर्माधर्मनिरूपण।

वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः ॥
वेदो नारायणो साक्षात्स्वयंभूरिति शुश्रुम ॥ १ ॥

भाषार्थ–वेदने जो करनेको कहा वह धर्म है और उससे जो विपरीत वह अधर्म है. वेद साक्षात् स्वयंभू नारायण है ॥ १ ॥

चोदनालक्षणो धर्म इति धर्मस्य लक्षणम् ॥
श्रीमज्जैमिनिना प्रोक्तं मानन्तु मनुनेरितम् ॥ २ ॥

भाषार्थ–' चोदनालक्षणोर्थो धर्मः ' यह धर्मका लक्षण (मीमांसा-दर्शनके अध्याय १ पा० १ सू० २ में श्रीमान् जैमिनिजीने कहा है). इसका अर्थ यह है कि–जिसमें परमेश्वरकी प्रेरणा अथवा आज्ञा हो, वह धर्म है और मान तो मनुजीने वर्णन किया है ॥ २ ॥

श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेयो धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः॥
धर्मञ्जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः ॥ ३ ॥

भाषार्थ–श्रुति वेदको और स्मृति धर्मशास्त्रको कहते हैं. धर्मको जाननेके निमित्त श्रुतिही परम प्रमाण है ॥ ३ ॥

---

१ यह श्लोक श्रीमद्भागवतका है. इसी प्रकार जितने प्रमाणश्लोक हम यहां लिखेंगे वे मनुस्मृति, याज्ञवल्क्यस्मृति, पाराशरस्मृति, श्रीमद्भगवद्गीता आदि धर्मग्रन्थोंसेही लेकर लिखेंगे।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

बिभर्ति सर्वभूतानि वेदशास्त्रं सनातनम् ॥
तस्मादेतत्परं मन्ये यज्जन्तोरस्य साधनम् ॥ ४ ॥

भाषार्थ–वेदशास्त्र सनातन है जो सब प्राणियोंको धारण करता है. अर्थात् समस्त जगत्का आधाररूप वेदही है. वेदानुकूल वर्ताव करनेसे प्राणियोंकी स्थिति है। 'धरति धारयति वा विश्वमिति धर्मः' ; 'ध्रियते सन्मार्गतया लोकैरिति वा धर्मः' । 'विश्वको धारण करता है अथवा धारण कराता है वह धर्म है. यद्वा उत्तममार्गसे लोकोंद्वारा धारण किया जाय वह धर्म है' धर्मका वर्ण वेदमें है जो सनातन है. इसी कारण प्राणियोंके सुखसाधननिमित्त वेदको सबसे उत्तम मानता हूं ॥ ४ ॥

येनास्य पितरो याता येन याताः पितामहाः ॥
तेन यायात्सतां मार्गं तेन गच्छन्न रिष्यते ॥ ५ ॥

भाषार्थ–जिस मार्गपर पितर चलते हैं और जिस मार्ग होकर पितामह आदि गये हैं, उस मार्गपर चलना चाहिये. यही श्रेष्ठजनोंका मार्ग है जिसपर चलनेसे कल्याण होता है. अनिष्ट नहीं होता है ॥ ५ ॥

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ॥
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥ ६ ॥

भाषार्थ–श्रेष्ठ जन जो जो आचरण करता है, उस उस आचरणको अन्यजन करने लगते हैं, वह जो प्रमाण करता है, लोग उसीके पीछे चलने लगते हैं ॥ ६ ॥

वर्णाश्रमेषु युक्तस्य स्वर्गादिसुखकारिणः ॥
श्रौतस्मार्तस्य धर्मस्य ज्ञानं तद्धर्म उच्यते ॥ ७ ॥

भाषार्थ–वर्णाश्रममें स्थित जनको, स्वर्ग आदि सुख देनेवाला जो श्रौतस्मार्तधर्मका ज्ञान, उसको धर्म कहा है ॥ ७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः ॥
इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम् ॥ ८ ॥

भाषार्थ–श्रुति (वेद) और स्मृतियोंमें कहे हुये धर्मको करता हुआ मनुष्य, इसलोकमें कीर्ति (यश) पाता है और परलोकमें मोक्ष-सुख पाता है ॥ ८ ॥

एक एव सुहृद्धर्मो निधनेप्यनुयाति यः ॥
शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्धि गच्छति ॥ ९ ॥

भाषार्थ–धर्मही एक ऐसा मित्र है, जो मरण होनेपरभी पीछे च-लता है और अन्य सब शरीरके साथही नाश हो जाता है ॥ ९ ॥

अनित्यानि शरीराणि विभवो नैव शाश्वतः ॥
नित्यं सन्निहितो मृत्युः कर्तव्यो धर्मसंग्रहः ॥ १० ॥

भाषार्थ–शरीर अनित्य हैं और विभव (ऐश्वर्य) भी निरन्तर ठहरनेवाला नहीं है. मृत्यु सदैव समीप रहती है. अतः धर्मका संग्रह करना चाहिये ॥ १० ॥

विद्या मित्रं प्रवासेषु भार्या मित्रं गृहेषु च ॥
व्याधितस्यौषधं मित्रं धर्मो मित्रं मृतस्य च ॥ ११ ॥

भाषार्थ–परदेशमें विद्या मित्र है, घरमें भार्या मित्र है, रोगग्रसि-तका मित्र औषध है और मरे मनुष्यका मित्र धर्म है ॥ ११ ॥

धर्मार्थकाममोक्षाणां प्राणाः संस्थितिहेतवः ॥
तन्निघ्नता किं न हतं रक्षिता किं न रक्षितम् ॥ १२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पुरुषार्थोंकी स्थितिका हेतु प्राण है, अर्थात् इन सबका साधन मनुष्यके शरीर व प्राणोंसे होता है. उनके नाश करनेवालोंने क्या नष्ट नहीं किया और रक्षा करनेवालोंने क्या सुरक्षित नहीं रक्खा ? अर्थात् शरीर व प्राण-रक्षा अवश्य करनी चाहिये ॥ १२ ॥

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः ॥
तस्माद्धर्मो न हातव्यो मानो धर्मो हतोऽवधीत् ॥ १३

भाषार्थ—नाश किया हुआ धर्मही नाश कर देता है और रक्षा किया हुआ धर्म रक्षा करता है. इस कारण धर्मको नष्ट नहीं करना चाहिये, जिससे नष्ट किया हुआ धर्म हमारा नाश नहीं करे ॥ १३ ॥

चला लक्ष्मीश्चलाः प्राणाश्चले जीवितमन्दिरे ॥
चलाचले च संसारे धर्म एको हि निश्चलः ॥ १४॥

भाषार्थ—लक्ष्मी चला है, अचला (स्थिर) नहीं है. प्राण भी चलायमान हैं. जीवित-मन्दिरभी चलायमान हैं. इस चलअचलवाले संसारमें एक धर्मही निश्चल है ॥ १४ ॥

फलं धर्मस्य चेच्छन्ति धर्मं नेच्छन्ति मानवाः ॥
फलं पापस्य नेच्छन्ति पापं कुर्वन्ति यत्नतः ॥ १५ ॥

भाषार्थ—सांसारिक जन धर्मरूप वृक्षके फल (सुख) को चाहते हैं, परन्तु धर्म करना नहीं चाहते हैं और पापरूप वृक्षके फल (दुःख) को नहीं चाहते हैं, परन्तु पापको यत्नसे करते हैं ॥ १५ ॥

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः
धर्मो नित्यः सुखदुःखे त्वनित्येजीवोनित्योहेतुरस्यत्वनित्यः

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—कामके वश होकर धर्मको न छोडै. भयसे धर्मको न छोडै. लोभसे धर्मको न छोडै. जीवनके हेतुभी धर्मको म छोडै. क्योंकि—धर्म नित्य है और सुखदुःख अनित्य है. जीव नित्य है और उसका हेतु अनित्य है ॥ १६ ॥

आहारनिद्राभयमैथुनानि समानि चैतानि नृणां पशूनाम् ॥
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनः पशुभिः समानः.

भाषार्थ—आहार, निद्रा, भय और मैथुन ये मनुष्योंमें और पशुओंमें समान हैं. मनुष्योंमें अधिक विशेष धर्मही है. धर्मसे हीन जो मनुष्य है, वह पशुके समान है ॥ १७ ॥

धनानि भूमौ पशवश्च गोष्ठे नारी गृहद्वारि जनाः श्मशाने ॥
देहश्चितायां परलोकमार्गे धर्मानुगो गच्छति जीव एकः ॥

भाषार्थ—सब धन पृथिवीमें गडा रह जाता है और पशु पशुशालामें बँधे रह जाते हैं. प्राणप्यारी स्त्री घरके द्वारपर रोती पीटती रह जाती है और बांधवादि समस्त जन श्मशानभूमिमें खडे रह जाते हैं. शरीर चितामें भस्म हो जाता है. परलोकमार्गमें अकेला जीव धर्म साथ जाता है अर्थात् जीवका साथी धर्म है. वही साथ होता है. जीवके पीछे धर्मही चलता है ॥ १८ ॥

सपदि विलयमेतु राजलक्ष्मीरुपरि पतन्त्वथवा कृपाणधाराः।
अपहरतुतरां शिरः कृतान्तो मम तु मतिर्न मनागपैतु धर्मात्

भाषार्थ—राजलक्ष्मी चाहे शीघ्रही नष्ट हो जावै, अथवा शिरपर खड्गकी धारायें पडैं. यमराज चाहे अभी शिर काट लेवै परन्तु हमारी मति धर्मसे पृथक् नहीं होवै ॥ १९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

धर्मः सर्वसुखंकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते ।
धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः ॥
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद्भवभृतां धर्मो हि द्रव्यं सताम् ।
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ॥२०॥

भावार्थ–धर्मही सब सुखोंका करनेवाला और हितकारी है. धर्महीकी चिन्ता बुद्धिमान् जन करते हैं. धर्मसेही कल्याण और सुख सम्यक् प्रकारसे प्राप्त होता है. ऐसे धर्मके अर्थ नमस्कार है. धर्मसे बढकर दूसरा कोई मित्र मनुष्योंका नहीं है. धर्मही सज्जनोंका धन है. धर्महीमें प्रतिदिन मैं अपना मन लगाऊं. हे धर्म ! मेरा पालन कर ॥ २० ॥

धर्माज्जन्म कुले शरीर पटुता सौभाग्यमायुर्बलम् ।
धर्मेणैव भवन्ति निर्मलयशोविद्यार्थसम्पत्तयः ॥
कान्ताराच्च महाभयाच्च सततं धर्मः परित्रायते ।
धर्मः सम्यगुपासतां भवति हि स्वर्गापवर्गप्रदः ॥ २१ ॥

भावार्थ–धर्मसे श्रेष्ठकुलमें जन्म होता है, शरीरकी सुन्दरता, सौभाग्य, आयु और बल होता है, धर्मसेही निर्मल यश, विद्या, धन और सम्पत्तियां प्राप्त होती हैं, तथा वनसे और महाभयसे निरन्तर धर्मही रक्षा करता है. भलीभांति उपासना किया हुआ धर्मही स्वर्ग और मोक्षका देनेवाला है ॥ २१ ॥

श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम् ॥
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत् ॥ २२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–वेदवेदांगोंके जाननेवाले महर्षिगण, मनुष्यमात्रके हितार्थ उपदेश करते हैं कि–हे मनुष्यो ! आज हम तुम सबको संक्षेपसे धर्मका तत्व सुनाते हैं. उसको तुम मन लगाकर सुनो और उसको अपने हृदयमें धारण कर उसीके अनुसार जन्मपर्यन्त वर्ताव करो. वह धर्म-तत्त्व यह है कि–जो बात अथवा जो काम अपनी आत्माके प्रतिकूल (विरुद्ध) हो वह दूसरोंके साथ न करो. जैसे–प्रत्येक मनुष्य चाहता है कि–मुझसे कोई द्रोह न करे, मेरा अनिष्ट चिन्तन न करै, मुझसे असत्य वा कठोर वचन न कहै, परोक्षमें अथवा प्रत्यक्षमें मेरी निन्दा कोई न करै, मेरे साथ छल कपट कोई न करै, मेरी चोरी कोई न करै, मेरी माता भगिनी वा धर्मपत्नीको खोटी दृष्टिसे कोई न देखै, इत्यादि कामोंको सभी लोग प्रतिकूल मानते हैं. ऐसे प्रतिकूल वर्तावोंको दूसरेके साथ नहीं करे, तो जानो उसने सभी कुछ धर्म कर लिया क्योंकि–संसारमें मनुष्यके परम शत्रु काम, क्रोध, लोभ ये तीनही हैं. इन तीनों शत्रुओंको जीतेविना कोईभी मनुष्य परद्रोह आदिका त्याग नहीं कर सकता और इन तीनौंका जीत लेनाही तीनों लोकोंको जीत लेना है ॥ २२ ॥

वेदः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ॥
एतच्चतुर्विधं प्राहुः साक्षाद्धर्मस्य लक्षणम् ॥ २३ ॥

भाषार्थ–वेद, स्मृति, सदाचार और अपने आत्माको प्रिय यह चार प्रकारका साक्षात् धर्मका लक्षण है ॥ २३ ॥

वेदका पढना, पढाना और वेदके गूढतत्वको जानना यह मुख्यकर ब्राह्मणका धर्म है. स्मृतियोंमें कहे राजनीत्यादिको यथार्थ जानकर लोकके व्यवहारोंकी व्यवस्था करना अर्थात् विवादों (झगडों) का निर्णय (फैसला) करना मुख्यकर क्षत्रियधर्मका लक्षण है.

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

तथा इतिहास-पुराणोंमें कहा हुआ सदाचार अर्थात् कथा-वार्ता सुनकर सत्पुरुषोंके आचरणोंद्वारा धर्मका तत्व जानना मुख्य कर वैश्यधर्मका लक्षण है और किसी शास्त्रसे कुछभी सम्बध जिसका नहीं ऐसा अपने आत्माको प्रिय धर्मका लक्षण विशेषकर शूद्रोंके निमित्त है. आत्माको प्रिय वही कहाता है, कि-जिसको वह अपने निमित्तभी अच्छा समझे. जो काम अपनेको प्रिय नहीं वह काम दूसरेको कैसे हो सकता है ? जैसे-चोरी व्यभिचार आदि करनेवाले अनेक मनुष्य चोरी आदिको प्रिय समझते हैं, परन्तु इन चोरोंकी यदि कोई दूसरा मनुष्य चोरी करै अथवा व्यभिचारीकी स्त्रीसे कोई अन्य पुरुष व्यभिचार करै, तो वह कदापि अच्छा नहीं मानता. किन्तु उसे अत्यन्त अप्रिय मानता है, इसीसे चोरी व्यभिचार आदि किसीको प्रिय नहीं हैं. जिस कामको हम अन्यसे अपने लिये अच्छा नहीं समझते, वह काम न करै. क्योंकि-जैसे, चोरी व्यभिचारादि करने-वाला जगत्‌में अधम समझा जाता है, वैसेही हमभी अधम समझे जायँगे, यह जानकर असत् वर्तावका परित्याग करै. यही आत्मप्रिय धर्मका लक्षण है ।

सत्यं वद, धर्मं चर, स्वाध्यायान्मा प्रमदः ॥
सत्यान्न प्रमदितव्यं धर्मान्न प्रमदितव्यं कुशलान्न प्रमदितव्यम्

भाषार्थ-यह तैत्तिरीय उपनिषत्‌में वल्ली १ अनु० १० मं० १९ है. इसका अर्थ यह है कि-सत्य बोलो, धर्मसे चलो, विद्याध्ययनमें आ-लस्य न करो, सत्यको मत त्यागो, धर्मको मत त्यागो, कुशल अर्थात् श्रेष्ठकर्ममें प्रमाद न करना चाहिये ॥ २४ ॥

मातृदेवो भव पितृदेवो भवाचार्यदेवो भवातिथिदेवो भव ॥
यान्यस्माकं सुचरितानि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–माता, पिता, आचार्य, अतिथि इनको देवता जानकर उनकी सेवा करो. जो हममें श्रेष्ठ आचार हैं उनको ग्रहण करो, इतरोंको त्याग दो ॥ २५ ॥

दुराचारो हि पुरुषो लोके भवति निन्दितः ॥
दुःखभागी च सततं व्याधितोऽल्पायुरेव च ॥ २६ ॥

भाषार्थ–खोटे आचारव्यवहारवाला पुरुष जगत्में निन्दित होता है और सदा दुःखी, रोगी तथा थोडी आयुवाला होता है ॥ २६ ॥

सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम् ॥
एतद्विद्यात्समासेन लक्षणं सुखदुःखयोः ॥ २७ ॥

भाषार्थ–पराधीन सब काम दुःखरूप होते हैं और स्वाधीन सब काम सुखरूप होते हैं ॥ २७ ॥

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ॥
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥ २८ ॥

भाषार्थ–धृति (धैर्य धारण करना), क्षमा (सहनशील होना), दम (मनको असत्कर्मोंकी ओर न जाने देना) अर्थात् मनको वशमें रखना, अस्तेय (चोरी न करना), शौच (पवित्रतासे रहना), इन्द्रियनिग्रह (इन्द्रियोंको अपने वशमें रखकर सदैव सत्कर्म करना), धी (बुद्धिद्वारा विचार कर शुभ काम करना), विद्या (वेदादि सद्विद्याओंको पढना), सत्य (सत्य बोलना) अर्थात् आत्मासे विरुद्ध वचन कभी न बोलना, अक्रोध (क्रोध) न करना ये दश लक्षण धर्मके मनुजीने कहे हैं ॥ २८ ॥

इन दश लक्षणोंको विस्तारपूर्वक हमने धर्मोपदेशरत्नमाला ग्रन्थमें

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लिखा है. जो पं० हरिप्रसाद भागीरथजीके प्राचीनपुस्तकालय बंबईमें मिलती है ॥

येन केनाप्युपायेन यस्य कस्यापि देहिनः ॥
सन्तोषं जनयेत्प्राज्ञस्तदेवेश्वरपूजनम् ॥ २९ ॥

भाषार्थ–बुद्धिमान्को उचित है कि–जिस उपायसे बनै उस उपायसे देहधारी मात्रको अपने वर्तावसे सन्तुष्ट रक्खै. यही ईश्वरका पूजन है ॥ २९ ॥

क्षमाऽहिंसा क्षमा धर्मः क्षमा चेन्द्रियनिग्रहः ॥
क्षमा दया क्षमा यज्ञः क्षमा धैर्यमुदाहृतम् ॥ ३० ॥
क्षमावान् प्राप्नुयात्स्वर्गं क्षमावान्प्राप्नुयाद्यशः ॥
क्षमावान्प्राप्नुयान्मोक्षं क्षमावांस्तीर्थमुच्यते ॥ ३१ ॥

भाषार्थ–क्षमाही अहिंसा है. क्षमाही परम धर्म है. क्षमाही इन्द्रियनिग्रह है. क्षमाही दया है. क्षमाही यज्ञ है. क्षमाही धैर्य कहा है ॥३०॥ क्षमावान् पुरुष स्वर्गको प्राप्त होते हैं. क्षमा करनेवाले पुरुष यश पाते हैं और क्षमावान् मोक्षको प्राप्त होते हैं. क्षमावान् पुरुषहीको तीर्थरूप कहा है ॥ ३१ ॥

इन्द्रियाणां विचरतां विषयेष्वपहारिषु ॥
संयमे यत्नमातिष्ठेद्विद्वान् यन्तेव वाजिनाम् ॥ ३२ ॥

भाषार्थ–मनको खोटे कामोंमें खींचनेवाले विषयोंमें विचरती हुई इन्द्रियोंको रोकनेको निमित्त बुद्धिमान् जनको सब प्रकारसे यत्न करने चाहिये. जैसे–सारथी कुमार्गपर जाते हुये घोडोंको रोक लेता है. कुमार्गपर जाने नहीं देता है ॥ ३२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

न हि सत्यात्परो धर्मो नानृतात्पातकं परम् ॥
न हि सत्यात्परं ज्ञानं तस्मात्सत्यं समाचरेत्॥३३॥

भाषार्थ–सत्यसे परे दूसरा धर्म नहीं है और असत्यसे बढकर कोई पाप नहीं. सत्यसे परे कोई ज्ञान नहीं. इसकारण सदा सत्यही बोलै ॥ ३३ ॥

सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम् ॥
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः ॥ ३४ ॥

भाषार्थ–सत्य बोलै और प्रियवचन बोलै, परन्तु ऐसा सत्य न बोलै जो अप्रिय हो और प्रियवचन बोलै, परंतु असत्य वचन न हो, यह सनातन धर्म है ॥ ३४ ॥

सुलभाः पुरुषा ह्यत्र सततं प्रियवादिनः ॥
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥३५॥

भाषार्थ–इस जगत्में निरन्तर प्रिय वचन बोलनेवाले पुरुष सुलभ हैं, अर्थात् हँसाकर बात करनेवाले लोग यहां बहुत हैं. परन्तु हितसे भरी औषधिके समान कडवी बातको कहने और सुननेवाले दुर्लभ हैं ॥ ३५ ॥

सुहृदां हितकामानां न शृणोति हितं वचः ॥
विपत्सन्निहिता तस्य स नरः शत्रुनन्दनः ॥ ३६ ॥

भाषार्थ–परम शुद्धहृदयसे भलाई चाहनेवाले लोगोंकी कही बातको जो शत्रुनन्दन (स्त्रीपुरुष) नहीं सुनता है, उसके समीप बहुत शीघ्र विपत् आ जाती है ॥ ३६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शान्तितुल्यं तपो नास्ति न सन्तोषात्परं सुखम् ॥
न तृष्णायाः परो व्याधिर्न च धर्मो दयापरः॥३७॥

भावार्थ-शान्तिके तुल्य तप नहीं है. सन्तोषके समान सुख नहीं है. तृष्णाके समान रोग और दयाके समान इतर कोई धर्म नहीं है ॥ ३७ ॥

मनुस्मृतिमें कहे हुए 'धृतिः क्षमादमोऽस्तेयं०' इत्यादि धर्मके १० लक्षण यहां हम लिख चुके हैं. उसी अनुसार अधर्मके १० लक्षण कहे हैं. इन अधर्मोंको त्याग देनाही धर्मके दशलक्षणोंका परिपालन है. मनुष्यादि प्राणियोंमें अनादिकालसे मिथ्याज्ञानके विद्यमान होनेसे अनुकूल पदार्थोंमें राग नाम प्रीति होती है और प्रतिकूल नाम अपने विरोधियोंमें द्वेष होता है. तथा चित्त वा अन्तःकरणमें रागद्वेषकी स्थिति हो जानेसे पराई निन्दा, ईर्षा, छल और लोभादि दोष प्रगट होते हैं. वे दश दोष क्रमशः शरीर, मन और वाणीसे प्रगट होते हैं. यथा—

परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसाऽनिष्टचिन्तनम् ॥
वितथाऽभिनिवेशश्च त्रिविधं कर्म मानसम् ॥३८॥

भावार्थ-पराये धनको अन्यायसे लेनेकी इच्छा करना, मनसे दूसरेके अनिष्ट होनेका विचार करना और परलोकको न मानकर देहहीको आत्मा मानना अथवा कर्मके फलको न मानकर इच्छानुसार वर्ताव करनेकी इच्छा करना ये तीन दोष मनके हैं. यही तीन प्रकारका मानस अधर्म है ॥ ३८ ॥

पारुष्यमनृतं चैव पैशुन्यं चापि सर्वशः ॥
असंबद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम् ॥ ३९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–अप्रिय वचन (गाली आदि), असत्य भाषण, पीठ पीछे किसीके दोष कहना अर्थात् चुगली करना और राजा, देश, तथा पुरवासियोंकी वार्ता आदि सत्यभी हो, परंतु विना प्रयोजन वर्णन करना ये चार दोष वाणीके हैं. यही चार प्रकारका वाचिक अधर्म है ॥ ३९ ॥

अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः ॥
परदारोपसेवा च शारीरं त्रिविधं स्मृतम् ॥ ४० ॥

भाषार्थ–विना दिये अन्यायसे किसीका धन हरण करना, शास्त्रविरुद्ध (विधिरहित) हिंसा करना, पराई स्त्रीसे संभोग करना, ये तीन दोष शरीरके हैं. यही तीन प्रकारका शरीरसे होनेवाला कायिक अधर्म है ॥ ४० ॥

मानसं मानसैवायमुपभुङ्क्ते शुभाशुभम् ॥
वाचा वाचा कृतं कर्म कायेनैव च कायिकम् ॥४१॥

भाषार्थ–मनुष्य, मनसे किया हुआ जो पाप पुण्य है, उसका फल शुभ अशुभ इस जन्ममें वा दूसरे जन्ममें मनसेही भोगता है और वाणीसे किये हुए पापपुण्यका फल वाणीसे भोगता है, तथा शरीरसे किये हुये पापपुण्यका फल शरीरसे भोगता है ॥ ४१ ॥

उपरोक्त अधर्मके दश लक्षणोंसे विरुद्ध धर्मके दश लक्षण ये सिद्ध होते हैं–मनसे दया, सन्तोष और श्रद्धा करना यही तीन प्रकारका मानस धर्म है । वाणीसे सत्य बोलना, हितोपदेश करना, प्रिय बोलना और वेदादिकोंका पाठ, ईश्वरादिकी स्तुति प्रार्थना करना यही चार प्रकारका वाचिक धर्म है । शरीरसे दान करना, दुखियोंकी रक्षा, शरीरसे परोपकार करना, माता पिता आदि मान्योंकी सेवा पूजा

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

करना यह तीन प्रकारका शारीरिक धर्म है । अधर्मके दश लक्षणोंको त्यागने और धर्मके दश लक्षणोंका सेवन करनेसे मनुष्य अपना पूरा पूरा कल्याण कर सकता है, यही सनातन धर्मका सिद्धान्त है। यहां एक प्रश्न उठता है कि वैष्णव शैव, शाक्त आदि सम्प्रदायभेद किस कारण हुये और वेद-शास्त्रोंमें इनके भेदाभेदके विषयमें क्या सिद्धान्त है ?

इसका उत्तर यह है कि-वैष्णव-शैव शब्दोंके अर्थ कई प्रकारके ग्रन्थोंमें मिलते हैं, तथापि यहां उन अर्थोंकी आवश्यकता नहीं है. किन्तु इस प्रकरणमें शिवजीके उपासकोंका नाम शैव और विष्णुभगवान्के उपासकोंका नाम वैष्णव है । यदि कहीं कहीं शिव और विष्णुकी उपासनामें भेद वा विरोध होनाभी सम्भव है, तो उसका समाधानभी है, परन्तु वेद-शास्त्रोंका सिद्धान्त यही है कि-इन शैव-वैष्णवादिमें वास्तविक भेद वा विरोध कुछभी नहीं है । मत, सिद्धान्त, सम्प्रदाय, मजहव इत्यादि सब एकार्थ हैं । सम्प्रदाय वा मतभेद होनेका मूल कारण बुद्धिभेद है. मत वा सम्प्रदायका लक्षण वा अर्थ सर्वसम्मत यही है कि—

गुरुपरम्परागतसदुपदिष्टव्यक्तिसमूहः सम्प्रदायः ॥ ४२ ॥

भाषार्थ-कोई मान्यपुरुष परम विद्वान् तत्वज्ञानी महात्मा हुआ उसको प्रामाणिक माननेवाले शिष्यवर्गके लिये परमेश्वरके जिस जिस नाम,रूप वा विग्रहकी उपासनाकी रीति जो उस गुरु महात्माने बताई, उसरीतिका नामसम्प्रदाय हुआ ॥ ४२ ॥

न्यायदर्शनके भाष्यकार महर्षि वात्स्यायनजीने लिखा है कि-

सत्सुसिद्धान्तभेदेषुवादजल्पवितण्डाःप्रवर्तन्ते,नातोऽन्यथेति

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ-सिद्धान्तोंका भेद होनेपरही वाद, जल्प और वितण्डा चलते हैं. अन्यथा नहीं ॥ ४३ ॥

और वादका अभिप्राय यही है कि-वादके द्वारा किसी बातका निर्णय करना. सो यदि सिद्धान्तभेद न होता, तो वादभी न होता और वाद न होता तो, उस वादके द्वारा निर्णयभी कुछ नहीं होता। अथवा यों कहो कि-शैव-वैष्णवादि सम्प्रदायभेद न होता, तो प्रश्नकर्ताका यह प्रश्नही न हो सकता कि-'संप्रदायभेद किस कारणसे हुए?'। इससे यह सिद्ध हुआ कि-'वादे वादे जायते तत्वबोधः'। वाद होते होते मुख्य सारांशभी निकल आता है और उससाररूप अमृतसे मनुष्योंका बडा उपकार होता रहता है. इसकारण, वादके द्वारा निर्णय करनेके अर्थ अनेक सिद्धान्त किये, यह तात्पर्य जानो. शिवमहिम्नमें एक श्लोक है कि-

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति ।
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च ॥
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिलनानापथजुषां ।
नृणामेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव ॥ ४४ ॥

भावार्थ-अग्निहोत्र, दर्श, पौर्णमास, चातुर्मास्ययाग और अग्निष्टोमादि सोमयाग इत्यादि कर्मकाण्डका विस्तार तीन वेदके द्वारा साध्य एक वेदमत है. यही वेदमत मीमांसाका सिद्धान्त है. सांख्यमत यह है कि-प्रकृतिपुरुष नाम जडचेतनका विभाग जाननेद्वारा संसारके बन्धनात्मक दुःखोंसे छूटनेका उपाय. योगमत-यमनियमादि योगाङ्गोंके अनुष्ठानद्वारा चित्तकी मलिनता और चंचलताको नष्ट करके अपने स्वरूपमें स्थित करना रूप परमपदकी प्राप्ति, पाशुपतदर्शन, सर्वदर्शनसं-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ग्रह ग्रन्थमें लिखा है. तदनुसार अपने कल्याणका उपाय करना. विष्णुभगवान्की भक्तिद्वारा संसारसे छूटनेका उपाय वैष्णवमत. इत्यादि मतोंका मार्ग भिन्न भिन्न है. कोई इनमें परमश्रेष्ठ कहाता, कोई पथ्य नाम विशेषहितकारी कहा जाता है, इनमें किसीकी अपेक्षा कोई मत सरल (सीधा) और कोई कुटिल अथवा कठोर है. ये सब अनेक प्रकारके मत मनुष्योंकी भिन्न भिन्न बहुविध रुचियोंके कारण हुए हैं. परन्तु जैसे, कोई सीधी और कोई चक्कर काटकर फेरसे गई हुई सभी नदियां समुद्रमें जाकर गिरती हैं, वैसेही सभी मतोंके सम्प्रदायोंका लक्ष्य एक 'परमेश्वरकी प्राप्ति' यही है ॥ ४४ ॥

जैसे अनेक भिन्न भिन्न रास्तोंसे चलकर अनेक लोग एकही स्थान पर पहुँचते हैं, वैसेही किसीभी सम्प्रदायके द्वारा शुद्धचित्तसे दश प्रकारके पूर्वोक्त अधर्मको छोडकर और पूर्वोक्त दशविध धर्मका सेवन करता हुआ ईश्वरका आराधन करेगा, वह अवश्य परमपद मोक्षका भागी होगा. जैसे—भिन्न भिन्न दिशा वा भिन्न भिन्न देशोंमें रहनेवाले मनुष्योंको अपने राजाकी राजधानीमें पहुँचनेके लिये एक मार्ग कदापि ठीक नहीं हो सकता, किन्तु उन उनको वहां अपने अपने देश वा ग्रामादिसे भिन्नभिन्न मार्गही ठीक पडेगा, इसीके अनुसार मनुष्योंकी भिन्न भिन्न बुद्धि वृत्तिरूप रुचियोंरूप ग्रामादि स्थिति है. वहांसे अपनी रुचिके अनुसार जो सम्प्रदायका कोई गुरु मिले, उसीके बताये मार्गसे परमात्माकी राजधानीमें पहुँचना सुगम पडेगा. इन सम्प्रदायोंमें जो परस्पर विरोध दीखता है वा शैववैष्णवादि सम्प्रदायवाले जो विरोध प्रकाशित किया करते हैं, सो यह दोष इन्हीं सम्प्रदायवालोंका है. स्मृति पुराणादिका यह सिद्धान्त नहीं है।

पहले वेदके सिद्धान्तानुसार जो सम्प्रदाय वा मतभेद चलनेसे उनका नाम, वेद, शाखा, ब्राह्मण और सूत्रादि था, तदनुसार कहा और माना

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जाता था कि–हमारा अमुक वेद, अमुक शाखा, अमुक ब्राह्मण और अमुक सूत्र है. तथा तुम्हारा अमुक अमुक वेद आदि है. तदनुसार कोई सामवेदी, कोई यजुर्वेदी, कोई ऋग्वेदी कहाते थे. उन उनके यहां उसी उसी वेदकी उसी उसी शाखा और ब्राह्मणादिका विशेष कर पठन पाठन होता था. और उसी वेदशाखा ब्राह्मण तथा सूत्रानुसार संस्कारादि कर्मकांड होता था. इस प्रकारका मत वा संप्रदायभेद पूर्वकालमें विशेषरूपसे प्रचार पाया हुआ था. शैव–वैष्णवादि पुराणसम्मत संप्रदायोंका विशेष प्रचार नहीं था। अब बहुत कालसे वेदशाखादि भेदसे होनेवाले सम्प्रदाय घट गये और शैव वैष्णवादि सम्प्रदाय बढ गये हैं। ये शैव–वैष्णवादि सम्प्रदाय वेदमूलक होनेसे वेदानुकूल अवश्य हैं. इसी लिये इनमें वास्तविक विरोध नहीं है. इस बातको दिखानेके लिये हम आगे पद्मपुराणके क्रियायोगसारस्थ अंश २ में कहे कुछ वैष्णवोंके लक्षण यहां लिखते हैं। विष्णु नाम सब चराचरमें व्याप्त, संसारकी स्थिति तथा पालन करनेवाले ईश्वरका है। उसी ईश्वरके उपासक और भक्तोंका यौगिक नाम वैष्णव है।

कामक्रोधविहीना ये हिंसादम्भविवर्जिताः॥
लोभमोहविहीनाश्च ते ज्ञेया वैष्णवा जनाः॥४५॥

भाषार्थ–काम, क्रोध, हिंसा, दम्भ, लोभ और मोहसे रहित जो लोग ईश्वरभक्त हैं, उनको वैष्णव जानना चाहिये॥ ४५॥

अमत्सरा दयायुक्ताः सर्वभूतहितैषिणः॥
सत्योक्तिभाषिणश्चैव ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः॥४६॥

भाषार्थ–जिनमें मत्सरता नहीं, जो दयालु हैं, जो सब प्राणियोंका

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हित चाहते हैं और सत्य भाषण करते हैं, वे वैष्णव हैं ऐसा जानना ॥ ४६ ॥

पितृभक्ता मातृभक्ता ज्ञातिपोषणतत्पराः ॥
धर्मोपदेशिनो ये च ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः ॥४७॥

भाषार्थ–जो अपने माता–पिताकी भक्ति सेवा करनेवाले, तथा कुटुम्बका पोषण करनेवाले और धर्मोपदेशक हैं, वे जन वैष्णव हैं ॥ ४७ ॥

समानं ये च पश्यन्ति त्वां च मां च महेश्वरम् ॥
कुर्वन्ति पूजामतिथेर्ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः ॥ ४८ ॥

भाषार्थ–जो शिव और विष्णु दोनोंकोही समानरूपसे महान् ईश्वर देखते जानते हैं और अतिथि (अभ्यागत, साधु, ब्राह्मण) की देवताबुद्धिसे पूजा करते हैं, वेभी वैष्णव जानने ॥ ४८ ॥

वेदविद्यानुरक्ता ये द्विजभक्तिरताः सदा ॥
नपुंसकाः परस्त्रीषु ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः॥ ४९ ॥

भाषार्थ–जिनकी वेदविद्यामें प्रीति हो, जो ब्राह्मणभक्त हों और परस्त्रियोंमें जो नपुंसक हों, अर्थात् मन–वाणी–शरीरसे परस्त्रीको माताके तुल्य समझते हों, वेभी वैष्णव हैं ॥ ९९ ॥

एकादशीव्रतं ये च भक्तिभावेन कुर्वते ॥
गायन्ति हरिनामानि ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः॥५०॥

भाषार्थ–जो एकादशीव्रतको भक्तिपूर्वक करते और हरिनामों (गोविन्द नारायणआदि) को गाते हैं, वेभी वैष्णव हैं ॥ ९० ॥

देवतायनकर्तारस्तुलसीमाल्यधारिणः ॥
रुद्राक्षधारिणो ये च ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः ॥५१॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जो देवमन्दिर बनवानेवाले, तथा तुलसीकी माला धारण करनेवाले और रुद्राक्ष धारण करनेवाले हैं, वेभी वैष्णव हैं ॥५१॥ यहां प्रायः रुद्राक्षधारियोंको वैषणव नहीं कहते, यह अज्ञानियोंके विरोधका कारण है ।

गङ्गास्नानपरा ये च गंगानामपरायणाः ॥
गङ्गामाहात्म्यवक्तारो विज्ञेयास्ते च वैष्णवाः॥५२॥

भाषार्थ-गंगास्नान करने और गंगाका नाम लेनेमें जो तत्पर हैं, तथा जो गंगाजीका माहात्म्य कहने सुननेवाले हैं, वेभी वैष्णव हैं॥५२॥

शीर्णं मन्मन्दिरं ये च कुर्वते नूतनं पुनः ॥
तत्रायनं च शोभां च ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः ५३

भाषार्थ-जो जीर्ण और फूटे ठाकुरद्वारोंकी वा शिवालय आदि देवमन्दिरोंको सुधार करके नवीन बनवाते हैं, फिर उसको सजाते और उसमें निवास करते हैं, वेभी वैष्णव हैं ॥ ५३ ॥

अभयं ये च यच्छन्ति भीरुभ्यश्चतुराननं ! ॥
विद्यादानं च विप्रेभ्यो ज्ञयास्ते वैष्णवा जनाः॥५४

भाषार्थ-जो लोग भयभीत मनुष्योंको अभयदान देते और ब्राह्मणोंको विद्यादान देते, अथवा धनादि सहायतासे पाठशालायें स्थापित करके विद्याध्ययनमें सहायता प्रदान करते हैं, वेभी वैष्णव हैं ५४

क्षुत्तृड्प्रपीडितेभ्यश्च ये यच्छन्त्यन्नमम्बु च ॥
कुर्युर्ये रोगिशुश्रूषां ज्ञयास्ते वैष्णवा जनाः ॥५५॥

भाषार्थ-जो लोग सदावर्त और प्याऊ बैठाके भूखे-प्यासोंको

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अन्न और जलका दान देते और रोगोंसे पीडित जनोंको धर्मार्थ औषधादिदानसे सुख पहुंचाते हैं, वे भी वैष्णव हैं ॥ ५५ ॥

आरामकारिणो ये च पिप्पलारोपिणोऽपि च ॥
गोसेवां ये च कुर्वन्ति ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनः ॥ ५६ ॥

भाषार्थ–बागबगीचा लगाके फल और छायादिके द्वारा प्राणियोंका उपकार करते हैं, जो लोग पीपलवृक्षको लगाकर रक्षा करते और जो गौओंकी सेवा करतें हैं, वेभी वैष्णव हैं ॥ ५६ ॥

अत्यन्तभक्त्या ये ब्रह्मन् ! पितृयज्ञं प्रकुर्वते ॥
कुर्वन्ति दीनशुश्रूषां ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः ॥ ५७ ॥

भाषार्थ–अत्यन्तभक्तिसे जो लोग पितृयज्ञ (श्राद्धादि कर्म) करते और दीन दुःखियोंकी रक्षा करते हैं, वेभी ईश्वराज्ञापालक होनेसे वैष्णव हैं ॥ ५७ ॥

तडागग्रामकर्तारः कन्यादानप्रदाश्च ये ॥
सेवन्ते च गुरुं ये च ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः ॥ ५८ ॥

भाषार्थ–निर्जल देशमें अनेक तालाव आदि जलाशयोंको बनवाने वाले, नये गांव वसानेवाले, कन्याओंका धर्मार्थ विवाह करानेवाले और अपने कुलगुरुकी सेवा करनेवाले जनभी वैष्णव कहाते हैं ॥ ५८ ॥

तथैव ज्येष्ठां भगिनीं सेवन्ते ज्येष्ठभ्रातरम् ॥
परनिन्दां न कुर्वन्ति ज्ञेयास्ते वैष्णव जनाः ॥५९॥

भाषार्थ–ज्येष्ठ भगिनीको माताके तुल्य और ज्येष्ठ भाईको पिताके तुल्य पूज्य मानते और जो किसी अन्य मत वा किसी संप्रदायवालेकी

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

निन्दा नहीं करते, वेभी विष्णुभगवान्‌के प्रेमी आज्ञाकारी होनेसे वैष्णव कहे जाते हैं ॥ ५९ ॥

देवस्वं ब्राह्मणद्रव्यं परस्वं च चतुर्मुख !॥
पश्यन्ति विषवद् ये च ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः ६०

भाषार्थ-देवपूजाके वा होम यज्ञादिके धनको तथा ब्राह्मणके अथवा अन्य किसीके धनको विषके तुल्य मानते देखते हैं, वेभी वैष्णव हैं ॥ ६० ॥

पाखंडसंगरहिताः शिवभक्तिपरायणाः ॥
चतुर्दशीव्रतरता ज्ञेयास्ते वैष्णवा जनाः ॥ ६१ ॥

भाषार्थ-जो पाखंडियोंका संग नहीं करते, जो शिवजीके पूर्ण भक्त हैं, जो चतुर्दशीका व्रत करते हैं, वेभी वैष्णव हैं ॥ ६१ ॥

इस पूर्वोक्त लेखसे स्पष्टतया सिद्ध हो गया कि-शैव-वैष्णव संप्रदायोंमें कुछभी विरोध नहीं है. जब कि एकही परमेश्वर वेदादि शास्त्रोंके वक्ष्यमाणप्रमाणों द्वारा अनेक नामरूपोंवाला हो रहा है, तब उस एकही ईश्वरके उपासकों-सम्प्रदायोंका विरोध कदापि होना ठीक नहीं है और नामरूपोंकी उपासनाकी जो भिन्नभिन्न रीतिया हैं. उन्हींका नाम संप्रदायभेद है. जो उतना भेद रुचियोंकी भिन्नताके कारण वा बुद्धिभेदके कारण है. उससे कुछभी हानि नहीं है. वह भेद सनातनकालसे है और सदा रहेगा. संप्रदायोंमें जो जो विरोध अबतक हुआ वा दीखता है, उसका मूलकारण भगवान् परमात्माको ठीक ठीक न जान पाना है. अथवा यों कहो कि-तत्वज्ञानके न होनेसे अज्ञानके वशीभूत होकर, लोग विरोध कहते मानते हैं।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यस्त्रयो वर्णा द्विजातयः ॥
चतुर्थ एकजातिस्तु शूद्रो नास्ति तु पञ्चमः॥६२॥

भावार्थ-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ये तीनौं वर्ण द्विजातिसंज्ञक हैं. इनके यज्ञोपवीतसंस्कार होनेसे द्विजाति संज्ञा है और शूद्र चौथा वर्ण एक जाति है. क्योंकि उसके यज्ञोपवीत नहीं होता है. अनन्तर पांचवां वर्ण नहीं है. क्योंकि-संकीर्ण जातिवालोंकी तो अश्वतर अर्थात् खच्चरके समान मातापिताकी जातिसे भिन्न दूसरी जाति होती है, इससे उनको वर्णत्व नहीं है. यह दूसरी जातिका कहना शास्त्रमें व्यवहारके निमित्त है ॥ ६२ ॥

सर्ववर्णेषु तुल्यासु पत्नीष्वक्षतयोनिषु ।
आनुलोम्येन सम्भूता जात्या ज्ञेयास्त एव ते ॥६३॥

भावार्थ-ब्राह्मण आदि चारौ वर्णोंमें शास्त्रकी रीतिसे व्याही हुई, समान जातिकी अक्षतयोनि स्त्रियोंमें अनुलोमतासे अर्थात् ब्राह्मणसे ब्राह्मणीमें और क्षत्रियसे क्षत्रियामें इस क्रमसे जे उत्पन्न हुए हैं, वे मातापिताकी जातिकरियुक्त उसी जातिहीके जानने चाहिये ॥ ६२ ॥

ब्राह्मणादिवर्णधर्म ।

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा ॥
दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत् ॥ ६४ ॥
शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च ।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥६५॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-पढाना, पढना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान देना, दान लेना ये छे कर्म ब्राह्मणके हैं. इनमें पढाना, यज्ञ कराना, दान लेना ये तीन जीविकार्थ हैं ॥ ६४ ॥

शम (बाह्येन्द्रियोंका रोकना), दम (अन्तःकरणका निरोध) तप (शास्त्रीय कायक्लेश), शौच (कर्मानुष्ठानयोग्यता), क्षान्ति (क्षमा), आर्जव (मन-वाणी-शरीरका ऐक्यरूप), ज्ञान (तत्वज्ञान), विज्ञान (परतत्वगत विशेष ज्ञान अथवा ब्रह्मज्ञान) आस्तिक्य (श्रद्धा) ये ब्राह्मणके स्वाभाविक कर्म हैं ॥ ६५ ॥

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च ।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः ॥६६॥
शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम् ।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम् ॥ ६७ ॥

भाषार्थ-प्रजाकी रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, वेदादिशास्त्र पढना, विषयोंमें न फँसना ये संक्षेपसे क्षत्रियके धर्म हैं ॥ ६६ ॥

शौर्य (शूरता), तेज (पराक्रम), धैर्य, उत्साहशीलता, युद्धमें स्थिर रहना, पात्रको देना, प्रजाका नियमनसामर्थ्य ये क्षत्रियके स्वाभाविक कर्म और गुण हैं ॥ ६७ ॥

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च ।
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च ॥ ६८ ॥

भाषार्थ-गौ आदि पशुओंका पालन करना, दान देना, यज्ञ करना, वेद-शास्त्रोंका अध्ययन करना, सब प्रकारका व्यापार करना, कुसीद (व्याज लेना) और खेती करना ये वैश्यके कर्म हैं ॥ ६८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत् ।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया ॥ ६९ ॥

भाषार्थ–प्रभुने शूद्रको एकही कर्म बताया कि–वह द्वेषरहित होकर, इन तीनों वर्णोंकी सेवा करै ॥ ६९ ॥

ब्रह्मचर्यप्रशंसा ।

कर्मणा मनसा वाचा सर्वावस्थासु सर्वदा ।
सर्वत्र मैथुनत्यागं ब्रह्मचर्यं तदुच्यते ॥ ७० ॥

भाषार्थ–कर्मसे अर्थात् शरीरसे, मनसे, वाणीसे सब अवस्थाओंमें सर्वत्र और सर्वदा मैथुनका परित्याग, यही ब्रह्मचर्य कहाता है ॥ ७० ॥

लिङ्गसंयोगहीनं यच्छब्दस्पर्शविवर्जितम् ।
श्रोत्रेण श्रवणं चैव चक्षुषा चैव दर्शनम् ॥ ७१ ॥
वाक्संभाषाप्रवृत्तं यत्तन्मनःपरिवर्जितम् ।
बुद्ध्या चाध्यवसीयीत ब्रह्मचर्य्यमकल्मषम् ॥७२॥

भाषार्थ–लिंगका संयोग न होने पावै, किन्तु स्पर्शभी नहीं करै. विना कारण शिश्नेन्द्रियको स्पर्श करना कदापि उचित नहीं और विषयसम्बधी बातोंको कानोंसे न सुनै, नेत्रोंसे न देखै ॥ ७१ ॥

तथा वाणीसे कोईभी विषयसम्बन्धी बात और असत्य बात तथा निरर्थक बात न कहे और बुद्धिसे विचारकर किसीको क्लेश पहुँचानेकी बातभी न कहे. जो कुछ पठन करै, उसका अर्थ भलीभांति विचार ले और निर्णय कर ले. इसीको ब्रह्मचर्य कहते हैं ॥ ७२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

एकः शयीत सर्वत्र न रेतः स्कन्दयेत्क्वचित् ।
कामाद्धि स्कन्दयन् रेतो हिनस्ति व्रतमात्मनः ७३॥

भाषार्थ-ब्रह्मचारीको उचित है कि सर्वत्र अकेला शयन करै. कभी वीर्यपात न होने पावै. यदि कामकी इच्छासे एक बारभी वीर्यपात हो जावे तो ब्रह्मचारीका ब्रह्मचर्यव्रत नष्ट हो जाता है. इसकारण वीर्यकी रक्षा भली भांति करै ॥ ७३ ॥

षट्त्रिंशदाब्दिकं चर्यं गुरौ त्रैवेदिकं व्रतम् ।
तदर्धिकं पादिकं वा ग्रहणान्तिकमेव वा ॥ ७४ ॥

भाषार्थ-छत्तीस वर्षपर्यन्त तीनौं वेद पढना कहा है, अर्थात् आठ वर्षसे उपरान्त बारह २ वर्ष एक एक वेद पढै. मिलकर चवालीस वर्ष-पर्यन्त ब्रह्मचर्य हुआ. अथवा इसके आधे अठारह वर्षपर्यन्त पढै, तो एक एक वेदकी शाखा छः वर्ष पढना हुआ. अथवा उसकी चौथाई नव वर्षपर्यन्त पढै, तो प्रत्येक वेदकी शाखाके तीन वर्ष हुए. अथवा कही हुई अवधिके भीतर बाहर जितने कालमें वेदोंको पढे उतने कालपर्यन्त गुरुकुलमें वासकर ब्रह्मचर्यव्रत धारण करै ॥ ७४ ॥

ब्रह्मचर्यं परो धर्मः स चापि नियतस्त्वयि ।
यस्मात्तस्मादहं पार्थ ! रणेऽस्मिन् विजितस्त्वया ७५

भाषार्थ-एक गन्धर्व युद्धमें परास्त होकर अर्जुनसे कहने लगा कि हे पार्थ ! यह ब्रह्मचर्यही उत्कृष्ट धर्म है, कि जिसके प्रतापसे तुमने मुझको परास्त किया है. इसकारणमें तुमने विजय पाई यह ब्रह्मचर्यका फल है ॥ ७५ ॥

इन्द्रियाणां प्रसङ्गेन दोषमृच्छत्यसंशयम् ।
संनियम्य तु तान्येव ततः सिद्धिं नियच्छति ॥७६॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ—इन्द्रियोंके प्रसंगसे ब्रह्मचारी निस्सन्देह दोषी हो जाता है और इन्द्रियोंको वशमें करकेही सिद्धिको प्राप्त होता है ॥ ७६ ॥

धर्म्यं यशस्यमायुष्यं लोकद्वयरसायनम् ।
अनुमोदामहे ब्रह्मचर्यमेकान्तनिर्मलम् ॥ ७७ ॥

भाषार्थ—संसारमें धर्मका हितकारक, यशका विस्तार करनेवाला, आयुको बढानेवाला, इस लोक तथा परलोकको सुधारनेवाला मुख्य ब्रह्मचर्यही है. इसकारण इस निर्मल ब्रह्मचर्यका सेवन करनेको हमभी अनुमोदन देते हैं ॥ ७७ ॥

वेदास्त्यागश्च यज्ञाश्च नियमाश्च तपांसि च ।
न विप्रदुष्टभावस्य सिद्धिं गच्छन्ति कर्हिचित् ॥७८

भाषार्थ—वेदाध्ययन, त्याग (संन्यास), यज्ञ (अग्निहोत्रादि), नियम (ब्रह्मचर्याश्रम आदि), तप (निन्दा—स्तुति, हानि—लाभ आदि द्वन्द्वोंका सहन अथवा तपस्या करना) ये कर्म उस ब्रह्मचारीके कभी सिद्धिको प्राप्त नहीं होते हैं, कि—जिसका विप्रभाव अर्थात् ब्राह्मणत्व बिगड गया हो. ब्रह्मचर्यके नियमोंका पालन जिससे न हो सकै. इसकारण ब्रह्मचारीको उचित है कि—अपने नियमधर्मोंको यथावत् पालन करके सिद्धिको प्राप्त होवै ॥ ७८ ॥

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः ॥
चत्वारि तस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम् ॥७९॥

भाषार्थ—अभिवादन (प्रणाम) करनेका जिसका स्वभाव है और

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

वृद्धपुरुषोंका जो नित्य सेवन करता है, उसकी आयु, विद्या, यश और बल ये चारौ वृद्धिको प्राप्त होवै हैं ॥ ७९ ॥

गृहस्थाश्रमप्रशंसा ।

यथा नदी नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम् ॥
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम् ॥८०॥

भाषार्थ–जिस प्रकार नदियां और नद सब मिलकर समुद्रमें जाकर स्थिर होते हैं, उसी प्रकार सब आश्रम गृहस्थआश्रममें जाकर स्थिर होते हैं, अर्थात् गृहस्थी पुरुष ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, संन्यास इन तीनोंको अपना अतिथि मानकर नियमानुसार आश्रय देता है ॥ ८० ॥

यस्मात् त्रयोप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम् ।
गृहस्थेनैव धार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही ॥८१॥

भाषार्थ–जिससे ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ, संन्यासी इन तीनौं आश्रमवालोंको अन्नवस्त्रादि दानसे प्रतिदिन गृहस्थ धारणपोषण करता है, इसकारण व्यवहारमें गृहस्थाश्रम सबसे श्रेष्ठ है ॥ ८१ ॥

न्यायार्जितधनस्तत्त्वज्ञाननिष्ठोऽतिथिप्रियः ।
शास्त्रवित्सत्यवादी च गृहस्थोऽपि विमुच्यते ॥८२॥

भाषार्थ–न्यायसे धन संचित करनेवाला, तत्वज्ञानमें निष्ठावाला, अतिथि जिसको प्रिय और शास्त्र जाननेवाला, तथा सत्यवादी गृहस्थभी मुक्त हो जाता है ॥ ८२ ॥

स सन्धार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता ।
सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः ॥८३॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भावार्थ-अक्षय स्वर्ग (मुक्ति) और इस संसारमें सुखकी इच्छा-वाला पुरुष नित्य प्रयत्नसे गृहस्थाश्रमको धारण करै, जो गृहस्थाश्रम दुर्बल इन्द्रियवाले पुरुषोंको धारण करना दुर्लभ है. अर्थात् दुर्बल इन्द्रियवाले गृहस्थाश्र मको नहीं धारण कर सकते हैं ॥ ८३ ॥

सर्वेषामपि चैतेषां वेदस्मृतिविधानतः ।
गृहस्थ उच्यते श्रेष्ठः स त्रीनेतान् बिभर्ति हि ॥८४॥

भावार्थ-वेदस्मृतिके प्रमाणसे सब आश्रमोंमें गृहस्थाश्रम श्रेष्ठ कहा है. क्योंकि-यही आश्रम ब्रह्मचर्य आदि तीनौं आश्रमोंको धारण करता है ॥ ८४ ॥

यदि रामा यदि च रमा यदि तनयो विनयधीगुणोपेतः
तनये तनयोत्पत्तिः सुरवरनगरे किमाधिक्यम् ? ८५

भावार्थ-यदि मनको रमानेवाली स्त्री है और यदि लक्ष्मीभी बहुत है और यदि विनय, बुद्धि और गुणोंसे युक्त पुत्र है, पुत्रके आगे पुत्रकी उत्पत्ति है अर्थात् पौत्रभी है, तो सुरवरनगरमें अर्थात् स्वर्गमें इससे अधिक और क्या है ? ॥ ८५ ॥

मानुष्यं वरवंशजन्मविभवो दीर्घायुरारोग्यता ।
सन्मित्रं सुसुतः सती प्रियतमा भक्तिश्च नारायणे ॥
विद्वत्त्वं सुजनत्वमिन्द्रियजयः सत्पात्रदाने रति- ।
स्ते पुण्येन विना त्रयोदशगुणाः संसारिणां दुर्लभाः॥

भावार्थ-मनुष्य होना, श्रेष्ठ वंशमें जन्म, ऐश्वर्य, दीर्घायु (बहुत आयु), आरोग्यता, उत्तम मित्र, सुपुत्र, पतिव्रता स्त्री, नारायणमें

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भक्ति, विद्वत्व, सुजनता, इन्द्रियोंपर जय, सत्पात्रको दान देनेमें प्रीति ये तेरह गुण पुण्यके विना सांसारिक मनुष्योंको दुर्लभ हैं ॥ ८६ ॥

सानन्दं सदनं सुताश्च सुधियः कान्ता न दुर्भाषिणी।
सन्मित्रं सुधनं स्वयोषिति रतिश्चाज्ञापराः सेवकाः॥
आतिथ्यं शिवपूजनं प्रतिदिनं मिष्टान्नपानं गृहे।
साधोः सङ्गमुपासते हि सततं धन्यो गृहस्थाश्रमः॥८७॥

भाषार्थ–आनन्ददायक गृह, बुद्धिमान् पुत्र, प्रियवचन बोलनेवाली स्त्री, श्रेष्ठ मित्र, विपुल धन, अपनीही स्त्रीमें प्रीति, आज्ञा माननेवाला सेवक, अतिथिसत्कार, शिवपूजन, प्रतिदिन घरमें मिष्टान्नपान, सदा साधुजनोंका संग ऐसा गृहस्थाश्रम धन्य है ॥ ८७ ॥

वानप्रस्थनिरूपण।

एवं गृहाश्रमे स्थित्वा विधिवत्स्नातको द्विजः॥
वने वसेत्तु नियतो यथावद्विजितेन्द्रियः॥ ८८ ॥

भाषार्थ–मनुस्मृतिके अध्याय छमें कहा है कि–जिसका समावर्तन-संस्कार हुआ हो ऐसा स्नातक द्विज शास्त्रोक्त विधिके अनुसार गृहस्थाश्रममें रहकर नियमपूर्वक जितेन्द्रिय हो वनमें वसे अर्थात् वानप्रस्थ आश्रमको ग्रहण करै ॥ ८८ ॥

गृहस्थस्तु यदा पश्येद्वलीपलितमात्मनः॥
अपत्यस्यैव चापत्यं तदारण्यं समाश्रयेत्॥ ८९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–गृहस्थ जब अपने शरीरकी त्वचाको ढीली देखै और केशोंको श्वेत होते देखै, तथा पुत्रको पुत्र उत्पन्न हुआ देखै, तब विषयोंसे वैराग्ययुक्त हो वानप्रस्थ आश्रमके निमित्त वनका आश्रय लेवै ॥ ८९ ॥

सन्त्यज्य ग्राम्यमाहारं सर्वं चैव परिच्छदम् ॥
पुत्रेषु भार्यां निक्षिप्य वनं गच्छेत्सहैव वा ॥ ९० ॥

भाषार्थ–ग्राम्य आहार (धान, जव, दाल, पकान्न आदि) एवं अन्य गृहस्थीजनोंकी सामग्री शय्या आदि और घोडा आदि वाहन, इन सब उपकरणोंको त्याग देवै तथा स्त्रीकी इच्छा साथ जानेकी न हो तो स्त्रीको पुत्रोंके समीप छोडकर वनको जावै परन्तु जहांतक हो सकै साथही ले जावै ॥ ९० ॥

अग्निहोत्रं समादाय गृह्यं चाग्निपरिच्छदम् ॥
ग्रामादरण्यं निःसृत्य निवसेन्नियतेन्द्रियः ॥ ९१ ॥

भाषार्थ–श्रौत अग्निको और उसकी सामग्री स्रुक्–स्रुवा आदिको लेकर ग्रामसे वनमें निकल जितेन्द्रिय होकर वनमें निवास करै ॥ ९१ ॥

वैतानिकं च जुहुयादग्निहोत्रं यथाविधि ॥
दर्शमस्कन्दयन् पर्व पौर्णमासं च योगतः ॥ ९२ ॥

भाषार्थ–शास्त्रके अनुसार वैतानिक अग्निहोत्र करै और अमावास्या तथा पूर्णिमा इन पर्वोंमें श्रुतिस्मृतिमें कहे हुए दर्श पौर्णमाससे यज्ञोंको न छोडै ॥ ९२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्याद्दान्तो मैत्रः समाहितः॥
दाता नित्यमनादाता सर्वभूतानुकम्पकः॥ ९३॥

भाषार्थ–नित्य प्रति वेदाध्ययन करे अर्थात् वेदपाठ प्रतिदिन करै. और शीत–घाम आदिका सहन करै. सबका उपकार करै. मनको स्वाधीन रक्खै. सदैव दान करै. दान लेनेकी इच्छा न करै. सब प्राणियोंपर दया करै॥ ९३॥

सद्यः प्रक्षालको वा स्यान्मासंसंचायकोऽपिवा॥
षण्मासनिचयो वा स्यात्समानिचय एव वा॥९४॥

भाषार्थ–एक दिनके खाने योग्य अथवा एक मासके योग्य अथवा छे मासके योग्य अथवा एक वर्षके निर्वाहयोग्य नीवार आदि इकठ्ठा करै॥ ९४॥

तापसेष्वेव विप्रेषु यात्रिकं भैक्ष्यमाहरेत्॥
गृहमेधिषु चान्येषु द्विजेषु वनवासिषु॥ ९५॥

भाषार्थ–वानप्रस्थ ब्राह्मणोंसे प्राणोंकी रक्षाके योग्य भिक्षा लावै और उनके न होनेमें अन्यवनके वसनेवाले गृहस्थ ब्राह्मणोंसे लावै॥ ९५॥

एतश्चान्याश्च सेवेत दीक्षा विप्रो वने वसन्॥
विविधाश्चौपनिषदीरात्मसंसिद्धये श्रुतीः॥ ९६॥

भाषार्थ–वानप्रस्थ इन नियमोंका और वानप्रस्थके शास्त्रमें कहे हुए अन्य नियमोंका अभ्यास करै, तथा उपनिषदोंमें पढी हुई ब्राह्म-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

णका प्रतिपादन करनेवाली अनेक श्रुतियोंका अपनी ब्रह्मत्वसिद्धिके अर्थ ग्रन्थसे तथा अर्थसे अभ्यास करै, अर्थात् ब्रह्मज्ञाननिमित्त नाना-प्रकारकी उपनिषद् अर्थात् ज्ञान और उपासनाविधायक श्रुतियोंके अर्थका विचार करै. इसीप्रकार संन्यासधारणकी इच्छापर्यन्त वानप्रस्थ आश्रममें रहे ॥ ९६ ॥

संन्यासआश्रम ।

ऋणानि त्रीण्यपाकृत्य मनो मोक्षे निवेशयेत् ॥
अनपाकृत्य मोक्षं तु सेवमानो व्रजत्यधः ॥ ९७ ॥

भाषार्थ–आगे श्लोकमें कहे हुए तीन ऋणोंसे निवृत्त होकर मोक्षके अंगरूप संन्यासमें मनको लगावै. उन ऋणोंको दूर किये विना जो मोक्ष चाहता है और चौथे आश्रम (संन्यास) को धारण करता है, वह नरकमें जाता है ॥ ९७ ॥

अधीत्य विधिवद्वेदान्पुत्रांश्चोत्पाद्य धर्मतः ॥
इष्ट्वा च शक्तितो यज्ञैर्मनो मोक्षे निवेशयेत् ॥ ९८ ॥

भाषार्थ–शास्त्रानुसार वेदोंको पढकर ऋषियोंके और 'पर्वोंमें गमन न करना' इत्यादिक धर्मोंसे पुत्रोंको उत्पन्न कर पितरोंके, तथा सामर्थ्यके अनुसार अग्निष्टोम आदि यज्ञोंको करके देवताओंके ऋणसे मुक्त होकर मोक्षरूप संन्यास आश्रममें मनको लगावै ॥ ९८ ॥

अनधीत्य द्विजो वेदाननुत्पाद्य तथा सुतान् ॥
अनिष्ट्वा चैव यज्ञैश्च मोक्षमिच्छन् व्रजत्यधः ॥ ९९ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जो द्विज वेदोंको न पढकर और पुत्रोंको न उत्पन्न कर तथा यज्ञोंसे यजन न कर मोक्ष चाहता है, वह नरकमें जाता है ॥ ९९ ॥

प्राजापत्यां निरूप्येष्टिं सर्ववेदसदक्षिणाम् ॥
आत्मन्यग्नीन्समारोप्य ब्राह्मणः प्रव्रजेद्गृहात् ॥ १०० ॥

भाषार्थ-यजुर्वेदके उपाख्यानमें कहे हुये और सर्वस्व है दक्षिणा जिसमें और प्रजापति जिसकी देवता ऐसे यज्ञको करके उसकी कही हुई विधिसे अपनेमें अग्निको स्थापित कर वानप्रस्थाश्रमको करके चौथे (संन्यास) आश्रममें वास करै ॥ १०० ॥

वनेषु च विहृत्यैवं तृतीयं भागमायुषः ॥
चतुर्थमायुषो भागं त्यक्त्वा संगान् परिव्रजेत् ॥१०१॥

भाषार्थ-इसप्रकार वनमें विहार करके अर्थात् नानाप्रकारके कठिन तपोंके करनेसे विषयोंके रागकी शान्तिके अर्थ आयुके तीसरे भागमें (वानप्रस्थोंके आश्रममें) कुछकालपर्यन्त रहकर आयुके चौथे भागमें अर्थात् शेष आयुके समयमें सब भांति विषयोंके संगोंको त्यागकर संन्यास आश्रमको धारण करै ॥ १०१ ॥

यो दत्वा सर्वभूतेभ्यः प्रव्रज्यत्यभयं गृहात् ॥
तस्य तेजोमया लोका भवन्ति ब्रह्मवादिनः ॥ १०२ ॥

भाषार्थ-जो सब प्राणियोंको अभय देकर गृहस्थआश्रमसेही संन्यास आश्रम ग्रहण कर लेता है, उस ब्रह्मवादी संन्यासीके तेजसे सब

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

लोकलोकान्तर तेजोमय हो जाते हैं, अर्थात् ज्ञानसे प्रकाशमय हो जाते हैं ॥ १०२ ॥

आगारादभिनिष्क्रान्त पवित्रोपचितो मुनिः ॥
समुपोढेषु कामेषु निरपेक्षः परिव्रजेत् ॥ १०३ ॥

भाषार्थ–घरसे निकलकर संन्यासाश्रमका ग्रहण तभी करै जब सब कामोंको जीत लेवै और उनकी अपेक्षा न रहे, तथा पवित्र आत्मावाला मुनि (मननशील) हो जावे ॥ १०३ ॥

एक एव चरेन्नित्यं सिद्ध्यर्थमसहायवान् ॥
सिद्धिमेकस्य सम्पश्यन्न जहाति न हीयते ॥ १०४ ॥

भाषार्थ–प्रतिदिन अकेलाही विचरै, मोक्षकी सिद्धिके अर्थ किसीके सहायताकी आवश्यकता नहीं है. इसीसे अकेलाही विचरता हुआ संन्यासी मोक्षका भागी होता है. वह न किसीको छोडता है और न किसीके छोडनेका दुःख पाता है और न किसीकरके वह छोडा जाता है ॥ १०४ ॥

अनग्निरनिकेतः स्याद्ग्राममन्नार्थमाश्रयेत् ॥
उपेक्षकोऽसङ्कुसुको मुनिर्भावसमाहितः ॥ १०५ ॥

भाषार्थ–लौकिक अग्निको नहीं छुवै और गृहसे रहित होवै, भिक्षानिमित्त ग्रामका आश्रय लेवै, रोगआदिसे क्लेश हो तो चिन्ता न करे और असंकुसुक अर्थात् स्थिरबुद्धि रहे. तथा मौनी होकर मनको एकाग्र कर ब्रह्ममें लगावै ॥ १०५ ॥

नाभिनन्देत मरणं नाभिनन्देत जीवितम् ॥
कालमेव प्रतीक्षेत निर्देशं मृतको यथा ॥ १०६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–मरने और जीनेकी इच्छा न करै अर्थात् न अपने मरणमें दुःख माने और न जीनेमें सुख माने, किन्तु अपने कर्मके आधीन जो जीवनमरण है, उसकी प्रतीक्षा करै. जैसे सेवक अपने स्वामीकी आज्ञाकी वाट देखता रहता है ॥ १०६ ॥

दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं जलं पिबेत् ॥
सत्यपूतां वदेद्वाचं मनःपूतं समाचरेत् ॥ १०७ ॥

भाषार्थ–गमन करते समय आगे देखकर चरण रक्खै और वस्त्रसे छानकर जल पीवै, तथा सत्यसे पवित्र वाणी बोलै और मनकी पवित्रतासे सब काम करै ॥ १०७ ॥

क्लृप्तकेशनखश्मश्रुः पात्री दण्डी कुसुम्भवान् ॥
विचरेन्नियतो नित्यं सर्वभूतान्यपीडयन् ॥ १०८ ॥

भाषार्थ–शिरके सब केश और डाढी मूंछके केशोंका समय समय छेदन कराता रहै. भिक्षापात्र और दंडकमंडलुको लिये हुए कुसुम्भमें रँगे हुए वस्त्र धारण कर प्राणीमात्रको पीडा न देता हुआ दृढात्मा होकर सदा विचरा करै ॥ १०८ ॥

अध्यात्मरतिरासीनो निरपेक्षो निरामिषः ॥
आत्मनैव सहायेन सुखार्थी विचरेदिह ॥ १०९ ॥

भाषार्थ–सदैव ब्रह्मके ध्यानमें मग्न रहता हुआ, किसीकी अपेक्षा न रखता हुआ, मांसमद्यादिका त्याग करता हुआ और अपनीही आत्मासे सुख चाहता हुआ संन्यासी इस संसारमें विचरता रहै॥१०९॥

इन्द्रियाणां निरोधेन रागद्वेषक्षयेण च ॥
अहिंसया च भूतानाममृतत्वाय कल्पते ॥ ११० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-इन्द्रियोंके रोकनेसे, रागद्वेष आदि दोषोंके दूर होनेसे और प्राणियोंकी हिंसा न करनेसे संन्यासी मोक्षको प्राप्त होता है ११०

दूषितोऽपि चरेद्धर्मं यत्र तत्राश्रमे रतः ॥
समः सर्वेषु भूतेषु न लिङ्गं धर्मकारणम् ॥ १११ ॥

भाषार्थ-जिस किसी आश्रममें स्थित हो, उस आश्रमके विरुद्ध आचारसे दूषित होनेपरभी धर्महीका आचरण करै, सब प्राणियोंमें समबुद्धि रक्खै, सदुपदेश और धर्माचरणकी वृद्धिनिमित्त संन्यास आश्रमका विधान है. किन्तु केवल दंड आदि चिन्होंका धारण करनाही धर्मका कारण नहीं है ॥ १११ ॥

फलं कतकवृक्षस्य यद्यप्यम्बुप्रसादकम् ॥
न नामग्रहणादेव तस्य वारि प्रसीदति ॥ ११२ ॥

भाषार्थ-यद्यपि कतक (निर्मली) वृक्षका फल जलको निर्मल करनेवाला होता है, तथापि उसके नाम लेनेसे जल निर्मल नहीं होता है. किन्तु उसको लेकर पीसके जलमें डालनेसे उसका जल स्वच्छ होता है. ऐसेही केवल चिन्ह धारण करनाही धर्मका कारण नहीं है. किन्तु अपने अपने आश्रमके धर्मयुक्त कर्म करनेहीसे आश्रमधारण सफल होता है ॥ ११२ ॥

नदीकूले यथा वृक्षो वृक्षं वा शकुनिर्यथा ॥
तथात्यजन्निमं देहं कृच्छाद्ग्राहाद्विमुच्यते ॥ ११३ ॥

भाषार्थ-जैसे, नदीके तटको वृक्ष, अथवा निष्फलवृक्षको पक्षी त्याग देता है, वैसेही संन्यासी इस देहको त्याग देवै तो, संसाररूप ग्राहसे छूट जाता है ॥ ११३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जायाभ्रातृसुतादीनां बन्धूनां च शुभाशुभम् ॥
दृष्ट्वा श्रुत्वा न कम्पेत शोकहर्षौ त्यजेद्यतिः ॥ ११४ ॥

भाषार्थ-स्त्री, भाई, पुत्र आदि और बन्धुजनोंके शुभअशुभको देख सुनकर चलायमान न होवै. शोक हर्षको यति त्याग देवै ॥११४॥

प्राणायामा ब्राह्मणस्य त्रयोऽपि विधिवत्कृताः ॥
व्याहृतिप्रणवैर्युक्ता विज्ञेयं परमं तपः ॥ ११५ ॥

भाषार्थ-सात व्याहृति और प्रणवकरके युक्त पूरक, कुंभक, रेचक विधिसे किये हुए तीनभी प्राणायाम ब्राह्मणका परम तप जानना चाहिये ॥ ११५ ॥

दह्यन्ते ध्मायमानानां धातूनां च यथा मलाः ॥
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषा प्राणस्य निग्रहात् ११६

भाषार्थ-जिस प्रकार अग्निमें तपानेसे धातुओंके मैल नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार प्राणके रोकनेसे इन्द्रियोंके दोष दग्ध हो जाते हैं ॥ ११६ ॥

प्राणायामैर्दहेद्दोषान् धारणाभिश्च किल्बिषम् ॥
प्रत्याहारेण संसर्गान् ध्यानेनानीश्वरान्गुणान् ११७

भाषार्थ-प्राणायामोंसे दोषोंको दग्ध करै, धारणाओंसे अन्तःकरणके मैलको दूर करै और प्रत्याहारसे संगजनित दोषोंका नाश करै, तथा ध्यानसे काम-क्रोध-लोभ-मोह आदि दोषोंको जलावै ॥११७॥

उच्चावचेषु भूतेषु दुर्ज्ञेयामकृतात्मभिः ॥
ध्यानयोगेन संपश्येद्गतिमस्यान्तरात्मनः ॥ ११८ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-शास्त्रसे जिनका अन्तःकरण संस्कारयुक्त नहीं है, ऐसे पुरुषोंकरके दुःखसे जानने योग्य ऐसी इस जीवकी ऊँचनीच देव पशु आदिमें जन्मकी प्राप्तिको ध्यानके योगसे कारणसहित भलीभाँति जानै, तब ब्रह्मज्ञानमें निष्ठा होवै ॥ ११८ ॥

सम्यक्दर्शनसम्पन्नः कर्मभिर्न निबध्यते ॥
दर्शनेन विहीनस्तु संसारं प्रतिपद्यते ॥ ११९ ॥

भाषार्थ-तत्त्वसे ब्रह्मका साक्षात्कार करनेवाला पुरुष कर्मोंसे नहीं बँधता है और जो पुरुष ब्रह्मके साक्षात्कारसे रहित है, वह संसारको प्राप्त होता है, अर्थात् जन्ममरणको प्राप्त होता है ॥ ११९ ॥

अहिंसयेन्द्रियासंगैर्वैदिकैश्चैव कर्मभिः ।
तपसश्चरणैश्चोग्रैः साधयन्तीह तत्पदम् ॥ १२० ॥

भाषार्थ-हिंसा न करने और इन्द्रियोंको विषयोंमें न फसने देने और वैदिक कर्मों तथा सत्य भाषणादि उत्तम कर्मोंसे इस लोकमें उच्च पदको यति लोग प्राप्त होते हैं ॥ १२० ॥

यदा भावेन भवति सर्वभावेषु निःस्पृहः ।
तदा सुखमवाप्नोति प्रेत्य चेह च शाश्वतम् ॥ १२१ ॥

भाषार्थ-जब संन्यासी सब पदार्थोंमें अपने भावसे इच्छारहित होता है, तभी इस लोकमें सुख पाता है और अन्तमें मोक्षपदको प्राप्त होता है ॥ १२१ ॥

अनेन विधिना सर्वांस्त्यक्त्वा संगान् शनैः शनैः ॥
सर्वद्वन्द्वविनिर्मुक्तो ब्रह्मण्येवावतिष्ठते ॥ १२२ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-इसप्रकार विधिपूर्वक शनैः शनैः (धीरे धीरे) संगजनित सब दोषोंको त्यागकर, हर्ष-शोक आदि सब द्वन्द्वोंसे छूटकर संन्यासी ब्रह्ममेंही स्थिर होता है ॥ १२२ ॥

इदं शरणमज्ञानामिदमेव विजानताम्।
इदमन्विच्छतां स्वर्ग्यमिदमानन्त्यमिच्छताम् १२३

भाषार्थ-यह वेद ब्रह्म न जाननेवालोंकोभी हितकारी है, अर्थात् वेदका पाठमात्रभी पापके क्षयका कारण है और स्वर्ग व मोक्षकी इच्छावाले वेदके अर्थके ज्ञाता हैं, उनकी गति है अर्थात् मोक्षप्रदाता है ॥ १२३ ॥

अधियज्ञं ब्रह्म जपेदाधिदैविकमेव च।
आध्यात्मिकं च सततं वेदान्ताभिहितं च यत् १२४

भाषार्थ-जो वेद यज्ञके मध्ये प्रवृत्त है और देवताओंके मध्ये जो प्रवृत्त है, तथा जीवके मध्ये जो प्रवृत्त है और वेदान्तमें 'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म' इत्यादि ब्रह्मके प्रतिपादन करनेवाले जो मंत्र हैं, उनको निरन्तर जपै ॥ १२४ ॥

अनेन क्रमयोगेन परिव्रजति यो द्विजः।
स विधूयेह पाप्मानं परं ब्रह्माधिगच्छति ॥१२५॥

भाषार्थ-इस क्रमसे कहेहुए अनुष्ठानसे जो द्विज संन्यास आश्रमको धारण करता है, वह इस संसारमें शरीरसे सब पापोंको छोडकर परब्रह्मको प्राप्त होता है ॥ १२५ ॥

कर्मणा मनसा वाचा सर्वभूतेषु सर्वदा ॥
अक्लेशजननं प्रोक्ता त्वहिंसा परमर्षिभिः ॥ १२६ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–कर्मसे, मनसे, वाणीसे किसी प्राणीको कभी क्लेश नहीं देना, इसीको परमश्रेष्ठ ऋषिलोग अहिंसा कहते हैं॥ १२६॥

अहिंसा परमो धर्मः सर्वप्राणभृतां वरः।
तस्मात्प्राणभृतः सर्वान्न हिंस्याद्ब्राह्मणःक्वचित् १२७

भाषार्थ–हिंसा न करना परम धर्म है, सब प्राणियोंकी रक्षा करनाही सबसे बढकर धर्म है, इस कारण सब प्राणधारियोंकी रक्षा करै. ब्रह्मज्ञानी पुरुष कदापि हिंसा न करै॥ १२७॥

प्राणानां परिरक्षणाय सततं सर्वाः क्रियाः प्राणिनां।
प्राणेभ्योऽप्यधिकं समस्तजगतां नास्त्येव किंचित्प्रियम्॥
पुण्यं तस्य न शक्यते गणयितुं यः पूर्णकारुण्यवान्।
प्राणानामभयं ददाति सुकृती येषामहिंसाव्रतम्॥१२८॥

भाषार्थ–प्राणोंकी रक्षा करनेके निमित्त निरन्तर सब जीवोंकी सब क्रियायें हैं. क्योंकि–संसारभरमें प्राणोंसे अधिक प्रिय कोई वस्तु नहीं है. जो मनुष्य पूर्ण दयावान् है और सब जीवोंकी रक्षा करता है, उसके पुण्यकी गणना करनेको कोई समर्थ नहीं है, जो प्राणोंको अभयदान देता है, वही सुकृती (पुण्यात्मा) है. जिनका अहिंसा व्रत है अर्थात् जो लोग किसी प्राणीको नहीं मारते हैं, वे इस संसारमें धन्य हैं॥ १२८॥

न गोप्रदानं न महीप्रदानं न चान्नदानं हि तथा प्रधानम्॥
यथा वदन्तीह बुधाः प्रधानं सर्वप्रदानेष्वभयप्रदानम् १२९

भाषार्थ–गोदान, भूमिदान, अन्नदान वैसा प्रधान (श्रेष्ठ) नहीं है कि जैसा सब दानोंमें अभयदान श्रेष्ठ है. यह बुधजन कहते हैं॥ १२९॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्त्रीधर्म तथा स्त्रीशिक्षा ।

न सा स्त्रीत्यभिमन्तव्या यस्या भर्ता न तुष्यति ॥
तुष्टे भर्तरि नारीणां तुष्टः स्यात्परमेश्वरः ॥१३०॥

भाषार्थ–उसको स्त्री नहीं मानना चाहिये जिसका पति सन्तुष्ट नहीं रहता है. पतिके सन्तुष्ट होनेपर स्त्रियोंके ऊपर परमेश्वर सन्तुष्ट होता है. पतिको सन्तुष्ट रखना स्त्रीका मुख्य धर्म है ॥ १३० ॥

भर्ता हि परमं नार्य्या भूषणं भूषणैर्विना ॥
एषा विरहिता तेन शोभनाऽपि न शोभते ॥१३१॥

भाषार्थ–सोनेचांदीके आभूषणोंकी अपेक्षा स्त्रीका पतिही परम भूषण है. पतिके विना सौन्दर्यके होनेपरभी स्त्री शोभाको प्राप्त नहीं होती है ॥ १३१ ॥

भर्ता देवो गुरुर्भर्ता धर्मतीर्थव्रतानि च ॥
तस्मात्सर्वं परित्यज्य पतिमेकं भजेत्सती ॥ १३२ ॥

भाषार्थ–पतिही स्त्रीका देवता है. पतिही गुरु है. पतिही धर्म, तीर्थ और व्रत है. इसकारण सबको छोडकर पतिव्रता स्त्री केवल अपने पतिहीको भजे ॥ १३२ ॥

न कामेषु न भोगेषु नैश्वर्ये न सुखे तथा ॥
स्पृहा यस्या तथा पत्यौ सा नारी धर्मभागिनी १३३

भाषार्थ–जिस स्त्रीकी इच्छा वैसी न कामोंमें, न भोगोंमें, न ऐश्वर्यमें, तथा न सुखमें होती है, जैसी पतिमें होती है, वही स्त्री धर्मभागिनी होती है ॥ १३३ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

धर्मार्थकाममोक्षेषु भार्या पुंसः सहायिनी ॥
विदेशगमने चास्य सैव विश्वासकारिणी ॥ १३४ ॥

भावार्थ–धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारो पुरुषार्थोंमें स्त्रीही पुरुषकी सहाय करती है और उसके विदेश जानेपर घरमें वही विश्वासकारिणी होती है ॥ १३४ ॥

अर्द्धं भार्या मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतमः सखा ॥
असहायस्य लोकेऽस्मिन् लोकयात्रा सहायिनी॥ १३५॥

भावार्थ–भार्या मनुष्यका आधा अंग है. भार्याही परमोत्तम सखा है और इस संसारमें असहाय पुरुषको सांसारिक कार्योंमें सहाय करनेवाली एक भार्याही है ॥ १३५ ॥

नास्ति भार्यासमो बन्धुर्नास्ति भार्यासमा गतिः ॥
नास्ति भार्यासमो लोके सहायो धर्मसंग्रहे ॥ १३६॥

भावार्थ–भार्या (स्त्री) के समान कोई बन्धु नहीं है, भार्याके समान न कोई गति है और भार्याके समान इस संसारमें धर्मसम्पादन करनेके अर्थ दूसरा सहायक नहीं है ॥ १३६ ॥

तथा रोगाभिभूतस्य नित्यं कृच्छ्रगतस्य च ॥
नास्ति भार्यासमं किंचिन्नरस्यार्तस्य भेषजम् ॥ १३७॥

भावार्थ–तैसेही रोगग्रस्त होनेपर अथवा कोई संकट आ जानेपर उस पीडित मनुष्यके अर्थ भार्याके समान दूसरा कोईभी भेषज (औषध) नहीं है ॥ १३७ ॥

पदन्यासो गेहाद्बहिरहिफणारोपणसमो ।
वचो लोकालभ्यं कृपणधनतुल्यं मृगदृशः ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

निजावासादन्यद्भवनमपरद्वीपतुलितं ।
पुमानन्यः कान्ताद्विधुरिव चतुर्थीसमुदितः ॥ १३८ ॥

भाषार्थ–वे कुलवधू स्त्रियां धन्यवादके योग्य हैं, कि अपने घरसे बाहर पांव धरनेमें जिनको सदा ऐसा भय लगता, जैसे काले सांपके शिरपर रखनेके समय होता है और उनका वचन मनुष्यमात्रको ऐसा अलभ्य रहता है, जैसा कि–महाकृपणका धन; तथा उनके ज्ञानमें दूसरेका घर ऐसा रहता है, जैसा लंका आदि दूरस्थ द्वीप; एवं निजपतिके अतिरिक्त अन्य पुरुषका मुख देखनेमें कलंक लगनेका ऐसा भय रहता, जैसा भादौ शुदी चौथके चन्द्रमाको देखनेमें कहा गया है ॥१३८॥

परुषाण्यपि या प्रोक्ता दृष्टा या क्रोधचक्षुषा ।
सुप्रसन्नमुखी भर्तुः सा भार्या धर्मभागिनी ॥ १३९ ॥

भाषार्थ–उत्तमोत्तम स्त्रीके लक्षण ये हैं कि–उसका पति अपराध अथवा विनाही अपराध, सत्य वा असत्यही रीतिसे प्रतिदिन स्त्रीको अथवा उसके माता पिता आदिको अति कठोर वाक्य कहै और मारपीट आदि करके कलेश देवै, तथा आठौ प्रहर अप्रसन्न रहकर लाल-लाल अंगारसमान नेत्रोंसे सदा देखै, तोभी वह स्त्री अपने उस पतिको उलटा सीधा उत्तर न देवै और न कभी अपना मन बिगाडै और उस दशामेंभी वह सब प्रकार प्रसन्नमुखी देखी जावै, तब वह स्त्री अपने उस पुरुषकी धर्मपत्नी वा भार्या कहाती है और थोडेही समयपीछे समस्त सुखोंको भोगनेवाली होती है ॥ १३९ ॥

नगरस्थो वनस्थो वा पापो वा यदि वा शुचिः ॥
यासां स्त्रीणां प्रियो भर्ता तासां लोका महोदयाः॥१४०॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–अपनेही नगरमें स्थित हो वा वनमें स्थित हो अर्थात् दशमें हो अथवा परदेशमें हो, पापी हो अथवा पवित्र हो, अर्थात् सब दशाओंमें जिनका चित्त सदैव अपने पतिसे सन्तुष्ट रहता है, वे स्त्रियां समस्त जन्मजन्मान्तरोंमें अचल और अनुपम ऐश्वर्योंको भोगती हैं १४०

दुःशीलः कामवृत्तो वा धनैर्वा परिवर्जितः ॥
स्त्रीणामार्यस्वभावानां परमं दैवतं पतिः ॥ १४१ ॥

भाषार्थ–महाराजा दशरथजी अपनी पट्टराणी कौशल्याजीके प्रति कहते हैं कि–हे प्रिये ! स्त्रीका पति कैसाही दुराचारी वा कामलंपट अथवा धनहीन क्यों न हो, परन्तु उस दशामेंभी वह स्त्रियोंको परम दैवत अर्थात् परम पूज्य और परम मान्यवरही समझकर मानना व पूजना चाहिये ॥ १४१ ॥

भर्ता तु खलु नारीणां गुणवान्निर्गुणोपि वा ॥
धर्मं विमृशमाणानां प्रत्यक्षं देवि दैवतम् ॥ १४२ ॥

भाषार्थ–फिर कहा–हे देवि ! स्त्रियोंका यह परम धर्म है कि उनका पति चाहे गुणी हो अथवा गुणहीन हो, परन्तु धर्मका खोज लगानेवाली स्त्रीको वही अकेला इस भूमिपर परमपूज्य दैवत है॥१४२॥

नैषा हि सा स्त्री भवति श्लाघनीयेन धीमता ॥
उभयोर्लोकयोर्लोके पत्या याऽसंप्रसाद्यते ॥ १४३ ॥

भाषार्थ–फिर कहा–हे महाराणी ! ऐसा जो पति उसको जो स्त्रियां अपना परम पूज्य देवता नहीं समझतीं और कठोर वर्तावकरके अपना अपराध नहीं गिनतीं, वे मूर्खा अपने उन कुदोषोंसे उस अपमानित पतिके चित्तसे गिर जाती हैं और इतनीही अप्रसन्नतासे उन

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

स्त्रियोंके तुरन्त दोनौं लोक बिगड जाते हैं, अर्थात् इस संसारमें अनेक दुःखों और अपमानोंको सहती हैं और मरनेपीछे नरकगामिनी होती हैं ॥ १४३ ॥

यद्यप्येष भवेद्भर्ता अनार्यो वृत्तिवर्जितः ।
अद्वैधमत्र कर्तव्यं तथाप्येषमया भवेत् ॥ १४४ ॥

भाषार्थ–महाराणी सीताजी अनसूयाजीके प्रति उत्तर देने लगीं कि–आपके उपदेशानुसार महाकुलीन पतिकी बात तो ठीकही है; परन्तु यदि दैववश स्त्रीका पति, अनार्य अथवा जन्मरोगीभी हो तोभी स्त्री अपने पतिसे किसीप्रकारका विरोध, वा द्वेष, वा घृणा, अथवा छल कपट न करै अर्थात् आर्य पतिकी भांति अनार्य पतिभी स्त्रीजातिको परम पूज्य, परम सेव्य और परम वन्द्य है ॥ १४४ ॥

पतिशुश्रूषणं नार्यास्तपो नान्यद्विधीयते ॥
सावित्री पतिशुश्रूषां कृत्वा स्वर्गे महीयते ॥१४५॥

भाषार्थ–फिर अपनी कही हुई बातको दृढ करती हुई श्रीसीताजी कहती हैं कि–स्त्रीजातिको पतिकी सेवासे बढकर अन्य कोई तप नहीं है. देखो, सावित्री देवीजी पतिकी सेवा करकेही अबतक स्वर्गवास कर रही हैं ॥ १४५ ॥

न पिता नात्मजो वात्मा न माता न सखीजनः ॥
इह प्रेत्य च नारीणां पतिरेको गुरुः सदा॥ १४६ ॥

भाषार्थ–फिर सीताजी कहती हैं कि–कभी कोई बहू बेटी अपने पतिकी पूजा और सेवाको न भूलै. क्योंकि–दोनौं लोकोंमें स्त्रीजातिका संतारक व परमपूज्य दैवत व परमगुरु केवल वही एक पति है.

७१

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

उसके समान उनकी भलाई करनेवाला इस जगत्में न पिता है, न पुत्र है, न अपनी आत्मा है, न माता है और न सखीजन हैं. इसकारण पतिकी सेवामें मग्न रहना सर्वथा उचित है ॥ १४६ ॥

ये पूर्वोक्त छे श्लोक वाल्मीकीयरामायणमेंके हैं ।

सन्तुष्टो भार्यया भर्ता भर्त्रा भार्या तथैव च ॥
यस्मिन्नेव कुले नित्यं कल्याणं तत्र वै ध्रुवम् १४७

भाषार्थ–मनुजी महाराजका वचन है कि–जिस कुलमें स्त्रीसे पति और पतिसे स्त्री प्रेमके साथ वर्ताव करै हैं, अर्थात् दोनौं एक दूसरेसे प्रसन्न रहतें हैं, वहां निश्चयकरके सदा कल्याण होता है ॥ १४७ ॥

यदि हि स्त्री न रोचेत पुमांसं न प्रमोदयेत् ॥
अप्रमोदात्पुनः पुंसः प्रजनं न प्रवर्तते ॥ १४८॥

भाषार्थ–यदि स्त्री अप्रसन्न रहकर अपने पतिको प्रसन्न नहीं रखती है, तो दोनौंकी अप्रसन्नता रहनेसे किसी प्रकारकी बढती नहीं होती है ॥ १४८ ॥

पितृभिर्भ्रातृभिश्चैताः पतिभिर्देवरैस्तथा ॥
पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभिः ॥१४९

भाषार्थ–पिता, भाई, पति, तथा देवर इनकरके स्त्रियोंका सन्मान वस्त्रालंकारादिद्वारा अवश्य होना उचित है, यदि कल्याणकी इच्छा है. अर्थात् स्त्रियोंका निरादर करनेसे कुलमें कलंक आदिका भय उपस्थित हो जाता है. इसीसे मनु भगवान्ने कहा है कि–अपने कल्याणकी इच्छावाले लोग अवश्य अपने घरकी स्त्रियोंका सन्मान करते रहैं १४९

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पत्युराज्ञां विना नारी उपोष्य व्रतचारिणी ॥
आयुराहरते भर्तुः सा नारी नरकं व्रजेत् ॥ १५० ॥

भाषार्थ-अपने पतिकी आज्ञाके विना जो स्त्री उपवास वा व्रत आदि करती है, वह अपने पतिकी आयुको हरती है और अन्तसमय नरकमें जाती है ॥ १५० ॥

न दानैः शुद्ध्यते नारी उपवासशतैरपि ॥
न तीर्थसेवया तद्वद्भर्तुः पादोदकैर्यथा ॥ १५१ ॥

भाषार्थ-स्त्रीजातिकी शुद्धि जैसी पतिकी सेवा, प्रसन्नता और उसके चरणोदकके धारण करनेसे होती है, वैसी शुद्धि न दानोंसे, न सैकडों उपवासोंसे, न तीर्थ आदिकों करके होती है ॥ १५१ ॥

शंकरदिग्विजयमें लिखा है कि-मंडनमिश्र जब शास्त्रार्थवादमें शंकराचार्यजीसे हार गये तब मंडनमिश्रकी स्त्री विद्याधरीने शंकराचार्यजीसे यह कहा कि-

अपि तु त्वयाद्य न समग्रजितः प्रथिताग्रणीर्मम पतिर्यदहम्॥
वपुरर्द्धमस्य न जितामतिमन्नपिमांविजित्यकुरुशिष्यमिमम्

भाषार्थ-आपने अभी भलीभांति अर्थात् पूर्ण रीतिसे मेरे पतिको नहीं जीत पाया है. क्योंकि-इनका आधा अंग मैं अभी शेष हूं. अतः मुझकोभी शास्त्रार्थवाद में जीतकर, हे मतिमन् ! आप इनको अपना शिष्य बनाइये. मुझको पराजित किये विना इनको अपना शिष्य आप कैसे बना सकते हैं ? ॥ १५२ ॥

इति वावदूकसहधर्मचरीकथितं वचोऽर्थवदगर्ह्यपदम् ॥
मधुरं निशम्य मुदितः सुतरां प्रतिवक्तुमैहत यतिप्रवरः १५३

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-इस प्रकार मण्डनमिश्रजीकी सहधर्मिणी भारतीका अगर्ह्य (निन्दारहित) और अर्थयुक्त वचन सुनकर यतिप्रवर (श्रीशंकराचार्यजी) प्रसन्नतापूर्वक उत्तर देते हुए बोले ॥ १५३ ॥

यदवादि वादकलहोत्सुकतां प्रतिपद्यते हृदयमित्यबले ! ॥
तदसांप्रतं न हि महायशसो महिलाजने न कथयन्ति कथाम्

भाषार्थ-हे अबले ! तुमने जो शास्त्रार्थ करनेकी अभिलाषाको प्रगट किया है, इसको मैं उचित नहीं समझता हूं. क्योंकि-महायशस्वी लोग स्त्रीके साथ शास्त्रार्थ नहीं करते हैं ॥ १५४ ॥

'स्त्रीके साथ शास्त्रार्थविषे वाद करना उचित नहीं.' इस अर्थका आचार्यजीका वचन सुनकर भारती बोली-

स्वमतं प्रभेत्तुमिह यो यतते स वधूजनोऽस्तु यदि वास्त्वितरः।
यतितव्यमेव खलु तस्य जये निजपक्षरक्षणपरैर्भगवन्! १५५

भाषार्थ-हे भगवन् ! जो अपने मतका खण्डन करे, वह स्त्री हो अथवा अन्य कोई हो, अपने पक्षकी रक्षा करनेवाले पुरुषोंको उसके जीतनेमें अवश्य यत्नवान् होना चाहिये ॥ १५५ ॥

अत एव गार्ग्यभिधया कलहं सह याज्ञवल्क्यमुनिराडकरोत्।
जनकस्तथा सुलभयाबलया किममी भवन्ति न यशोनिधयः?

भाषार्थ-अत एव (इसी लिये) गार्गीके साथ याज्ञवल्क्य मुनिवरने और सुलभा नाम्नी अबलासे जनकजीने शास्त्रार्थ किया. क्या ये महायशस्वी नहीं थे ? ॥ १५६ ॥

भारतीका यह उत्तर सुनकर शंकराचार्यजी शास्त्रार्थ करनेको उद्यत हुए ।

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

अथ सा कथा प्रववृते स्म तयोरुभयोः परस्परजयोत्सुकयोः ।
मतिचातुरीरचितशब्दझरीश्रुतिविस्मयीकृतविचक्षणयोः ॥

भाषार्थ-अनन्तर उन दोनों परस्पर जयकी अभिलाषावालोंका शास्त्रार्थमारंभ हुआ. जो कि बुद्धिकी चतुराई और संकलित शब्दावलीसे युक्त था, सुननेवाले बुद्धिवान् जनोंको उस शास्त्रके सुननेसे आश्चर्य उत्पन्न होता था ॥ १५७ ॥

अनयोर्विचित्रपदयुक्तिपरैर्निशमय्य सङ्कलनमाकलितम् ॥
न फणीशमप्यतुलयन्नरविं न गुरुं कविं किमपरं जगति १५८

भाषार्थ-इन दोनोंके विचित्रपद और युक्तियोंसे परिपूर्ण शास्त्रार्थकी तुलना करनेमें शेषजी और रवि तथा गुरु और कवि (शुक्र)-जीभी समर्थ नहीं थे. अन्यकी तो गणनाही क्या है ? ॥ १५८ ॥

न दिवा न निश्यपि च वादकथा विररामनैयमिककालभृते ।
अथजल्पतोस्समनल्पधियोर्दिवसाश्चसप्तदशचात्यगमत् ५९

भाषार्थ-यह शास्त्रार्थ न दिनमें बन्द हुआ, न रातमें बन्द हुआ, नियमित समय इसमें नहीं रहा. ऐसा शास्त्रार्थ करते हुए दोनोंको सत्रह दिन व्यतीत हो गये, अर्थात् सत्रहवें दिन भारतीने शंकराचार्यजीसे कामशास्त्रसम्बन्धी प्रश्न किये. जिनका उत्तर देनेके लिये शंकराचार्यजी समय नियत कर चले गये ॥ १५९ ॥

तप-तथा तीर्थनिरूपण ।

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम् ॥
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते ॥ १६० ॥

भाषार्थ-देवता, ब्राह्मण, गुरु, तत्वज्ञानी इनका पूजन, शौच

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

(पवित्रता), नम्रता, ब्रह्मचर्य और अहिंसा इन लक्षणोंकरके युक्त होनेसे शारीरक तप कहा है अर्थात् नियमपूर्वक देवता, ब्राह्मण, गुरु और तत्वज्ञानियोंका पूजन करै. पवित्रतासे रहे. सर्वदा नम्र रहे. ब्रह्मचर्यधर्मका पालन करै और किसी जीवको नहीं सतावै. यही शरीरसे होनेवाला तप है ॥ १६० ॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् ॥
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते १६१

भावार्थ–उद्वेग करनेवाला वाक्य न कहै, अर्थात् ऐसा वचन न कहे जो किसीको किसी प्रकारका भय हो और जो वचन सत्य हो, प्रिय हो, हितकारी हो, तथा वेदशास्त्रोंमें अभ्यास यह वाचिक तप कहाता है अर्थात् वाणीसे होनेवाले तपके ये लक्षण हैं ॥ १६१ ॥

मनःप्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते ॥ १६२ ॥

भावार्थ–मन प्रसन्न रहे और स्वभाव सरल रहे. ईश्वरके स्वरूपकी भावना चित्तमें होनेसे प्रायः मौन रहे. विषयोंसे चित्तकी निवृत्ति रहे. लोकव्यवहारमें अन्तःकरण शुद्ध रहे. यही मानस तप कहा है अर्थात् मनसे होनेवाले तपके ये लक्षण हैं. इन तीनप्रकारका तप श्रीकृष्ण भगवान्‌ने अध्याय १७ में श्रीमुखसे गीतामें वर्णन किया है ॥ १६२ ॥

ब्राह्मणस्य तपो ज्ञानं तपः क्षत्रस्य रक्षणम् ।
वैश्यस्य तु तपो वार्ता तपः शूद्रस्य सेवनम्॥१६३॥

भावार्थ–मनु भगवान्‌ने कहा है कि–ब्राह्मणका तप ज्ञान है, क्षत्रियका तप प्रजाकी रक्षा करना, वैश्यका तप व्यापार करना और शूद्रका तप ब्राह्मणादि तीन वर्णोंकी नित्य सेवा करना यह है ॥१६३॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

क्षान्त्या शुद्ध्यन्ति विद्वांसो दानेनाकार्यकारिणः ।
प्रच्छन्नपापा जप्येन तपसा वेदवित्तमाः ॥ १६४॥

भाषार्थ-विद्वान् जन शान्तिसे शुद्ध होते हैं और न करने योग्य कामोंके करनेवाले दान अर्थात् विद्या तथा अभय अथवा अनाथ, दीन व सुपात्र जनोंको अन्न आदि उत्तमपदार्थ देनेसे शुद्ध होते हैं, तथा जिनके पाप छिपे हुए हैं, वे गायत्री आदि वेदमंत्रोंके जपनेसे शुद्ध होते हैं, तथा वेदके ज्ञाता लोग तप करनेसे शुद्ध होते हैं॥१६४॥

वेदाभ्यासस्तपो ज्ञानमिन्द्रियाणां च संयमः ।
अहिंसा गुरुसेवा च निःश्रेयसकरं परम् ॥ १६५ ॥

भाषार्थ-वेदमें अभ्यास, तप, तत्वज्ञान, इन्द्रियोंको वश करना, किसीको दुःख न देना और गुरुसेवा इन छे कर्मोंसे मोक्ष होती है १६५

सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः ।
सर्वभूतदया तीर्थं सर्वत्रार्जवमेव च ॥ १६६ ॥
दानं तीर्थं दमस्तीर्थं सन्तोषस्तीर्थमुच्यते ।
ब्रह्मचर्यपरं तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता ॥ १६७ ॥
ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थं पुण्यं तीर्थमुदाहृतम् ।
तीर्थानामपि सततं विशुद्धिर्मनसः परा ॥ १६८ ॥

भाषार्थ-सत्य अर्थात् यथार्थ भाषण करना तीर्थ है, क्षमा अर्थात् समर्थ होनेपरभी क्षमा करना तीर्थ है, इन्द्रियनिग्रह अर्थात् पांच कर्म-इन्द्रिय, पांच ज्ञानइन्द्रिय इन दशौ इन्द्रियोंको अपने अपने विषयोंसे रोकना तीर्थ है, दया अर्थात् अपनी आत्माके सदृश औरोंकी आ-

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

त्माको जानकर शुभवर्ताव करनाभी तीर्थ है और सर्वत्र सबसे नम्रतापूर्वक रहनाभी तीर्थ है ॥ १६६ ॥

दान अर्थात् यथाशक्ति उपकार करना और पाठशाला खोलना, दीन व सुपात्र जनोंको दानयोग्य पदार्थ देना तीर्थ है, दम अर्थात् पांचौ कर्मेन्द्रियोंको उनके विषयोंसे रोकना तीर्थ है, सन्तोष अर्थात् न्यायपूर्वक शुद्ध आचरणसे जो कुछ प्राप्त हो जाय, उसीसे प्रसन्न रहना तीर्थ है, ब्रह्मचर्य अर्थात् शुद्ध आचारसे रहकर वीर्यकी रक्षा करना तीर्थ है और प्रियवादिता अर्थात् सबसे मधुर भाषण करना तीर्थ है ॥ १६७ ॥

ज्ञान अर्थात् सदसत् वस्तुओंका जानना तीर्थ है, धृति अर्थात् धैर्य धारण करना तीर्थ है, पुण्य अर्थात् जो ब्राह्मणादि देशोन्नतिमें बाधा नहीं डालते परंतु देशोन्नति करनेमें असमर्थ हैं, उनको यथाशक्ति अन्न जल आदिसे तृप्त करना तीर्थ है और मनकी भलीभांति शुद्धिभी तीर्थ है ॥ १६८ ॥

मनो विशुद्धं पुरतस्तु तीर्थं वाचा यमस्त्विन्द्रियनिग्रहश्च ।
एतानि तीर्थानि शरीरजानि स्वर्गस्य मार्गं प्रति वेदयन्ति १६९

भावार्थ—मनको शुद्ध रखना, सत्य भाषणद्वारा वाणीको नियमसे रखना, इन्द्रियोंको विषयोंसे रोककर अपने वशमें करना, ये शरीरसे उत्पन्न तीर्थ हैं. जो इन तीर्थोंको जानते हैं, वे स्वर्गके मार्गको जानते हैं ॥ १६९ ॥

परदारान् परद्रव्यं हरते यो दिने दिने ।
सर्वतीर्थाभिषेकेण पापं तस्य न मुच्यते ॥ १७० ॥

भावार्थ—जो मनुष्य पराई स्त्रियों और पराये धनको प्रतिदिन हरण करता है, अर्थात् जो पराई स्त्रीको कुदृष्टिसे देखता और उसके

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

साथ रमण करता है, तथा पराये धनकी चोरी करता है, वह सब तीर्थोंमें स्नान करै तोभी उसका पाप दूर नहीं होता है ॥ १७० ॥

गङ्गातोयेन कृत्स्नेन मृद्भारैश्च नगोपमैः ॥
आमृत्योः स्नातकश्चैव भावदुष्टो न शुद्ध्यति ॥१७१॥

भाषार्थ-गंगाजीके सम्पूर्ण जलसे चाहे आयुपर्यन्त स्नान करै और पर्वतके समान मिट्टी सारे शरीरपर मलै और स्नान करै, तोभी जिस मनुष्यका अन्तःकरण दुष्टभावसे युक्त है, विचार जिसका शुद्ध नहीं है, वह कदापि शुद्ध नहीं हो सकता है ॥ १७१ ॥

इदं तीर्थमिदं तीर्थं भ्रमन्ति तामसा जनाः ॥
आत्मतीर्थं न जानन्ति कथं मोक्षो ? वरानने ! ॥१७२॥

भाषार्थ-शिवजी पार्वतीसे कह रहे हैं-हे वरानने ! तमोगुणसे युक्त लोग ' यह तीर्थ, यह तीर्थ है ' ऐसे जानकर भ्रमण करते हैं, परन्तु आत्मतीर्थको नहीं जानते हैं. उनको मोक्ष कैसे प्राप्त हो सकती है ? ॥ १७२ ॥

इडा भगवती गंगा पिंगला यमुना नदी ॥
तयोर्मध्ये प्रयागस्तु यस्तं वेद स वेदवित् ॥ १७३ ॥

भाषार्थ-इडा नाडी गंगाके नामसे, पिंगला नाडी यमुनाके नामसे प्रसिद्ध है. इन दोनोंके बीचमें जो हृदयाकाश है, वह प्रयाग है. जो इनको जानता है, वह वेदका जाननेवाला है ॥ १७३ ॥

कालिन्दी संहिता ज्ञेया पदयुक्ता सरस्वती ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

क्रमेण कीर्तिता गंगा शम्भोर्वाणी तु नान्यथा ॥ १७४ ॥

भाषार्थ–कालिन्दी वेदसंहिता है और वेदमंत्रोंके पदोंको पृथक् पृथक् पढनेका नाम सरस्वती है, तथा क्रमपूर्वक वेदमंत्र पढनेका नाम गंगा जानना चाहिये. शिवजीकी वाणी यह अन्यथा नहीं है, यह याज्ञवल्क्यजीका वचन है ॥ १७४ ॥

आत्मानदी संयमपुण्यतीर्था सत्योदका शीलतटा दयोर्मिः ॥
तत्राभिषेकं कुरु पाण्डुपुत्र ! न वारिणा शुद्ध्यति चान्तरात्मा

भाषार्थ–यह महाभारतमेंका श्लोक है. इसमें रूपकालंकार है. आत्मा एक नदी है, उसमें मन इन्द्रिय लगाना पुण्यतीर्थ है, सत्यरूपी जल है, शील उसका तट है और दया उसकी लहरैं हैं. सो हे युधिष्ठिर ! ऐसी आत्मारूपी नदीमें स्नान करो. क्योंकि--जलसे अन्तरात्माकी शुद्धि नहीं होती है ॥ १७५ ॥

पुनर्जन्मनिरूपण ।

आहारा विविधा भुक्ताः पीता नानाविधाः स्तनाः ॥
मातरो विविधा दृष्टाः पितरः सुहृदस्तथा ॥ १७६ ॥

भाषार्थ–कोई जीवन्मुक्त योगी कह रहा है कि–मैंने विविध प्रकारके आहार भोगे और नानाप्रकारके स्तन पान किये. मातायेंभी अनेक देखीं और पिता आदि तथा सुहृद्भी अनेक प्रकारके देखे हैं ॥ १७६ ॥

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन ! ।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परंतप ॥ १७७ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ–हे अर्जुन ! हमारे और तुम्हारे अनेक जन्म व्यतीत हो गये. मैं तो उन सब जन्मोंको जानता हूं. परन्तु हे परंतप ! तुम नहीं जानते हो ॥ १७७ ॥

अपानः कर्षति प्राणं प्राणोऽपानं च कर्षति ॥
रज्जुबद्धो यथा श्येनो गतोपाकृष्यते पुनः ॥ १७८ ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार रस्सीसे बंधा हुआ वाजपक्षी भागनेकी इच्छा करनेपरभी भाग नहीं सकता, उसी प्रकार प्राणवायु और अपानवायु परस्पर आकर्षणसूत्रमें बँधे हुए होनेके कारण देहको त्यागकर नहीं जा सकते हैं. प्राणवायुके खैंचनेसे अपानवायु संकोचित हो जाता है और अपानवायुके खैंचनेसे प्राणवायु नीचेको खींचता है. इस प्रकारकी क्रियाके होनेके समयही दोनौं अंडकोश एक साथ लंबायमान हो जाते हैं और एक साथ संकुचित हो जाते हैं. यह सब वार्ता उस अचिन्त्यशक्तिके प्रभावसेही होती है जो चेतन है. वह चेतनशक्तिही विकारयुक्त देहका मूल कारण है ॥ १७८ ॥

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार मनुष्य जीर्णवस्त्रोंको त्यागकर नवीन वस्त्र धारण कर लेता है, उसी प्रकार यह जीवात्माभी जीर्ण शरीरको त्यागकर नवीन शरीर धारण कर लेता है ॥ १७९ ॥

देहे विनष्टे तत्कर्म पुनर्देहे प्रलभ्यते ॥ १८० ॥

भाषार्थ–यह आधा श्लोक तंत्रसारमेंका है. शरीरके नाश होनेपर

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

उस शरीरसे किया हुआ शुभाशुभ कर्म दूसरे शरीरमें प्राप्त होता है ॥ १८० ॥

यथा धेनुसहस्रेषु वत्सो विन्दति मातरम् ॥
तथा शुभाशुभं कर्म कर्तारमनुगच्छति ॥ १८१ ॥

भाषार्थ–जैसे हजारों गौओंके बीचमें बछडा अपनी माताको ढूंढ लेता है, उसी प्रकार शुभाशुभ कर्मभी कर्ताको प्राप्त होता है ॥१८१॥

सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा
अहं करोमीति वृथाऽभिमानः स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः ॥

भाषार्थ–सुखका और दुःखका देनेवाला कोईभी नहीं है. 'दूसरा सुख दुःख देता है' यह कुबुद्धि है. 'मैं करता हूं' यह वृथा अभिमान है. क्योंकि–अपने २ कर्मसूत्रमें सब प्राणी बँधे हैं ॥ १८२ ॥

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ॥१८३॥

भाषार्थ–जन्म होनेपर मृत्यु अवश्य होगी और मृत्यु होजानेपर अवश्य जन्म धारण करना होगा. जन्ममरण आगे पीछे होताही है ॥ १८३ ॥

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः ॥
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥१८४॥

भाषार्थ–गीतामें श्रीकृष्ण भगवान् कहते हैं कि–प्रकृतिका अवलम्बन करके पूर्वजन्ममें किये हुए कर्मोंके अनुसार प्रलयकालमें लयको प्राप्त हुए कर्मादिके वशीभूत भूमण्डलको मैं वारंवार रचता हूं ॥१८४॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते ॥
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥ १८५ ॥

भाषार्थ-अनेकों जन्मोंके पुण्यसंचयके द्वारा अन्तिम जन्ममें ज्ञानवान् पुरुष यह चराचररूप सम्पूर्ण जगत् ब्रह्माण्ड वासुदेव है ऐसा निश्चय करके मुझको प्राप्त होता है. परन्तु ऐसा महात्मा पुरुष अत्यन्तही दुर्लभ है ॥ १८५ ॥

ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः ॥
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति ॥ १८६ ॥
शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः ॥
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात् ॥ १८७ ॥
उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम् ॥
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः ॥ १८८ ॥

भाषार्थ-जीवलोकमें मेरा अंश सनातन जीव है. यह जीव सुषुप्ति और प्रलयकालमें प्रकृतिमें स्थित रहता है. फिर जीवलोकमें संसारका उपभोग करनेके निमित्त मन तथा अन्य इन्द्रियोंका आकर्षण करता है ॥ १८६ ॥

जिस प्रकार वायु पुष्पादिमेंसे गन्धको ग्रहण करके चला जाता है, उसी प्रकार जीव जिससमय कर्मके वशीभूत होकर अन्य शरीरको त्यागता है, उस शरीरमेंसे इन्द्रियोंको ग्रहण करके अन्य शरीरमें गमन करता है ॥ १८७ ॥

विमूढ कहिये जिनका ज्ञान अविद्याकरके आच्छन्न हो रहा है, वे

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

पुरुष देहान्तरमें जानेवाले अथवा देहमें स्थित विषयोपभोगी तथा इन्द्रियादि युक्त जीवको देख नहीं सकते हैं. ज्ञानचक्षु पुरुषही उसको देख सकते हैं ॥ १८८ ॥

इह दुश्चरितैः केचित् केचित्पूर्वकृतैस्तथा ॥
प्राप्नुवन्ति दुरात्मानो नररूपविपर्ययम् ॥ १८९ ॥

भावार्थ—कोई कोई दुरात्मा ऐहिक दुष्कर्मोंके अनुसार और कोई कोई अन्यजन्मोंमें किये हुए दुष्कर्मोंके अनुसार वर्तमान जन्ममें अन्धत्व बधिरत्व आदि कुरूपताको प्राप्त होते हैं. इससे यह निश्चय हुआ कि—जीव अपने कर्मके अनुसार जन्म ग्रहण करता है ॥ १८९॥

यं यं वापि स्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ॥
तं तमेवैति कौन्तेय ! सदा तद्भावभावितः ॥१९०॥

भावार्थ—हे अर्जुन ! मनुष्य अन्तकालमें जिस जिस भावमें मन लगाकर स्मरण करता हुआ शरीरत्याग करता है, वह उस उस भावकोही प्राप्त होता है ॥ १९०॥

इष्टापूर्तं मन्यमाना वरिष्ठं नान्यच्छ्रेयो वेदयन्ते प्रमूढाः ॥
नाकस्य पृष्ठे ते सुकृतेऽनुभूत्वेमं लोकं हीनतरश्चाविशन्ति ॥

भावार्थ—जो मूढ पुरुष अज्ञानरूप कर्मकांडमें मग्न होकर केवल उसकोही परमार्थसाधन और श्रेष्ठ मानते हैं, वे अपने शुभाशुभ कर्मोंके अनुसार इस मनुष्यशरीरको अथवा इससे हीन अर्थात् पशु आदि अथवा वृक्ष आदि शरीरको प्राप्त होते हैं यह माण्डूक्य उपनिषद्में कहा है ॥ १९१ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः ॥
वाचिकैः पक्षिमृगतां मानसैरन्त्यजातिताम् ॥१९२

भाषार्थ–मनुष्य शारीरिक दुष्कर्मोंके करनेसे स्थावर (वृक्षादि) शरीरको प्राप्त होता है. वाणीके दुष्कर्मोंको करनेसे पक्षी मृग आदि शरीरको धारण करता है और मानसिक दुष्कर्मोंके करनेसे चारौं वर्णोंमें अति अधम योनिको प्राप्त होता है ॥ १९२ ॥

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः ॥
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥१९३॥

भाषार्थ–सत्वगुणी पुरुष ऊर्ध्वलोकमें अर्थात् देव आदि योनिमें, और रजोगुणी पुरुष मनुष्ययोनिमें, तथा तमोगुणी पुरुष अधोगति (पशु आदि योनि) को प्राप्त होते हैं ॥ १९३ ॥

अन्तकाले च मामेव स्मरन् मुक्त्वा कलेवरम् ॥
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥१९४॥

भाषार्थ–अन्तसमयमें मेरा स्मरण करता हुआ शरीरको त्यागकर जो जीव जाता है, वह मेरे भावको प्राप्त होता है इसमें संशय नहीं है. यह गीतामें श्रीकृष्णभगवान्का वचन है ॥ १९४ ॥

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ॥
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥ १९५ ॥

भाषार्थ–अन्नसे प्राणियोंके जीवन स्थिर रहते हैं, वृष्टि होनेसे अन्नकी उत्पत्ति होती है, यज्ञ करनेसे वृष्टि होती है. अतः यज्ञही कर्मोंकी उत्पत्तिका कारण है ॥ १९५ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

मोक्षस्वरूप ।

मोक्षस्य न हि वासोऽस्ति न ग्रामान्तरमेव वा ॥
अज्ञानहृदयग्रन्थिनाशो मोक्ष इति स्मृतः ॥१९६॥

भाषार्थ–मोक्षका कोई मुख्य निवासस्थान नहीं है. न मोक्षका कोई ग्राम है. हृदयकी अज्ञानग्रन्थिका नाश हो जाना यही मोक्ष कहा है, अर्थात् मनुष्यके हृदयमें जो अज्ञानरूपी गांठ है, वह गांठ जब खुल जाती है तब ज्ञानका प्रादुर्भाव होता है, तबही मोक्ष होवे है ॥ १९६ ॥

ऋते ज्ञानान्न मोक्षोऽस्ति नान्यः पन्था विमुक्तये ॥
ज्ञात्वा तं मृत्युमत्येतीत्याद्या हि श्रुतयो जगुः ॥१९७॥

भाषार्थ–विना ज्ञानके मोक्ष नहीं होती है, विना ज्ञानके अन्य कोई मार्ग मोक्ष होनेके निमित्त नहीं है, ज्ञानके द्वारा परमात्माको जानकरही मृत्युसे मनुष्य छुटकारा पा सकता है, यह श्रुतियां कथन कर रही हैं ॥ १९७ ॥

मोक्षस्य साधनं साक्षात् ज्ञानं तत्राऽभयादयः ॥
पारंपर्य्येण गीतासु कथिता मोक्षहेतवः ॥ १९८ ॥

भाषार्थ–साक्षात् ज्ञान तथा अभय आदि जो मोक्षके साधन हैं, वे पारम्पर्यसे मोक्षके कारण गीतामें वर्णन किये हैं. अर्थात् ब्रह्मज्ञान और मृत्युसे भय नहीं करना यह ज्ञान श्रीकृष्ण भगवान्ने गीतामें वर्णन किया है, जो मोक्षका हेतु है ॥ १९८ ॥

यस्मान्मोक्षसुखादन्यत्सुखं क्वापि न विद्यते ॥
तस्मान्मुमुक्षुणा भाव्यं नैव भोगेच्छुना क्वचित् १९९

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

भाषार्थ-जिस कारण मोक्षसुखसे बढकर दूसरा कोईभी सुख नहीं है, उस कारण मनुष्यको मुमुक्षु अर्थात् मोक्षसुखकी इच्छावाला होना चाहिये, भोगोंकी इच्छावाला कभी न होना चाहिये. क्योंकि-भोगोंमें इच्छावाला होनेसे मोक्षसुख कभी प्राप्त नहीं हो सकता है ॥ १९८ ॥

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात ! विषयान् विषवत् त्यज ॥
क्षमार्जवदयाशौचं सत्यं पीयूषवत् पिब ॥ १९९ ॥

भाषार्थ-हे तात ! यदि यह इच्छा हो कि-'हमारी मुक्ति हो जाय' तो विषयोंको विषसमान जानकर उनका त्याग कर दो और क्षमा (सहनशीलता), आर्जव (नम्रता) अर्थात् सरल स्वभाव, दया, शौच (पवित्रता), तथा सत्य इनको अमृतसमान जानकर उनका पान करो ॥ १९९ ॥

ब्रह्मनिरूपण ।

योऽसावतीन्द्रियग्राह्यः सूक्ष्मोऽव्यक्तः सनातनः ॥
सर्वभूतमयोऽचिन्त्यः स एव स्वयमुद्बभौ ॥ २०० ॥

भाषार्थ-जो परमात्मा इन्द्रियोंसे ग्रहण नहीं किया जाता, जो सूक्ष्म, अव्यक्त और सनातन है, तथा जो सर्वभूतमय है, अचिन्त्य है, वही स्वयं प्रगट हुआ ॥ २०० ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

जले विष्णुः स्थले विष्णुर्विष्णुः पर्वतमस्तके ॥
ज्वालामालाकुले विष्णुः सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥२०१॥

भाषार्थ–यह श्लोक विष्णुपंजरस्तोत्रमेंका है. इसकाभी यही भावार्थ है कि–जलमें विष्णु है, स्थलमें विष्णु है, पर्वतपर चढ जाओ तो वहांभी विष्णु है, ज्वाला, माला, कुल इनमेंभी विष्णु है. सब जगत् विष्णुमय है. अर्थात् परमात्मा सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी है ॥ २०१ ॥

एतमेके वदन्त्यग्निं मनुमन्ये प्रजापतिम् ॥
इन्द्रमेकेऽपरे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम् ॥ २०२ ॥

भाषार्थ–इसी परमात्माको कोई अग्नि कहते हैं, कोई मनु, कोई प्रजापति नामकरके मानते हैं, कोई इन्द्र, कोई प्राण, तथा कोई शाश्वत ब्रह्म कहते हैं ॥ २०२ ॥

ग्रन्थसमाप्तिसमय ।

व्योमसप्ताङ्कचन्द्रेऽब्दे मार्गे मासि सिते दले ॥
सप्तम्यां भृगुवारे च ग्रन्थोऽयं पूर्णतां गतः ॥ १ ॥

भाषार्थ–श्रीमन्महाराजा विक्रमादित्यजीके संवत् १९७० में मार्ग मास, शुक्लपक्ष, सप्तमी शुक्रवारके दिन यह सुभाषित रत्नाकर ग्रन्थ सम्पूर्ण हुआ ॥ १ ॥

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

ग्रन्थकारप्रार्थना।

अयोध्यामण्डले रम्ये नैमिषात्पश्चिमोत्तरे ॥
षट्त्रिंशत्क्रोशप्रमिते तत्र लक्ष्मीपुरे वरे ॥ १ ॥
मिश्रनारायणाख्योऽहं प्रार्थयामि बुधान्प्रति ॥
अत्र कुत्राप्यशुद्धं चेत्क्षन्तव्यं कृपयाऽधुना ॥ २ ॥

भाषार्थ–रमणीय अयोध्यामण्डलमें अर्थात् सुहावने अवध देश-(मुल्क) में नैमिषक्षेत्रके पश्चिम उत्तर (वायव्यकोण) में छत्तीस कोशपर लखीमपुर एक श्रेष्ठ नगर है. उसमें ॥ १ ॥ मैं मिश्रनारायण-प्रसाद बुधजनोंके सन्मुख प्रार्थना करता हूं कि–इस सुभाषितरत्नाकर ग्रन्थमें अथवा इस ग्रन्थकी भाषाटीकामें यदि कहीं कुछभी अशुद्धता हो उसको, इससमय कृपाकरके क्षमा करनी चाहिये ॥ २ ॥

तथा च—

अस्मिन् स्वरव्यञ्जनबिन्दुरेफ-
मात्राविहीनं लिखितं मया यत् ॥
तत्सर्वमार्यैः परिशोधनीयं
प्रायेण मुह्यन्ति हि ये लिखन्ति ॥ ३ ॥

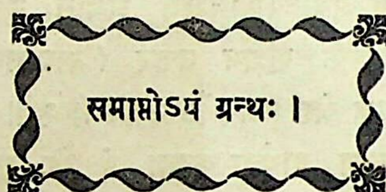
ग्रन्थ इति शेषः।

भाषार्थ–इस ग्रन्थमें जो स्वर, व्यंजन, बिन्दु, रेफ वा मात्रा मैंने भूलकर न लिखा हो, उसको सम्पूर्ण पंडित लोग शोध लेवैं और

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

हमारी भूलचूक क्षमा करैं. क्योंकि–जो कोई लिखते हैं, वे बहुधाकरके छोड देते हैं अर्थात् छूटही जाता है. यह मेरी सबोंसे प्रार्थना है ॥ ३ ॥

इति श्रीमदयोध्यामण्डलान्तर्वर्तिलखीमपुरखीरीनिवासि
ज्योतिर्वित्पण्डितनारायणप्रसादमिश्रविलिखिते
भाषार्थसमन्विते सुभाषितरत्नाकरे
पंचमः प्रकाशः सम्पूर्णः ॥ ५ ॥


समाप्तोऽयं ग्रन्थः ।

॥ शुभमस्तु ॥

मङ्गलं लेखकानां च पाठकानां च मङ्गलम् ॥
मङ्गलं सर्वलोकानां भूयोभूयोऽस्तु मङ्गलम् ॥ १ ॥

Printed by V. V. Pathak at "Jagadishwar" Press, Girgaon Gaiwadi House No. 9 Bombay. Published by Brajawallabh Hariprasad for Hariprasad Bhagirathji, Ramwadi Bombay.

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri

CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitzed by eGangotri



CC-0. Swami Atmanand Giri (Prabhuji) Veda Nidhi Varanasi. Digitized by eGangotri